



॥ श्रीरस्तु ॥

श्रीमते श्रीनिवासाय परस्मै ब्रह्मणे नमः

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

(वाराहादि - अष्टपुराणान्तर्गतम्)



प्रथमो भागः



२०१४

प्रकाशकम् :

श्री तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति.

SRI VENKATACHALAMAHATMYAM

Volume : - I

Editor-in-Chief

Prof. RAVVA SRI HARI

T.T.D. Religious Publications Series No. 1066

© All Rights Reserved

First Edition:- 1959

Second Edition:- 2014

Copies: 2000

Published by :

M.G. GOPAL, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:

Office of the Editor-In-Chief,
T.T.D, Tirupati.

Printed at :

Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati - 517 507

FOREWORD

Tirumala Tirupati Devasthanams has undertaken a number of activities to spread the *sanatana dharma* among the people of our country. Publishing of books of religious and *dharmic* importance is one of such activities. TTD published so far about three thousand books, which cater to the interests and needs of all people, the old and young alike, of children and women also.

The present book *Venkatachala Mahatmyam*, published by the TTD, is a compilation of the valuable information from the *puranic* texts that describe the glory of Lord Sri Venkateswara, who is considered and worshipped as ‘*Kaliyuga pratyaksha daivam*’ and also his divine abode *Venkatachala* i.e. Tirumala

The story and greatness of Venkatachala Kshetra is described in eleven *puranas* such as *Varaha Purana*, *Padma Purana*, *Brahma Purana*, *Garuda Purana* etc., and also in *Harivamsa*.

This book contains portions, from those *puranas*, which describe the story of the incarnation of Shri Mahavishnu as Lord Sri Venkateswara, his *kalyanam* with Padmavathi Devi, his various *leelas* and also the divinity of various sacred places in and around Venkatachala Kshetra.

This book was published in two parts about 50 years back, both in Telugu and Devanagari scripts separately and it became very popular. It is being regarded as a '*parayana grantha*' by the devotees of Lord Sri Venkateswara.

Now, this book is reprinted and presented in Devanagari script in two parts. The first part contains the extracts from seven *puranas*, namely *Varaha*, *Padma*, *Garuda*, *Brahma*, *Markandeya*, *Vamana* and *Harivamsa*.

It is hoped that the present book will be received well and becomes popular among the devotees.

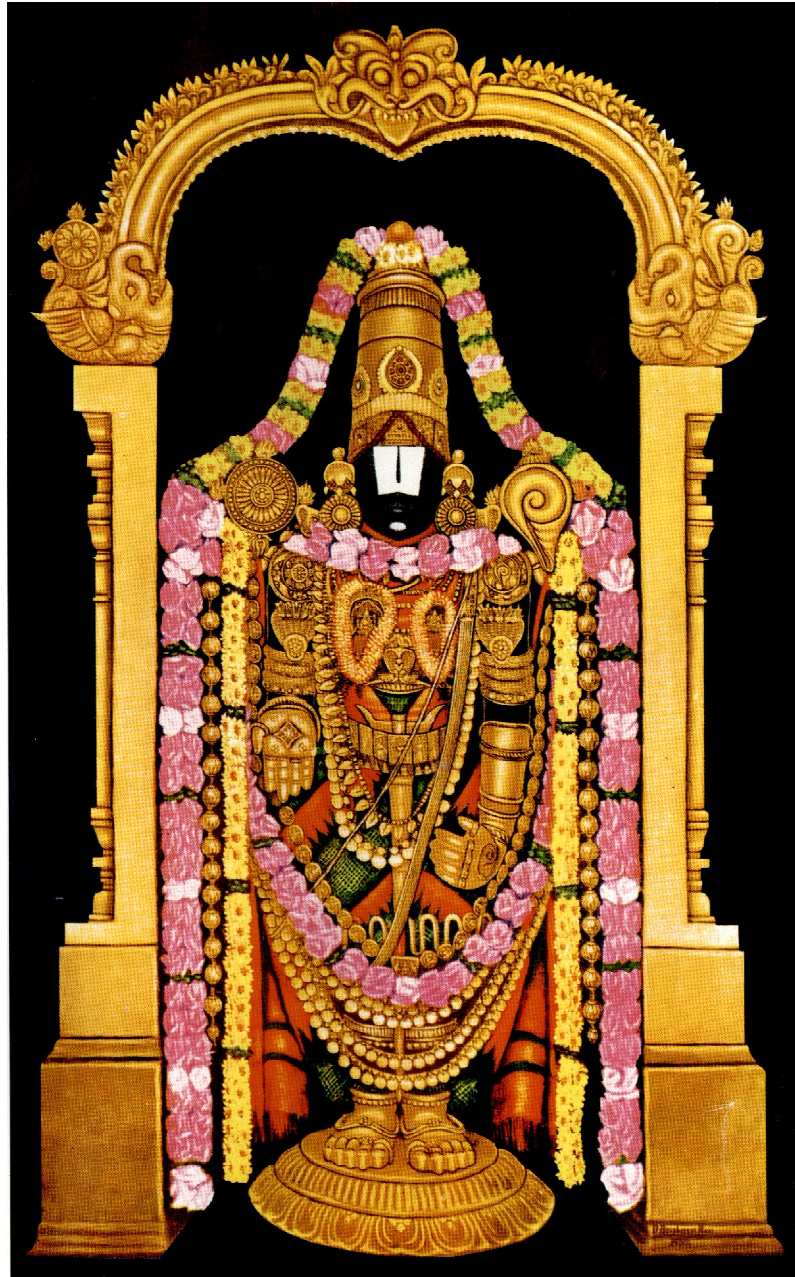
In the Service of the Lord

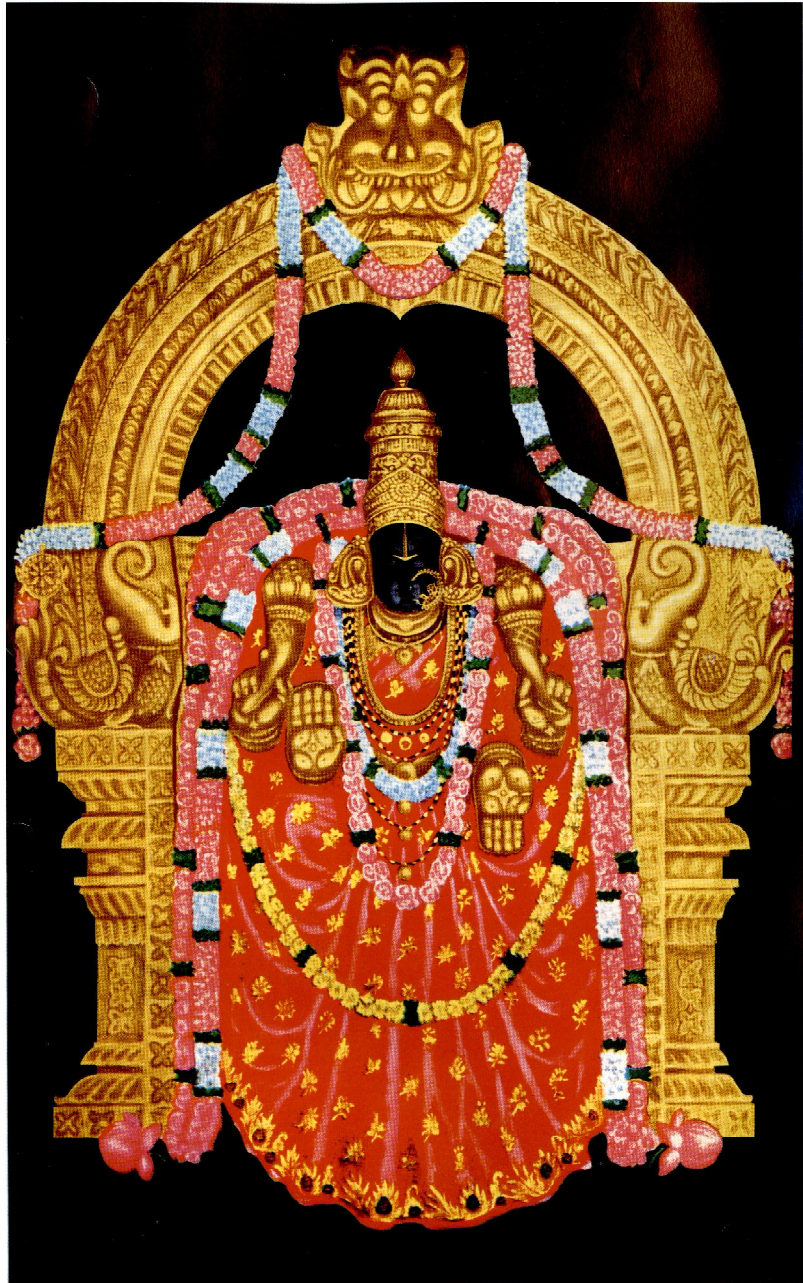


Executive Officer

Tirumala Tirupati Devasthanams

Tirupati.





हरिः ॐ

‘प्रवः पान्तमन्धसो धियायते ।

महेशूराय विष्णवे चार्चत ॥’

— ऋक्संहिता - मण्डलम् २. सू. १५५ मन्त्रः १.

भरायि काणे विकटे गिरिं गच्छ सदाऽन्वे ।

शिरिर्विटस्य सत्त्वभिः तेभिष्टा चातयामसि ॥

— ऋक्संहिता - मण्डलम् १०. सू. १५५ मन्त्रः १.

रयिः ककुब्धान् विदधद्विनष्टं रयिमद्विधानम् ।

तस्मैककुत्से विकटाय पित्रे स्वाहा ॥

— (श्रीवैखानसमन्त्रसंहिता प्रश्नम् ७ - अनु. ७ सं. ३)

विना वेङ्कटेशं न नाथो न नाथः

सदा वेङ्कटेशं स्मरामि स्मरामि ।

हरे वेङ्कटेश ! प्रसीद प्रसीद

प्रियं वेङ्कटेश ! प्रयच्छ प्रयच्छ ॥

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन ।

वेङ्कटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति ॥

— श्रीवेङ्कटाचलसाहारम्यम्.



पुराणानुक्रमणिका.

माहात्म्यम्	अध्यायसङ्ख्या	पुटसङ्ख्या
१. वाराहपुराण प्रथम- भागान्तर्गतम्	३३ प्रभृति ६२ अध्याय- पर्यन्तम् ३० अध्यायाः	{ १ - १३१
२. श्रीवाराहपुराण द्वितीय- भागान्तर्गतम्	१ प्रभृति १० अध्यायपर्य- न्तं १० अध्यायाः	{ १३२-२०२
३. श्रीवायुपुराणान्त- र्गतम्	२४ प्रभृति ३४ अध्याय- पर्यन्तं ११ अध्यायाः	{ २०३-२८९
४. श्रीगारुडपुराणान्त- र्गतम्	६३ तमोऽध्यायः १ अध्यायः	{ २९०-२९६
५. श्रीहरिवंशगत शेष- धर्मान्तर्गतम्	४८ तमोऽध्यायः १ अध्यायः	{ २९७-३०२
६. श्रीब्रह्मपुराण क्षेत्र- खण्डान्तर्गतम्	१ प्रभृति ११ अध्याय- पर्यन्तं ११ अध्यायाः	{ ३०३-३७०
७. श्रीमार्कण्डेयपुरा- णान्तर्गतम्	१ प्रभृति ५ अध्याय- पर्यन्तं ५ अध्यायाः	{ ३७१-४००
८. श्रीवामनपुराण क्षेत्र- खण्डान्तर्गतम्	२० प्रभृति ४४ पर्यन्तं २५ अध्यायाः	{ ४०१-५६०

आहत्य :- पुराणानि ८ — अध्यायाः ९४ — पुटानि ५६०



श्रीरस्तु
श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्य प्रथमभागस्य विषयाणां सूचिका

श्री वराहपुराण प्रथमभागे विषयाः

~~~~~❁~~~~~

| विषयाः                                                   | पृष्ठम्. |
|----------------------------------------------------------|----------|
| श्वेतवराहकल्पवृत्तान्तकथनम् .....                        | १        |
| श्रीवैकुण्ठात् भगवत्क्रीडाचलानयनम् .....                 | ६        |
| देवादिकृत श्वेतवराहप्रार्थना .....                       | ८        |
| सूतकृतं स्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यवर्णनम् .....            | ९        |
| क्रीडादिप्रविष्ट श्रीवराहदिव्यवैभववर्णनम् .....          | ११       |
| क्रीडाद्रेः भगवत्सान्निध्येन महिमाधिक्यवर्णनम् .....     | १३       |
| क्रीडाद्रेः कारणभेदेन अनेकनामानुवर्णनम् .....            | ”        |
| महर्षियज्ञवाटं प्रति भगवदागमनम् .....                    | १५       |
| वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारप्राप्तिः .....           | १८       |
| अष्टराज्यस्य शङ्खगनृपस्य राज्यप्राप्तिक्रमः .....        | २०       |
| आत्मारामाख्यविप्रस्य सम्पत्प्राप्तिक्रमः .....           | २५       |
| सनत्कुमारकथितव्यूहलक्ष्मीमन्त्रोद्धारक्रमः .....         | २७       |
| कापिलादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यम् .....                     | २९       |
| पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम् .....                             | ३१       |
| जराहरादितीर्थमाहात्म्यम् .....                           | ३२       |
| श्रीवेङ्कटाद्रिं प्रति श्रीरामगमनम् .....                | ३३       |
| वैकुण्ठाख्यगुहाप्रविष्टवानरवृत्तान्तः .....              | ३७       |
| वैकुण्ठगुहाप्रभाववर्णनम् .....                           | ४०       |
| रावणादिपीडितदेवर्षीणां क्षीरार्णवब्रह्मलोकादिगमनम् ..... | ४१       |
| ब्रह्मादीनां श्रीवेङ्कटाचलागमनम् .....                   | ४५       |
| दशरथेन श्रीवेङ्कटाचलवासि महर्षिचरित्रदर्शनम् .....       | ५२       |



|                                                     |       |    |
|-----------------------------------------------------|-------|----|
| श्रीभगवदादिर्भावः .....                             | ..... | ५४ |
| ब्रह्मादीनां भगवन्मन्दिरप्रवेशादिवर्णनम् .....      | ..... | ५८ |
| अगस्त्यादिकृत भगवत्स्तुतिः .....                    | ..... | ६१ |
| इन्द्रादिकृत                    ,, .....            | ..... | ६३ |
| सनकादिकृत                   ,, .....                | ..... | ६४ |
| दशरथकृत                    ,, .....                 | ..... | ६५ |
| ब्रह्मकृत                        ,, .....           | ..... | ६६ |
| ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृत कुशलानुयोगादयः .....     | ..... | ६७ |
| भगवते ब्रह्मादिभिः रावणोपद्रवनिवेदनम् .....         | ..... | ७० |
| शङ्करस्य शेषाचलाश्रमेयदिगवस्थानप्राप्तिः .....      | ..... | ७० |
| भगवन्तमुद्दिश्य दशरथकृतप्रार्थना .....              | ..... | ७२ |
| भगवन्तं प्रति चतुर्मुखकृतप्रार्थनादिः .....         | ..... | ७४ |
| श्रीवेङ्कटाद्रिनिकटस्थसुरवधार्थं चक्रप्रेषणम् ..... | ..... | ७५ |
| श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सवघट्टः .....                   | ..... | ७७ |
| श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सववैभववर्णनम् .....             | ..... | ७९ |
| महोत्सवसेवाफलदानफलप्रशंसादिकम् .....                | ..... | ८१ |
| वेङ्कटाद्रौ पुष्पोद्याननिर्माणादिप्रशंसा .....      | ..... | ८४ |
| महोत्सवावभृथस्नानप्रशंसा .....                      | ..... | ८५ |
| ब्रह्मादीनां स्वावासगमनार्थं भगवदभ्यनुज्ञा .....    | ..... | ८६ |
| श्रीवेङ्कटाद्रीशवैभवप्रशंसा .....                   | ..... | ८७ |
| ब्रह्मादीनां स्वावासगमनम् .....                     | ..... | ८८ |
| फल्गुनी तीर्थमाहात्म्यम् .....                      | ..... | ८९ |
| जाबालितीर्थमाहात्म्यम् .....                        | ..... | ९० |
| पूर्वस्यां दिशि सुदर्शनकृतासुरवधप्रकारः .....       | ..... | ९२ |
| सुदर्शनसैन्यासुरसैन्ययोः युद्धप्रशंसा .....         | ..... | ९५ |
| आग्नेयदिशि सुदर्शनकृतासुरवधप्रकारः .....            | ..... | ९५ |
| सुदर्शनस्यासुरवधार्थं दक्षिणदिग्गमनम् .....         | ..... | ९५ |



|                                                         |     |
|---------------------------------------------------------|-----|
| सुदर्शनासुरसेनयोः युद्धप्रकारः .....                    | ९६  |
| वरुणदिशि अत्रसुदर्शनसेनायुद्धप्रशंसा .....              | ९९  |
| सुदर्शनस्यासुरवधार्थमुत्तरदिग्गमनम् .....               | १०४ |
| भेरुण्डासुरसुदर्शनसेनयोः युद्धप्रशंसा .....             | १०५ |
| श्रीवेङ्कटेशस्य कलिदोषोपहतेषु कृपाधिक्यवर्णनम् .....    | १०९ |
| चेतनस्य आचार्याश्रयणात् पुरुषार्थप्राप्तिनिरूपणम् ..... | ११३ |
| अष्टाङ्गयोगस्वरूपनिरूपणम् .....                         | ११७ |
| सनकसनन्दनतीर्थमाहात्म्यम् .....                         | १२० |
| कायरसायनतीर्थ .....                                     | ११  |
| श्रीवेङ्कटेश्वराष्टोत्तरशतनामावलिः .....                | १२२ |
| महर्षीणां श्रीवेङ्कटेशसेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलगमनम् ..... | १२६ |
| महर्षिकृतभगवत्स्तुतिः .....                             | १२९ |
| सूत्रं प्रति शौनकादिस्तुतिः .....                       | १३१ |

## श्रीवराहपुराण द्वितीयभागे विषयाः

|                                                     |     |
|-----------------------------------------------------|-----|
| नारदस्य सुमेरुशिखरस्थयज्ञवराहदर्शनम् .....          | १३२ |
| वराहसन्निधिं प्रति धरण्यागमनम् ... ..               | १३४ |
| धरणीवराहसंवादः .....                                | १३५ |
| शेषाचलस्य सर्वपर्वतातिशायित्ववर्णनम् .....          | १३७ |
| स्वामिपुष्करिण्याः सर्वतीर्थातिशायित्ववर्णनम् ..... | १३८ |
| कुमारधरामाहात्म्यम् .....                           | १३९ |
| तुम्बुरुतीर्थमाहात्म्यम् .....                      | १४० |
| आकाशगङ्गामाहात्म्यम् .....                          | १४१ |
| पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम् .....                        | १४२ |
| पापनाशनतीर्थमाहात्म्यम् .....                       | १४३ |
| देवतीर्थमाहात्म्यम् .....                           | १४४ |
| धरणीकृतवराहस्तुतिः .....                            | १४५ |
| वराहस्य भगवतो धरण्या साकं शेषाचलगमनम् .....         | १४६ |

|                                                     |       |       |     |
|-----------------------------------------------------|-------|-------|-----|
| अध्यायफलश्रुतिः                                     | ..... | ..... | १४२ |
| श्रीवराहमन्त्राराधनविधिः                            | ...   | ..... | १४३ |
| श्रीवराहमन्त्रेण धर्मादीनां स्वाभीष्टसिद्धिवर्णनम्  | ..... | ..... | १४३ |
| अगस्त्यप्रार्थनया भगवतः सर्वजनदृग्गोचरत्ववर्णनम्    | ..... | ..... | १४५ |
| मित्रवर्मणः आकाशराजाख्यसुतोत्पत्तिवर्णनम्           | ..... | ..... | १४७ |
| धरणीतलात् पद्मावत्युत्पत्तिक्रमः                    | ..... | ..... | ”   |
| आकाशराजस्य धरण्याख्यपत्न्यां वसुदानाख्यसुतोत्पत्तिः |       |       | १४८ |
| उद्यानवासिन्याः पद्मावत्याः समीपे नारदागमनम्        | ..... | ..... | १४९ |
| नारदोदितपद्मावतीशरीरलक्षणानि                        | ..... | ..... | १५० |
| पद्मावत्याः स्वसखीभिः साकं पुष्पवाटीगमनम्           | ..... | ..... | १५१ |
| मृगयार्थं पुष्पवाटीं प्रति श्रीनिवासागमनम्          | ..... | ..... | १५२ |
| भगवतः कन्यकानाञ्च अन्योन्यसवादः                     | ..... | ..... | १५३ |
| पद्मावतीदर्शनेन श्रीनिवासस्य मोहप्राप्तिः           | ..... | ..... | १५५ |
| मुह्यमानं श्रीनिवासं प्रति वकुलमालिकोक्तिः          | ..... | ..... | ”   |
| श्रीनिवासोक्त पद्मावतीपरिणयकारणानि                  | ..... | ..... | १५७ |
| वियद्राजपुरं प्रति वकुलमालिकागमनम्                  | ..... | ..... | १५८ |
| दिव्योद्यानस्थपद्मावतीसखीः प्रति वकुलमालिकोक्तिः    | ..... | ..... | १५९ |
| वकुलमालिकां प्रति सखीचिनिवेदित पद्मावत्युदन्तः      | ..... | ..... | ”   |
| दैवज्ञोक्त्या अगस्त्यलिङ्गार्चनाय विप्रादिप्रेषणम्  | ..... | ..... | १६३ |
| धरणीकृतप्रश्नस्य पुलिन्दिनीप्रतिवचनम्               | ..... | ..... | १६४ |
| पद्मावतीनिवेदितभगवद्भागवतलक्षणानि                   | ..... | ..... | १६५ |
| वकुलमालिकया सार्धं सखीनां धरणीसमीपे आगमनम्          | ..... | ..... | १६८ |
| धरणीदेव्यै वकुलमालिकानिवेदित श्रीनिवासोदन्तः        | ..... | ..... | ”   |
| श्रीनिवासोक्त्या शङ्खनृपस्य स्वामितीर्थे तपःकरणम्   | ..... | ..... | १६९ |
| वकुलमालिकोक्त्या धरण्यादिकृत विवाहनिश्चयः           | ..... | ..... | १७२ |
| बृहस्पत्युक्त्या विवाहलग्नस्थिरीकरणम्               | ..... | ..... | ”   |
| विश्वकर्मादिकृतपुरालङ्कारादिक्रमः                   | ..... | ..... | १७३ |

|                                                             |     |
|-------------------------------------------------------------|-----|
| शुकेन सह वकुलमालिकायाः श्रीनिवाससमीपे गमनम्....             | १७४ |
| श्रीनिवासाय शुकावेदित पद्मावतीपरिणयवृत्तान्तः ....          | ”   |
| पद्मावत्या शुकदत्त श्रीनिवासमालाधारणम् ....                 | ”   |
| श्रीनिवासस्य लक्ष्म्यादिकृत विवाहालङ्कारः ....              | १७६ |
| ब्रह्मादिभिः साकं श्रीनिवासस्य वियद्राजपुरगमनम् ....        | १७७ |
| पद्मावतीपरिणयघट्टः ....                                     | ”   |
| श्रीनिवासकृपया वियद्राजस्य भक्तिप्राप्तिरूपवरप्राप्तिः .... | १७९ |
| विवाहार्थमागतानां ब्रह्मादीनां स्वावासगमनम् ....            | ”   |
| वसुनामकनिषादवृत्तान्तः ....                                 | १८० |
| रङ्गदासस्य श्रीनिवाससेवार्थं श्रीशेषाचलगमनम् ....           | १८१ |
| श्रीनिवासार्थं रङ्गदासकृतदिव्योद्यानमण्डपनिर्माणानि ....    | १८२ |
| रङ्गदासस्य गन्धर्वक्रीडादर्शनेन भगवत्कैङ्कर्यविस्मृतिः....  | १८३ |
| स्वरूपानुसन्धानेन लज्जितं रङ्गदासं प्रति श्रीनिवासवचनम्     | १८४ |
| तोण्डमान्नामक नृपवृत्तान्तः ....                            | १८५ |
| तोण्डमाननृपस्य मृगयार्थं श्रीशेषाचलगमनम् ....               | ”   |
| श्रीनिवाससमीपस्थपञ्चवर्णशुकवृत्तान्तः ....                  | १८६ |
| तोण्डमाननृपस्य निषादेन सह श्रीनिवाससेवागमनम् ....           | १८७ |
| तोण्डमाननृप प्रति रेणुकोक्तिः ....                          | १८८ |
| शुकवर्णित पद्मसरोवरमाहात्म्यम् ....                         | ”   |
| देवादिकृत श्रीलक्ष्मीस्तुतिः ....                           | १८९ |
| इन्द्रादीन् प्रति स्तुतिप्रसन्न श्रीलक्ष्मीवचनम् ....       | १९० |
| तोण्डमाननृपस्य स्वपितुः सकाशाद्राज्यप्राप्तिः ....          | १९१ |
| तोण्डमाननृपस्य वसुनिवेदितवराहोदन्तः ....                    | १९२ |
| नृपस्य निषादवाक्यस्वप्नाभ्यां बिलमार्गेण शेषाचलगमनम्        | १९४ |
| भगवद्भक्त्या तोण्डमाननृपकृतक्षीराभिषेकप्रनिर्माणादिकम्      | १९५ |
| गङ्गास्नानगत वीरशर्माख्य विप्रचरितम् ....                   | १९६ |
| अस्थिसरोवरमाहात्म्यम् ....                                  | १९८ |

|                                                          |      |     |
|----------------------------------------------------------|------|-----|
| कुर्वग्रामस्थ कुलालवंशज भीमाख्यभक्तोदन्तः                | .... | १९९ |
| कुर्वग्रामस्थ भीमाख्यभक्तस्य पत्न्या सह वैकुण्ठप्राप्तिः | .... | २०० |
| श्रीनिवासकृपया तोण्डमाननृपस्य सारूप्यप्राप्तिः           | .... | २०१ |
| एतन्माहात्म्यश्रवणपठनफलश्रुतिः                           | .... | २०२ |

## श्रीपाद्मपुराणे विषयाः

|                                                              |      |     |
|--------------------------------------------------------------|------|-----|
| मेरुशिखरात् शुकब्रह्मर्षेः वेङ्कटाचलागमनम्                   | .... | २०३ |
| श्रीवेङ्कटाचलवर्णनम्                                         | .... | २०५ |
| स्कन्दस्य कुमारधारास्नानेन शक्त्यायुधप्राप्तिः               | .... | २०७ |
| इन्द्राय पापनाशनस्नानेन वृत्रवधजनितपापनिर्मुक्तिः            | .... | २०८ |
| आकाशगङ्गामाश्रित्यम्                                         | .... | ”   |
| व्रततीवर्तनीतीर्थस्नानकाले शुकब्रह्मर्षिं प्रति अंशरीरोक्तिः | .... | ”   |
| अशरीरोक्त्या शुकस्य पद्मसरोवरगमनम्                           | .... | २०९ |
| पद्मसरोवरवर्णनम्                                             | .... | ”   |
| शुकस्य पद्मसरसि श्रीनिवासध्यानपूर्वकस्नानादिकम्              | .... | २१० |
| पद्मसरोवरतीरस्थ दिव्यारामवर्णनम्                             | .... | २११ |
| दिव्यारामे शुकब्रह्मर्षेः महानियमपूर्वकतपोऽनुष्ठानम्         | .... | २१२ |
| शुकमुनितपोऽग्निज्वालाभिः लोकोपद्रवं त्यजति                   | .... | २१३ |
| शुकतपोभङ्गाय महेन्द्रोत्तररम्भादिसन्त्ववचनानि                | .... | २१४ |
| महेन्द्रनिकटे रम्भादकृतप्रतिज्ञा                             | .... | ”   |
| शुकतपो वनं प्रति आगतानां रम्भादीनां शृङ्गारलीलाः             | .... | २१५ |
| श्रीनिवासध्यानेन जितकामं शुकं प्रति रम्भादिहासोक्तिः         | .... | २१६ |
| रम्भादिदुर्व्यापारान् विलोक्य शुकब्रह्मर्ष्यनुतापः           | .... | २१७ |
| तत्र तत्कृत दशावतारस्तोत्रम्                                 | .... | ”   |
| श्रीनिवासमुद्दिश्य रम्भाद्यप्सरस्सङ्घमेतशुकस्तुतिः           | .... | २१९ |
| श्रीनिवासमुद्दिश्य शुकब्रह्मर्षिप्रार्थना                    | .... | २२१ |
| रम्भादीनां स्वलावण्यनिन्दापूर्वकं यथागतं गमनम्               | .... | २२२ |
| भगवत्कृपया शुककृत दृढतरभक्तिपूर्वकभगवदुपासनम्                | .... | ”   |

| विषयाः                                                         | पुटम्.   |
|----------------------------------------------------------------|----------|
| शुकमुनिं प्रति तपस्तुष्ट श्रीनिवासागमनम्                       | .... २२३ |
| भगवन्तं विलोक्य शुकमुनिकृतनटनादिकम्                            | .... ,,  |
| श्रीनिवासकृपया शुकब्रह्मैव मुक्तिः ....                        | .... २२५ |
| शुकमुनिकृत शुकपुराष्टोत्तरशतविप्रगृहनिर्माणानि                 | .... २२७ |
| शुकपुरे बलभद्रसहकृतकृष्णप्रतिष्ठा ....                         | .... ,,  |
| शुकस्य स्वपुरात् शेषाचलगमनम् ....                              | .... २२८ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरवर्णनम् ....                                 | .... २२९ |
| स्वामिपुष्करिणीवर्णनम् ....                                    | .... ,,  |
| श्रीनिवासाविर्भावः ....                                        | .... २३० |
| शुकब्रह्मर्षिकृत श्रीनिवासस्तुतिः ....                         | .... २३२ |
| श्रीवराहाविर्भाववृत्तान्तः ....                                | .... २३३ |
| पातालगत भूस्युद्धरणे द्युक्तवराहवर्णनम्                        | .... ,,  |
| पातालगतधरणीवराहयोः नर्मव्यापारादिः ....                        | .... २३५ |
| वराहं प्रति धरण्युक्तिः ....                                   | .... २३६ |
| धरण्या साकं पातालात् वराहस्य शेषाचलगमनम्                       | .... ,,  |
| दुर्वाससः शापत् किन्नरदम्पत्योः कैरातरूपप्राप्तिः ....         | .... २३७ |
| कैरातदम्पत्योः शेषाचले पुत्रप्राप्तिप्रियङ्गुकृषीकरणादीनि .... | .... २३८ |
| प्रियङ्गुगोप्तृकिरातसमीपं प्रति वराहागमनम्                     | .... २३९ |
| श्रीवराहदर्शनार्थं शेषाचलं प्रति नृपागमनम्                     | .... २४० |
| नृपस्य वल्मीकविवरागत वराहदर्शनम्                               | .... ,,  |
| नृपं प्रत्यक्षरीर्युक्तिः ....                                 | .... २४१ |
| क्षीराभिषेकात् वराहस्य वल्मीकादाविर्भावः                       | .... २४२ |
| राजानं प्रति भगवदुक्तिः ....                                   | .... २४४ |
| श्रीवराहकृता किन्नरमिथुनस्य किरातत्वनिर्मुक्तिः                | .... ,,  |
| नृपस्य श्रीवराहप्रतिष्ठापूर्वकं स्वपुरगमनम्                    | .... ,,  |
| श्रीनिवासस्य स्वामितीर्थदक्षिणतीरवासवर्णनम्                    | .... २४५ |
| श्रीनृसिंहाचलस्य नीलकण्ठतपःक्षेत्रवर्णनम्                      | .... २४६ |

|                                                            |      |     |
|------------------------------------------------------------|------|-----|
| नीलकण्ठश्रमस्थ पुण्यपुष्करिणीवर्णनम्                       | .... | २४८ |
| अश्मन्यग्रोधमूलस्थ नीलकण्ठाश्रमवर्णनम्                     | .... | २४९ |
| नीलकण्ठकृत नृसिंहाराधनसङ्कल्पः                             | .... | २५० |
| नीलकण्ठकृत नृसिंहाराधनविधिः                                | .... | २५२ |
| नीलकण्ठप्रतिष्ठित श्रीनृसिंहवर्णनम्                        | .... | २५३ |
| श्रीनृसिंहसन्निध्येन नीलकण्ठाश्रमस्याधिक्यवर्णनम्          | .... | २५५ |
| पाण्डवतीर्थ महात्म्यम्                                     | .... | ”   |
| नारायणगिरिप्रभाववर्णनम्                                    | .... | २५६ |
| नारायणाद्रिस्थ नैरवाख्य क्षेत्रपालोदन्तः                   | .... | २५७ |
| गौर्या नारायणाद्रितपकरणेन दुर्गात्वशिवाधशरीरत्वप्राप्तिः   | .... | ”   |
| अत्र्यादि पञ्चाशन्महर्षिप्रशंसितस्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम् | .... | २५८ |
| दैत्योपद्रवज्ञापनार्थं ब्रह्मादीनां क्षीरसागरगमनम्         | .... | २६५ |
| ब्रह्मादिकृत क्षीराब्धिशांतिस्तुतिः                        | .... | ”   |
| ब्रह्मादीनां पुरतः क्षीराणवात् लक्ष्मीसखीप्रादुर्भावः      | .... | २६७ |
| लक्ष्मीसखीकथित भगवदावासज्ञापनपूर्वकामयोक्तिः               | .... | ”   |
| ब्रह्मादीनां क्षीराणवात् श्रीनारायणाचलगमनम्                | .... | २६८ |
| श्रीस्वामिपुष्करिणीतीरवर्णनम्                              | .... | २६९ |
| कमलाल्युत्तया ब्रह्मादिकृत श्रीनिवाससाक्षात्कारोद्योगः     | .... | २७० |
| शेषाद्रौ श्रीनिवाससाक्षात्काराय ब्रह्मादिकृतस्तुतिः        | .... | २७१ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे स्तुतिप्रसन्नभगवद्विमानाविर्भावः       | .... | ”   |
| ब्रह्मादिकृत विमानमध्यगतं श्रीनिवासस्तुतिः                 | .... | २७२ |
| श्री श्रीनिवासाविर्भावः                                    | .... | ”   |
| ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृत कुशलप्रश्नः                     | .... | २७३ |
| भगवते ब्रह्मकृत लोकोपद्रवकार्यसुरोदन्तविज्ञापनम्           | .... | ”   |
| ब्रह्मादि प्रार्थनया भगवदुक्तामयोक्तिः                     | .... | २७५ |
| रक्षोगणसंहाराय भगवत्कृतकुमुदाक्षनियोजनम्                   | .... | ”   |
| भगवतो ब्रह्मादिप्रेषणपूर्वकमन्तर्धानम्                     | .... | २७६ |

| विषयः                                                         | पुटम्.   |
|---------------------------------------------------------------|----------|
| श्री श्रीनिवासावतार देशकालनिर्णयः                             | .... २७६ |
| पद्मसरोवरमाहात्म्यम्                                          | .... २७७ |
| भृगुपादाहतिकुपितायाः लक्ष्म्याः कपिलालयगमनम्                  | .... २७८ |
| लक्ष्म्यन्वेषणार्थं धरातलं प्रति भगवदागमनम्                   | .... ,,  |
| श्रीकोल्हापुरवासि लक्ष्मीमर्चयन्तं भगवन्तं प्रत्यक्षरीरोक्तिः | .... ,,  |
| शेषाचलाध्वना राजरूपस्य भगवतः सुवर्णमुखरीतीरगमनम्              | .... २७९ |
| भगवत्कृतपद्मसरोवरनिर्माणप्रकारः                               | .... २८० |
| पद्मविकासनैरन्तर्यार्थं भगवत्कृतसूर्यनारायणप्रतिष्ठा          | .... ,,  |
| लक्ष्मीमन्त्रोपासनपूर्वकभगवत्कृततपोविधिः                      | .... २८१ |
| नृपशङ्कया भगवत्तपोभङ्गाय इन्द्रादिकृतरम्भादिप्रेषणम्          | .... ,,  |
| राजवेषभृद्भगवत्तपोवनं प्रति इन्द्रप्रेषितरम्भाद्यागमनम्       | .... २८२ |
| स्वाश्रमागताप्सरोवच्चनार्थं भगवत्कृतमायानिर्माणम्             | .... ,,  |
| पद्मसरोवरात् लक्ष्मीप्रादुर्भावः                              | .... २८३ |
| लक्ष्म्यवतारदर्शनार्थं पद्मसरोवरं प्रति ब्रह्माद्यागमनम्      | .... २८४ |
| लक्ष्मीकृत मालार्पणपूर्वकभगवद्वरणम्                           | .... २८५ |
| भगवतः पद्मसरोवरवरदानपूर्वकं शेषाचलगमनम्                       | .... ,,  |
| नारदाद्यष्टमहर्षिप्रशंसित पद्मसरोवरमाहात्म्यम्                | .... ,,  |
| शुकचरित्रवर्णनम्                                              | .... २८७ |
| छायाशुकोत्पत्तिः                                              | .... ,,  |

श्रीगरुडपुराणगता विषयाः

|                                                                |          |
|----------------------------------------------------------------|----------|
| वसिष्ठं प्रति श्रीवेङ्कटाद्रिमाहात्म्यश्रवणेच्छारुन्धतीप्रश्नः | .... २९० |
| वसिष्ठवर्णित श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्                          | .... २९१ |
| श्रीवेङ्कटाचलस्थ आकाशगङ्गा पापनाशनं तुम्बुरुतीर्थप्रशंसा       | .... २९२ |
| वसिष्ठोक्तया अरुन्धत्याः तुम्बुरुतीर्थे तपःकरणाय शेषाचलगमनम्   | .... २९३ |
| अरुन्धतीसमीपे भगवदाविर्भावः                                    | .... २९४ |
| अरुन्धती कृत भगवत्स्तुतिः                                      | .... ,,  |
| भगवद्वर्णित वेङ्कटाचल तुम्बुरुतीर्थ माहात्म्यानि               | .... २९५ |

|                                                 |           |
|-------------------------------------------------|-----------|
| श्रीहरिवंशान्तर्गतशेषधर्मे विषयाः               | पुटम्.    |
| नारदादीनां भगवत्सेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलगमनम्     | .... २९६  |
| श्रीवेङ्कटाचलवासि महाजनचरित्रवर्णनम्            | .... २९९. |
| श्रीनिवाससेवार्थं श्रीभीष्मकृत युधिष्ठिरप्ररणम् | .... ३०२  |

ब्रह्माण्डपुराणे विषयाः

|                                                            |          |
|------------------------------------------------------------|----------|
| भृगुनारदसंवादात्मकसूक्त श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्           | .... ३०३ |
| वेङ्कटाचलस्य अनेकनामानुवर्णनपूर्वकं माहात्म्यवर्णनम्       | ३०५      |
| नारदकृतश्रीरात्रिवासि भगवद्वर्णनम्                         | .... ३०६ |
| नारदं प्रति धरातलं प्रति विजिहीर्षुभगवदुक्तिः              | .... ३०८ |
| नारदकृत भगवत्क्रीडाहृद्देशप्रकाशनम्                        | .... ,,  |
| अनन्तस्य भगवत्क्रीडाद्वित्वप्राप्तिः                       | .... ३०९ |
| भगवतो लक्ष्म्यादिमहिषीपरिजनैः सह क्रीडाचलगमनम्             | .... ३१० |
| अद्विरूपधार्यनन्तस्य शिरःपुच्छप्रदेशवर्णनम्                | .... ३११ |
| व्याघ्रपादवृत्तान्तः                                       | .... ,,  |
| अद्विरूपधार्यनन्तस्य पक्षप्रदेशवर्णनम्                     | .... ३१३ |
| भगवत्क्रीडाचलवर्णनम्                                       | .... ३१४ |
| नारायणाख्यविप्रवृत्तान्तः                                  | .... ३१५ |
| ,, विप्रतुष्टस्य भगवतः आविर्भावः                           | .... ३१६ |
| ,, विप्रकृता भगवत्स्तुतिः                                  | .... ३१७ |
| भगवन्तमुद्दिश्य विप्रकृत सर्वजनदृश्यत्वादिप्रार्थना        | .... ३१८ |
| भगवत्कृत नारायणप्रार्थनाभ्युपगमप्रकारः                     | .... ३१९ |
| भगवतः क्रीडाद्वौ लीलार्थं मृगयाविहारः                      | .... ३२० |
| वृषभाख्यासुरवृत्तान्तः                                     | .... ३२१ |
| वृषभासुरशवरवेषधारिभगवतोः युद्धप्रकारः                      | .... ,,  |
| भगवन्तं प्रति संहारभ्युपगन्तु वृषभासुरप्रार्थना            | .... ३२३ |
| असुरप्रार्थनया क्रीडाद्वेः भगवद्वत्तवृषभनामधेयत्वप्राप्तिः | ३२४      |
| वृषभासुरवधप्रकारः                                          | .... ३२५ |



|                                                           |      |      |     |
|-----------------------------------------------------------|------|------|-----|
| अञ्जनादेव्युत्पत्तिक्रमः                                  | .... | .... | ३२५ |
| अञ्जनायाः श्रीवेङ्कटाद्रौ तपःकरणेनाञ्जनेयाख्यसुतोत्पत्तिः |      |      | ३२७ |
| आञ्जनेयस्य फलबुद्ध्या रविमण्डलं प्रत्युत्पत्तनम्          | .... |      | ३३१ |
| आञ्जनेयस्य ब्रह्मादिदत्त सर्वावध्यत्ववरप्राप्तिः          | .... |      | ३३२ |
| क्रीडाद्रेः अञ्जनाचलनामधेयत्वप्राप्तिः                    | .... |      | ३३३ |
| क्रीडाद्रेः श्रीवेङ्कटाभिधानोपोद्धातः                     | .... |      | ३३४ |
| श्रीवेङ्कटेशाराधक चोलराजसुतोत्पत्तिक्रमः                  | .... |      | ३३८ |
| चोलराजस्य मृगयाविहारकाले नागकन्यादर्शनादिः                | .... |      | ३३९ |
| चोलराजस्य नागकन्यायां सार्वभौमलक्षणोपेतसुतोत्पत्तिः       | ...  |      | ३४३ |
| चोलराजस्य पातालात् स्वपित्रन्तिके आगमनम्                  | .... |      | ३४४ |
| चोलराजस्य अशरीर्युक्त्या पितृकृतराज्याभिषेकक्रमः          | .... |      | ३४४ |
| चक्रवर्तिनं प्रति गोपालनिवेदित वेङ्कटाचलवल्मीकोदन्तः      | ३४५  |      |     |
| नृपनिकटं प्रति शेषाचलोदन्तज्ञापनाय शबरागमनम्              | .... |      | ३४८ |
| चक्रवर्तिनः शबरेण सह वराहदर्शनार्थं शेषाचलगमनम्           | .... |      | ३४९ |
| चक्रवर्तिकृतक्षीराभिषेकेण वल्मीकात् श्रीनिवासाविर्भावः    | ३५०  |      |     |
| चक्रवर्तिकृत श्रीनिवासस्तुतिः                             | .... |      | ३५२ |
| श्रीनिवासस्य चक्रवर्तिपार्थनया सर्वजनदृश्यत्वाभ्युपगमः    | ३५२  |      |     |
| श्री श्रीनिवासमहोत्सवसेवार्थं ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्       | .... |      | ३५४ |
| श्री श्रीनिवासस्य रथोत्सवावभृथे त्सवप्रकारः               | .... |      | ३५४ |
| चक्रवर्तिसमीपागत कृष्णशर्माख्य विप्रोदन्तः                | .... |      | ३५५ |
| अस्थिकूटाभिध सरोवरमाहात्म्यम्                             | .... |      | ३५८ |
| सिंहादाख्यासुरवृत्तान्तः                                  | .... |      | ३६० |
| सिंहादभीतदेवानां श्रीनिवाससमीपागमनम्                      | .... |      | ३६१ |
| अभयागतदेवानां चक्रवर्तिनिकटगमनाय भगवदाज्ञा                | .... |      | ३६२ |
| भगवदाज्ञया देवानां द्विजवेषेण चक्रवर्तिनिकटगमनम्          | .... |      | ३६३ |
| सिंहादवधाय चक्रवर्तिनं प्रति देवकृतचेदना                  | .... |      | ३६४ |
| सिंहादवधोपायवेदनाय भगवत्सन्निधिं प्रति चक्रवर्तिगमनम्     |      |      | ३६४ |

|                                                   |      |     |
|---------------------------------------------------|------|-----|
| चक्रवर्तिकृत असुरवधार्थं भगवद्दत्तपञ्चायुधधारणम्  | .... | ३६४ |
| सिंहादेन सह युद्धाय किरातरूपेण चक्रवर्तिगमनम्     | .... | ३६५ |
| पापनाशतीर्थसमीपप्रवृत्तचक्रवर्ति सिंहादयुद्धक्रमः | .... | ३६६ |
| समरसमये चक्रवर्तिने वायुकृत सुदर्शनमन्त्रोपदेशः   | ...  | ३६७ |
| चक्रायुधेन चक्रवर्तिकृत सिंहादवधप्रकारः           | .... | ”   |
| भगवत्कृत पञ्चायुधकृत्यनिर्णयः                     | .... | ३६८ |

## मार्कण्डेयपुराणे विषयाः

|                                                                |      |     |
|----------------------------------------------------------------|------|-----|
| तीर्थयात्रेच्छया पितृनिकटे मार्कण्डेय विज्ञप्तिः               | .... | ३७१ |
| पितृनुज्ञया मार्कण्डेयकृत पुण्यदेशतीर्थयात्राक्रमः             | .... | ३७३ |
| मार्कण्डेयं प्रति गरुडोपदिष्ट श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्         | .... | ३७४ |
| मार्कण्डेयस्य शुद्धाख्यागस्त्यशिष्येन सह श्रीवेङ्कटाचलगमनम्    | ३७५  |     |
| मार्कण्डेयस्य श्रीस्वामितीर्थस्नानपूर्वक श्रीवराहसेवाप्राप्तिः | ३७६  |     |
| मार्कण्डेयकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः                            | .... | ३७७ |
| मार्कण्डेयस्य भगवद्दत्त भक्त्यैरन्तर्यवरप्राप्तिः              | .... | ३७८ |
| शुद्धाख्यागस्त्यशिष्यस्य भगवदनुग्रहेण निष्पापत्वप्राप्तिः      | ”    |     |
| मार्कण्डेयं प्रति शुद्धकृतस्वोदन्तज्ञापनम्                     | .... | ”   |
| मार्कण्डेयस्य शुद्धेन सह सुवर्णमुखरीतीरस्थागस्त्याश्रमगमनम्    | ३८१  |     |
| अगस्त्यवर्णित श्रीवेङ्कटाचलवैभवम्                              | .... | ”   |
| श्रीनिवाससेवार्थं ब्रह्मरुद्रादीनां श्रीवेङ्कटाचलगमनवर्णनम्    | ३८२  |     |
| श्रीभगवत्प्रादुर्भाववर्णनम्                                    | .... | ३८३ |
| ब्रह्मरुद्रादिकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः                        | .... | ”   |
| अगस्त्यकृत श्रीस्वामितीर्थमाहात्म्यभगवद्दिव्योत्सवयोर्वर्णनम्  | ३८४  |     |
| कुमारधरामाहात्म्यम्                                            | .... | ३८५ |
| दारिद्र्यदुःखासहमानवृद्धद्विजकृत भृगुपतनयलः                    | .... | ३८६ |
| भृगुपतनोद्युक्तं वृद्धं प्रति भगवदुक्तिः                       | .... | ”   |
| वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारसम्प्राप्तिः                    | .... | ३८७ |
| कुमारधारास्नानप्राप्तयौवनवृद्धं प्रति अन्तर्हितभगवदुक्तिः      | ”    |     |

स्कन्दस्य कुमारधारातीर्थे तपःकरणेन

|                                                          |      |     |
|----------------------------------------------------------|------|-----|
| तारकवधोत्थब्रह्महत्याविमुक्तिः                           | .... | ३८९ |
| कुमारधारातीर्थे स्कन्दतपस्तुष्टभगवदादिर्भावः             | .... | ३९१ |
| भगवत्सेवार्थं कुमारधारां प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्     | .... | ३९२ |
| स्कन्दकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः                          | .... | ३९३ |
| भगवद्वर्णित कुमारधारास्नानकालनिर्णयः                     | .... | ,,  |
| अगस्त्यदीनां कुमारधारातीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलगमनम् | .... | ३९६ |

श्रीवामनपुराणे विषयाः

|                                                        |      |     |
|--------------------------------------------------------|------|-----|
| प्रयागमाहात्म्यम्                                      | .... | ४०० |
| सीतादिस्वसुताविवाहार्थं जनकनृपकृतानुतापक्रमः           | .... | ,,  |
| जनकनृपतापानोदनार्थं शतानन्दोक्तपुरातनेतिहासः           | .... | ४०३ |
| स्कन्दं प्रति शङ्करोक्त ब्रह्महत्याविमुक्तिहेतूपन्यासः | .... | ४०५ |
| प्रयागक्षेत्रस्य भगवद्वर्णित प्रयागाभिधाननिरुक्तिः     | .... | ४०७ |
| शङ्करहस्तात् कपालविनिर्मुक्तिप्रकारः                   | .... | ,,  |
| स्कन्दं प्रति शङ्करकृतं तपस्समुचितवेङ्कटाद्रिवर्णनम्   | .... | ४०८ |
| तपःकरणाय स्कन्दस्य श्रीवेङ्कटाचलगमनम्                  | .... | ४१३ |
| बृहस्पत्युक्तस्कन्दोत्पत्तिक्रमः                       | .... | ,,  |
| बृहस्पतिकृत स्कन्दस्तुतिः                              | .... | ४१६ |
| स्कन्दस्य तपःकरणप्रकारः                                | .... | ४१८ |
| शङ्करकथित श्रीनिवासाविर्भावहेतूद्घातः                  | .... | ,,  |
| सुदर्शनस्य शङ्करसमीपप्राप्तिक्रमः                      | .... | ४१९ |
| इन्द्रस्य सहस्राक्षत्वप्राप्तिप्रकारः                  | .... | ४२२ |
| सुवर्चलायां श्रीविष्वक्सेनोत्पत्तिक्रमः                | .... | ४२९ |
| चक्रादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यम्                          | .... | ,,  |
| कपिलख्यचक्रतीर्थस्नानकालनिर्णयादिः                     | .... | ४३१ |
| भगवन्तमुद्दिश्य वाचादिकृत तपःप्रकारः                   | .... | ४३२ |
| प्रादुर्भूतभगवन्तमुद्दिश्य वायुकृतविश्वरूपस्तुतिः      | .... | ४३३ |

|                                                               |     |
|---------------------------------------------------------------|-----|
| वायुं प्रति भगवत्कृत अनवरतस्वसान्निध्यवरप्रदानम् ....         | ४४० |
| देव्या सह आगतस्य शम्भोः शेषाचलोमेयदिगवस्थानम् ....            | ४४२ |
| चक्रतीर्थे तपस्यन्तं प्रति शङ्करवचनम् ....                    | ४४३ |
| जनकं प्रति शतानन्दोक्तभगवदाविर्भावकथोपोद्धातः ....            | ४४६ |
| अगस्त्यस्य शेषाचलवायव्यदिशि महाभूतविलोकनम् ....               | ४४९ |
| शेषाचलोत्तरदिशि अगस्त्यादिकृत भगवदन्वेषणप्रकारः               | ४५१ |
| अगस्त्यादीनां सनत्कुमारविलोकनपूर्वकं पूर्वदिग्गमनम् ....      | ४५३ |
| शेषाचलपूर्वदिशि अगस्त्यादीनां अद्भुतवस्तुदर्शनम् ....         | ४५७ |
| भगवतः साक्षात्काराय तपःकुर्वन्तमिन्द्रं प्रति अगस्त्योक्तिः   | ४५९ |
| इन्द्रोक्त्या अगस्त्यस्य शङ्करदर्शनाय आग्नेयदिग्गमनम् ....    | ४६० |
| अगस्त्यकृत शेषाचलदक्षिणभागस्थ शङ्करसेवाक्रमः ....             | ४६२ |
| सेवाकाङ्क्षिणमगस्त्यं प्रति शङ्करोक्तिः ....                  | ४६४ |
| शेषाचलनैर्ऋतदिशि अगस्त्यादीनां विष्वक्सेनदर्शनम् ....         | ४६६ |
| अगस्त्यादीन् प्रति विष्वक्सेनोक्तभगवद्दर्शनोपायः ....         | ४६८ |
| अगस्त्यादीनां शेषाचलस्थ विष्वक्सेनानुचरावलोकनम् ....          | ४६९ |
| अगस्त्यादीन् प्रति विष्वक्सेनपरिजनकृतस्वोदन्तज्ञापनम्         | ४७० |
| अगस्त्यादिकृत शेषाचलस्थ अनेकपुण्यतीर्थावलोकनम् ....           | ४७१ |
| अगस्त्यादीनां कुमारधारास्नानम् ....                           | ४७३ |
| श्रीवेङ्कटाचलस्थ पुण्यतीर्थवर्णनम् ....                       | ४७५ |
| कपिलतीर्थपश्चिमभागस्थ पञ्चतीर्थमाहात्म्यम्                    | ४७६ |
| स्वामिपुष्करिण्यादि सर्वतीर्थमाहात्म्यवर्णनम्                 | ४७७ |
| शङ्खारण्यनृपवृत्तान्तः ....                                   | ४८० |
| स्वामिपुष्करिण्याः भगवदुक्तगङ्गाद्यशेषपुण्यतीर्थसाम्यम् ....  | ४८१ |
| भगवद्भक्त्या शङ्खनृपकृतस्वामितीर्थतपःप्रकारः ....             | ४८२ |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थे भगवन्तमुद्दिश्य अगस्त्यादिकृततपश्चिन्ता | ४८३ |
| भगवत्सेवार्थं वेङ्कटाचलं प्रति गुरुशुक्राद्यागमनम् ....       | ४८५ |
| उपरिचरवसु वृत्तान्तः ....                                     | ४८६ |

|                                                           |      |     |
|-----------------------------------------------------------|------|-----|
| उपरिचरवसुं प्रति महर्षिकृतप्रश्नप्रकारः                   | .... | ४८६ |
| महर्षिशापेन उपरिचरवसोः पातालकुहरप्राप्तिः                 | .... | ४८७ |
| भगवत्प्रेरित चक्रकृत वसुहृन्नोद्युक्त असुरवधप्रकारः       | .... | ४८९ |
| वस्वानयनाय पातालविलं प्रति भगवत्कृत गरुडप्रेषणम्          | .... | ,,  |
| शङ्खादीनां भगवद्दिव्यमङ्गलविग्रहसेवा                      | .... | ४९३ |
| आविर्भूतभगवद्दिव्यमङ्गलविग्रहवर्णनम्                      | .... | ४९९ |
| आविर्भूतं भगवन्तं प्रति महर्षिकृतप्रणामादिक्रमः           | .... | ५०४ |
| भगवदाविर्भावकाले देवताद्यापूरित शङ्खादिमङ्गलवाद्यक्रमः    | .... | ५०५ |
| भगवत्सेवार्थं वेङ्कटाद्रिं प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्    | .... | ,,  |
| ब्रह्मकृत भगवत्स्तुतिः                                    | .... | ५०७ |
| शम्भुकृत भगवत्स्तुतिः                                     | .... | ५०८ |
| महर्षिकृत ,,                                              | .... | ५१० |
| सप्तर्ष्यादिकृत ,,                                        | .... | ५११ |
| सनकादिपरमयोगिकृत भगवत्स्तुतिः                             | .... | ५१२ |
| इन्द्रादि दिवपालकृत ,,                                    | .... | ५१३ |
| श्वेतद्वीपवासिसिद्धकृत ,,                                 | .... | ५१४ |
| ब्रह्मादीनां भगवद्विश्वरूपदर्शनम्                         | .... | ५१७ |
| महर्षीन् प्रति भगवदुक्तिः                                 | .... | ५१८ |
| मुनीनाश्वासयन्तं भगवन्तं प्रति ब्रह्मकृतविज्ञप्तिः        | .... | ५१९ |
| भगवत्कृत ब्रह्माद्यभोष्टवरप्रदानम्                        | .... | ५२० |
| महर्षीणां भगवद्दिव्यविमानदर्शनम्                          | .... | ५२३ |
| शङ्खचक्रस्य वरं प्रदाय भगवत्तिरोधानम्                     | .... | ५२४ |
| भगवदन्तर्धानानन्तरं देवाद्यनुभूतानुतापवर्णनम्             | .... | ५२५ |
| भगवद्विमानादि दृष्ट्वा ब्रह्मादिनिर्गमनम्                 | .... | ५२७ |
| श्रीवेङ्कटाचलात् कैलासं प्रति शङ्खरगमनम्                  | .... | ५२८ |
| भगवद्विमानान्तर्धानहेतुनिरूपणम्                           | .... | ५३३ |
| स्वामिपुष्करिण्यां अगस्त्यादिकृत भगवन्मन्त्रोपासनाप्रकारः | .... | ५३४ |

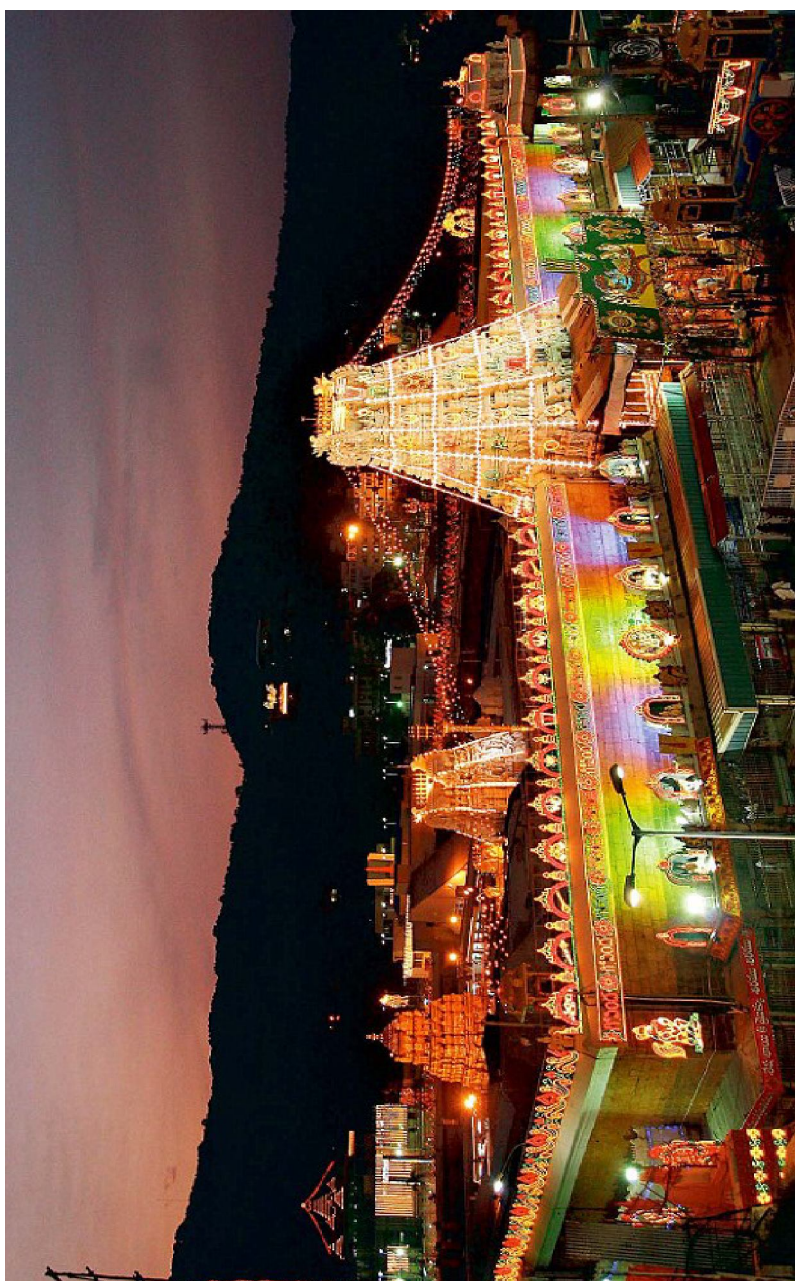
|                                                              |     |
|--------------------------------------------------------------|-----|
| अगस्त्यादिकृतो भगवत्सेवापूर्वकः स्वावासगमनोद्योगः.....       | ५३५ |
| भगवद्विमानमन्तार्हितं दृष्ट्वा अगस्त्यादिकृता चिन्ता .....   | ५३५ |
| शेषाद्रिवायव्यभागस्थित महाभूतस्य नारायणाद्रित्ववर्णनम्       | ५३६ |
| वसोः भगवन्मन्त्रोपासनापूर्वकं स्वामितीर्थस्थितिवर्णनम्.....  | ॥   |
| श्वेतद्वीपवासि सिद्धादीनां श्रीवेङ्कटाचलात् स्वावासगमनम्     | ५३७ |
| अगस्त्यकृत भाविविमानाविर्भावहेतुनिरूपणम् .....               | ५३८ |
| देवजिदाद्यसुरकृतलोकोपद्रववर्णनम्.....                        | ५३९ |
| देवजिदाद्यसुरवधार्थं सपरिकरस्य विष्वक्सेनस्य गमनम् .....     | ५४० |
| विष्वक्सेनासुरसैन्ययोः युद्धक्रमः .....                      | ५४१ |
| विष्वक्सेनकृत नारायणास्त्रप्रयोगपूर्वकासुरवधप्रकारः .....    | ५४४ |
| देवादिकृतविजयोपचारस्तुत्यादिः .....                          | ५४५ |
| भविष्यच्छ्रीभगवद्विमानवर्णनम् .....                          | ५४८ |
| स्वामिपुष्करिणीकृतान्नदानादिप्रशंसा .....                    | ५५० |
| वामदेवं प्रति ब्रह्मोपदिष्ट स्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम् ..... | ५५१ |
| ब्रह्मकारित श्रीवेङ्कटाचलाधीशोत्सवप्रशंसा .....              | ५५३ |
| महोत्सवसेवार्थमागतजनाराधकपुण्यफलवर्णनम् .....                | ॥   |
| स्वामिपुष्करिणीं प्रति सार्धत्रिकोटितीर्थागमनकालनिर्णयः      | ५५५ |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलं प्रति          |     |
| जनकनृपागमनम् .....                                           | ५५८ |

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्य - प्रथमभागस्य

विषय सूचिका

सम्पूर्णा











श्रीरस्तु  
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः  
श्रियै पद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् (श्रीवाराहपुराणप्रथमभागान्तर्गतम्)

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥  
श्रीवेङ्कटाचलाधीशं श्रियाऽध्यासितवक्षसम् ।  
श्रितचेतनमन्दारं श्रीनिवासमहं भजे ॥

हरिः ॐ

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

श्वेतवराहकल्पवृत्तान्तकथनम्

मुनयः—

|                                                  |   |
|--------------------------------------------------|---|
| श्रीमते भूवराहाय नमः कृत्स्ना वसुधरा ।           |   |
| उद्धृता येन पातालाद्वासार्थं सर्वदेहिनाम् ॥      | १ |
| नमो यज्ञवराहाय कृष्णाय शतबाहवे ।                 |   |
| नमस्ते वेदवेदान्तवपुषे विश्वरूपिणे ॥             | २ |
| भगवन् सूत! धर्मज्ञ वेदव्यासकृपानिधे ।            |   |
| विष्णुस्थानेषु सर्वेषु स्वयं व्यक्तस्थलेषु च ॥   | ३ |
| यत्र विष्णो रतिप्रीतिर्यत्र सिद्धयन्ति सिद्धयः । |   |
| अत्यद्भुतं च चारित्रं यत्र विष्णोः प्रवर्तते ॥   | ४ |

|                                                     |   |
|-----------------------------------------------------|---|
| मनुष्याणां च वसतां यत्र दृश्यो भवेद्भरिः ।          |   |
| श्रवणानन्दजनको वृत्तान्तो यस्य वा भवेत् ॥           | ५ |
| तादृशं वैष्णवं क्षेत्रमद्भुतं प्रियदर्शनम् ।        |   |
| अस्माकं ब्रूहि यच्छ्रुत्वा श्रोतव्यांशो न विद्यते ॥ | ६ |
| इति पृष्ठस्तदा सूतस्तपोध्यानसमाधिमान् ।             |   |
| ध्यात्वा मुहूर्तमात्रन्तु प्रोवच मुनिसत्तमान् ॥     | ७ |

श्रीसूत —

|                                                           |    |
|-----------------------------------------------------------|----|
| अहो पृष्ठमपूर्वं च कौतुकं भवतामहो ।                       |    |
| ममापि वाञ्छा महती वक्तुं तत्तु वदामि वः ॥                 | ८  |
| शृणुध्वं मुनयो यूयं सावधानतया त्विमम् ।                   |    |
| क्रीडरसेषु सक्तस्य हरेः क्रीडासमन्वितम् ॥                 | ९  |
| विविधैस्तस्य चारित्रैरुपेतं सर्वसिद्धिदम् ।               |    |
| सर्वैश्वर्यकरं नृणां सर्वैश्वर्यप्रदं शुभम् ॥             | १० |
| पुण्यं पवित्रमायुष्यं सर्वमङ्गलकारकम् ।                   |    |
| वाराहकल्पवृत्तान्तं शेषाचलसमाश्रयम् ॥                     | ११ |
| पुरा हि सागरैः सर्वैरेकीभूते महीजले ।                     |    |
| कल्पादौ भगवान् विष्णुर्वटपत्रसमाश्रयः ॥                   | १२ |
| महर्लोकं समाश्रित्य स्थितश्च जलसम्प्लवम् ।                |    |
| विचिन्त्य युगसाहस्रं जलावस्थानमद्भुतम् ।                  |    |
| यथापूर्वं जगत्सृष्टुमुद्युक्तः सर्वशक्तिमान् ॥            | १३ |
| सर्वस्य धाना प्रवरो महात्मा सर्वात्मगः सर्वजगत्स्वरूपः ।  |    |
| सर्वेश्वरः सर्वविधानयज्ञं चकार बुद्ध्या तरुणाम्बुजाक्षः ॥ | १४ |
| इतीरितास्ते मुनयस्तदानीं सदिस्मयेत्फुल्लहृदबुजाश्च ।      |    |
| सूतं महान्तं मुनिसङ्घसेव्यं तमवन् वेदविदां वरिष्ठम् ॥     | १५ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३३ तमोऽध्यायः ३

मुनय —

अतीतानागतज्ञानप्रकाशितहृदम्बुज ! ।  
उद्योगानन्तरं विष्णुः कृतवान् किं रमापतिः ? ॥ १६  
कीदृशः प्रलयः कल्पः सर्गो वा कीदृशः पुनः ? ।  
एतावद्वा जलं कस्मादागतं वद सुव्रत ! ॥ १७  
कुत्र वा धरणी याता गिरयो वा महोन्नताः ? ।  
तत्सर्वं शंस भगवन् ! श्रोतुं कौतूहलं हि नः ।  
इति पृष्टः पुनः प्राह सूतस्तान्मुनिपुङ्गवान् ॥ १८

श्रीसूतः—

मुनयः श्रूयतां पूर्वं सङ्ग्रहेण जलागमः ।  
चतुर्युगसहस्राणि प्रमाणं दिवसस्य च ॥ १९  
निशायास्तावदेवास्य निर्दिष्टस्समयो विधेः ।  
दिनावसानसमये ब्रह्मणो भगवान् रविः ॥ २०  
सहस्ररश्मिस्तपति त्रिमूर्त्यात्मा त्रिलोचनः ।  
वमत्यग्निं महाघोरं धर्मदीधितिरंशुनिः ॥ २१  
कतिचिद्वत्सरानेवं वृष्टिर्नैव भवेत्तदा ।  
भूलोकवासिनः सर्वे मुनयश्च तपोधनाः ॥ २२  
वसेयुर्जनलोके हि यावद्ब्रह्मनिशा तदा ।  
वनानि पर्वताश्चापि दग्धाः कालाग्निना तदा ॥ २३  
भस्मीभूता भवन्त्येव वायुस्सर्वात्मको महान् ।  
हायनान् कतिचिद्वाति पश्चान्मेघा महाबलाः ॥ २४  
स्थूणाकाराः सृजन्त्येव तोयधाराः समन्ततः ।  
सन्ततं वत्सरानेवं कतिचित्तु निशामुखे ॥ २५

1. एव तावान्हि ।

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| द्रवीभूता महाभूमिः पातालतलगामिनी ।            |    |
| सागराः सप्त चान्योन्यं भवेयुस्संयुतास्तदा ॥   | २६ |
| महर्लोकं समाक्रम्य सिष्ठन्त्येकोदकस्तदा ।     |    |
| तथैव युगसाहस्रं ब्रह्मणः शर्वरी भवेत् ॥       | २७ |
| निशावसाने गोविन्दः सृष्टिस्थित्यन्तकारकः ।    |    |
| चतुर्मुखशिवाशक्यं भूमेरुद्धरणं हरिः ॥         | २८ |
| कर्तुंकामस्तदा विष्णुर्वटपत्रतले स्थितः ।     |    |
| श्वेतं वराहदेहं च सर्वयज्ञमयं शिवम् ॥         | २९ |
| अतिभं मं महारौद्रमःसाद्य तरसा तदा ।           |    |
| प्रविश्य जलमभ्यं तु क्षोभयामास वै तदा ॥       | ३० |
| संवर्तमेघनिर्घातवृंहितं च वहन्मुहुः ।         |    |
| प्रविवेश महापोत्री पातालं जलपूरितम् ॥         | ३१ |
| अन्वेषयामास तदा रसातलमशेषतः ।                 |    |
| तत्र युद्धं महाघोरं हिरण्याक्षसमाश्रयम् ॥     | ३२ |
| अभूदभूतपूर्वं च तुमुलं रोमहर्षणम् ।           |    |
| चिरकालं च बाहुभ्यां मल्लयुद्धमवर्तत ॥         | ३३ |
| ततः क्रुद्धो महापोती दंष्ट्राग्रेण महासुरम् । |    |
| द्विधा तं पाटयामास मेरुतुल्यमहोन्नतिम् ॥      | ३४ |
| तद्रक्तसंघवेनैव तज्जलं रक्तमावभौ ।            |    |
| तद्दृष्ट्वा मुनयः सर्वे जनलोकनिवासिनः ॥       | ३५ |
| महज्जलमिदं रक्तमद्भुतं किमिदं भवेत् ? ।       |    |
| इत्याश्चर्यविलेख्यैः समाविध्यानयोगतः ॥        | ३६ |
| ज्ञात्वा श्वेतवराहस्य प्रभावं मुनयोऽस्तुवन् । |    |
| ततः श्वेतवराहश्च पातालतलगामिनीम् ॥            | ३७ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३३ तमोऽध्यायः

५

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| दंष्ट्राग्रेणैव तां भूमिं सर्वतत्त्वसमाश्रयाम् ।  |    |
| उद्धृत्य तरसा पोत्री विक्षोभ्य च महज्जलम् ॥       | ३८ |
| निधाय पादं शेषस्य भोगोपरि महाप्रभुः ।             |    |
| जनलोकं समाश्रित्य तस्थौ पर्वतसन्निभः ॥            | ३९ |
| ब्रह्मादयो देवगणाः सिद्धाश्च परमर्षयः ।           |    |
| अस्तुवन् वेदमन्त्रैश्च स्तोत्रैश्च विविधैः परैः ॥ | ४० |
| ववर्षुः पुष्पवर्षाणि ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।         |    |
| देवदुन्दुभ्यो नेदुर्वीणामुरजमर्दलाः ॥             | ४१ |

देवाः—

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| ‘जय देव महापोत्रिन् ! जय भूमिधराच्युत ! ।     |    |
| हिरण्याक्षमहारक्षोविदारणविचक्षण ! ॥           | ४२ |
| त्वमनादिरनन्तश्च त्वत्तः परतरो न हि ।         |    |
| त्वमेव सृष्टिकालेऽपि विधिर्भूत्वा चतुर्मुखः ॥ | ४३ |
| सृजस्येतज्जगत्सर्वं पासि विष्णुः समन्ततः ।    |    |
| कालामिरुद्ररूपी च कल्पान्ते सर्वजन्तुषु ॥     | ४४ |
| अन्तर्यामी भवान् देवः सर्वकर्ता त्वमेव हि ।   |    |
| निष्कृष्टं ब्रह्मणो रूपं न जानन्ति सुरास्तव ॥ | ४५ |
| प्रसीद भगवन् विष्णो ! भूमिं स्थापय पूर्ववत् । |    |
| सर्वप्राणिनिवासार्थं मस्तुवन् विबुधव्रजाः ॥   | ४६ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्वेतवराहकल्पकथनं नाम

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

॥

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

### श्रीवैकुण्ठात् भगवत्क्रीडाचलानयनम्

श्रीसतः—

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| ततः श्वेतवराहश्च स्थापयित्वा धरां तदा ।              |    |
| विभज्य सागरान् सप्त लोकान् सप्त च पूर्ववत् ॥         | १  |
| चतुर्मुखं समाहूय 'सृज पूर्वं यथा जगत्' ।             |    |
| इत्युवाच महाक्रोडः सर्वयज्ञमयो हरिः ॥                | २  |
| सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।              |    |
| धरावराहदेवोऽपि लोकानुग्रहकाम्यया ॥                   | ३  |
| भूमौ स्थानुं स्थलं दिव्यं बुद्ध्या निश्चित्य माधवः । |    |
| गरुडं प्रेषयामास गिरिमानेतुमद्भुतम् ॥                | ४  |
| 'वैनतेय! महासत्त्व गच्छ त्वमतिवेगतः ।                |    |
| गत्वा तु परमं धाम क्रीडाचलमिहानय ॥                   | ५  |
| सर्वान् पारिषदांश्चापि विष्वक्सेनमुखान् सुरान्' ।    |    |
| इत्युक्तो गरुडः साक्षादुत्पपात विहायसम् ॥            | ६  |
| गते तु गरुडे तस्मिन्नेतुं पर्वतोत्तमम् ।             |    |
| पोतिरूपी हरिर्भूमिं स्थापयित्वा च पूर्ववत् ॥         | ७  |
| पद्भ्यां भूमिं समाक्रम्य गोमतीतीरमागतः ।             |    |
| तस्यास्तु दक्षिणे भागे षष्ठिये जनदूरतः ॥             | ८  |
| पूर्वाब्धेः पश्चिमे भागे पञ्चनिर्योजनैर्युते ।       |    |
| देशे पुण्यजनाकीर्णे रुक्मनद्यास्तथोत्तरे ॥           | ९  |
| आगत्य तस्थौ देवोऽपि गरुडागमनोन्मुखः ।                |    |
| वैनतेयोऽपि परमं धाम गत्वा ददर्श ह ॥                  | १० |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३४ तमोऽध्यायः ७

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| अप्राकृतममेयञ्च सर्वरत्नमयं गिरिम् ।           |    |
| हिरण्मयं महाशृङ्गं पञ्चोपनिषदात्मकम् ॥         | ११ |
| पुन्नागचम्पकाशोक्तालहिन्तालशोभितम् ।           |    |
| सुरद्रुममुखैर्वृक्षैरन्यैः काञ्चनरूपकैः ॥      | १२ |
| शोभितं पक्षिसङ्घैश्च शुकक्रोक्लिहंसकैः ।       |    |
| श्रवणानन्दजनकमधुरालापसम्भ्रमैः ॥               | १३ |
| मल्लिकामालतीभिश्च नन्दावर्तादिभिस्तथा ।        |    |
| लताभिः पुष्पिताग्राभिर्दिव्यसौरभशालिभिः ॥      | १४ |
| सिंहशार्दूलमातङ्गशरभक्रोडवानरैः ।              |    |
| शोभितं किन्नरीभिश्च गायत्किन्नरपङ्क्तिभिः ॥    | १५ |
| अनेकनिर्झराकीर्णं मानसाह्लादकारकम् ।           |    |
| मुक्तैर्नित्यैः कामरूपैर्नानारूपैश्च सेवितम् ॥ | १६ |
| नारायणगिरिं नाम्ना क्रीडाद्रिं परमेष्ठिनः ।    |    |
| योजनत्रयविस्तारं त्रिंशद्योजनमायतम् ॥          | १७ |
| शेषाकारं हरेः शेषं शेषिणं सर्वदेहिनाम् ।       |    |
| दिव्याकारं महापुण्यं पश्यतां मोक्षदायकम् ॥     | १८ |
| एवंरूपं गिरिश्रेष्ठं स्कन्धदेशे निधाय तम् ।    |    |
| परिवारैरुपेतञ्च भगवत्परिचारकैः ॥               | १९ |
| आजगाम महावेगात् गरुडः काञ्चनप्रभः ।            |    |
| ततः ससम्भ्रमो वायुरुदभूच्च विहायसि ॥           | २० |
| धुन्वन् वृक्षांस्ततो भूमौ सूर्यकोटिरिवावभौ ।   |    |
| तेजोरूपस्ततः श्रीमानागतो विष्णुवाहनः ॥         | २१ |
| आगतं गरुडं वीक्ष्य 'स्थापयेह स्ववेश्वर !' ।    |    |
| इत्युवाच हरिः सोऽपि स्थापयामास तं तथा ॥        | २२ |

|                                                                                                   |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| ततो गिरिं समास्त्र्य श्वेतपोती हरिः स्थितः ।                                                      |    |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्चिमे पुण्यकानने ॥                                                          | २३ |
| विमाने विमले दिव्ये कोटिसूर्यसमप्रभे ।                                                            |    |
| अनेकरत्नस्वचित्तगोपुरायुतशोभिते ॥                                                                 | २४ |
| रत्नस्तम्भासमोपेतश्रीमहामणिमण्डपे ।                                                               |    |
| वाचामगोचरे सर्वनयनानन्दकारके ॥                                                                    | २५ |
| ततो जातु तटे स्वामिपुष्करिण्यास्तु दक्षिणे ।                                                      |    |
| मध्येविमानं पद्माक्षः श्रीनिवासः परात्परः ।                                                       |    |
| अतिष्ठदेवदेवोऽपि शङ्खचक्रगदाधरः ॥                                                                 | २६ |
| इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वैकुण्ठात् क्रीडाचलनयनकथनं नाम<br>चतुस्त्रिंशोऽध्यायः |    |

#### अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

##### देवादिकृतश्वेतचराहप्रार्थना

|                                               |   |
|-----------------------------------------------|---|
| तत्र देवाः सगन्धर्वा ब्रह्माद्या मुनयोऽपि च । |   |
| आजगुर्लोकपालाश्च शङ्करः पार्वतीपतिः ॥         | १ |
| ऋषयः सप्त वसवो रुद्रादित्या मरुद्गणाः ।       |   |
| तुष्टुवुश्च हृषीकेशं वासुदेवं जगत्प्रभुम् ॥   | २ |
| ‘जय लक्ष्मीश ! लोकेश जय भूमिधराच्युत ! ।      |   |
| जय विष्णो हिरण्याक्षविध्वंसनविचक्षण ! ॥       | ३ |
| दंष्ट्राकरालवदनं भ्रुकुटीकुटिलेक्षण ! ।       |   |
| भयङ्करमिदं रूपमत्युग्रं घोरदर्शनम् ॥          | ४ |
| ज्वलद्बभ्रुभुजानेकपार्श्वद्वयविराजितम् ।      |   |
| दृष्ट्वा तद्व्यथिताः सर्वे सुराश्च परमर्षयः ॥ | ५ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३५ तमोऽध्यायः ९

|                                                         |    |
|---------------------------------------------------------|----|
| अनुग्रहीतुं लोकान् वै त्वयाऽन्न स्वीयतां गिरौ ।         |    |
| भयङ्करं त्वदीयं वै रूपमद्भुतदर्शनम् ॥                   | ६  |
| तद्दृष्ट्वेद्विग्रहदया भवेयुरदृढा नराः ।                |    |
| देवतानां मनुष्याणां वासार्थं चोद्धृता धरा ॥             | ७  |
| तस्मान्मनुजरक्षार्थं सौम्यरूपं हि धारय ।                |    |
| ध्यानयोगेष्वशक्तानामशक्तानां च कर्मसु ॥                 | ८  |
| अस्माकं मनुजानां च स्त्रीशूद्राणां तथैव च ।             |    |
| दृश्यस्त्वं वरदो भूत्वा वस नित्यमिहैव भोः ! ' ॥         | ९  |
| इत्युक्तस्तैः प्रसन्नात्मा सौम्यरूपी चतुर्भुजः ।        |    |
| श्रीभूमिसहितस्तस्थौ पुण्डरीकनिभेक्षणः ॥                 | १० |
| शरत्पूर्णेन्दुवदनः सर्वाभरणभूषितः ।                     |    |
| श्रीनिवासः सुरान्तस्त्वान् समाह्वयेदमब्रवीत् ॥          | ११ |
| ‘वैकुण्ठात्परमो ह्येष वेङ्कटस्थो नगोत्तमः ।             |    |
| अत्रैव निवसाम्येव श्रीभूमिसहितो ब्रह्म ॥                | १२ |
| ददामि प्रार्थितानर्थान् मनुजेभ्यः सदा सुराः ! ' ।       |    |
| इत्युक्त्वा त्रिदशान्तस्त्वान् ब्रह्मेन्द्रप्रमुखानपि ॥ | १३ |
| यथाहं समनुज्ञाप्य तत्त्वैवान्तरधीयत ।                   |    |
| देवाश्च मुनयः सर्वे प्रतिजग्मुः स्वकालयान् ॥            | १४ |

सूतकृतं स्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यवर्णनम्

मुनयः—

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| ‘सूत ! पूर्वं गिरौ तस्मिन् ‘स्वामिपुष्करिणीति वै । |    |
| प्रसङ्गात् कथिता सा तु कीदृशी मुनिसत्तम ! ।        |    |
| गिरौ तस्याश्च माहात्म्यं वक्तव्यं भवतानघ ! ' ॥     | १५ |

श्रीसूतः—

|                                                                                                   |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| मुनयः श्रूयतां किञ्चिदुत्तरं सावधानतः ।<br>स्वामिपुष्करिणीं पुण्या सर्वपापप्रणाशिनी ॥             | १६ |
| वैकुण्ठात् भगवत्क्रीडावापी श्रीभूमिलालिता ।<br>अप्राकृतजलौघा च सुगन्धा सुमनोहरा ॥                 | १७ |
| गङ्गादिसर्वतीर्थानां जन्मभूमिः शुभोदका ।<br>आनीता वैनतेयेन क्रीडार्थं तत्र तिष्ठति ॥              | १८ |
| विरजावद्रजोदोषप्रमुखाघविनाशिनी ।<br>स्वर्णस्तेयसुरापानदोषप्रमुखनाशिनी ॥                           | १९ |
| ऐहिकार्थप्रदा नित्यं स्नानमात्रेण सर्वदा ।<br>दर्शनात्स्पर्शनात्पानात् स्मरणात्सर्वसिद्धिदा ॥     | २० |
| स्नानादिष्टप्रदा चेति किमु वक्तव्यमञ्जसा ।<br>ततस्तस्यास्तु माहात्म्यं वक्तुं देवोऽपि न प्रभुः ॥  | २१ |
| देवेभ्यस्तत्समीपस्था मनुजा भाम्यशालिनः ।<br>किन्तु जानन्ति तस्यास्तु वैभवं नैव मानुषाः ॥          | २२ |
| प्राकृताचलवद्भाति मानुषाणामयं गिरिः ।<br>तथाऽपि तेषां भक्तिस्तु शुद्धा भवति तद्विरौ ॥             | २३ |
| यस्य यस्य यथा भक्तिस्तस्य सिद्धिश्च तादृशी ।<br>स्वामिपुष्करिणीस्नानं सद्गुरोः पादसेवनम् ॥        | २४ |
| एकादशीव्रतञ्चापि त्रयमत्यन्तदुर्लभम् ।<br>दुर्लभं मानुषं जन्म दुर्लभं तत्र जीवनम् ॥               | २५ |
| स्वामिपुष्करिणीस्नानं त्रयमत्यन्तदुर्लभम् ।<br>अतस्तस्यास्तु माहात्म्यं वक्तुं शेषोऽपि न प्रभुः ॥ | २६ |
| यत्तु स्वामिसरःस्नानं महापातकनाशनम् ।<br>तच्चापि दृष्टं बहुधा तारकासुरसूदने ॥                     | २७ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३६ तमोऽध्यायः ११

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| प्रायश्चित्तप्रवृत्तानां नराणां सुलभा त्वयम् ।      |    |
| स्वामिपुष्करिणीं पुण्या तथा काम्यप्रदायिनी ॥        | २८ |
| वेङ्कटाद्रेर्विशेषेण दर्शनं यच्च वर्तते ।           |    |
| नित्यं नैमित्तिकं काम्यं प्रायश्चित्तं च तद्भवेत् ॥ | २९ |
| ‘विष्णोः कर्माणि प’ इयेति श्रुतिरेषा सनातनी ।       |    |
| नैमित्तिकं तत्कुर्वीत स्वामिपुष्करिणीतटे ॥          | ३० |
| अङ्गवैकल्यदोषाश्च न स्युः स्वामिसरस्तटे ।           |    |
| वासवादिष्वमोघञ्च दृष्टं कर्माऽत्र दृश्यते ॥         | ३१ |
| बहुनेह विमुक्तेन धर्मार्थादिफलेषु च ।               |    |
| वाञ्छावतां मनुष्याणां स्त्रीशूद्राणां च पापिनाम् ॥  | ३२ |
| साङ्गकर्मक्रियाऽशक्तनराणां च विशेषतः ।              |    |
| नान्या गतिर्वेङ्कटाद्रेः सत्यं सत्यं न संशयः ॥      | ३३ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवादिकृतश्चेतवराह-  
प्रार्थनादिकथनं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः

क्रीडाद्रिप्रविष्टश्रीवराहदिव्यवैभववर्णनम्

मुनयः —

|                                           |   |
|-------------------------------------------|---|
| ‘परावरज्ञ सर्वज्ञ ! सर्वभूतहिते रत ।      |   |
| मुने सूत ! महाभाग किञ्चित्पृच्छाम तद्वद ॥ | १ |
| वराहरूपी भगवान् धरामुद्धृत्य किं पुनः ।   |   |
| तदैव शेषशैलेन्द्रे न्यवसत्करुणालयः ॥      | २ |

|            |                                                      |    |
|------------|------------------------------------------------------|----|
|            | कालान्तरे वा तवैत्य स्थितवान् सर्वदा नु किम् ? ।     |    |
|            | अकरोद्वाऽथ किं तत्र किं दत्तं कस्य वा ' त्विति ॥     | ३  |
| श्रीसूतः — | ब्रवीमि तदशेषं च शृणुध्वं मुनिसत्तमाः ।              |    |
|            | आस्थाय श्वेतपोतित्वमुज्जहार धरां यदा ॥               | ४  |
|            | तदैवानाय्य वैकुण्ठादचलं गरुडेन वै ।                  |    |
|            | कल्पादावेव भगवान् लीलारसमहोदधिः ॥                    | ५  |
|            | विहरन् रमया सार्द्धं दरीनिर्झरसानुषु ।               |    |
|            | प्रकाशश्चाप्रकाशश्च तिष्ठत्येव सदा गिरौ ॥            | ६  |
|            | यावत्कल्पं वसत्येव प्रोक्तञ्च परमेष्ठिना ।           |    |
|            | कदाचित्पुण्यशीलेभ्यो दर्शनं वितरत्यसौ ॥              | ७  |
|            | कल्पे कल्पे च धरणीमुद्धरत्येवमेव ह ।                 |    |
|            | श्वेतवाराहरूपेण धरणीं चोद्धृता यतः ॥                 | ८  |
|            | श्वेतवाराहकल्पः सदास्त्वया मुनयो ह्ययम् ।            |    |
|            | साधूनां च यदा बाधा धर्मश्चायवसीदति ॥                 | ९  |
|            | यदा त्वधर्मो ह्यधिको दुष्टाश्च बलिनो यदा ।           |    |
|            | तदा कालनुरूपेण नरदेवादिरूपतः ॥                       | १० |
|            | सृष्ट्वाऽऽत्मानं महाविष्णुः संहरत्यहितांस्तदा ।      |    |
|            | अधर्मं सर्वमुत्सार्य सुधर्मं पालयत्यसौ ॥             | ११ |
|            | रक्षत्येव च सावृंश्च वेदविद्याश्च वर्धयन् ।          |    |
|            | स्वयं च सर्वभूतानां दृश्यस्तिष्ठति कुत्रचित् ॥       | १२ |
|            | सर्वदा शेषशैलेन्द्रे विहरन् रमया सह ।                |    |
|            | नित्यैर्मुक्तैश्च देवैश्च कामरूपैश्च संयुतः ॥        | १३ |
|            | तिष्ठत्येव सदा तस्मिन् वेङ्कटाख्ये नगोत्तमे ।        |    |
|            | वैकुण्ठस्वर्गसूर्येभ्यः स्वर्गोद्गमेभ्योऽधिकप्रियः ॥ | १४ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३६ तमोऽध्यायः १३

अयं भगवतो हृद्यः पर्वतः पुण्यकाननः ।  
मन्त्रसिद्धिस्तपस्सिद्धिर्यज्ञसिद्धिस्तथैव हि ॥ १५

### क्रीडाद्रेः भगवत्सान्निध्येन महिमाधिक्यवर्णनम्

कान्यस्य कर्मणः सिद्धिरे,मन्याश्च सिद्धयः ।  
भवन्त्यत्र नराणां च न हि विघ्नादिकं क्वचित् ॥ १६  
अल्पेन तपसाऽभीष्टं सिद्धयत्यस्मिन् गिरौ वरे ।  
सर्वतीर्थानि सततं पुण्यान्यत्रैव सन्ति हि ॥ १७  
य एनं सेवते नित्यं श्रद्धानक्तिसमन्वितः ।  
ज्ञानार्थी ज्ञानमाप्नोति द्रव्यार्थी कनकं बहु ॥ १८  
पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति नृपो राज्यञ्च विन्दति ।  
व्यङ्गश्च साङ्गसद्रूपं पशून् धान्यानि विन्दति ॥ १९  
यं यं कामयते मर्त्यस्तं तमाप्नोति सर्वथा ।

### क्रीडाद्रेः कारणभेदेनानेकनामानुवर्णनम्

चिन्तितस्य च सिद्ध्या तु चिन्तामणिमिमं विदुः ॥ २०  
केचिज्ज्ञानप्रदत्वाच्च ज्ञानाद्रिरिति तं विदुः ।  
सर्वतीर्थमयत्वाच्च तीर्थाद्रिं प्राहुरुत्तमाः ॥ २१  
पुष्कराणां च बाहुल्याद्विरावस्मिन्त्सरस्सु वै ।  
पुष्कराद्रिं प्रशंसन्ति मुनयस्तत्त्वदर्शिनः ॥ २२  
गिरावस्मिन्स्तपस्तेपे धर्मोऽपि स्वाभिवृद्धये ।  
तस्मादाहुर्वृषाद्रिं तं मुनयो वेदपाशराः ॥ २३  
शातकुम्भस्वरूपत्वात् कनकाद्रिं च तं विदुः ।  
द्विजो नारायणः कश्चित्तपः कृत्वा महत्पुरा ॥ २४

|                                                             |    |
|-------------------------------------------------------------|----|
| ऐच्छदस्य स्वानाम्ना च व्यपदेशं मुरारितः ।                   |    |
| तस्मान्नारायणाद्रिं तं विदुरुत्तमपूरुषाः ॥                  | २५ |
| वैकुण्ठादागतत्वेन वैकुण्ठाद्रिरिति स्मृतः ।                 |    |
| हिरण्याख्यविनाशाय प्रह्लादानुग्रहाय च ॥                     | २६ |
| नारसिंहाकृतिर्जज्ञे यस्मादस्मात्स्वयं हरिः ।                |    |
| सिंहाचल इति प्राहुस्तस्मादेनं मुनीश्वराः ॥                  | २७ |
| अञ्जना च तपः कृत्वा हनूमन्तमजीजनत् ।                        |    |
| तदा देवाः समागत्य देवसाहाय्यकारकम् ॥                        | २८ |
| यस्मात्पुत्रमसूतासौ जगुस्तस्मादिमं गिरिम् ।                 |    |
| अञ्जनाद्रिं, वराहाद्रिं वराहक्षेत्रलक्ष्मतः ॥               | २९ |
| नीलस्य वानरेन्द्रस्य यस्मान्नित्यमवस्थितिः ।                |    |
| तस्मान्नीलगिरिं नाम्ना वदन्त्येनं महर्षयः ॥                 | ३० |
| <sup>१</sup> वेङ्कारोऽमृतबीजन्तु कटमैश्वर्यमुच्यते ।        |    |
| अमृतैश्वर्यसङ्घत्वात् वेङ्कटाद्रिरिति स्मृतः ॥              | ३१ |
| यतः कदाचिद्देवानां श्रीनिवास <sup>२</sup> इहाबभौ ।          |    |
| श्रीनिवामगिरिं प्राहुस्तस्मादेनं दिवौक्तः ॥                 | ३२ |
| आनन्दोद्दिमिं प्राहुर्वैकुण्ठपुरवासिनः ।                    |    |
| प्राहुर्भगवतः क्रीडाप्राचुर्यात्तु तथा <sup>३</sup> सुराः ॥ | ३३ |
| श्रीप्रदत्वाच्छिष्यो वासाच्छब्दशक्त्या च योगतः ।            |    |
| रूढ्या श्रीशैल इत्येवं नाम चास्य गिरेरभूत् ॥                | ३४ |
| बहूनि चान्यनामानि कल्पभेदाद्भवन्ति हि ।                     |    |
| यावदुक्ता भगवतः कल्याणगुणशयः ॥                              | ३५ |

1. वकरो. 2. इवाऽऽबभौ. 3. तथा = क्रीडाद्रिम.

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३७ तमोऽध्यायः १५

तावन्तोऽस्य गिरेः सन्ति गुणाः परमपावनाः ।  
अस्य वेङ्कटशैलस्य माहात्म्यं यावदस्ति हि ॥ ३६  
तावद्वक्तुं च कात्स्न्येन न समर्थश्चतुर्मुखः ।  
षण्मुखश्च सहस्रास्यः फणी देवाः परे विमु ? ॥ ३७  
श्रुत्वा सूतमुखाच्चैव मुनयो हृष्टमानसाः ।  
न तृप्तिमाययुस्ते हि भूयः श्रवणकौतुकात् ॥ ३८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये क्रीडाद्रिऽविष्ट - श्रीवाराहदिव्य-  
वैभवादिवर्णनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः

अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः

महर्षियज्ञवाटं प्रति भगवदागमनम्

श्रीसूतः —

‘तद्विरौ किं कृतं तेन वेङ्कटेशेन तद्वद’ ।  
इत्युक्तं यच्च युष्माभिस्तत्र किञ्चिद्वदाम्यहम् ॥ १  
मायिना सर्वशक्तेन लीलापरवशेन च ।  
कृतं तु वक्तुं कात्स्न्येन केन शक्यं तपोधनाः ! ॥ २  
स कदाचिन्महामायी विटवेषं वहन्मुदा ।  
गिरावुत्तरदिग्भागे चचार रमया सह ॥ ३  
तत्र केचिन्महाभागा मुनयस्तत्त्वदर्शिनः ।  
गिरेरस्य तु माहात्म्यं श्रुतवन्तस्तपोधनाः ॥ ४  
अयं गिरिर्महापुण्यः सर्वसत्त्वसमाश्रयः ।  
निर्बाधः फलमूलद्वयः सर्ववृक्षसमावृतः ॥ ५  
नानाप्रसवणोपेतो याज्ञियैश्च महीरुहैः ।  
अन्यैस्तापसयोग्यैश्च पादपैरपि सङ्कुलः ॥ ६

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| नयनानन्दजनको हृदयाहादकारकः ।                       |    |
| अस्माभिः सर्वदा वासः कर्तव्योऽत्र महागिरौ ॥        | ७  |
| इति निश्चित्य मनसा तत्राऽऽगत्य तपोधना ।            |    |
| चक्रुर्यज्ञं यथाशस्त्रं विष्णुमुद्दिश्य कौतुकात् ॥ | ८  |
| सोऽपि मायी स्त्रिया सार्धं यज्ञवाटमुपागमत् ।       |    |
| सुवर्णचित्रितं वस्त्रं वसानः शुभदर्शनः ॥           | ९  |
| सोष्णीषश्च करेणैव वामेन छुरिकां दधत् ।             |    |
| ताम्बूलेन शुचिस्निग्धमन्दस्मितमुखाम्बुज ॥          | १० |
| मृगोत्थमदगन्धेन सुरभीकृतदिङ्मुखः ।                 |    |
| पुण्डरीकविशालक्षः कम्बुग्रीवो महाभुजः ॥            | ११ |
| जगन्मोहनसौन्दर्यः साक्षात्कन्दर्पसन्निभः ।         |    |
| हेमयज्ञोपवीताङ्गः कोमलङ्गो मनोहरः ॥                | १२ |
| प्रविवेश सभां याज्ञीं मध्येवृन्दं महात्मनाम् ।     |    |
| दृष्ट्वा च मुनयः सर्वे पुण्डरीकनिभेक्षणम् ॥        | १३ |
| वेद्यावेवं धारयन्तीं लीलाम्बुजकराम्बुजाम् ।        |    |
| तप्तहाटकसङ्काशां पङ्कजोदरसप्रभाम् ॥                | १४ |
| हरिद्रान्तरतुल्याभां दीव्यन्तीं कुटिलालकाम् ।      |    |
| शरत्पूर्णेन्दुवदनां ताम्बूलेन मनोहराम् ॥           | १५ |
| कर्णान्तनेत्रयुगलं विडम्बितरविप्रभाम् ।            |    |
| अभूतपूर्वसौन्दर्या साक्षालक्ष्मीमिव स्थिताम् ॥     | १६ |
| दृष्ट्वा च मुनयः सर्वे विस्मयोत्फुल्लमानसाः ।      |    |
| कोऽसौ राजपुतस्त्वेष पृथिवीं भोक्तुमर्हति ॥         | १७ |
| द्वात्रिंशलक्षणेपेतः साक्षाद्राम इवापरः ।          |    |
| ‘ किमर्थमागतस्त्वं ’ तु पृच्छाम इति चाब्रुवन् ॥    | १८ |



श्रीवाराहपुगणे प्रथमभागे ३७ तमोऽध्यायः १७

‘आवासः कुल ते माता का वा ते जनकः कुतः ।  
नामधेयं च किं वा ते ब्रूहि राजन्नशेषतः’ ॥ १९

श्रीभगवान्—

‘नाहं राजा न वा विप्रः काचिज्जातिश्च नैव मे ।  
न च माता न च पिता नैवाऽवासश्च कुत्रचित् ॥ २०  
सर्वाऽवासः सर्वभक्षः सर्वगः सर्वरूपधृक् ।  
निर्नामा निर्गुणश्चाहं युष्मान्द्रष्टुमिहागतः ॥ २१  
भवन्तस्तपसा श्रेष्ठा वेदवेदान्तपारगाः ।  
वदन्त्वौदुम्बरी सर्वा वेष्टिता ध्याम्रवाससा ॥ २२  
स्पृष्टेद्भानं कथं त्वन्न सम्भवेन्मुनयोऽमलाः’ ।  
एवमादिक्रियालोपं पृष्टवान् यज्ञसंसदि ॥ २३  
मुनयस्तेऽथ सम्भूय ‘वपाकालस्तु गच्छति’ ।  
इति ते त्वरिताः सर्वे समिद्धे जातवेदसि ॥ २४  
पुण्यगन्धं वपाहोमं चक्रुः शास्त्रोक्तमार्गतः ।  
सोऽपि वेगात्तल गत्वा शङ्खचक्रगदाधरः ॥ २५  
श्रीवत्सवक्षा नित्यश्रीः सर्वभरणभूषितः ।  
वपां जग्राह पाणिभ्यां कोटिसूर्यसमप्रभः ॥ २६  
तदा तु मुनयः सर्वे प्रभया स्तिमितेक्षणाः ।  
तस्थुस्तपोधनास्तत्र क्षणं चित्तापिता इव ॥ २७  
‘प्रीतोऽहं’ मिति तान्त्सर्वानुक्त्वाऽदृश्यो बभूव ह ।  
मुनयश्च तदा प्रीताः साक्षाद्विष्णुः समागतः ॥ २८  
अस्माकं भाग्यमतुलं जीविनं च सुजीवितम्’ ।  
इति यागक्रियारोपं चक्रुः कौतुकसम्भ्रानात् ॥ २९

एतत्सर्वं समाख्यातं जाबालिमुनिना पुरा ।

अन्यच्च कथितं तेन तच्चाहं कथयामि वः ॥

३०

**वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारप्राप्तिः**

पुरा तु वेङ्कटाग्रेशश्चचार गिरिर्दूर्ध्वनि ।

कुमारः सन् विशालाक्षः कोमलाङ्गो मनोहरः ॥

३१

वृद्धः कश्चिद् द्विजो दृष्टस्तेन जर्जरिताऽकृतिः ।

भग्नदृष्टिर्भगवानुः क्षुत्तृष्णापरिपीडितः ॥

३२

मार्गभ्रष्टो वने तत्र कुतश्चिच्छैलमाश्रितः ।

‘क वा गतोऽसि कौण्डिन्य! शतवर्षं दिहाय माम्’ ॥

३३

इति जल्पन्मुहुः शुष्ककण्ठेष्पुटतालुकः ।

तत्रस्थेन कुमारेण ‘किमर्थमिह जल्पसि?’ ॥

३४

न कश्चिदत्र मनुजः कौण्डिन्यः कुत तिष्ठति?’ ।

इत्युक्तः प्राह वृद्धश्च ‘नितरां मृतवानहम् ॥

३५

कथं गच्छाम्यहं तावदाश्रमं दूरतः स्थितम् ।

शौचाचारक्रियाऽशक्तं रिक्तं बन्धुविवर्जितम् ॥

३६

किमर्थं स्थापयत्यस्मिन् लोके मां दुर्बलं विधिः’ ।

एवं ब्रुवति तस्मिन्स्तु निर्हेतुकदयानिविधः ॥

३७

कुमारः प्राह तं वृद्धं सोपहासमिदं वचः ।

‘तव विप्र शरीरञ्च जरितं पलितं तथा ॥

३८

लम्बेते पक्ष्मणी त्वक् च न च पश्यसि किञ्चन ।

अतः परं च विप्रेन्द्र! जीवनेच्छा तवास्ति किम्? ॥

३९

न वा पूर्वोक्तवाक्यन्तु सत्यं वा वद सुव्रत’ ।

इत्युक्तः प्राह विप्रोऽपि ‘नास्तीच्छा जीवने मम ॥

४०

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३७ तमोऽध्यायः १९

|                                                        |    |
|--------------------------------------------------------|----|
| किन्तु नित्यानि कर्माणि ज्योतिष्टोममुखानि च ।          |    |
| नानुष्ठितानि देवानामृणी कथमहं पुनः ॥                   | ४१ |
| त्यक्ष्यामि देहं भो राजन्! सत्यमेव ब्रवीमि ते ।        |    |
| इत्युक्तः प्राह तं विप्रं 'गृहाणेमं करं' त्विति ॥      | ४२ |
| सोऽपि तत्करमालम्ब्य शनैस्तेन जगाम च ।                  |    |
| कचित्प्रसवणं पुण्यं दर्शयित्वा शुभोदकम् ॥              | ४३ |
| 'स्नानं कुर्वत्र गच्छावस्तवाश्रमपदं ततः' ।             |    |
| इत्युक्तस्तेन विप्रेन्द्रः स्नात्वा तत्रैत्यितः पुनः ॥ | ४४ |
| अभूदभूतपूर्वश्च कुमारः षोडशाब्दकः ।                    |    |
| कुमारोऽपि सहस्राक्षः सहस्रवदनोऽभवत् ॥                  | ४५ |
| सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्रभुजमण्डितः ।               |    |
| तत्र देवाः समाजमुराकाशे विस्मिताः पुनः ॥               | ४६ |
| पुष्पवृष्टिर्महत्यासीत् देवदुन्दुभ्यस्तदा ।            |    |
| नेदुः सर्वेऽपि तं देवाः तुष्टुवुः स्तोत्रसत्तमैः ॥     | ४७ |
| देवः प्राह द्विजं वृद्धं 'कुरु कर्माणि सर्वतः ।        |    |
| कर्मानुष्ठानसिद्धयर्थं धनं दत्तञ्च ते बहु' ॥           | ४८ |
| इत्युक्त्वा तं द्विजश्रेष्ठं तत्त्वैवान्तरधीयत ।       |    |
| सम्भूय देवाः सर्वेऽपि प्रोचुर्वाक्यमिदं तदा ॥          | ४९ |
| 'अयं वृद्धः कुमारोऽभूद्यस्मात्स्मादयं नदी ।            |    |
| 'कुमारधा' रेति सदा लोके ख्यातिं गमिष्यति ॥             | ५० |
| त्रिकालमत्र यः स्नाति त्रिमासं विजितेन्द्रियः ।        |    |
| बली पलितनिर्मुक्तो वज्रकायो भवेन्नरः ॥                 | ५१ |
| सर्वपापविनिर्मुक्तो याति विष्णोः परं पदम् ।            |    |
| इत्युक्त्वा त्रिदशाः सर्वे जग्मुर्विस्मितमानसाः ॥      | ५२ |

इति जाबालिकथितं तदुक्तं भवतां मया ।

य इदं शृणुयान्मर्त्यो लभते स्नानजं फलम् ॥ ५३

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये महर्षियज्ञवाटं प्रति रूपान्तरेण  
भगवदागमनजलधारादिवर्णनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः



अथ अष्टत्रिंशोऽध्यायः

श्रीसुतः —

अष्टराज्यस्य शङ्खणनृपस्य राज्यप्राप्तिक्रमः

वाल्मीकिना मुनीन्द्रेण किञ्चिदुक्तं श्रुतं मया !

तदुच्यते मया यूयं शृणुष्वं मुनिसत्तमाः ! ॥ १

साङ्काशये सोमवंशीयः शङ्खणः पृथिवीपतिः ।

अनेकदेशसहितं बहुविस्तारसंयुतम् ॥ २

परम्परागतं राज्यं चक्रेऽखण्डपराक्रमः ।

स कदाचिन्महाराजः कृतपुण्यदिपर्ययात् ॥ ३

सामन्तराजभिः सर्वैर्हृतराज्यो महीपतिः ।

तस्मात्समर्थः सामात्यो देशान्निर्गत्य दुःस्वितः ॥ ४

दक्षिणां दिशमासाद्य रामसेतुं ददर्श ह ।

तत्र स्नात्वा शनैः पश्चादाजगाम नदीं ततः ॥ ५

सुवर्णमुखरीं तत्र स्नात्वा चोत्तरतीरतः ।

पादं सरः समागम्य तत्र स्नानं चकार सः ॥ ६

नित्यं च विधिवत्कृत्वा न्यवसद् दुःस्वर्षद्वितः ।

‘राज्याङ्गंशो वने वासः स्वामित्वञ्च हतं परैः ॥ ७

पारतन्त्र्यं महद्दुःखं मरणादतिरिच्यते ।

भविता जीवनं कस्मात् क्व वा गच्छामि क्व गतिः ? ॥ ८

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३८ तमोऽध्यायः २१

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| इति शोकसमाविष्टस्तथौ निद्रामुपागतः ।               |    |
| अशरीरा जगादैर्न तदानीं शोकपीडितम् ॥                | ९  |
| ‘ मा शुचस्त्वं महाबाहो धैर्यमालम्ब्य बुद्धिमान् ।  |    |
| इत उत्तरदिगागे क्रोशमात्रे महागिरिः ॥              | १० |
| वेङ्कटाचल इत्येव प्रथितः पृथिवीतले ।               |    |
| आपन्नकामधेनुर्यः शोकार्तानां सुरद्रुमः ॥           | ११ |
| चिन्तामणिरिवार्तानां तत्राऽस्ते कमलापतिः ।         |    |
| निर्हेतुकदयापूर्णः श्रितानामिष्टदः सदा ॥           | १२ |
| तत्राऽस्ते पद्मिनी काचित्कुलपङ्कजशोभिता ।          |    |
| स्वामिपुष्करिणीत्येव नामतः प्रथिता शुभा ॥          | १३ |
| तत्पश्चिमे तटे श्रीमान् महावाल्मीकभूधरः ।          |    |
| उत्तिष्ठ तत्र गच्छ त्वं तत्तीरे कुटिकां कुरु ॥     | १४ |
| तत्र स्थित्वा त्रिसन्ध्यं वै तत्रैव स्नानमाचरन् ।  |    |
| तत्र स्थितं वेङ्कटेशं भावयित्वा च बुद्धितः ॥       | १५ |
| चतुर्भुजं शङ्खचक्रे दधानं वरदं हरिम् ।             |    |
| अभ्यर्चयन्मासषट्कं श्रद्धात्तत्तिसमन्वितः ॥        | १६ |
| निवस त्वं महाबाहो स्वामित्वं प्राप्स्यसि ध्रुवम् । |    |
| तच्छ्रुत्वा वचनं तस्या गतशोकः प्रसन्नधीः ॥         | १७ |
| आरुरोह गिरेः शृङ्गं पुण्यं परमपावनम् ।             |    |
| चम्पकाशोकपुत्रागचूतधातीसमन्वितम् ॥                 | १८ |
| चन्दनागरुहिन्तालरक्तचन्दनभास्वरम् ।                |    |
| चमरीमृगसाहसं कस्तूरीमृगसेवितम् ॥                   | १९ |
| शुककेविलसन्नादमयूरस्वनशोभितम् ।                    |    |
| एवं मनोहरं शृङ्गमारुह्य कनकोपमम् ॥                 | २० |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| मृगयामास तत्तीर्थं चिह्नतस्तत्र तत्र वै ।       |    |
| ददर्श सरसीं तत्र निर्मलस्फटिकोपमाम् ॥           | २१ |
| तिलकाशोकपुन्नागवकुलैश्च विशोभिताम् ।            |    |
| रम्योपवनसंशुद्धां रक्तराजीवराजिताम् ॥           | २२ |
| मत्स्यकच्छपसम्बाधां तीरस्थतरुभास्वराम् ।        |    |
| पुष्पताम्रवणोपेतां केकिनेकारवाकुलाम् ॥          | २३ |
| तिलकैर्वीजपूरैश्च वरैः शुक्लद्रुमैस्तथा ।       |    |
| पुष्पतैः करवीरैश्च भाण्डारैर्निचुलैस्तथा ॥      | २४ |
| अशोकैः सप्तपर्णैश्च केतकैरतिमुत्तकैः ।          |    |
| अन्यैश्च विविधैर्वृक्षैः पुष्पतैश्च मनोहराम् ॥  | २५ |
| स्वामिपुष्करिणीं दृष्ट्वा प्रमुमोद महामनाः ।    |    |
| कृत्वा तु कुटिकां तत्र निवासमकरोद्बुधः ॥        | २६ |
| स्नानं त्रिषवणं कुर्वन् वेङ्कटेशं समर्चयन् ।    |    |
| व्रती च नियताहारो मासषट्कमवर्तत ॥               | २७ |
| ततः स्वामिसरोमध्यात् उदतिष्ठन्महाद्भुतम् ।      |    |
| अनेकसूर्यसङ्काशं शोभयच्च दिशो दश ॥              | २८ |
| दिव्यं विमानं तत्रैव तस्थौ देवः श्रियःपतिः ।    |    |
| शङ्खचक्रगदापाणिः श्रीभूमिसहितः परः ॥            | २९ |
| तत्र देवाः समाजमुर्ब्रजाद्या मुनयोऽपि च ।       |    |
| सिद्धा विद्याधराश्चैव किन्नराश्च दिशाधिपाः ॥    | ३० |
| वसवः सप्त मुनयः साध्या रुद्राः समागताः ।        |    |
| भेरीमुरजवाद्यानि नेदुश्चाकाशवर्त्मनि ॥          | ३१ |
| गीतं नृत्तञ्च वाद्यञ्च चक्रुः सर्वाश्च देवताः । |    |
| तुष्टुवुः परमोदारैर्वेदमन्त्रैर्दिवौकसः ॥       | ३२ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३८ तमोऽध्यायः २३

ससम्भ्रमं समुत्थाय शङ्खणः प्रणिपत्य च ।  
स्तुत्वाऽथ देवदेवेशं व्यजिज्ञपदं नृपः ॥ ३३  
'देवदेव जगन्नाथ जगद्रक्षणतत्पर ! ।  
भवद्दत्तं क्रमायातं स्वामित्वं मम केशव ! ॥ ३४  
हृत् राजभिराक्रान्त्य राज्याद्भ्रष्टोऽस्यभाम्यतः ।  
रक्ष मां करुणासिन्धो महोदार जगत्पते ! ॥ ३५  
न जाने व्रतशीलञ्च नियमं वा जपदिकम् ।  
दिष्टञ्च दृष्टो मया स्वामिन्नमेघं दर्शनं तव' ।  
इत्युक्तः कालमेघाभो बभूवेऽथ श्रियःपतिः ॥ ३६

श्रीनिवासः—

'मा शुचस्त्वं मया दत्तं स्वामित्वं पूर्वमागतम् ।  
यस्मात्तव महाभक्तिः स्वामिपुष्करिणीजले ॥ ३७  
ये केचन समागत्य स्नानं कुर्वन्ति संयताः ।  
स्वामिपुष्करिणीतीर्थे स्वामित्वं प्राप्नुयुर्नराः ॥ ३८  
तेषां व्रतानुगुण्येन स्वामित्वं भवति ध्रुवम् ।  
स्याद्वि तेषां परावीननावलेशः कदाऽपि न ॥ ३९  
त्वं च गत्वा महीपाल ! कुरु राज्यमकण्टकम्' ।  
समक्षं देवदेवानामित्युक्त्वाऽन्तरधीयत ॥ ४०  
स्वामिपुष्करिणीशब्दो रुढस्तस्मिन्सरोवरे ।  
व्युत्पत्तिः कथिता 'यस्यास्तीर्थानां स्वामिनी यतः ॥ ४१  
स्वामिपुष्करिणी' त्येव तस्मात्पूर्वं पुरातनैः ।  
प्रोक्तेदानीं भगवता व्युत्पत्तिस्तस्य सम्मता ॥ ४२  
स्वामित्वस्य प्रदानाच्च स्वामिपुष्करिणी त्वियम् ।  
अहो महत्त्वं तीर्थस्य दर्शनं पापनाशनम् ॥ ४३

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| धन्यास्त्वेते महाभागा एतद्विषयवासिनः ।            |    |
| इत्युक्त्वा त्रिदशाः सर्वे ययुः फुल्लहृदम्बुजाः ॥ | ४४ |
| शङ्खणोऽपि महाराजः सभार्यो हृष्टमानसः ।            |    |
| अवरुह्य गिरेस्तस्मात् स्वञ्च देशं जगाम ह ॥        | ४५ |
| तद्राज्यहारिणः सर्वे परस्परजिगीषया ।              |    |
| ‘मम राज्यमिदं राज्यं ममै’ वेत्युद्यतायुधाः ॥      | ४६ |
| अन्योन्यमाहताः सन्तः परिक्षीणाश्च तेऽभवन् ।       |    |
| ‘मद्येऽस्माकं न कस्यापि राज्यं तस्यैव तद्भवेत्’ ॥ | ४७ |
| इति निश्चित्य मनुजाः प्रेरिता राजभिस्तदा ।        |    |
| गोदावरीतीरदेशे शङ्खणं ददृशुर्मुदा ॥               | ४८ |
| ‘तव राज्यं महाभाग! तुभ्यं दत्तञ्च राजभिः’ ।       |    |
| आगच्छ भुङ्क्व राज्यं त’ दित्युक्तस्तैर्महीपतिः ॥  | ४९ |
| स्वकं देशं ययौ राजा काम्भोजं नाम नामतः ।          |    |
| ततः सर्वेऽपि राजानः शङ्खणं च वरासने ॥             | ५० |
| स्थापयित्वा जलैः पूतैरभिषिच्य ययुः पुरात् ।       |    |
| सोऽपि स्वदेशमासाद्य स्वामित्वं प्राप्य पूर्ववत् ॥ | ५१ |
| वेङ्कटेशप्रसादेन चक्रे राज्यमकण्टकम् ।            |    |
| श्रुतं महत्त्वं तीर्थस्य मुनयः किं तपोधनाः ? ॥    | ५२ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अष्टराज्यस्य शङ्खणनृपस्य  
राज्यप्राप्तिक्रमवर्णनं नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥





अथ एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

### आत्मारामाख्यविप्रस्य सम्पत्प्राप्तिक्रमः

श्रीसूतः —

|                                                                                                     |    |
|-----------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| ‘वाल्मीकिना मुनीन्द्रेण यदुक्तं तन्मयाऽपि हि ।<br>उक्तं तेनान्यदुक्तं तद् वक्ष्यते श्रूयतां बुधाः ॥ | १  |
| मध्यदेशे द्विजः कश्चिदात्माराम इति श्रुतः ।<br>महाकुलप्रसूतश्च देवब्राह्मणपूजकः ॥                   | २  |
| पिता च तस्य प्रथितः पृथिव्यां ब्राह्मणोत्तमः ।<br>अत्यन्तं विष्णुभक्तश्च वेदवेदाङ्गपारगः ॥          | ३  |
| असावपि विनीतश्च सर्वविद्वत्परिग्रहः ।<br>पितर्युपरते तस्य क्रमायातं धनं गतम् ॥                      | ४  |
| वृत्तिश्च शिथिलः जाता पूज्यता न च कुत्रचित् ।<br>‘महाकुलप्रसूतस्य ममेयं वृत्तिरीदृशी ॥              | ५  |
| अपकीर्तिर्महत्तयेषा पूर्वेषां मम सर्वदा ।<br>किं कुर्मः कुत्र गच्छाम’ इति चिन्तामहाम्बुधौ ॥         | ६  |
| ममः शनैर्जगामासौ वेङ्कटद्रेः समीपगम् ।<br>आगत्य कापिलं तीर्थं कपिलेश्वरसन्नधौ ॥                     | ७  |
| तत्र स्नात्वा तदारभ्य तीर्थेषु दशसप्तसु ।<br>क्रमेण स्नातुमारेभे समारुह्य गिरिं वत्सम् ॥            | ८  |
| स्नानेन गतपापश्च चित्तनैर्मल्यसंयुतः ।<br>अधित्यकायामासीनश्चिन्ताशोकपरायणः ॥                        | ९  |
| तत्समीपगुह्यामध्ये ध्यानयोगपरायणम् ।<br>सनत्कुमारं योगीन्द्रं ददर्श ज्वलनोपमम् ॥                    | १० |

|                                                                                                       |    |
|-------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| ‘अदृष्टपूर्वो योगीन्द्रो वेत्ति सर्वमयं बुधः ।<br>पृच्छाम्येनं हितं किञ्चि’ दिति कृत्वा प्रणम्य तम् ॥ | ११ |
| ‘निरयाधिकदुःखेन दुःखितः पापकर्मकृत् ।<br>त्वामहं शरणं प्राप्तस्त्वं वेत्थ ब्रूहि मे हितम्’ ॥          | १२ |
| इति भूमौ पपातासौ साष्टाङ्गं तस्य सन्निधौ ।<br>सोऽपि ध्यायंश्चिरं कालं व्याजहार मिताक्षरम् ॥           | १३ |
| ‘उत्तिष्ठ वत्स! किं शेषे कृत्वा घोरं पुरा भवे ।<br>पापमस्मिन्भवे पक्वे तस्मिन् शोचसि किं वृथा ॥       | १४ |
| पुरा तु दानविघ्नाश्च प्रत्यूहाश्च प्रतिग्रहे ।<br>सुखस्थितानां पीडाश्च त्वया नानाविधाः कृताः ॥        | १५ |
| किञ्चित्किञ्चिद्विजेभ्यो वा वित्तं दत्तं न तु त्वया ।<br>गृहं क्षेत्रं पशुधान्यं वस्त्रमाभरणं तथा ॥   | १६ |
| अनाचाराः कृतास्तत्र न त्वाचारलवस्त्वया ।<br>प्रणतार्तिहरे विष्णौ प्रणताभीष्टदायिनि ॥                  | १७ |
| न कृतो भक्तिलेशोऽपि कथं सौख्यं भविष्यति ।<br>तथाऽप्यस्ति तवोपायो वदामि शृणु सादरम्’ ॥                 | १८ |
| इति कर्णामृतं श्रुत्वा वचः प्राह कृताञ्जलिः ।<br>‘दुःखसागरमग्नस्य मम पोत इवागतः ॥                     | १९ |
| आतपक्लिन्नसस्यानां यथा वृष्टिस्तथा भवान् ।<br>निधिर्यथा निर्धनानां रोगिणां वा यथा निषक् ॥             | २० |
| तथा मया भाग्यलेशात् आप्तस्त्वं हि दयानिधिः ।<br>रक्ष मां पापिनं घोरं दययेक्षस्व चक्षुषा’ ॥            | २१ |
| इत्युक्तः प्राह योगीन्द्रः कारुण्याब्धितरङ्गितः ।<br>‘महद्गहस्यं तत्त्वार्थं शृणु वत्स ब्रवीमि ते ॥   | २२ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३९ तमोऽध्यायः २७

सनत्कुमारकथितव्यूहलक्ष्मीमन्त्रोद्धारक्रमः

श्रीसनत्कुमारः—

दयालोत्तरङ्गाक्षी पूर्णचन्द्रनिभानना ।  
जननी सर्वलोकानां महालक्ष्मीर्हरिप्रिया ॥ २३  
सर्वपापहरा सैव प्रारब्धस्यापि कर्मणः ।  
संहृत्तौ तु क्षमा सैव सर्वसम्पत्प्रदायिनी ॥ २४  
तस्या व्यूहप्रभेदास्तु लक्ष्मीः कीर्तिर्जदयेति च ।  
तत्र या व्यूहलक्ष्मीः सा मुग्धा कारुण्यविग्रहा ॥ २५  
अनायासेन सा लक्ष्मीः सर्वपापप्रणाशिनी ।  
सर्वैश्वर्यप्रदा नित्यं तस्या मन्त्रमिमं शृणु ॥ २६  
“ वेदादिमायै मात्रे च लक्ष्म्यै नतिपदं वदेत् ।  
परमेति पदं चोक्ता लक्ष्म्या इति पदं ततः ॥ २७  
विष्णुवक्षःस्थितायै स्यान्माया श्रीतारिका ततः ।  
वह्निजायान्तमन्त्रोऽयमभीष्टार्थसुरद्रुमः ” ॥ २८  
द्विभुजा व्यूहलक्ष्मीः स्याद् बद्धपद्मासनप्रिया ।  
श्रीनिवासाङ्गमध्यस्था सुतरां केशवप्रिया ॥ २९  
तामेव शरणं गच्छ सर्वभावेन सत्वरम् ।  
इति मन्त्रमुपादिश्य ददृशे न च कुत्रचित् । ३०  
भीतोऽसौ विस्मितश्चैव सन्तोषपुलकाङ्कितः ।  
‘ अद्य मे रजनी ल्युष्टा शुभा जन्म च सत्फलम् ’ ॥ ३१  
इति मन्त्रं शुचिर्भूत्वा जपन्नारुह्य पर्वतम् ।  
तत्र तत्र गिरौ पश्यन् झरान् पर्वतनिर्गतान् ॥ ३२  
स्वामिपुष्करिणीं प्राप शनैर्दिष्टया महाद्भुताम् ।  
आकाशादवरुह्यात्र स्थितां मन्दाकिनीमिव ॥ ३३

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| विरजामिव पापघ्नीं पुण्यदां पुण्यसेविताम् ।          |    |
| आत्मारामस्तथा तत्र सखौ शस्त्रे यथे दितम् ॥          | ३४ |
| स्नाने कृते तस्य देहो भारपाते यथा लघुः ।            |    |
| तत उत्थाय तत्पुण्यं ददर्श वनमुत्तमम् ॥              | ३५ |
| तत्र दृष्टं महद्दाम विमानं सिद्धसेवितम् ।           |    |
| अनेकगोपुरोपेतं मण्डपानन्त्यसंयुतम् ॥                | ३६ |
| अनेकरत्नखचितं तप्तहाटकनिर्मितम् ।                   |    |
| गन्धर्वनगरप्रख्यं दृष्टिचित्तापहारकम् ॥             | ३७ |
| नृत्तवादित्ररुचिरं सुरसङ्घनिषेवितम् ।               |    |
| ‘ किमिदं निर्जने दृष्टं वनेऽस्मिन् महद्भुतम् ’ ॥    | ३८ |
| इति विस्मयसम्कुलहृदयाम्भोरुहस्तदा ।                 |    |
| द्रष्टुं विमानं तद्विल्यं ययौ पुण्यफलोदयः ॥         | ३९ |
| ददर्श तत्र फुलाब्जनयनं वेङ्कटेश्वरम् ।              |    |
| शङ्खचक्रधरं श्रीशं वरावनतहस्तकम् ॥                  | ४० |
| किरीटमकुटोपेतं कुण्डलाभ्यां विराजितम् ।             |    |
| सर्वाभरणसम्पूर्णं पीताम्बरधरं विभुम् ॥              | ४१ |
| कोटिकन्दर्पलावण्यं श्रीभूमिसहितं परम् ।             |    |
| ‘ त्वमेव परमं धाम त्वमेव परमा गतिः ॥                | ४२ |
| त्वमेव जगतां स्रष्टा धाता हर्ता महेश्वरः ’ ।        |    |
| इति स्तुतं शिवेनापि विधिनाऽपि स्तुतं सदा ॥          | ४३ |
| प्रणम्योत्थाय सन्तोषात् स्तोतुं गद्गदकण्ठधृक् ।     |    |
| ‘ सर्वं त्वमेव जानासि सर्वात्मस्त्वां नमाम्यहम् ’ ॥ | ४४ |
| इति प्रणम्य भूयोऽपि तूष्णीं पश्यन् स्थितोऽग्रतः ।   |    |
| सर्वज्ञः करुणारूपः श्रीनिवासः परात्परः ॥            | ४५ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४० तमोऽध्यायः २९

ज्ञात्वा मुग्धश्च तं प्राह 'मा भैषीर्मा शुचः पुनः ।  
क्षान्तं त्वया कृतं सर्वं व्यूहलक्ष्मीं विमृश्य तत् ॥ ४६  
ऐश्वर्यं सुमहदत्तं दीर्घकालानुबन्धनम् ।  
दीर्घमायुश्च ते दत्तमारोग्यं ज्ञानशीलता ॥ ४७  
मया दत्तान् द्विजश्रेष्ठ! भुङ्क्ष्व भोगान् बहूनापि ' ।  
एवं बुवति देवेशे प्रणनाम पुनश्च तम् ॥ ४८  
उत्थाय भूयो देवं च नापश्यः पुण्यकाननम् ।  
अतिभीतः परिक्रम्य सरस्तीरं विमृश्य च ॥ ४९  
स्वप्नो मतिभ्रमो वाऽपि माया वा सत्यमेव वा ? ।  
न जाने देवदेवेश! सत्यमेव भवेत्तु वा ' ॥ ५०  
इति ब्रुवन् द्विजस्तस्मादवरुह्य गिरेस्ततः ।  
पर्यन्ते वेङ्कटाद्रेस्तु वासं चक्रे प्रसन्नधीः ॥ ५१  
यथेप्सितं सुखं रेमे दीर्घकालेन वै द्विजः ।  
इति वाल्मीकिना पूर्वमुक्तमुक्तं मया पुनः ॥ ५२

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये आत्मारामाख्यविप्रस्य  
सम्पत्प्राप्त्यादिवर्णनं नाम एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ चत्वारिंशोऽध्यायः

कापिलादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यम्

श्रवणः—

'वराहाद्रिकथा नृणां श्रोतृणाममृतोपमा ।  
वैकुण्ठाद्रेः कथां श्रोतुं भूयस्तृष्णा विवर्धते ॥ १  
दशमसु च तीर्थानि विद्यन्ते कनकाचले ।  
इति पूर्वं त्वया सूत! कीर्तितं हि प्रसङ्गतः ॥ २

ब्रूहि तेषां तु तीर्थानां माहात्म्यं पुण्यवर्धनम् ।  
इति पृष्टः पुनः प्राह मुनीनाह्वय सादरम् ॥

३

श्रीसूतः--

तीर्थानाञ्चैव माहात्म्यं तेषां वक्तुञ्च कृत्स्नशः ।  
न शक्यं लेशतस्तेषामुच्यते श्रूयतामिदम् ॥  
गिरिरथः प्रदेशे तु कापिलं लिङ्गमुत्तमम् ।  
पाताले पूजितं पूर्वं कपिलेन माहात्मना ॥

४

५

कुतश्चित्कारणात्तत्तु लिङ्गं परमपावनम् ।  
भित्त्वा तु धरणीं तस्मान्निर्गतं पूजितं सुरैः ॥  
तद्विद्धं स्थापितं भूमौ प्रार्थितं सर्वदैवतैः ।  
तदग्रे भुवमुद्विद्य निर्गता कपिला पुरा ॥

६

७

तद्विलं कापिलं तीर्थं सर्वपापप्रणाशनम् ।  
तदूर्ध्वदेशे शक्रस्य तीर्थं परमपावनम् ॥

८

अहल्यासङ्गसम्भूतशामोक्षस्तु यत्न तत् ।  
विष्णुसेनसरस्तस्मादूर्ध्वं पुण्यविवर्धनम् ॥

९

वरुणस्य तमजो यत्र तपः कृत्वा सुदुस्तरम् ।  
सारूप्यं च हरेः प्राप्य सेनापत्यमवाप हि ॥

१०

पञ्चायुधानां तीर्थानि तदूर्ध्वं भान्ति सत्तमाः ।।  
तदूर्ध्वमग्निकुण्डं स्याद् दुरारोहमुप्यतः ॥

११

ब्रह्मतीर्थं महाहत्यामोचनं पुण्यवर्धनम् ।  
मुनीनाञ्चैव सप्तानां पुण्यतीर्थानि सन्त्यतः ॥

१२

दशाधिकफलं तेषां तीर्थानामुत्तरोत्तरम् ।  
एतेषाञ्चैव माहात्म्यं मया वक्तुं न शक्यते ॥

१३

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४० तमोऽध्यायः ३१

|                                                          |    |
|----------------------------------------------------------|----|
| पुराऽभवद् द्विजः कश्चितीर्थयात्राकृतोद्यमः ।             |    |
| तमाह कमलाधीशः ' किमर्थं गच्छसि द्विज ! ॥                 | १४ |
| अस्मिन् पुष्काशैलेन्द्रे सन्ति दिव्यानि सप्त च ।         |    |
| दश तीर्थानि तत्राद्यं कापिलं सर उत्तमम् ॥                | १५ |
| स्नात्वा चैतेषु विप्रेन्द्र ! शास्त्रोक्तज्ञानपूर्वकम् । |    |
| कृत्स्नतीर्थफलं पुण्यं प्राप्स्यसि त्वं न संशयः ' ॥      | १६ |
| इति श्रुत्वा द्विजः पूर्वं स्वप्ने चोत्थाय विस्मितः ।    |    |
| निवृत्तस्तीर्थयात्रातः प्राप्य श्रीवेङ्कट चलम् ॥         | १७ |
| तेषु तीर्थेषु दशसु सप्तसु क्रमशो गतः ।                   |    |
| स्नात्वा तथैव विप्रेन्द्र आप्तवानिति मे श्रुतम् ॥        | १८ |
| तिस्रः कोटयोऽर्धकोटी च तीर्थानि भुवनत्रये ।              |    |
| तेषां प्रकृतिभूतानि तीर्थान्यस्मिन् हरेर्गिरौ ॥          | १९ |
| भूमिप्रदक्षिणे बान्छा यद्यस्ति मुनिसत्तमाः ।             |    |
| सर्वतीर्थमयं सर्वपुण्यक्षेत्रमयं गिरिम् ॥                | २० |
| वेङ्कटाहं नरो गत्वा कुर्यात्तस्य प्रदक्षिणम् ।           |    |
| भूमिप्रदक्षिणे पुण्यं यत्तत्पुण्यमवामुयात् ॥             | २१ |
| वेङ्कटाचलशृङ्गाध्रे दृष्टमात्रे हलायुधः ।                |    |
| तीर्थयात्राफलं कृत्स्नं प्राप्तवानिति मे श्रुतम् ॥       | २२ |

### पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम्

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| पाण्डवा धर्मपुत्राद्याः कृष्णेनाङ्घ्रिष्टकर्मणा ।   |    |
| उपदिष्टाः समागम्य वेङ्कटाख्यं नगोत्तमम् ॥           | २३ |
| कस्मिंश्चित् पुण्यतीर्थे हि क्षेत्रपालान्निक्षिते । |    |
| कुर्वन्तः स्नानपानादीन् अवसन्नब्दमात्रकम् ॥         | २४ |

तदा कदाचिद्धर्मोऽपि ददर्श स्वप्नमुत्तमम् ।  
 यस्मादस्मिन्महातीर्थे स्थितं वत्सरमात्रकम् ॥ २५  
 अनेन पुण्ययोगेन भवन्तः क्षीणकल्मषाः ।  
 युद्धे जयं तथा राज्यं गमिष्यन्ति क्रमागतम् ।  
 तदा प्रभृति तत्तीर्थं पाण्डवं च विदुर्बुधाः ॥ २६

### जराहरादितीर्थत्रयमाहात्म्यम्

जगद्गुरुं बलिघ्नं च रसायनमिति त्रिकम् ।  
 तीर्थानां वर्तते तस्मिन् चिन्तामणिगिरौ तथा ॥ २७  
 स्वामिपुष्करिणीपूर्वदेशे पर्वतगह्वरे ।  
 द्वाविंशच्छरपते तु किन्तु मायातिरोहितम् ॥ २८  
 न जानन्ति बुधास्तीर्थं तत्तु विस्मयकारकम् ।  
 अष्टानां खनयः सन्ति लोहानां कनकाचले ॥ २९  
 युगभेदेन दृश्यन्ते नरणां पुण्यकर्मणाम् ।  
 वेङ्कटाद्रौ परां भक्तिं वहन् गच्छति चेद्गिरिम् ॥ ३०  
 पङ्कजैर्ज्वाल एव स्यात्, अचक्षुः पद्मलोचनः ।  
 मूको वाचस्पतिः, दूरश्चावी तु बधिरो भवेत् ॥ ३१  
 वन्द्या तु बहुपुत्रा च, निर्धनः सधनो भवेत् ।  
 एतत्सर्वं गिरौ भक्तिमात्रेणैव भवेद्भुवम् ॥ ३२  
 तत्त्वतो वेङ्कटाद्रेस्तु भवरूपं वेत्ति कः पुमान् ? ।  
 श्रीनिवास गिरिश्चायं कदाचित् कनकाचलः ॥ ३३  
 कदाचिज्ज्ञानरूपोऽयं कदाचिद्रत्नरूपकः ।  
 श्रीनिवास इवाभाति कदाचिद्भूषणोज्ज्वलः ॥ ३४  
 कालभेदेन केषाञ्चित् प्राकृताचलरूपधृक् ।  
 तस्मादस्य गिरिः पुण्यं माहात्म्यं वेत्ति कः पुमान् ॥ ३५



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४१ तमोऽध्यायः ३३

श्रुतेषु किञ्चिद्दृष्टेषु मयोक्तं भवतामिदम् ।  
श्रुतश्च सर्ववृत्तान्तः शक्यो वक्तुं मया न हि ॥ ३६

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये कापिलादिसप्तदशतीर्थ-  
माहात्म्यादिवर्णनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः



अथ एकचत्वारिंशोऽध्यायः

श्रीवेङ्कटाद्रिं प्रति श्रीरामागमनम्

मुनयः—

वेङ्कटाद्रेस्तु माहात्म्यं जनकर्णरसायनम् ।  
शृण्वतां नास्ति तृप्तिस्तु मुनीनां नो बुधोत्तम ॥ १  
'भूयः कथय वृत्तान्तं श्रुतं किञ्चित्त्वया पुरा' ।  
इत्युक्तः प्राह सूतोऽपि श्रुतश्च मुनिपुङ्गवान् ॥ २

श्रीसतः—

पुत्रो दशरथस्याऽऽसीद्रामो राजीवलोचनः ।  
स सर्वलक्षणे पेतः सर्वशास्त्रविशारदः ॥ ३  
रावणस्य वधार्थाय पुरा सौमित्रिणा सह ।  
हनूमता वेगवता सुग्रीवेण महात्मना ॥ ४  
सह सैन्यैर्यदा पम्पातीराच्छे भित्तादपात् ।  
निर्जगाम तदा रामः शुभे श्रीवेङ्कटाचले ॥ ५  
स्वामिपुष्करिणीतीर्थे स्नात्वा पश्चाद्रणे रिपुम् ।  
रावणं सगणं हत्वा जयमापेति मे श्रुतम् ॥ ६  
तत्सर्वं कथयिष्यामि श्रोतव्यमवधानतः ।  
ऋश्यन्काचलात्तस्मात् वानरैर्बहुभिर्वृतः ॥ ७

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| रावणस्य वधार्थाय कृतोद्योगः सकार्मुकः ।     |    |
| शेषाचलसमीपे तु यदा रामः समागतः ॥            | ८  |
| तदा सत्यञ्जना देवी वायुसूनेर्महात्मनः ।     |    |
| जननी पुरतो गत्वा रामं रक्तान्तलोचनम् ॥      | ९  |
| नमस्कृत्य महा .गा वचनं चेदमब्रवीत् ।        |    |
| ‘प्रतीक्षन्ती महाबाहो त्वदागमनमद्भुतम् ॥    | १० |
| तिष्ठान्यस्मिन् गिरौ राम मुनयोऽपि च कानने । |    |
| तपः कुर्वन्ति सततं त्वदागमनकाङ्क्षया ॥      | ११ |
| तान्सर्वान्समनुज्ञाय गन्तुमर्हसि मुव्रत ।   |    |
| इत्युक्तः प्राह रामोऽपि हनूमन्मातरं प्रति ॥ | १२ |

श्रीरामः—

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| ‘कालात्ययो भवेद्देवि मयि तत्र समागते ।         |    |
| भमेदानीं वरारोहे कार्यस्य महती त्वरा ॥         | १३ |
| पुनरागमने देवि तथा भवतु सुन्दरि ।              |    |
| इत्युक्तं राघवेणैतत्वाक्यं श्रुत्वा मामतिः ॥   | १४ |
| हनूमन् प्रणतो भूत्वा वाक्यं चैतदुवाच ह ।       |    |
| ‘स्थातव्यमत्र भवता यत् कुत्रापि सर्वदा ॥       | १५ |
| यस्माच्छ्रूयन्ता महासेना वानराणां तरस्विनाम् । |    |
| अयं च मार्ग एवाद्रिः सदापुष्पफल्गुमः ॥         | १६ |
| बहुप्रसवणोपेतो बहुकन्दरसानुमान् ।              |    |
| सुस्वादुकन्दमूलोऽयं अञ्जनाख्यो महागिरिः ॥      | १७ |
| मधूनि सन्ति वृक्षेषु बहूनि गिरिकन्दरे ।        |    |
| वेत्थ सर्वं महाबाहो यथेच्छसि तथा कुरु ॥        | १८ |

|                                                                                                                              |    |
|------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४१ तमोऽध्यायः                                                                                      | ३५ |
| इत्युक्तो वायुपुत्रेण श्रीरामः प्रहसन्नसौ ।<br>'जानेऽहमञ्जनासूनो ! तथाऽपि वचनं तव ॥                                          | १९ |
| श्रोतव्यं हि महाबाहो गच्छाग्रे त्वं हरीश्वर ' ।<br>इत्युक्त्वा वाहिनीं ताञ्च कर्षन् पर्वतमाययौ ॥                             | २० |
| नागकैसरमाख्यपुत्रागतस्त्रोतम् ।<br>चम्पकाशोकवकुलचूर्तकिंशुकराजितम् ॥                                                         | २१ |
| मयूरशारिकालौपैः कोकिलानां स्वनैरपि ।<br>शुकमञ्जुलनादैश्च कपोतस्वनहुङ्कृतैः ॥                                                 | २२ |
| शोभितं फलपुष्पैश्च वेङ्कटाख्यं नगोत्तमम् ।<br>निर्लोमा नामतः कश्चिद्विप्रो वेदविदां वरः ॥                                    | २३ |
| स्वयम्भुवं समुद्दिश्य ब्रह्मलोकजिगीषया ।<br>तपश्चकार धर्मात्मा पर्वतोत्तरदेशतः ।<br>आगत्य भगवान् ब्रह्मा तमाह द्विजसत्तमम् ॥ | २४ |
| 'रामं दृष्ट्वा ससौमित्रिं ब्रह्मलोकमवाप्स्यसि ' ।<br>इत्युक्तो ब्रह्मणा पूर्वं दृष्ट्वा रामं परात्परम् ॥                     | २५ |
| फललूलाशनैः सम्यक् पूजयित्वा तमब्रवीत् ।<br>'अद्य मे सफलं जन्म त्वन्मुखाभोजदर्शनात् ॥                                         | २६ |
| चिरकालार्जितं स्वामिन् ! फलितं तप उत्तमम् ।<br>अनुज्ञापय मां राम ब्रह्मलोकं प्रतीश्वर ' ॥                                    | २७ |
| इत्युक्तः स तु धर्मात्मा 'तथैवाऽऽचर भो द्विज ' ।<br>इत्युक्त्वा तं तु विप्रेन्द्रमारुरोह नगोत्तमम् ॥                         | २८ |
| शापमोक्षं च यक्षाणां केषाञ्चित्पर्वतोत्तमे ।<br>दत्त्वा रामोऽञ्जनादेव्या आश्रमं पुण्यवर्धनम् ॥                               | २९ |

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| आकाशगङ्गानिकटे प्रतिपेदे महामनाः ।                   |    |
| तथा स पूजितः सुन्यक् तस्यै दत्त्वा वरोत्तमम् ॥       | ३० |
| अपृच्छद्य तां महाभागां स्वामिपुष्करिणीं ययौ ।        |    |
| तत्र रामो महातेजाः सौमित्रिर्मास्तात्मजः ॥           | ३१ |
| सुग्रीवश्चाङ्गदश्चैव जाम्बवान् नील एव च ।            |    |
| चक्रुः स्नानं महातीर्थे सर्वत्र विजयप्रदे ॥          | ३२ |
| फलूलानि चाऽनीय रामो धर्मभृतां वरः ।                  |    |
| चकार दानं तत्रैव मुनिभ्यः शास्त्रवर्त्मना ॥          | ३३ |
| तस्या नैर्ऋतिदिभागे कुटीं कृत्वा पृथक्पृथक् ।        |    |
| सुस्वादुफलूलानि मधूनि सुबहूनि च ॥                    | ३४ |
| आनीय वायुपुत्रस्तं पूजयामास राघवम् ।                 |    |
| ततो रामः संप्रहृष्टः सुग्रीवप्रमुखैः सह ॥            | ३५ |
| न्यवसत्सुखं रामः स्वगेह इव तत्र वै ।                 |    |
| वानराश्च महात्मानो गोलङ्गूला महाबलाः ॥               | ३६ |
| सर्वतस्तत्र पुष्पाणि मूलानि च फलानि च ।              |    |
| मधूनि स्वादु रीर्थानि भक्ष्यजातान्यनेकशः ॥           | ३७ |
| भक्षयित्वा मदोन्मत्ताः चेरुस्तत्र सहस्रशः ।          |    |
| आप्लवन्तः प्लवन्तश्च गर्जन्तश्च प्लवङ्गमाः ॥         | ३८ |
| शृङ्गाच्छृङ्गं गिरेस्तत्र वृक्षाद्वृक्षं वनाद्वनम् । |    |
| चेरुस्ते वानराः सर्वे मुदिता बलगर्विताः ॥            | ३९ |
| केचिदारुरुहुस्तत्र वानरान् वानरोत्तमाः ।             |    |
| कांश्चित्पुच्छप्रदेशे तु गृहीत्वा वानरान् क्वचित् ॥  | ४० |
| कर्षन्ति स्म तदा कांश्चित् केचित्कर्णं चुचुर्बरे ।   |    |
| ‘दृष्ट्वैव रावणं सङ्ख्ये हन्याम ससुहृद्व्रणम् ॥      | ४१ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४२ तमोऽध्यायः ३७

लङ्कां सल्लमुत्पाश्व त्रिकूटं वा महागिरिम् ।  
आनेप्यामो वयं सिन्धुं बहुनक्रसमाकुलम् ॥ ४२  
तरामो बाहुवेगेन गृहीमश्चन्द्रभास्करो ।  
पाटयामो गिरीन् सर्वान् रामार्थे भूरुहानपि ॥ ४३  
पातालं वा महार्लोकं प्रविशाम रसातलम् ।  
गच्छामो रावणो यत्न तिष्ठत्यविनयान्वितः ॥ ४४  
तमेव हन्मः शूरं तु सगणं लोककण्टकम् ।  
चिरायते शिरच्छेदे रामः परमधार्मिकः ॥ ४५  
इति द्रुवन्तस्ते सर्वे वानराः पर्वतोपमाः ।  
तस्मिन् दिव्ये महापुण्ये वेङ्कटाद्रौ वनेचराः ॥ ४६  
कोटिकोट्यर्बुदास्तत्र परार्था बलशालिन ।  
परस्परमसम्बाधं न्यवसन् सुसुखं गिरौ ।  
अहो गिरिप्रभावोऽयं वर्णनीयः कथं बुधैः ॥ ४७

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाचलं प्रति श्रीरामागमन-  
अञ्जनामार्थनादिवर्णनं नाम एकचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः

वैकुण्ठाख्यगुहाप्रविष्टवानरवृत्तान्तः

श्रीसूतः—

स्वामिपुष्करिणी यत्र तत ईशान्यभागतः ।  
गजो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः ॥ १  
मैन्दश्च द्विविदश्चैव सुषेणश्च महामतिः ।  
काञ्चिद्गुहां तमोरुद्धां प्रविष्टास्तत्र वानराः ॥ २

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| उन्निद्रनेत्राः सर्वेऽपि सिंहतुल्यपराक्रमाः ।  |    |
| जम्मुस्ते तमसाऽऽविष्टां सुदूरं तां गुहां तदा ॥ | ३  |
| ददृशेऽत्र महाज्योतिः सूर्यकोटिरिवोदिता ।       |    |
| ज्योतिर्गणानां तटितां मिलितानामिवाब्रभौ ॥      | ४  |
| तत्र काचित्पुरी रम्या तप्तहाटकनिर्मिता ।       |    |
| कवाटोरणवती रम्योद्यानशतैर्युता ॥               | ५  |
| स्फटिकोपलवच्छुद्धजलनद्या समावृता ।             |    |
| रत्नमणिकयवैडूर्यमुक्तानिर्मितगोपुरा ॥          | ६  |
| अनेकमण्डपैर्युक्ता प्रासादशतसङ्कुला ।          |    |
| मशवीथीशतोपेता रथमातङ्गसंयुता ॥                 | ७  |
| वरनारीगणोपेता सर्वमङ्गलशोभिता ।                |    |
| शङ्खचक्रधरास्तत्र सर्वे चैव चतुर्भुजाः ॥       | ८  |
| सशङ्खमाल्यवसनाः सर्वाभरणभूषिताः ।              |    |
| दिव्यचन्दनलिसाङ्गाः परमानन्दपूरिताः ॥          | ९  |
| तन्मध्ये सुमहद्दिव्यं विमानं सूर्यसन्निभम् ।   |    |
| अत्युन्नतमहामेरुशृङ्गतुल्यं मनोहरम् ॥          | १० |
| बहुप्रवाशसम्पन्नं मणिमण्डपसंयुतम् ।            |    |
| भेरीमृदङ्गपणवमर्दलध्वनिशोभितम् ॥               | ११ |
| नृत्तवादित्रसम्पन्नं विन्नरस्वनसंयुतम् ।       |    |
| ददृशुस्तत्र पुरुषं पूर्णचन्द्रनिभाननम् ॥       | १२ |
| चतुर्बाहुमुदारङ्गं शङ्खचक्रधरं परम् ।          |    |
| पीताम्बरधरं सौम्यमासीनं काञ्चनाऽऽसने ॥         | १३ |
| फणामणिमहाकान्तिविराजितकिरीटिनम् ।              |    |
| भोगिभोगे समासीनं सर्वाभरणभूषितम् ॥             | १४ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४२ तमोऽध्यायः ३९

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| आसनोपरि विन्यस्तवामेतरकराबुजम् ।                  |    |
| प्रसार्य दक्षिणं पादमुद्धृते वामजानुनि ॥          | १५ |
| प्रसार्य वामहस्ताब्जं श्रीभूमिभ्यां निषेवितम् ।   |    |
| सेवितं नील्या देव्या वैजयन्त्या विराजितम् ॥       | १६ |
| श्रीवत्सकौस्तुभोरस्कं वनमालाविभूषितम् ।           |    |
| कृपारसतरङ्गैर्घपूर्णनेत्राबुजद्वयम् ॥             | १७ |
| शशिप्रसमच्छत्रं चामरव्यजने शुभे ।                 |    |
| हस्ताभ्यां धारयन्तीभिः नारीभिः सेवितं मुदा ॥      | १८ |
| दृष्ट्वा ते वानराः सर्वे विस्मिताः शुभलोचनाः ।    |    |
| अत्रान्तरे महाभागः पुरुषः परमाद्भुतः ॥            | १९ |
| चतुर्भुजो दण्डहस्तो दृष्ट्वा त्वरितदिक्रमः ।      |    |
| दण्डमुद्यम्य तान् सर्वान् भर्त्सयामास वै तदा ॥    | २० |
| ते सर्वे वानरा भीता निर्जग्मुर्गिरिगह्वरात् ।     |    |
| निर्गत्य सहसा तेभ्यः प्रोचुर्दृष्टं यथा तथा ॥     | २१ |
| ‘रावणस्तु महामायी कामरूपी च वञ्चकः ।              |    |
| अन्यो वा रावणो वाऽथ शोधनीयः प्रयत्नतः’ ॥          | २२ |
| इत्युक्त्वा वानरास्ते च सर्वे सम्भूय सम्भ्रमात् । |    |
| यत्र पूर्वं गुहा दृष्टा तत्रागच्छन् वनौकसः ॥      | २३ |
| नापश्यन्नगरीं तत्र चिह्नं वा दृष्टपूर्वकम् ।      |    |
| भ्रमात्तमञ्जसा शैलं विचिन्वन्तश्च सर्वतः ॥        | २४ |
| भ्रम इत्येव निश्चित्य तूष्णीमासन् वनौकसः ।        |    |
| ततः प्रभाते विरते रामो राजीवलोचनः ॥               | २५ |
| लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा वानरेन्द्रेण धीमता ।        |    |
| सह सैन्यैर्महातेजाः प्रतस्थेऽरिजिगीषया ॥          | २६ |

जित्वा च रावणं युद्धे प्राप्य सीतां महाबलः ।  
 अयोध्यां पुनरभ्येत्य भ्रातृभिः सहितोऽनघः ॥ २७  
 प्राप राज्यं स्वयं रामः स्वामितीर्थस्य वैभवात् ।  
 इति श्रुतं मया पूर्वमब्रुवं भवतामहम् ॥ २८

### वैकुण्ठगुहाप्रभाववर्णनम्

मुनयः —

‘वैकुण्ठाद्रौ गुहा दृष्टा काचिद्वानरसत्तमैः ।  
 इत्युक्तं भवता सूत! वेदवेदाङ्गपारग! ।  
 गुहा का? वद नो ब्रह्मन् श्रोतुं कौतूहलं हि नः ’ ॥ २९

श्रीसूतः —

श्रूयतामभिधास्यामि देवमाया मया श्रुता ।  
 वैकुण्ठाख्या गुहा सा तु दुर्ज्ञेया मुनियोगिभिः ॥ ३०  
 दुर्ज्ञेया सा तु देवैश्च मायया परमात्मनः ।  
 लीलया विष्णुना पूर्वं वानराणां प्रकाशिता ॥ ३१  
 तस्यां गुहायां ये दृष्टाः शङ्खचक्रधरा अपि ।  
 ते तु मुक्तास्तथा नित्याः परमानन्दरूपिणः ॥ ३२  
 भुञ्जते ब्राह्मणानन्दमाविर्भूतगुणाश्च ते ।  
 सञ्चरन्तः कामरूपा लोकान् भगवता सह ॥ ३३  
 आनन्दरूपाः कैङ्कर्यं कुर्वन्तो ब्रह्मणो हि ते ।  
 वसन्ति तत्र सततं ब्रह्मणा परमेष्ठिना ॥ ३४  
 यदा यदा कलिः कालो यदा वा जनता गिरौ ।  
 तदा गुहायां तस्यां तु वसिष्यन्तीति नः श्रुतम् ॥ ३५  
 एवंप्रभावः शेषाद्रिः वसत्यस्मिन् जगन्मयः ।  
 क्रीडते लीलया युक्तो नित्यैर्मुक्तैश्च सूरिभिः ॥ ३६



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४३ तमोऽध्यायः ४१

नीलमेघनिभं श्यामं नीलोत्पलविलोचनम् ।

नीलद्रिशिखरस्थं तं रुजाम्यत्रैव सुस्थितम् ॥ ३७

गुहाख्यानं श्रुतं किं वा ? युष्माभिर्वीतकल्मषैः ।

शृण्वतामिदमाख्यानं कलिदोषमलपहम् ।

धन्यं यशस्यमायुष्यं पुत्रपौत्राभिवर्धनम् ॥ ३८

इतीरितः शेषगिरिः प्रभावः श्रुतो मया योगिवरेभ्य आदरात् ।

समस्तजीवात्मसमष्टिरूपिणो हरेः प्रभावोऽपि करीन्द्रगोप्तुः ॥ ३९

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वैकुण्ठगुहाप्रविष्टवानर-  
वृत्तान्तादिवर्णनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः

राजणादिपीडितदेवर्षीणां क्षीरार्णवब्रह्मलोकादिगमनम्

मुनयः—

‘विश्वविश्रुतविश्वार्थविबोधनविचक्षण ! ।

वक्तुमर्हसि तत्सूत ! यत्पृच्छामो वयं पुनः ॥ १

वेङ्कटाद्राविदानीं तु सर्वप्रत्यक्षगोचरः ।

आस्ते ह्यञ्जनशैलभः सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥ २

कस्य वा पुण्यशीलस्य रूपमेतत्प्रदर्शितम् ।

वक्तव्यं तदशेषेण शृण्वतां नो महामुने ।

इत्युक्तो मुनिभिस्सैस्तु सूतः प्राह मुनीन् प्रति ॥ ३

श्रीसूतः

शृणुध्वं मुनयो यूयं वेङ्कटेशकथां पराम् ।

व्यासेन मुनिना प्रोक्तां मद्यं पूर्वं स्वयम्भुवः ॥ ४

|                                                        |    |
|--------------------------------------------------------|----|
| प्रदर्शितमिदं रूपमिति तत्कथयाम्यहम् ।                  |    |
| वृत्तान्तमादितः कृत्वा शृण्वन्तु मुनिसत्तमाः ॥         | ५  |
| पुरा कदाचिज्जाबलिः काश्यपो गौतमस्तथा ।                 |    |
| अगस्त्यो वामदेवश्च शतानन्दो मुनिस्तथा ॥                | ६  |
| योगिनः सनकाद्याश्च वासवाद्या दिवैकसः ।                 |    |
| हिरण्यकशिपोर्वैशसम्भैश्च दुरात्मभिः ॥                  | ७  |
| दैत्यैश्च पीडिताः केचित् विष्णवे तन्निवेदितुम् ।       |    |
| निर्जन्मुस्तेऽथ सम्भूय विचेतुं विष्णुमव्ययम् ॥         | ८  |
| क्षीराब्धेरुत्तरं तीरं गत्वा देवं जनार्दनम् ।          |    |
| तुष्टुबुर्विविधैः स्तोत्रैः अगस्त्याद्याः सुराश्च ते ॥ | ९  |
| ‘क्षीरोदशायिन् ! भगवन् ! सर्वकारणकारण ! ।              |    |
| सूक्ष्मप्रकृतिसंलीनजीवतत्त्वैर्युत ! प्रभो ! ॥         | १० |
| सृष्टिकाले भवानेव त्वत्तोऽन्यन्न हि विद्यते ।          |    |
| सृष्टा त्वमेव सर्वस्य जङ्गमस्थावरात्मनः ॥              | ११ |
| त्वमेव दृश्यसे विष्णो जगद्रूप नमोऽस्तु ते ।            |    |
| अङ्गीकृत्य भवानेव जगत्पालनकर्म च ॥                     | १२ |
| शेषे शेते श्रिया सार्द्धं निश्चितं मधुसूदन ! ।         |    |
| जागरूकः सदा त्वं तु जगत्पालनकर्माणि ॥                  | १३ |
| विचारयसि नास्मांस्त्वं विमर्शं मधुसूदन ! ।             |    |
| प्रसीद भगवन् विष्णो ! प्रसीद त्वं सुरेश्वर ! ॥         | १४ |
| प्रसीद करुणासिन्धो ! प्रसीद वरदामल ! ।                 |    |
| एतस्मिन्नन्तरे कश्चित् शङ्खचक्रगदाधरः ॥                | १५ |
| पार्षदः परमेशस्य व्योम्नि चाऽऽगत्य वै मुनीन् ।         |    |
| पुरुषः सोऽब्रवीदेवं श्रूयतामिति तान्मुनीन् ॥           | १६ |

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४३ तमोऽध्यायः              | ४३ |
| ‘आस्ते भूमौ गिरौ कापि मायावी कमलापतिः ।              |    |
| किमर्थमागतं सद्भिर्युष्माभिः सनकादिभिः ॥             | १७ |
| तत्रैव यूयं गच्छध्व ’मिति चोक्ता ययौ पुनः ।          |    |
| निवृत्य तरसा तस्मात् देशद्वै सुरसत्तमाः ॥            | १८ |
| सम्भूय ते विचार्याथ किमर्थं कमलापतिः ।               |    |
| मुक्ता क्षीराब्धिमध्ये तु वसेद्भूमौ सनातनः ’ ॥       | १९ |
| इति सञ्चित्य मनसा वैकुण्ठं लोकमुत्तमम् ।             |    |
| ययुस्ते मुनयः सर्वे योगिनस्त्रिदशा अपि ॥             | २० |
| गच्छन्तो मार्गमध्ये तु ददृशुर्नारदं मुनिम् ।         |    |
| महतीं वादयन्तं च वीणां स्फटिकसन्निभम् ॥              | २१ |
| कर्पूरधूलिसदृशपुण्ड्रोद्भासितविग्रहम् ।              |    |
| वैकुण्ठलोकादायान्तं दृष्ट्वा तं मुनयोऽब्रुवन् ॥      | २२ |
| ‘कासि नारद ’पुण्यात्मन् ! त्रैलोक्यं विदितं तव ।     |    |
| न तवाविदितं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु दिद्यते ॥         | २३ |
| क वा वसति लक्ष्मीशः शंस विद्वन् महामुने ।            |    |
| श्रीशैलस्य समीपे तु दैत्याः केचन मायिनः ॥            | २४ |
| बाधन्ते मनुजांस्तीव्रं तापसान् योगिनो मुनीन् ।       |    |
| रावणः सगणो नित्यं बाधते बलगर्वितः ॥                  | २५ |
| एतेषां विग्रहे शक्तो विष्णुरेव महाबलः ।              |    |
| तमेव शरणं यामः स तु कुत्र वसे ’दिति ॥                | २६ |
| पृष्टः प्राह मुनीन्द्रोऽपि तान्मुनीन् प्रतिपूज्य च । |    |
| ‘नारायणमहं द्रष्टुं दिव्यकल्याणविग्रहम् ॥            | २७ |
| अगमं परमं धाम परमानन्दकरणम् ।                        |    |
| तदा कश्चित्समभ्येत्य तत्र मामुक्तवानिदम् ॥           | २८ |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| ‘भूमौ कापि गिरौ विष्णुर्लक्ष्म्या सह विमोदते’ । |    |
| इति श्रुत्वा वचः सग्यक् आगच्छामीह तापसाः ॥      | २९ |
| ब्रह्मलोकं गमिष्यामः सर्वे वयमतः परम् ।         |    |
| स एव वेत्ति तत्सर्वं सर्वलोकपितामहः’ ॥          | ३० |
| इत्युक्त्वा नारदेनैव सह लोकं स्वयम्भुवः ।       |    |
| ययुः शीघ्रं सुराः सर्वे मुनयो योगिनोऽपि च ॥     | ३१ |
| ब्रह्मलोकं समागम्य ददृशुस्तेऽमि त्रैलोक्यः ।    |    |
| चतुर्मुखं चतुर्बाहुं ज्वलन्तमिव पावकम् ॥        | ३२ |
| सम्भूय वेदशास्त्रौघं मूर्तिमन्तमिव स्थितम् ।    |    |
| गायत्र्या चैव सावित्र्या सरस्वत्या च सेवितम् ॥  | ३३ |
| विन्नरोरगगन्धर्वसिद्धसङ्घनिषेवितम् ।            |    |
| वेदैः सविग्रहैश्चैव शास्त्रैरपि च सेवितम् ॥     | ३४ |
| सेवितञ्च दिशापालैरासीनं परमासने ।               |    |
| उपसृत्य तु तं देवाः प्रणेमुर्मुनयोऽपि च ॥       | ३५ |
| आसनेषूपविष्टास्ते सुराश्च मुनयोऽपि च ।          |    |
| पृष्टाश्च स्वागतप्रश्नैः इदं वचनमब्रुवन् ॥      | ३६ |
| ‘स्वामिस्तवैव कृपया न कुत्रापि दुरत्ययः ।       |    |
| मङ्गलं सर्वथाऽस्माकं सर्वलोकपितामह ! ॥          | ३७ |
| किन्तु बाधा च महती रावणस्य दुरात्मनः ।          |    |
| दैत्याः केचन सम्भूताः श्रीशैलस्य समीपतः ॥       | ३८ |
| बाधन्ते सर्वमनुजान् कर्मानुष्ठानतत्परान् ।      |    |
| तपोव्ययभयात्सर्वे सहन्ते मुनयोऽमलाः ॥           | ३९ |
| इतः परमशक्यं तत् सोढुं रावणचेष्टितम् ।          |    |
| मायावी भगवान् विष्णुः सर्वोपायविशारदः ॥         | ४० |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४४ तमोऽध्यायः

४५

एतेषां हनने शक्तः सर्वशक्तिधरश्च सः ।  
न पश्यामश्च तं विष्णुं कुत्तापि भुवनत्रये ।  
त्वमेव गतिरस्माकमस्मांस्त्राहि महाभयात् ' ॥

४१

इतीरितो योगिवरैश्च तापसैः बुधोत्तमैः शक्रपुरोगमैश्च ।

ध्यात्वाऽथ देवः कमलासनोऽपि प्रोवाच देवान्मुनिपुङ्गवांश्च ॥ ४२

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये रावणादिर्पाडितदेवर्षीणां क्षीरार्णव-  
ब्रह्मलोकादिगमनवर्णनं नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

ब्रह्मादीनां श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

श्रीब्रह्मा —

‘ अतितीव्रं तपस्तप्तं रावणेन पुरा सुराः ।

तेन लब्धमवध्यत्वं घरेण तपसा तदा ॥

१

मानुषेभ्यो वधस्तेन निश्चितो न विमुह्यता ।

तस्योपायमहं वक्ष्ये विष्णुरेव परा गतिः ॥

२

स चेदानीं गिरावास्ते भूमौ श्रीवेङ्कटाभिधे ।

स प्रार्थनीयः सर्वैश्च दैत्यैर्घानां निबर्हणे ॥

३

अहमज्यागमिष्यामि गम्यतामविलम्बतः ।

न शक्यमचिराद्द्रष्टुं विचेतव्यमितस्ततः ॥

४

सानवः सरितश्चापि निर्झराश्च गुहा अपि ।

विचेतव्याः सदा सर्वैर्युष्माभिश्च विशेषतः ॥

५

तस्यात्यन्त प्रियतमो भूधरो वेङ्कटाभिधः ।

शुकपक्षिमृगादीनां रूपं धृत्वा परात्परः ॥

६

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| क्रीडते रमया सार्धं सूरिभिस्तत्र पर्वते ।      |    |
| गिरिप्रदक्षिणे प्रीतिः महती तस्य वर्तते ॥      | ७  |
| प्रदक्षिणविधानेन विचेतव्यः स भूधरः ।           |    |
| इक्ष्वाकुवंशप्रभवो राजा दशरथो महान् ॥          | ८  |
| वेङ्कटाद्रिं समागत्य पुत्रार्थी तप उत्तमम् ।   |    |
| करिष्यति महाभाग स्वामिपुष्करिणीतटे ॥           | ९  |
| दर्शयिष्यति रूपं स्वं तस्य राज्ञः श्रियःपतिः । |    |
| इत्युक्ता ब्रह्मणा सर्वे मुनयश्च दिशैकसः ॥     | १० |
| योगिनोऽपि महात्मानः तस्माच्छोकाद्विनिर्गुणः ।  |    |
| निर्गत्य सहसा शेषभूधरेन्द्रं समाश्रिताः ॥      | ११ |
| नानामृगगणाकीर्णमनेकझषसङ्कुलम् ।                |    |
| तालहेन्तालपुन्नागचम्पकाशोकशोभितम् ॥            | १२ |
| कुन्दमन्दारपनसपूगकैतकसंयुतम् ।                 |    |
| तिमिशैश्चिरिबिल्वैश्च नक्तमालैश्च पुष्पितैः ॥  | १३ |
| चम्पकैः पनसैरात्रैः नारिकेलैश्च शोभितम् ।      |    |
| कोविदारकरञ्जैश्च पाटलाश्चत्थपादपैः ॥           | १४ |
| प्लक्षोदुम्बरजम्बूभिः कपित्थकलिभूरुहैः ।       |    |
| चम्पकैः सिन्दुवारैश्च शोभितं रक्तचन्दनैः ॥     | १५ |
| भूलोकदुर्लभैर्द्वीपसम्भवैः पादपैरपि ।          |    |
| खर्जूरैः किंशुकैश्चैव स्यन्दनैः पद्मकैस्तथा ॥  | १६ |
| अङ्गुलैर्मृचुकुन्दैश्च शिशुपाभूरुहैस्तथा ।     |    |
| मधूकशाल्मलीभिश्च पुष्पिताभिः सुशोभितम् ॥       | १७ |
| सर्वकलफलैर्वृक्षैः सवन्मधुसुशोभितैः ।          |    |
| मत्तकोविलसन्नादैः षट्पदस्वनसम्भ्रमैः ॥         | १८ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४४ तमोऽध्यायः ४७

|                                                       |    |
|-------------------------------------------------------|----|
| शुकमञ्जुलसन्नादैः शारिकालापदिभ्रमैः ।                 |    |
| मयूराणां निनादैश्च शोभितप्रस्थसानुकम् ॥               | १९ |
| अन्वेषामपि दिव्यानां पक्षिणां मञ्जुलस्वनैः ।          |    |
| शोभितानन्दजनकं गिरिशृङ्गं मनोहरम् ॥                   | २० |
| मत्तमातङ्गशरभसिंहव्याघ्रनिषेवितम् ।                   |    |
| महाक्रोडशतैश्चैव महिषैर्वनवासिभिः ॥                   | २१ |
| वृकैर्मल्लूकमुख्यैश्च वानरैश्चापि सङ्कुलम् ।          |    |
| कस्तूरीमृगसङ्घैश्च कृष्णसारैश्च शोभितम् ॥             | २२ |
| चमरीमृगसङ्घैश्च गव्यैश्च महामृगैः ।                   |    |
| शोभितं पर्वतश्रेष्ठं वनमार्जारसङ्कुलम् ॥              | २३ |
| गुहाशतसमाकीर्णं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ।                 |    |
| गन्धर्वीणां च नारीणां किन्नरीणां तथैव च ॥             | २४ |
| अप्सरस्तु च मुख्यानां वीणानादैर्मनोहरैः ।             |    |
| ह्लादयन्तं हृदम्भोजं पश्यतां हर्षवर्धनम् ॥            | २५ |
| गरुत्मता वेगवता त्वानीतं पर्वतोत्तमम् ।               |    |
| ददृशुर्मुनयो देवा योगिनः शुद्धचेतसः ॥                 | २६ |
| दृष्ट्वा श्रीवेङ्कटं शैलमपनिन्युः श्रमं बुधाः ।       |    |
| शृङ्गाच्छृङ्गं समारब्धं वनाद्वनमितस्ततः ॥             | २७ |
| नदीषु पुण्यतोयासु हृदेषु सरसीषु च ।                   |    |
| वापिकासु प्रवाहेषु तथा पुष्करिणीषु च ॥                | २८ |
| स्नात्वा स्नात्वा श्रीनिवासं पुष्पैरभ्यर्च्य सादरम् । |    |
| फलान्यमृतकल्पानि निवेद्य सुसमाहिताः ॥                 | २९ |
| न तत्र देवं कञ्चिच्च नाऽलयं न च गोपुरम् ।             |    |
| ददृशुर्योगिनस्तत्र योगनिष्ठान् मुनीनपि ॥              | ३० |

|                                                       |    |
|-------------------------------------------------------|----|
| तत्र स्थितान् मुनीन् दृष्ट्वा चेस्तत्र महौजसः ।       |    |
| लोकोत्तराऽलिवण्यं नानावर्णं मनोहरम् ॥                 | ३१ |
| मृगं वा पक्षिणं दृष्ट्वा गन्धर्वं वा दिवौकसः ।        |    |
| असावेव हरिश्चेति विस्मयोत्फुल्लमानसाः ।               |    |
| अनुजमुर्गिरौ तस्मिन् दिदृक्षाऽऽसक्तचेतसः ॥            | ३२ |
| पुत्रार्थिनो दशरथस्य श्रीवेङ्कटाचलगमनम्               |    |
| तस्मिन् काले तु धर्मात्मा राजा दशरथः प्रभुः ।         |    |
| शशास मेदिनीं कृत्स्नामयोध्यायां महायशाः ॥             | ३३ |
| वर्णाश्रमाचारयुताः प्रजा धर्मेण पालयन् ।              |    |
| चिरकालं महीं राजा बुभुजे भूरिदिक्रमः ॥                | ३४ |
| न चाद्राक्षीत्कुमारस्य शुचिस्मेग्मुखाबुजम् ।          |    |
| वसिष्ठमब्रवीद्दुःखात् ब्रह्मर्षिममिजौजसम् ॥           | ३५ |
| ‘पुरोहितोऽस्य वंशस्य विशेषेण भवान् मुने ! ।           |    |
| चिरं लालप्यमानस्य नाऽसीद्वंशकरः सुतः ॥                | ३६ |
| पापिनो मम तु ब्रह्मन् ! मया पापं कृतं बहु ।           |    |
| पापस्य निष्कृतिः कस्मात् कथं पुत्रो भविष्यति ? ’ ॥    | ३७ |
| इति प्रोक्तो वसिष्ठस्तु क्षणं ध्यात्वा प्रसन्नधीः ।   |    |
| प्राह चैनं नृपं धीरं वसिष्ठो भगवानृषिः ॥              | ३८ |
| ‘पुण्यश्लोकस्य भवतः कथं पापं भविष्यति ।               |    |
| तथाऽपि तव राजेन्द्र पुत्रप्राप्तिविरोधकृत् ॥          | ३९ |
| दुष्कृतं किञ्चिदस्तीति ध्यानेन प्रतिभाति मे ।         |    |
| तस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुत्राणां प्राप्तये तथा ॥     | ४० |
| सेव्यः श्रीवेङ्कटाभीशः क्षीराब्धितनयापतिः ’ ।         |    |
| इत्युक्तः प्राह राजाऽपि ब्रह्मन् ! कुत्र श्रियःपतिः ॥ | ४१ |



|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| श्रीबाराहपुराणे प्रथमभागे ४४ तमोऽध्यायः           | ४९ |
| इदानीं वर्तते विष्णुः कथं दृश्यो मया प्रभुः ।     |    |
| इति पृष्टः पुनः प्राह वसिष्ठोऽपि महामुनिः ॥       | ४२ |
| ‘ शृणु राजन् महाभाग भागीरथ्याश्च दक्षिणे ।        |    |
| वर्तते वेङ्कटः शैलो योजनानां शतद्वये ॥            | ४३ |
| सुवर्णमुखरीतीरात् उत्तरे क्रोशमात्रके ।           |    |
| अनेकपुण्यतोयैश्च पुण्यैश्चैव महाह्रदैः ॥          | ४४ |
| अनेककिन्नरीभिश्च शोभितः पर्वतोत्तमः ।             |    |
| दिव्योऽयं पर्वतेन्द्रस्तु न पुनः प्राकृतो गिरिः ॥ | ४५ |
| स्वरूपं तस्य शैलस्य न तु जानन्ति मानुषाः ।        |    |
| नारायणस्य देवस्य वैकुण्ठपुरवासिनः ॥               | ४६ |
| सूर्यवैकुण्ठनाकेभ्यः प्रियोऽयं वेङ्कटाचलः ।       |    |
| तस्मिन् हि रमते नित्यं श्रीनिवासः श्रिया सह ॥     | ४७ |
| दर्शनार्थं हरेस्तत्र यजन्ते मुनयोऽमलाः ।          |    |
| योगिनस्त्रिदशाश्चापि तपः कुर्वन्ति सन्ततम् ॥      | ४८ |
| स्वयम्भूर्भगवान् ब्रह्मा तस्मिन् गिरिवरोत्तमे ।   |    |
| लोकानुग्रहसिद्धयर्थं करिष्यति तपो महत् ॥          | ४९ |
| दर्शयिष्यति तस्मै च स्वस्य रूपं महद्भारिः ।       |    |
| दास्यत्यभीष्टं सर्वेभ्यो दर्शनादेव माधवः ॥        | ५० |
| कूलङ्कषमहौदार्यगुणसिन्धुः श्रियःपतिः ।            |    |
| तवाप्यभीष्टं गोविन्दो दास्यत्येव न संशयः ’ ॥      | ५१ |
| एवमुक्तो वसिष्ठेन चक्रवर्ती गुणाकरः ।             |    |
| राजा दशरथो हृष्टः प्रसन्नमुखपङ्कजः ॥              | ५२ |
| प्रययौ च वसिष्ठेन वेङ्कटाख्यं गिरिं प्रति ।       |    |
| गङ्गां गोदावरीं रम्यां कृष्णां वेणीमनन्तराम् ॥    | ५३ |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| मलयपहारिणीं भद्रां तुङ्गां पम्पां मनोहराम् ।    |    |
| भवनाशीं च सम्प्राप्य स्नात्वा स्नात्वा महारथः ॥ | ५४ |
| वेङ्कटाद्रिं ददर्शाथ तुङ्गशृङ्गसमन्वितम् ।      |    |
| उद्यानं नन्दनं चैत्रथं सम्भूय तिष्ठति ॥         | ५५ |
| इत्युत्प्रेक्ष्य मनोहारिवृक्षगुल्मलतायुतम् ।    |    |
| युवानञ्च महामेरुमिव चक्षुष्पदं गिरिम् ॥         | ५६ |
| आरुह्य नयनानन्दं हृदयाह्लादकारकम् ।             |    |
| निर्झरेषु तटाकेषु सरस्सु सरसीषु च ॥             | ५७ |
| नदीषु देववातेषु तथा पुष्करिणीषु च ।             |    |
| स्नात्वा निर्मलसर्वाङ्गः क्षालितावो महाबलः ॥    | ५८ |
| लब्ध्वा चित्तस्य संशुद्धिं पीतामृत इव प्रभुः ।  |    |
| मुमुदे च महाराजो भोक्तुकामः सुतोत्सवम् ॥        | ५९ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये ब्रह्मादीनां श्रीवेङ्कटाचलगमनादि-  
वर्णनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः

दशरथेन श्रीवेङ्कटाचलवासिमहर्षिचरित्रदर्शनम्

श्रीसूतः —

|                                                   |   |
|---------------------------------------------------|---|
| ततो राजा दशरथो वसिष्ठेन सह प्रभुः ।               |   |
| पश्यन् पश्यन् वनं रम्यं सानूनि शिखराणि च ॥        | १ |
| प्राप तत्र गिरौ पुण्यां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् । |   |
| फुलकल्हारकुमुदपुण्डरीकमहोत्पलाम् ॥                | २ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४५ तमोऽध्यायः ५१

|                                                                                                               |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| नीलोत्पलाणोपेतां रक्तोत्पलसुशोभिताम् ।<br>वज्रुलैर्वकुलैश्चान्यैः सेवितां काननोद्भवैः ॥                       | ३  |
| हंसकारण्डवाकीर्णा बकभेकविघूर्णिताम् ।<br>सारसारवसम्पूर्णा भ्रमरारवनादिताम् ॥                                  | ४  |
| मत्स्यकच्छपसम्बाधां शिशुमारनिषेविताम् ।<br>नकैः कर्कटकैश्चान्यैः जलजैर्वनजैरपि ॥                              | ५  |
| सेवितां तीरजैर्वृक्षैः नारिकेलरसालकैः ।<br>पूगचम्पकपुन्नागकेतकैः स्वर्णकेतकैः ॥                               | ६  |
| अशोककदलीभिश्च मातुलुङ्गैश्च शोभिताम् ।<br>लिकुचैर्वाज्जूरैश्च निरन्तरतटद्रुमैः ॥                              | ७  |
| शोभितां सरसीं दृष्ट्वा मुमोद स महाद्युतिः ।<br>मुनीन् ददर्श तत्रैव तपतो योगिनोऽमलान् ॥                        | ८  |
| वीरासने समासीनान् बद्धपद्मासने स्थितान् ।<br>भद्रासनगतान् कांश्चित् सिंहासनगतान् परान् ॥                      | ९  |
| सिद्धासनगतान् कांश्चित् स्वस्तिकासनमाश्रितान् ।<br>पर्णाशनान् वायुभक्षान् गोमुखासनसंस्थितान् ॥                | १० |
| अङ्गुष्ठाग्रस्थितान् कांश्चित् एकपादेन विष्ठितान् ।<br>सूर्यान्मुखान्मुनीनन्यान् कांश्चित्पञ्चाग्निमध्यगान् ॥ | ११ |
| भूशय्यान् जलशय्यांश्च फलभूलजलशनान् ।<br>केवलं कुम्भके सक्तान् केवलं रेचके रतान् ॥                             | १२ |
| केवलं पूरके सक्तान् केवलं प्राणरोधकान् ।<br>नाडीशुद्धौ महान्यग्रान् शुद्धनाडीगणानपि ॥                         | १३ |
| सुषुम्नासङ्गतप्राणान् षट्कर्मनिरतानपि ।<br>दशधाऽनुष्ठिते योगकरणे सुसमाहितान् ॥                                | १४ |

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| व्याघ्राजिनधरानन्यान् कृष्णाजिनवराम्बरान् ।      |    |
| वल्कल्यऽऽवसनानन्यान् काषायवसनानपि ॥              | १५ |
| जलतर्पणसंसक्तान् होमकर्मसु निष्ठितान् ।          |    |
| विल्वहोमरतानन्यान् शमीहोमरतानपि ॥                | १६ |
| तथाऽऽमलकहोमेषु निष्ठितान्निर्मलान्मुनीन् ।       |    |
| तिलाक्षतैर्यवैः पुष्पैः तिलव्रीहिभिरेव च ॥       | १७ |
| पद्मेन्दीवरकल्हारैः पुण्डरीकैश्च पायसैः ।        |    |
| घृतैः पुष्पैर्मधुयुतैः फलैश्च कदलीगतैः ॥         | १८ |
| मुद्गाक्षैश्च तिलाक्षैश्च गुडाक्षैर्माषसंयुतैः । |    |
| अपूपैर्मण्डकैश्चापि तिलपिष्टैस्तथैव च ॥          | १९ |
| होमञ्च कुर्वतः कांश्चित् तत्र तल सुनिष्ठितान् ।  |    |
| हृदम्बुजगतं श्रीशं विष्णुमर्चयतोऽपरान् ॥         | २० |
| ददर्श पुरुषव्याघ्रः पुनस्तलैव केचन ।             |    |
| अर्चयन्ति जगन्नाथं सूर्यमण्डलवर्तिनम् ॥          | २१ |
| श्रीनिवासं तथा केचित् जलमध्यगतं हरिम् ।          |    |
| केचिद्विम्बं हरेः सौम्यं अर्चयन्ति च सर्वदा ॥    | २२ |
| त्रिविक्रमं तथा चान्ये नृसिंहं भीषणं हरिम् ।     |    |
| अर्चयन्ति तिलैः पुष्पैः अक्षयैश्च फलैरपि ॥       | २३ |
| केचिद्दूर्वाग्निरन्ये च पल्लवैश्च तथा परे ।      |    |
| अन्ये चम्पकपुष्पैश्च पद्मैरन्ये च तापसाः ॥       | २४ |
| अर्चयन्ति तथा केचित् पुण्डरीकैस्तथाऽपरे ।        |    |
| अशोकरुपुष्पैश्च नन्द्यावर्तैश्च केचन ॥           | २५ |
| अर्चयन्ति जगन्नाथं तथा विल्वदलैरपि ।             |    |
| तुलस्याः सुदलैश्चापि कृष्णधेतैश्च योगिनः ॥       | २६ |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४५ तमोऽध्यायः         | ५३ |
| अर्चयन्ति तथा केचित् मल्लिकाकुसुमैरपि ।         |    |
| केचिच्च जातीकुसुमैः मालतीपुष्पसञ्चयैः ॥         | २७ |
| करवीरैस्तथा केचित् पारिजातोद्भवैरपि ।           |    |
| केचिद्मनकैश्चैव तथा मरुवकैः परे ॥               | २८ |
| एवमर्चयतो नित्यं ददर्श मुनिपुङ्गवान् ।          |    |
| नृसिंहानुष्टुभं केचित् जपन्तश्च तपोधनाः ॥       | २९ |
| तारकब्रह्मसंज्ञं च मनुं प्रणवपूर्वकम् ।         |    |
| केचिद्गोपालबीजं च भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥        | ३० |
| केचिद्गाराहमन्त्रं च जपन्ति मुनयोऽमलाः ।        |    |
| द्वादशाक्षरमन्त्रे च वासुदेवं महामनुम् ॥        | ३१ |
| अष्टाक्षरं तथा केचित् नारायणमनुं परम् ।         |    |
| जपन्ति मुक्तिबीजं च भुक्तेरपि च साधनम् ॥        | ३२ |
| न्यासद्वादशकं कृत्वा वेदसारं महामनुम् ।         |    |
| नीलमेघनिभं श्यामं पीतवाससमच्युतम् ॥             | ३३ |
| चतुर्भुजमुदाराङ्गं श्रीभूमिसहितं परम् ।         |    |
| ध्यात्वा नारायणं मन्त्रं जपन्ति ज्ञानिनोऽमलाः ॥ | ३४ |
| कुशग्रन्थिकृतां मालां पद्मबीजभवां तथा ।         |    |
| तुलसीकाष्ठसम्भूतां प्रबालमणिसम्भवाम् ॥          | ३५ |
| स्फाटिकीं स्वर्णविकृतिं पुत्रजीवभवां तथा ।      |    |
| कृत्वाऽक्षमालां विविधां मन्त्रसिद्धयर्थमेव च ॥  | ३६ |
| ध्यात्वा ददर्श जपतो मुनीन् परमभास्वरान् ।       |    |
| तेषां मध्ये महात्मानं ब्रह्माणं कमलसनम् ॥       | ३७ |
| चतुर्मुखं चतुर्बाहुं जपन्तं ज्वलनोपमम् ।        |    |
| स्फाटिकीमक्षमालां च धारयन्तं महौजसम् ॥          | ३८ |

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| ध्यायन्तं मनसा श्रीशं नासाग्रन्यस्तलोचनम् ।   |    |
| व्याघ्रत्वचि समासीनं निश्चलं ध्यानयोगतः ॥     | ३९ |
| निवातस्थं महादीपं निष्कम्पमिव च स्थितम् ।     |    |
| ददर्श राजा संहृष्टो वसिष्ठेन महात्मना ॥       | ४० |
| तत्र योगिमुनीन्सर्वान् देवान् नत्वा यथाविधि । |    |
| अतिष्ठच्च महाराजो विस्मयोत्फुल्ललोचनः ॥       | ४१ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाचलवासि-  
महर्षिर्दिव्यचरित्रानुवर्णनं नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः

श्रीभगवदाविर्भावधट्टः

श्रीसूतः —

|                                                         |   |
|---------------------------------------------------------|---|
| वसिष्ठोऽपि महातेजाः राजानमिदमब्रवीत् ।                  |   |
| ‘ श्रूयतां राजशार्दूल ! ब्रह्मा लेकपितामहः ॥            | १ |
| अयमत्र तपस्तीव्रं करोति मुनिभिः सह ।                    |   |
| अचिराच्छ्रीपतिर्विष्णुः आविर्भूतो भविष्यति ॥            | २ |
| त्वमप्यत्र शुचिर्भूत्वा स्नात्वा पुष्करिणीजले ।         |   |
| जपं कुर्वन्महीपाल ! निवस त्वमिहैव भोः ॥ ’               | ३ |
| इत्युक्तः प्राह राजाऽपि ‘ मन्त्रं कञ्चित्प्रयच्छ भोः ।’ |   |
| इति पृष्टो वसिष्ठश्च प्रादान्मन्त्रमनुत्तमम् ॥          | ४ |
| योऽसावष्टाक्षरो मन्त्रो वेङ्कटेशपरायणः ।                |   |
| लब्ध्वा तं मन्त्रमतुलं पार्थिवो यन्त्रसंयुतम् ॥         | ५ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४६ तमोऽध्यायः ५५

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| स्वामिपुष्करिणीतोये स्नात्वा विधिवदादरात् ।     |    |
| क्वचित्तत्र समे देशे लिखित्वा यन्त्रमुत्तमम् ॥  | ६  |
| तत्र विष्णुं समभ्यर्च्य श्रीनिवासं जगत्पतिम् ।  |    |
| तदग्रतो जपं कुर्वन् अतिष्ठत्परमासने ॥           | ७  |
| वसिष्ठोऽपि जपन्मन्त्रमासने कुशविस्तृते ।        |    |
| अत्रान्तरे महाञ्छब्दः कश्चित्समुदपद्यत ॥        | ८  |
| किमित्येवाकुलैः सर्वैः वीक्षितं मुनिसत्तमैः ।   |    |
| दुर्निरीक्ष्यं महत्तेजो दृष्टं च सुरसत्तमैः ॥   | ९  |
| समस्तविद्युतां कूटमाविर्भूतमिवाभवत् ।           |    |
| ज्योतिर्गणानां सङ्घात इव तेजः समुद्यतम् ॥       | १० |
| अनेककोटिसूर्याश्च पूर्णचन्द्राश्च कोटयः ।       |    |
| एकीभूय समुद्भूता इव तेजः समुत्थितम् ॥           | ११ |
| इदं किमिति तद्द्रष्टुमशक्ताः सहसैव तु ।         |    |
| न्यमीलयन्त नेत्राणि समुत्तस्थुश्च ते सुराः ॥    | १२ |
| सम्भ्रान्तमनसः सर्वे समूहीभूय सादरम् ।          |    |
| अतिष्ठन् विविधान्मन्त्रान् जपन्तो योगिनोऽमलाः ॥ | १३ |
| तत्तेजसा जगत्सर्वं प्रदीप्तमिव च स्थितम् ।      |    |
| तेजोमध्ये समुद्भूतं विमानं सूर्यभास्वरम् ॥      | १४ |
| अनेकगोपुरैर्युक्तमनेकावरणैर्युतम् ।             |    |
| तत्सहाटकनिर्वृत्तकवाटगणशोभितम् ॥                | १५ |
| नीलैर्मरकतैश्चैव कृततोरणसञ्चयम् ।               |    |
| समुच्छ्रितपताकाभिः शोभितं विविधैर्ध्वजैः ॥      | १६ |
| शातकुम्भमयैः कुम्भैः शोभिताग्रैश्च गोपुरैः ।    |    |
| अलङ्कृतं वितानैश्च विचित्रैर्वर्णभेदतः ॥        | १७ |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| लम्बमानैस्तत्र मुक्तादामभिर्दिवि सम्भवैः ।      |    |
| मल्लिकामालतीजातिपुष्पाणां च सरैस्तथा ॥          | १८ |
| स्वर्णचित्तितवस्त्रैश्च लम्बमानैरलङ्कृतम् ।     |    |
| अनेकमणिरत्नाढ्यं क्रीडामण्डपसंयुतम् ॥           | १९ |
| आस्थानमण्डपान्तःस्थमणिस्तम्भसुशोभितम् ।         |    |
| चतुर्दिक्षु चतुर्द्वारं द्वारपालैश्च सेवितम् ॥  | २० |
| सहस्ररत्नसुस्तम्भमणिमण्डपशोभितम् ।              |    |
| रथाश्वगजमुख्यैश्च दिव्ययानैरलङ्कृतम् ॥          | २१ |
| शारिकाशुकहंसानां मयूराणां स्वनैर्युतम् ।        |    |
| कपोतमधुरालपैः विचित्रमृगपक्षिभिः ॥              | २२ |
| शोभितं च सुगन्धैः सुधूपैश्चापि विराजितम् ।      |    |
| मेरीमृदङ्गपणवमुरजस्वनसम्भृतम् ॥                 | २३ |
| ढक्कानिस्साणसन्नादसम्पूरितदिगन्तरम् ।           |    |
| वीणाकिन्नरभेदानां मञ्जुलस्वनसंयुतम् ॥           | २४ |
| रूपयौवनसम्पन्नदिव्यस्त्रीलास्यलालितम् ।         |    |
| श्रवणानन्दजननं हृदयाह्लादकारकम् ॥               | २५ |
| नयनानन्दजनकं सर्वमङ्गलशोभितम् ।                 |    |
| चामरग्राहिणीभिश्च सुरूपाभिः सुचारुभिः ॥         | २६ |
| गृहीतव्यजनाभिश्च रूपयौवनचारुभिः ।               |    |
| नीराजनकराग्राणिः श्यामाभिश्च निषेवितम् ॥        | २७ |
| छत्रध्वजधराभिश्च स्त्रीभिः सेवितमादरात् ।       |    |
| एवमत्यद्भुतं दिव्यं विमानं ददृशुर्बुधाः ।       | २८ |
| ब्रह्मादयस्तथा देवाः सनकाद्याश्च योगिनः ।       |    |
| मुनयोऽगस्त्यमुख्याश्च दृष्ट्वा तत्परमाद्भुतम् ॥ | २९ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४६ तमोऽध्यायः ५७

इतिकर्तव्यतामूढाः सम्पूर्णाह्लादमानसाः ।  
तस्थुस्तथैव पश्यन्तो विस्मयोत्फुल्ललोचनाः ॥ ३०  
आकाशचारिणो देवा विहगाः पक्षिणस्तथा ।  
मृगाश्च पशवः सर्वे विमानं दिव्यमुत्तमम् ॥ ३१  
दृष्ट्वा विस्मयसम्फुल्ललोचनाः पूर्णमानसाः ।  
चेलुस्तस्मात्पदं नैव तस्थुस्तत्रैव सादरम् ॥ ३२  
अत्यद्भुतं विमानं तद् दृष्ट्वा लोकपितामहः ।  
परमानन्दभरितमुखलोचनपङ्कजः ॥ ३३  
अगस्त्यं च वसिष्ठं च वामदेवं च काश्यपम् ।  
जाबालिमथ कण्वं च देवलं देवदर्शनम् ॥ ३४  
स्वपुत्रं नारदं चैव पराशरमृषिं तथा ।  
व्यासं शुक्रं तथा गार्ग्यं भार्गवं च्यवनं तथा ॥ ३५  
अन्यानपि मुनीन् पुण्यान् इन्द्राद्यांश्च सुरांस्तथा ।  
सनकादींश्च योगीन्द्रान् समाहूयेदमब्रवीत् ॥ ३६  
' इदं तु दिव्यं परमाद्भुतं शुभं विमानमिन्द्रादिनिषेव्यमाणम् ।  
विभाति विष्णोरिव मन्दिरं परं पश्याम सर्वे वयमद्भुतं गृहम् ' ॥ ३७  
इतीरयित्वा प्रविवेश तद्गृहं पितामहः सर्वजगत्पतिस्तथा ।  
तथैव सर्वे विबुधास्तपोधनाः तथैव गेहं विविशुश्च योगिनः ॥ ३८  
इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीभगवदाविर्भावादिवर्णनं नाम  
षट्चत्वारिंशोऽध्यायः



## ब्रह्मादीनां भगवन्मन्दिरप्रवेशादिवर्णनम्

श्रीसूतः —

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| अतीत्य प्रथमद्वारं रत्नतोरणभूषितम् ।               |    |
| तप्तहाटकनिष्पन्नकवाटद्वयशोभितम् ॥                  | १  |
| चण्डप्रचण्डौ प्राग्द्वारे शङ्खचक्रगदान्वितौ ।      |    |
| द्वारपालौ प्रणम्यैव द्वितीयं द्वारमाविशन् ॥        | २  |
| तथैव सप्त द्वाराणि समतीत्य महाभुजाः ।              |    |
| चतुर्मुखमुखाः सर्वे तत्र देवं श्रियःपतिम् ॥        | ३  |
| अपश्यन्नतिसंहृष्टाः सह राज्ञा महात्मना ।           |    |
| विमाने बहुविस्तीर्णे सिद्धचारणसेविते ॥             | ४  |
| पुष्पवृष्टिर्महत्यासीत् देवदुन्दुभिनिर्गतः ।       |    |
| आकाशे सुमहानासीत् रम्यमङ्गलनिस्स्वनः ॥             | ५  |
| तुष्टुवुर्देवगन्धर्वा विमानस्थाप्सरोगणाः ।         |    |
| ननृतुर्गीतवादित्रसम्भ्रमः सुमहानभूत् ॥             | ६  |
| त्रैलोक्यं पूरितं तेन सम्भ्रमेण तदाऽभवत् ।         |    |
| विदित्वा लोकपालाश्च वसवो मुनयस्तथा ॥               | ७  |
| सर्वे ग्रहास्तथा रुद्रा धातारो देवतागणाः ।         |    |
| नागा यक्षास्तथा सर्वे ये चाऽन्ये सात्त्विका मताः ॥ | ८  |
| आजम्मुर्जगदीशानं द्रष्टुमच्युतमीश्वरम् ।           |    |
| ब्रह्माणं ते पुरस्कृत्य ददृशुर्भास्करोपमम् ॥       | ९  |
| नीलमेघनिभं श्यामं नीलमाणिक्यविग्रहम् ।             |    |
| तप्तहाटकसङ्काशां चम्पकोद्गमदामभाम् ॥               | १० |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४७ तमोऽध्यायः ५९

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| पङ्कजोदरलावण्यामार्द्रहारिद्रसन्निभाम् ।          |    |
| शरत्पूर्णनिशाकान्तमण्डलोपमसन्मुखाम् ॥             | ११ |
| भृङ्गपङ्क्तिसमाकारदिव्यालकसुशोभिताम् ।            |    |
| प्रफुल्लपङ्कजस्मेरमुखमन्दस्मितोज्ज्वलाम् ॥        | १२ |
| तरुणारुणसङ्काशकुसुम्भवसनोज्ज्वलाम् ।              |    |
| किरीटहारमकुटकेयूराङ्गदशोभिताम् ॥                  | १३ |
| वामहस्ते लसद्भ्रमलीलाम्बुजमनोहराम् ।              |    |
| वलयाङ्गदसंशोभिलम्बमानान्यपाणिकाम् ॥               | १४ |
| पद्मासनस्थितां पद्मां पार्श्वं दक्षिणमाश्रिताम् । |    |
| वीक्षमाणां कटाक्षेण मुहुः श्रीवत्सलाञ्छनम् ॥      | १५ |
| श्रीधरं वामपार्श्वस्थां तुलसीश्यामलाङ्गकाम् ।     |    |
| सर्वसहां वसुमतीं सर्वाभरणभूषिताम् ॥               | १६ |
| द्विजराजज्वलज्ज्योत्स्नामन्दहासमनोहराम् ।         |    |
| मदमत्तचकोराक्षीं फुल्लपङ्कजवक्त्रकाम् ॥           | १७ |
| वामेतरकराभोजधृतनीलसरोरुहाम् ।                     |    |
| श्यामामनुपमां भूमिं स्वर्णपद्मासने स्थिताम् ॥     | १८ |
| कटाक्षयन्तीं लोकेशममृतस्त्राविवीक्षणैः ।          |    |
| ददृशुर्ब्रह्मरुद्राद्याः त्रिदशा मुनिसत्तमाः ॥    | १९ |
| योगिनश्च तथा राजा कोसलेन्द्रो महाद्युतिः ।        |    |
| नानारत्नसमाकीर्णज्वलन्मकुटशोभितम् ॥               | २० |
| मन्दस्मितमनोहारि श्रीमद्वदनपङ्कजम् ।              |    |
| दयारसतरङ्गौघफुल्लपङ्कजलोचनम् ॥                    | २१ |
| सुनासिकापुटस्मेरपूर्णेन्दुमुखमण्डलम् ।            |    |
| कर्णद्वयलसद्भ्रमकराभरणोज्ज्वलम् ॥                 | २२ |

|                                           |    |
|-------------------------------------------|----|
| कण्ठलम्बिलसद्वैमधैवेयकविभूषितम् ।         |    |
| तप्तकार्तस्वरोद्भूतब्रह्मसूत्रविराजितम् ॥ | २३ |
| केयूराङ्गदसद्भूषं वृत्तायतचतुर्भुजम् ।    |    |
| ज्वालयुतसहस्रारसुदर्शनधरं वरम् ॥          | २४ |
| शरच्चन्द्रप्रतीकाशपाञ्चजन्यधरं शुभम् ।    |    |
| अश्रान्तवरदानोद्यदक्षपाणिसरोरुहम् ॥       | २५ |
| कटीतटसुविन्यस्तवामपाणिजलेरुहम् ।          |    |
| लावण्यसिन्धुलहरीमहावर्तसुनाभिकम् ॥        | २६ |
| सर्वलोकसमाधारजठरालङ्कृतं हरिम् ।          |    |
| कटिसूत्रव्यतिस्यूतकिङ्किणीकविराजितम् ॥    | २७ |
| कटीतटसुसम्बद्धच्छुरिकायुधभूषितम् ।        |    |
| मारद्विपमहाऽलानसमोरुद्वयशोभितम् ॥         | २८ |
| मदनेषुधिसंशोभिजङ्घाद्वयविराजितम् ।        |    |
| पीताम्बरधरं कान्त्या पीताम्बरजगत्तूयम् ॥  | २९ |
| गुल्फदेशलसद्भूषविङ्किणीकटकादिकम् ।        |    |
| हंसशिञ्जितमञ्जीरनूपुराढ्यपदाम्बुजम् ॥     | ३० |
| बालचन्द्रकलाशोभिनखपङ्क्तिविराजितम् ।      |    |
| सहस्रपत्रपीठस्थं सर्वाभरणभूषितम् ॥        | ३१ |
| पारिजाततरोर्भूले भासमानं श्रियःपतिम् ।    |    |
| कोटिकन्दर्पलवण्यसम्भोहितजगत्तूयम् ॥       | ३२ |
| यौवनोद्दामलवण्यं पञ्चविंशतिहायनम् ।       |    |
| कुमारं राजसिंहस्य क्रीडमानमिवाच्युतम् ॥   | ३३ |
| मूर्तीभूतदयासिन्धुं मूर्तीभूतक्षमागुणम् । |    |
| मूर्तीभूतमहौदार्यं मूर्तिमद्रूपसम्पदम् ॥  | ३४ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४८ तमोऽध्यायः ६१

नारायणमनाद्यन्तमव्ययं पुरुषोत्तमम् ।  
ददृशुर्देवगन्धर्वाः प्रत्यक्षं सुरसत्तमाः ॥ ३५  
द्रष्टुं प्रत्यक्षतो यस्य रूपं तेपुस्तपोधनाः ।  
तमजं देवदेवेशं शृङ्गारसवारिधिम् ॥ ३६  
चक्षुषां फलमत्यर्थं ददृशुः प्रीतमानसाः ।  
नयनानन्दजननं दृष्ट्वा तं सूर्यतेजसम् ॥ ३७  
सर्वेषां नेत्रपद्मानि विकासं प्रापुर्जसा ।  
हर्षविशसमाविष्टा दर्शनात्तस्य योगिनः ॥ ३८  
मुनयश्च तथाऽन्ये च ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।  
निपतन्तं पतन्त्यन्ये अन्तं भ्रामयन्ति च ॥ ३९  
उत्पतन्तं पतन्त्यन्ये हर्षपर्याकुलेक्षणाः ।  
आनन्दाश्रु प्रमुञ्चन्तो मदोन्मत्ता इवाभवन् ॥ ४०  
अनुभूय तमानन्दं चिरात्स्वस्था गतज्वराः ।  
तस्थुश्च देवदेवेशं वीक्षमाणाः पुनः पुनः ॥ ४१

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटचलमाहात्म्ये ब्रह्मादीनां भगवन्मन्दिर-  
प्रवेशप्रणमनादिवर्णनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः



अगस्त्यादिकृतभगवत्स्तुतिः

श्रीसूतः

अथ ते मुनयः सर्वे हर्षाविष्टाश्च योगिनः ।  
स्तुत्या गम्यं स्तुतिप्रीतं प्रीत्यर्थं तुष्टुवुस्तदा ॥

१

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| “नमस्ते यज्ञरूपाय यज्ञभोक्त्रे नमो नमः ।            |    |
| यज्ञकर्त्रे नमो यज्ञप्रियाय च नमो नमः ॥             | २  |
| यज्ञगोप्त्रे नमो यज्ञफलदाय नमो नमः ।                |    |
| विश्वामित्रमश्वयज्ञपालकाय नमो नमः ॥                 | ३  |
| यज्ञं श्राद्धं च दानं च कर्माण्यन्यानि यानि च ।     |    |
| तेषामपि त्वमेवैकः समस्तजपकर्मणाम् ॥                 | ४  |
| पालने फलदाने च प्रभुरित्युच्यसे बुधैः ।             |    |
| न केवलं त्वदुद्देशकृतानां कर्मणां प्रभुः ॥          | ५  |
| अन्योद्देशकृतानां च यज्ञानां त्वं प्रभुस्तथा ।      |    |
| आदावन्ते तथा मध्ये त्वद् ज्ञानं तु न चेन्न तत् ॥    | ६  |
| न्यूनं चापि कृतं कर्म त्वद्ध्यानाद्याति पूर्णताम् । |    |
| कर्मणैव हि सुप्रीतस्त्वं तु धर्मं ददासि च ॥         | ७  |
| अर्थकामौ तथा मोक्षं ददासि च तपःप्रियः ।             |    |
| वेदेषु बहवो भागाः कर्माण्येव वदन्ति हि ॥            | ८  |
| तान्येव हि तव प्रीतिकारीणीति पुराविदः ।             |    |
| यथावत्तानि कर्तुं च न शक्यानि मनीषिभिः ॥            | ९  |
| अस्माभिः क्रियते युष्मदाज्ञाबुद्ध्या हि कर्म तत् ।  |    |
| कर्मच्छिद्रं तपश्छिद्रं त्यक्तं चोपेक्षितं च यत् ।  |    |
| तत्सर्वं क्षम्यतां देव श्रीनिवास क्षमानिधे ॥ ”      | १० |
| इति तस्मिन् स्तुते विष्णौ मुनिभिश्चतपोधनैः ।        |    |
| इन्द्राद्या देवताः सर्वाः तुष्टुवुर्जगदीश्वरम् ॥    | ११ |

इन्द्रादिकृतभगवत्स्तुतिः

इन्द्राद्याः —

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| “ ओं नमो वेङ्कटेशाय शेषाद्रिनिलयाय च ।               |    |
| सिंहाचलनिवासाय श्रीमन्नारायणाय च ॥                   | १२ |
| केशवाय नमो नित्यं वासुदेवाय ते नमः ।                 |    |
| हृषीकेशाय महते वामनाय नमो नमः ॥                      | १३ |
| सर्वेषां प्राणिनां स्वाग्निन् ! निवासार्थं यथायथम् । |    |
| उद्धृत्य भूमिं पातालात् स्थापयित्वा दृढं पुनः ॥      | १४ |
| अनुगृह्यन् जनान्त्सर्वान् प्रत्यक्षं दृश्यसे गिरौ ।  |    |
| सुराणामुदधिं यत्नात् निर्मथ्योत्पाद्य चामृतम् ॥      | १५ |
| अरक्षस्त्वं सुरान्त्सर्वान् दत्त्वा पीयूषमादरात् ।   |    |
| त्वदीहा सर्वथा स्वामिन् परार्थैव सुरेश्वर ! ॥        | १६ |
| त्वत्स्वरूपं यथावद्वि ज्ञातुं शक्नोति कः पुमान् ? ।  |    |
| कचित्सहस्रमूर्धा त्वं सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥         | १७ |
| कदाचिद् द्विभुजस्त्वं तु कदाचित्त्रयं चतुर्भुजः ।    |    |
| कदाचिच्च तव स्वामिन् ! न किञ्चिच्चरणादिकम् ॥         | १८ |
| आकाशमिव ते रूपं कदाचित् ज्ञानगोचरम् ।                |    |
| कदाचिन्निर्विकल्पेन वेद्यं यत्नेन कस्यचित् ॥         | १९ |
| आहुस्त्वां सगुणं केचित् निर्गुणं ज्ञानमात्रकम् ।     |    |
| किञ्चिदित्येव केचित्तु सदित्येव तु केचन ॥            | २० |
| दिव्यावयवसौन्दर्यं नित्यविग्रहयोगिनम् ।              |    |
| वदन्ति केचिदस्माकमपि तन्मतमुत्तमम् ।                 |    |
| हृद्यं प्रमाणभूयिष्ठं तं नतास्म जगद्गुरुम् ॥ ”       | २१ |

एवं हि स्तूयमाने तु गोविन्दे त्रिदशैरपि ।  
तुष्टुवुः सनकाद्याश्च योगिनो विजितेन्द्रियाः ॥ २२

### सनकदिक्कृतभगवत्स्तुतिः

सनकाद्याः —

“ वैकुण्ठधाम विष्णो त्वं जगतामादिकारणम् ।  
नमामि त्वां जगद्रूपं नमामि त्वामसङ्गिनम् ॥ २३  
आधारपद्मे हृत्पद्मे भ्रूमध्ये मूर्ध्नि पङ्कजे ।  
नीवारशूकवत्सूक्ष्मं पीताम्बं सर्वतोमुखम् ॥ २४  
सुषुम्नामार्गमध्येऽपि त्रिसतन्तुनिभं परम् ।  
ज्ञानात्मकं मनोवेद्यं लयवाच्यमरूपकम् ॥ २५  
स्वयंप्रकाशरूपं च समाधौ त्वां नमाम्यहम् ।  
योगिनां परमाधारं योगीशं योगदायिनम् ॥ २६  
योगिनामप्यगम्यं च नमस्यामो जगद्गुरुम् ।  
हृत्पद्मकर्णिकामध्ये शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ २७  
नीलतोयदसङ्काशं पीतवाससमच्युतम् ।  
नमामो वेदवेद्यं त्वां वेदस्याविषयं तथा ।  
त्वत्पादं सर्वभावेन सर्वथा शरणं गताः ॥ ” २८  
इति स्तुते जगन्नाथे योगिभिः कोसल्याधिपः ।  
तुष्टाव हृष्टस्तं देवं राजा दशरथस्तदा ॥ २९

### दशरथकृतभगवत्स्तुतिः

दशरथः —

“ ब्रह्मेन्द्रप्रमुखाः सर्वे तपः कुर्वन्ति यत्कृते ।  
त्वदधीना रमा सा तु त्वत्प्रसादाभिकाङ्क्षिणी ॥ ३०



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४८ तमोऽध्यायः ६५

त्रिपुरारेर्महाविष्णो ! लोकसंहारकारिणः ।  
येन दग्धा पुरी तत्तु त्वदायुधमिति स्मृतम् ॥ ३१  
सर्वसृष्टिक्रियाकर्तृब्रह्माद्या देवतागणाः ।  
त्वदाज्ञाकारिणः श्रीश ! नास्ति कश्चित्तवाधिकः ॥ ३२  
त्वदीयं धाम वैकुण्ठं निरपायं निराकुलम् ।  
सर्वप्रार्थ्यं परानन्दं वक्तव्यं किमतः परम् ” ॥ ३३  
एवं नृपेण गोविन्दे स्तूयमाने चतुर्मुखः ।  
चतुर्भिस्तोषयामास मुखैर्वेदसुगन्धिभिः ॥ ३४

ब्रह्मकृतभगवत्स्तुतिः

ब्रह्म—

“ आसीदग्रे सदेकस्तु स च नारायणः श्रुतः ।  
अपोऽसृजत्ततो वीर्यं विसृष्टं तासु तेन वै ॥ ३५  
तदण्डमभवत्पश्चात् त्वया सृष्टोऽहमीश्वर ! ।  
मया सृष्टाः प्रजाः सर्वाः सर्वभूतं त्वमेव भोः ! ॥ ३६  
मादृशा विधयो जाताः त्वत्तः कति कतीश भोः ! ।  
जीवैः सूक्ष्मप्रकृत्या च विशिष्टस्त्वं तु कारणम् ॥ ३७  
त्वमेव सर्वभूतात्मा ‘ जग ’ दित्युच्यसे श्रुतौ ।  
एकं वृक्षं समासाते सुपर्णावयुतौ हरे ! ॥ ३८  
तयोरन्यः कर्मजन्यं फलमश्नाति सर्वदा ।  
अस्पृष्टगन्धस्तत्त्वैव दीप्यसे त्वं यथा रविः ॥ ३९  
नियन्ता सर्वजीवानां प्रेरकश्चानुमोदकः ।  
सत्यं ज्ञानमनन्तं च त्वद्रूपं वै श्रियःपते ! ॥ ४०  
‘ नरानन्दाच्छतगुणात् देवगन्धर्वसम्मदाः । ’  
इत्यारभ्य तव स्तोतुमानन्दं कमलापते ! ॥ ४१

|                                                                                                              |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| उपक्रम्य परिच्छेत्तुं तवानन्तगुणार्णवम् ।                                                                    |    |
| अजानन्तः पुरा वेदाः ते च नित्याः सहस्रधा ॥                                                                   | ४२ |
| तूष्णीम्भावं ययुः सोऽहं त्वन्नाभिकमलोद्भवः ।                                                                 |    |
| कथं स्तौमि गुणक्षीरपयोधिं त्वां रमापते ! ॥                                                                   | ४३ |
| दयोद्रिक्तमुत्स्राम्भोज दर्शनात्ते वयं सुराः ।                                                               |    |
| अवादिष्म च किञ्चित्तु तत्सर्वं क्षम्यतां प्रमो ! ॥                                                           | ४४ |
| प्रसीद परमोदार ! प्रसीद त्वं श्रियोज्ज्वल ! ।                                                                |    |
| प्रसीद परमानन्द ! प्रसीद सुमुखोज्ज्वल " ॥                                                                    | ४५ |
| इति देवगणाः सर्वे हर्षोत्कुलहृदम्बुजाः ।                                                                     |    |
| अस्तुवन् देवदेवशं याथात्म्याद्बहुधा तदा ॥                                                                    | ४६ |
| इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमहात्म्ये अगस्त्यादिकृत-<br>भगवत्स्तुत्यादिवर्णनं नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः |    |



अथ एकोनपञ्चाशोऽध्यायः

ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृतकुशानुयोगादयः

श्रीस्तुतः —

|                                                              |   |
|--------------------------------------------------------------|---|
| मुनिभिर्देववृन्दैश्च स्तुतः श्रीवेङ्कटाधिपः ।                |   |
| दयामसनसम्कुलनेत्राब्जभ्यां विलोकयन् ॥                        | १ |
| तान्त्सर्वान्त्रै सुत्रावृष्ट्याऽऽह्लादयन्नित्यं सोऽच्युतः । |   |
| बभावे मेघगम्भीरवाचा कर्णामृतश्रिया ॥                         | २ |

श्रीभगवान्—

‘ब्रह्मन् ! प्रीतोऽस्मि ते भक्त्या स्तुत्या च कमलासन ! ।  
किमागमनकार्यं ते सुराणाञ्च तपस्विनाम् ।’  
इति पृष्ठः पुनः प्राह ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ ३

भगवते ब्रह्मादिभिः रावणोपद्रवनिवेदनम्

ब्रह्मा—

‘पूर्वं विश्रवसः पुत्रो रावणो नाम राक्षसः ।  
तपः कृत्वा सुघोरञ्च देवदानवराक्षसैः ॥ ४  
मानुषादितरैर्लब्ध्वा वरं चावध्यतामयम् ।  
बलदर्पादिमाँल्लोकान् बाधते नितरां मुनीन् ॥ ५  
श्रीशैलस्य सकाशे तु दैत्याः केचन सर्वदा ।  
बलोद्धता महावेगा नित्यं ब्राह्मणकण्टकाः ॥ ६  
बाधन्ते प्राणिनः सर्वान् नित्येद्यतवरायुधाः ।  
वैकुण्ठं क्षीरसिन्धुं च दृष्ट्वा त्वत्प्रीतिकारकम् ॥ ७  
तत्तत्स्थानं समालोक्य लीलालोलहृदम्बुजम् ।  
त्वां तु तत्र श्रियःकान्तमदृष्ट्वा चात्र ते वयम् ॥ ८  
आगताः शरणं नो हि त्वमेव रिपुसूदन ! ।  
जगद्रक्षणकर्ता त्वं तद्विस्तृत्य रमासख ! ॥ ९  
अतिचैत्ररथे दिव्ये गिरावस्मिन् वृषाभिधे ।  
क्रीडसे परमानन्दः क्रीडारसवशानुगः ॥ १०  
अस्माकं का गतिर्विष्णो ! वद वेङ्कटनायक !’ ।  
इत्युक्तः प्राह तान्त्सर्वान् कृपानिधिरधोक्षजः ॥ ११

श्रीभगवान्—

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| ‘अहमेव गतिर्ब्रह्मन्! भवतां माऽस्तु तद्वयम् ।     |    |
| अभयं भवतां दत्तं मया हि कमलासन ! ॥                | १२ |
| अचिराद्राक्षसं क्रूरं रावणं लोककण्टकम् ।          |    |
| सबन्धुं सरथं साश्वं वधिष्यामि न संशयः’ ॥          | १३ |
| एवमुक्त्वा विधिं श्रीशः प्राहागस्त्यं तपोधनम् ।   |    |
| ‘अगस्त्य! स्वागतं ते हि ब्रूहि कार्यं महामुने’ ॥  | १४ |
| इत्युक्तः प्राह तं विष्णुं मुनिः परमपावनः ।       |    |
| ‘मन्दस्मितमनोहारि त्वदीयमुखपङ्कजम् ॥              | १५ |
| सद्यः सन्तापहरणं हृदयाऽऽह्लादकारणम् ।             |    |
| अदृष्टा तत्कथं स्थातुं शक्नुयां वेङ्कटेश्वर ! ॥   | १६ |
| त्वदीयं दर्शनं पुण्यं ममोद्देश्यं प्रधानतः ।      |    |
| अन्यच्च किञ्चिद्वक्ष्यामि श्रूयतां पुरुषोत्तम ! ॥ | १७ |
| असुराः केचिदुद्धृताः श्रीशैलस्य समीपतः ।          |    |
| वरदानोद्धृताः सर्वे बाधन्ते प्राणिनः सदा ॥        | १८ |
| सत्यत्र तव सान्निध्ये देशपीडा कथं भवेत् ? ।       |    |
| विषयोऽयं त्वदीयस्तु बालवृद्धद्विजाकुलः ॥          | १९ |
| दस्युभिः पीड्यमानश्चेदुपेक्षाविषयः कथम् ? ।       |    |
| दुष्टानां निग्रहः कार्यः शिष्टानां रक्षणं तथा ॥   | २० |
| भवद्देशजनाः सर्वे नीरोगा निरुपद्रवाः ।            |    |
| दीर्घायुषस्तथा सर्वे श्रीमन्तः पुत्रपौत्रिणः ॥    | २१ |
| निर्मत्सरा भवेयुश्च भवदीयकटाक्षतः ।               |    |
| वरमेतद्देहि देव ममावश्यं श्रियःपते’ ।             |    |
| इति पृष्टः पुनः प्राह परमात्मा सनातनः ॥           | २२ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४९ तमोऽध्यायः ६९

|                                                         |    |
|---------------------------------------------------------|----|
| ‘दत्तमेतद्वरं चाद्य मया मुनिवरोत्तम ।                   |    |
| हनिष्ये सर्वदुष्टांश्च करिष्ये निरुपद्रवम् ॥            | २३ |
| आरोग्यं सम्पदं दास्ये सन्ततीश्च शतायुषः ।               |    |
| दास्यामि सर्वदा तेषामेतद्विषयवासिनाम् ॥                 | २४ |
| अयाचितं च यच्चान्यत् कञ्क्षितं तद्दामि वः ।             |    |
| इति दत्त्वा वरं सम्यङ् मुनये कमलापतिः ॥                 | २५ |
| सनकादीनुवाचेदं ‘स्वागतं भवता’ मिति ।                    |    |
| इति पृष्टाः पुनः प्रेक्षुर्योगिनस्तं रमापतिम् ॥         | २६ |
| ‘स्वामिन्नियं पुण्यभूमिः तपः सिद्धयति शीघ्रतः ।         |    |
| किं तु बाधा च महती दुस्सहा कल्हार्थिनाम् ॥              | २७ |
| निर्बाधं कुर्विमं देशं शीघ्रं शेषगिरीधर ।               |    |
| त्यक्त्वा वैकुण्ठमस्मिन् हि स्त्रीयसे पर्वगोत्तमे ॥     | २८ |
| त्वमत्र वेङ्कटाधीश ! स्थित्वाऽपि प्राणिसौख्यदः ।        |    |
| अदृश्यः सर्वभूतैश्चेत् तावता किं प्रयोजनम् ? ॥          | २९ |
| स्थातव्यं हि त्वया तात सर्वप्रत्यक्षगोचरम् ।            |    |
| इदमेव हरे स्वामिन् ! परमं नः प्रयोजनम् ’ ॥              | ३० |
| एवमभ्यर्थितः श्रीशः सनकादितपोधनैः ।                     |    |
| ‘तथैव कुर्वे योगीन्द्रा ’ इति चोक्त्वा मुनीस्तदा ॥      | ३१ |
| प्राह चेन्द्रं वचो विष्णुः ‘ किं ते कार्यं वदे ’ ति च । |    |
| इति पृष्टः पुनः प्राह देवेन्द्रो विष्णुमच्ययम् ॥        | ३२ |
| ‘ स्वामिन्नच्युत गोविन्द रावणेन दुरात्मना ।             |    |
| पीडिताश्च वयं सर्वे स्थानात्स्थानं भ्रमामहे ’ ॥         | ३३ |
| इत्युक्तः प्राह देवोऽपि देवेन्द्रं कमलापतिः ।           |    |
| ‘ स्वस्था भवत देवाश्च सर्वे यूयं गतज्वराः ॥             | ३४ |

हत एव दुरात्मा च रावणो लोककण्टकः ।  
अचिरात् वधिष्यामि सत्यमित्यवधार्यताम् ॥ ३५

**शङ्करस्य शेषाचलाऽऽश्रेयदिगवस्थानप्राप्तिः**

इत्युक्त्वा कमलानाथः प्राहेशानं शुचिस्मितः ।  
'किमागनकार्यं ते वद शङ्कर सत्वरम्' ॥ ३६  
इति पृष्ठः शिवः प्राह स्वामिन्नित्यच्युतं वचः ।  
'स्वामिंस्त्वया सदा यत्र स्थीयते वेङ्कटेश्वर ! ॥ ३७  
तत्रैव देव स्थातव्यं मया वृषगिरीश्वर ' ।  
इति पृष्ठः पुनः प्राह नीलमेघसमद्युतिः ॥ ३८  
'आकल्पं च वसामीह वेङ्कटाह्वयभूधरे ।  
त्वमप्यत्र मृडानीश महादेव वस प्रभो ॥ ३९  
उपत्यकायामस्याद्रेः शोचिष्केशदिशीश्वर ! ' ।  
इत्यादिश्य नृपं प्राह कोसलाधिपमीश्वरः ॥ ४०  
'चिरकालेन दृष्टोऽसि किं ते कार्यं वद प्रभो ' ।  
केशवेनैवमुक्तस्तु प्राह राजा मनोगतम् ॥ ४१

**भगवन्तमुद्दिश्य दशरथकृतपुत्रप्रार्थना**

स्वामिन् पुरुषशार्दूल ! त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत ! ।  
राज्यं भुक्तं चिरं दत्तं ब्राह्मणेभ्यो महद्वनम् ॥ ४२  
अनुभूतं सुखं सर्वं जिताश्च रिपवस्तथा ।  
नानुभूतं सुखं पुत्रजन्मसम्भवमच्युत ! ॥ ४३  
न लोकः पुत्रहीनस्य वदन्तीति द्विजातयः ।  
देहि मे पुत्रमोजिष्ठं लोकविख्यातपौरुषम् ' ॥ ४४

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४९ तमोऽध्यायः ७१

इति पृष्टः पुनः प्राह राजानं वेङ्कटाधिपः ।  
'राजस्त्वया कृतं पूर्वं दुस्सहं बहु दुष्कृतम् ॥ ४५  
किं कर्तव्यं मया राजन् ! ' इत्युक्तः प्राह वै नृपः ।  
'स्वामिन्नभ्युदिते सूर्ये तमस्तिष्ठेत्कथं प्रभो ! ॥ ४६  
'क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे' ।  
इति वक्ति श्रुतिः स्वामिन् त्वयि दृष्टे न चास्त्यघम् ॥ ४७  
इत्यतो मम गोविन्द ! कथं पापं त्वयि स्थिते' ॥  
प्राह चैवं नृपेणोक्तः श्रीशः पापविनाशनः ॥ ४८  
'राजन् ! प्रीतो भवद्भक्त्या चतुःश्लोक्या त्वदीयया ।  
स्तुत्या च परमप्रीतः तव दास्ये वरोत्तमम् ॥ ४९  
यस्मात्प्रीत्या चतुःश्लोकी त्वयोक्ता मम भूपते ! ।  
तस्मात्तु तव पुत्रश्च चत्वारोऽमितविक्रमाः ॥ ५०  
शूराश्च बलवन्तश्च मत्तुल्यबलविक्रमाः ।  
दत्ता राजस्त्वयाऽयोध्यां गत्वा यष्टव्यमादरात्' ॥ ५१  
इत्युक्तः सोऽथ राजेन्द्रो बभूव पुलकाङ्कितः ।  
स्तुत्वा नत्वा तु बहुधा देवदेवं रमापतिम् ॥ ५२  
प्रदक्षिणं ततः कृत्वा पुनः स्तुत्वा प्रणम्य च ।  
आमन्त्र्य शेषशैलेन्द्रनिलयं सपुरोहितः ।  
ययौ दशरथः श्रीमान् अयोध्यां सह बन्धुभिः ॥ ५३

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृत-  
कुशलानुयोगादिवर्णनं नाम एकोनपञ्चाशोऽध्यायः

## भगवन्तं प्रति चतुर्मुखकृतप्रार्थनादिः

श्रीसुतः —

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| इति दत्त्वा वरं तस्मै नृपाय कमलपतिः ।                |    |
| कमलासनमाहूय वचनं चेदमब्रवीत् ॥                       | १  |
| ‘ब्रह्मन् कालस्त्वत्क्रान्तः किमर्थं स्थीयते त्वया । |    |
| किमभीष्टं वद क्षिप्रं सत्यं दास्यामि तद्वरम्’ ॥      | २  |
| इति पृष्ठः पुनः प्राह ब्रह्मा लोकपितामहः ।           |    |
| ‘यदि दास्यसि विश्वेश ममाभीष्टं रमापते ! ॥            | ३  |
| त्वमेवम्भूत एवात्र सर्वप्रत्यक्षगोचरः ।              |    |
| केवलं दर्शनादेव सर्वेषां सर्वदः सदा ॥                | ४  |
| भगवन्नर्हसि स्थातुं लोकानुग्रहकाम्यया ।              |    |
| कलौ युगे जनाः सर्वे शिश्रोदरपरायणाः ॥                | ५  |
| न जानन्ति नरा धर्ममधर्मं वाऽपि भूतले ।               |    |
| प्रायशो दुर्बलाः सर्वे रोगिणः काममोहिताः ॥           | ६  |
| पशुप्राया मनुष्या हि न जानन्त्यात्मनो हितम् ।        |    |
| प्रायशः पापिनामेव युगे जन्म कलौ हरे ॥                | ७  |
| क्षुत्तृष्णोपहताः सर्वे न त्वां जानन्ति किञ्चन ।     |    |
| ते यद्युपेक्षिताः सर्वे नरका रौरवादयः ॥              | ८  |
| न पर्याप्ताः पुनः सृज्या नरकास्ते सहस्रधा ।          |    |
| भवेयुर्वेङ्कटावीश दयालोलहृदम्बुज ! ॥                 | ९  |
| तेषां ननुग्रहार्थाय स्थातव्यं भवता हरे !’ ।          |    |
| ब्रह्मणाऽभ्यर्थितस्त्वेवं कृपानिधिरुवाच ह ॥          | १० |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५० तमोऽध्यायः ७३

|                                                                                               |    |
|-----------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| ‘ब्रह्मन्मर्थितं त्वेतत् महद्वरमनुत्तमम् ।<br>सर्वजीवदयालुत्वमहो तव चतुर्मुख ! ॥              | ११ |
| अनेन सुतरां प्रीतस्तव दास्ये यथेप्सितम् ।<br>स्थास्याम्यत्रैव सर्वेषां प्रत्यक्षः सर्वकामदः ॥ | १२ |
| आकल्पं च वसामीह श्रिया सार्धं चतुर्मुख ! ।<br>शेषेण गरुडेनैव विष्वक्सेनेन सर्वदा ॥            | १३ |
| भूम्या च नीलया सार्धं सर्वैः पारिषदैः सह ।<br>ये केचिदत्र कुर्वन्ति तपांसि विविधानि च ॥       | १४ |
| तेषां तपांसि सिद्ध्यन्तु सुलभेनाऽशु वर्त्मना ।<br>तथैव यज्ञकर्माणि योगाश्चापि च योगिनाम् ॥    | १५ |
| स्वामिपुष्करिणी चेयं ब्रह्मलोकपितामह ! ।<br>तीर्थानां स्वामिभूतत्वादुच्यतेऽन्वर्थनामतः ॥      | १६ |
| यानि कानि च तीर्थानि गङ्गादीनि महीतले ।<br>तानि सर्वाणि चोत्पन्नान्यस्यतीर्थात् पितामह ! ॥    | १७ |
| ऐरंमदतटाकश्च वैकुण्ठे यस्तु तिष्ठति ।<br>स एव गीयते चात्र स्वामिपुष्करिणीति च ॥               | १८ |
| अत्र खानेन नश्यन्ति महापातककोटयः ।<br>उपपातकसङ्घाश्च रहस्ये च प्रकाशतः ॥                      | १९ |
| कृतानि यानि पापानि नश्यन्त्येव न संशयः ।<br>यं यं कामं समुद्दिश्य स्नात्यस्मिंस्तु सरोवरे ॥   | २० |
| तं तं काममवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।<br>काणः खञ्जः कृशः कुब्जो मूको बधिर एव च ॥          | २१ |
| अनपत्यो दरिद्रो वा कुष्ठी वा व्याधिपीडितः ।<br>मयि चानुत्तमां भक्तिं कृत्वा मद्दर्शनोत्सुकः ॥ | २२ |

आयाति चेद्यथाकामं प्राप्नोति हि न संशयः ।  
 अद्यप्रभृति निश्शंका जनाः कमलसम्भव ! ।  
 विचरन्तु दिवारात्रं निर्वाधाश्च महीतले ' ॥ २३

### श्रीवेङ्कटाद्रिनिःकटस्थासुरवधार्थं चक्रप्रेरणम्

इत्थमाश्वास्य दुर्दैत्यविनाशाभ्यर्थिनं विधिम् ।  
 सुदर्शनं हेतिराजं समाह्वयान्वशात्तदा ॥ २४  
 'सुदर्शनं सहस्रारं ज्वालामालाविभीषण ! ।  
 आगच्छ त्वं महाभाग शृणु मद्रचनं शुभम् ।  
 कुमुदादिगणैः सार्धं सर्वायुधपरिच्छदैः' ॥ २५  
 इतो निर्गत्य सहसा यत्नं दैत्या महाबलाः ।  
 यक्षराक्षसनागाश्च दुष्टा ब्राह्मणहिंसकाः ॥ २६  
 ये चोरा वसुहर्तारो देशोपप्लवकारकाः ।  
 यत्र यत्र गिरौ वाऽपि देशे वा काननेऽपि वा ॥ २७  
 परितोऽस्य गिरेस्त्वं तु गत्वा दुष्टान् महाबलान् ।  
 निश्शेषं भस्मसात्कृत्वा देशं च निरुपद्रवम् ॥ २८  
 कृत्वा तु तत्र तत्रापि जनरक्षां विधाय च ।  
 आगच्छ त्वं महाभागे ' त्याज्यस्तश्चक्राडपि ॥ २९  
 विनिर्गत्य गिरेस्तस्मात् दैत्यसङ्घान् सुदुर्जयान् ।  
 अन्यानपि जनान् हत्वा देशबाधाविधायकान् ॥ ३०  
 क्षणेन सर्वान् दुष्टैधान् निश्शेषं भस्मसात्तदा ।  
 कृत्वाऽऽगच्छन्महाचक्रं सर्वेषां पश्यतां हरेः ॥ ३१

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५० तमोऽध्यायः ७५

सन्निधौ तत्समागत्य व्यजिज्ञपदिदं वचः ।  
‘निहता दुष्टदैत्यास्ते प्रतापाच्चक्रिणस्तव’ ॥ ३२  
इति तस्मिन् समायाते चक्रराजे हरिः स्वयम् ।  
पुनराह सुरश्रेष्ठ ‘कर्तव्यं किमितः प्रभो ! ॥ ३३  
वदे’ ति पृष्टः प्राहासौ ब्रह्मा हर्षसमाकुलः ।  
‘विभेमि वक्तुं देवेश प्रसन्नमुखपङ्कज’ ॥ ३४  
इत्युक्तोऽथ हरिः प्राह ‘मा भैषीस्त्वं वदस्व तत्’ ।  
इत्याश्वस्तः पुनः प्राह ब्रह्मा ब्रह्मविदग्रणीः ॥ ३५

### श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सवघट्टः

‘ध्वजारोहणपूर्वश्च कार्यस्तव महोत्सवः ।  
स च त्वया महाभूमन्! अङ्गीकार्यः श्रिया सह’ ॥  
इति ब्रुवन् विधिस्तेन चोदितः ‘क्रियता’ मिति ॥ ३६  
विधिश्चकार मुनिभिः वैखानसमुखैः सह ।  
उत्सवं ध्वजपूर्वं च कन्यामासं गते रवौ ॥ ३७  
आहूताश्च सुराः सर्वे सर्वाभ्यो दिग्भ्य एव च ।  
आगता विबुधाः सर्वे राजानः पुण्यकृत्तमाः ॥ ३८  
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चान्त्यजनास्तथा ।  
नानाजातिसमुत्पन्नाः समुद्रवनवासिनः ॥ ३९  
अङ्गवङ्गकलिङ्गेषु गौडकाश्मीरसिन्धुषु ।  
चोलमालवपाण्ड्येषु कोसलेषु कुशेषु च ॥ ४०  
वसन्तस्ते जनाः सर्वे सकुटुम्बाः समाययुः ।  
घुष्यन्तः सङ्घशश्चोच्चैः “गोवि” न्देति पुनः पुनः ॥ ४१

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| ‘योगिनामप्यदृश्योऽसौ दयया सर्वजन्तुषु ।          |    |
| सर्वप्रत्यक्षतां यातः श्रीनिवासः परात्परः ॥      | ४२ |
| अङ्गीचकार विधिना निर्मितञ्च महोत्सवम् ।          |    |
| उत्सवे दर्शनं पुण्यं श्रीनिवासस्य शार्ङ्गिणः ’ ॥ | ४३ |
| इति ब्रुवन्तस्ते सर्वे मध्येमार्गं जनास्तथा ।    |    |
| चक्रुः पानीयशालाश्च विविधान्नगृहाणि च ॥          | ४४ |
| बाहनानि च वासांसि छत्राण्याभरणानि च ।            |    |
| पादुकाश्च जनाः सर्वे दधतः सर्वदैव हि ॥           | ४५ |
| नृत्यन्तो वादयन्तश्च गायन्तश्च परस्परम् ।        |    |
| आजम्मुः सेवितुं सर्वे वेङ्कटाह्वयभूधरम् ॥        | ४६ |
| ब्रह्मा च कारयामास समागतजनान् प्रति ।            |    |
| विश्वकर्माणमाहूय समर्थं शिल्पिनां वरम् ॥         | ४७ |
| अन्नशालाश्च विविधाः प्रपाश्च बहुधा तदा ।         |    |
| उपकार्याश्च बहुधा कारितास्तत्र तत्र वै ॥         | ४८ |
| गिरेश्च परितस्तत्र नगराणि चकार ह ।               |    |
| विश्वकर्मा तु विधिवत् मनोज्ञानि पुराणि च ॥       | ४९ |
| पुरे पुरे च विविधा वीथयः पण्यवीथयः ।             |    |
| शोभन्ते गणिकानां च वणिजां पुण्यसम्पदः ॥          | ५० |
| तत्र तत्र च शोभन्ते मुक्ताविद्रुमराशयः ।         |    |
| सर्वे च धर्मनिरताः सर्वे च धनिनस्तदा ॥           | ५१ |
| सेवार्थमागतानां तु ददुर्वस्त्राण्यनेकशः ।        |    |
| सद्मानि च ददुः सर्वे पानीयान्नं च सर्वदा ॥       | ५२ |
| ब्रह्मा च देवदेवस्य चकार परमोत्सवम् ।            |    |
| जगुः कलं च गन्धर्वा नन्तुश्चाप्सरोगणाः ॥         | ५३ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५१ तमोऽध्यायः ७७

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| मेरीमृदङ्गमुरजाः पणवानकगोमुखाः ।            |    |
| ढक्काक्षरनिस्साणवाद्यभेदास्त्वेकधा ॥        | ५४ |
| वादयामासुरव्यग्रं नादयन्तो दिशो दश ।        |    |
| विमानं परितस्तत्र वीथयो भान्ति सर्वतः ॥     | ५५ |
| विश्वकर्मा स्वसामर्थ्यं प्रकटीकृतवांस्तदा । |    |
| तुङ्गप्रासादसम्बाधं विचित्रगृहभित्तिकम् ॥   | ५६ |
| चन्द्रकान्तशिलोपेतं सूर्यकान्तसमन्वितम् ।   |    |
| अनेकरत्नखचितं तप्तहाटकनिर्मितम् ॥           | ५७ |
| तुङ्गध्वजसमोपेतं रत्नतोरणसंयुतम् ।          |    |
| जलसिक्तं पुष्पकीर्णं दिव्यधूपसुधूपितम् ।    |    |
| चकार नगरं तत्र गन्धर्वनगरं यथा ॥            | ५८ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवन्तं प्रति चतुर्मुख-  
कृतप्रार्थनादिवर्णनं नाम पञ्चाशोऽध्यायः



अथ एकपञ्चाशोऽध्यायः



श्रीवेङ्कटेशमहोत्सववैभववर्णनम्

श्रीसूतः—

|                                              |   |
|----------------------------------------------|---|
| ब्रह्मा च वेङ्कटेशस्य दिव्योत्सवदिनेषु वै ।  |   |
| नैवेद्यं बहुधा चक्रे घृतसूपगुडोत्तरम् ॥      | १ |
| गुडान्नं पायसान्नञ्च मुद्गान्नञ्च तिलौदनम् । |   |
| शाल्यन्नं कृसरान्नञ्च मरीच्यन्नं तथैव च ॥    | २ |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| गोधूमान्नञ्च माषान्नं मधुरान्नं घृतोत्तरम् ।    |    |
| एवं बहुविधान्नञ्च फलानि विविधानि च ॥            | ३  |
| व्यञ्जनानि विचित्राणि मनतोषकराणि च ।            |    |
| दिव्यान्यमृतकल्पानि सुस्वादुरसवन्ति च ॥         | ४  |
| उच्चैश्श्रवसमश्चञ्च गजमैरावतं तथा ।             |    |
| अनन्तं नागराजञ्च गरुडञ्च त्रयीमयम् ॥            | ५  |
| एकैकं समधिष्ठाय वेङ्कटाद्रिशिखामणिः ।           |    |
| दिने दिने सुरान्त्सर्वान् उत्सवार्थं समागतान् ॥ | ६  |
| अनुजग्राह रथ्यायामटन् भूम्या श्रियाऽन्वितः ।    |    |
| समस्तवाद्यघोषैश्च गजाश्चैः समलङ्कृतैः ॥         | ७  |
| चित्रध्वजपताकाभिः चित्रचामरराजिभिः ।            |    |
| सहितो नृत्तवादित्रैः वरनारीगणैः सह ॥            | ८  |
| कविभिर्विन्दिमिश्चैव गायकैः पाठकैस्तथा ।        |    |
| नित्यं वेदैः स्तूयमानः श्रीनिवासः परात्परः ॥    | ९  |
| प्रातर्देवगणैः कैश्चिदुपदाभिश्च पूजितः ।        |    |
| तथैव सायं देवैश्चोपदया पूजितो हरिः ॥            | १० |
| ववृधे लोकवृद्धयर्थमुत्सवे ब्रह्मनिर्मिते ।      |    |
| जुहुवुर्यागशालायां मुनयो वीतकल्मषाः ॥           | ११ |
| विधिवत्स्थापयामासुः पूर्णकुम्भान् मनोहरान् ।    |    |
| दिग्भलिं विधिवच्चक्रुः वैखानसतपोधनाः ॥          | १२ |
| श्रीनिवासोत्सवदिनं पुण्यं पापप्रणाशनम् ।        |    |
| इत्यागता जनाः सर्वे चक्रुर्दानान्यनेकशः ॥       | १३ |
| अन्नदानं स्वर्णदानं वस्त्रदानं तथैव च ।         |    |
| गृहदानं महापुण्यमिति मत्वा महाजनाः ॥            | १४ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५१ तमोऽध्यायः

७९

इष्टकादारुभिश्चैव निर्मितं हर्म्यसंयुतम् ।

ददुः प्रत्येकशो वेश्म सोपस्करमलङ्कृतम् ॥

१५

राजानः स्थापयामासुः विप्रेन्द्रांस्तत्र भूधरे ।

वैश्यानन्यांश्च मनुजान् स्थापयामास वै विविः ॥

१६

अतैव वासः कर्तव्यः सर्वदेति विनिश्चिताः ।

वासं चक्रुश्च ततैव विप्राद्या मानवाः सदा ॥

१७

एवं श्रीवेङ्कटेशस्य वर्तमाने महोत्सवे ।

कदाचित्स्यन्दनं दिव्यं नानारत्नविराजितम् ॥

१८

तप्तजाम्बूनदमयमुच्छ्रितध्वजशोभितम् ।

नानाकुसुममाल्यैश्च मुक्तामाल्यैश्च शोभितम् ॥

१९

हैमवस्त्रवितानाढ्यं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ।

विमान पुष्पकं कान्त्या स्मारयन्तं मनोहरम् ॥

२०

रथं तं समधिष्ठाय श्रीभूमिसहितः परः ।

श्रीनिवासः स्फुरद्रत्नविक्रीटमकुटोज्ज्वलः ॥

२१

ब्रह्मादिदेववृन्दैश्च सेव्यमानस्तपोधनैः ।

परिक्रम्य महावीथीं राजवीथीं श्रियोज्ज्वलाम् ॥

२२

पुनरागत्य तं दिव्यं वितानासनशोभितम् ।

आस्थानमण्डपं तत्र मणिस्तम्भशतैर्युतम् ॥

२३

हिरण्मयमधिष्ठाय स्वयम्भुवमकलमषम् ।

आहूय वाचा भगवान् अब्रवीन्मधुरां गिरम् ॥

२४

महोत्सवसेवाफलदानफलप्रशंसादिकम्

श्रीभगवान् —

‘ब्रह्मन्! प्रीतोऽस्मि नितरां त्वद्भक्त्या चोत्सवेन च ।

शृणुध्वं मुनयो देवा राजानो योगिनश्च ये ॥

२५

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| वर्षे वर्षे तु मासेऽस्मिन् कन्याराशिं गते रवौ ।     |    |
| ये केचिदत्र कुर्वन्ति ब्रह्मवल्लोत्सवं मम ॥         | २६ |
| ते यान्ति ब्रह्मणो लोकं भूमौ कामानवाप्य च ।         |    |
| इममुत्सवमुद्दिश्य सेवार्थं यस्तु वासतः ॥            | २७ |
| क्रमते पदमेकं तु गन्तुं शेषगिरिं प्रति ।            |    |
| पदस्यैकस्य तस्यैव फलं भवति मत्पदम् ॥                | २८ |
| ऐहिकं तु फलं तस्य ह्यवान्तरफलं भवेत् ।              |    |
| सेवन्ते ये हि मामस्मिन्नुत्सवे ब्रह्मकल्पिते ॥      | २९ |
| सेवन्ते तान् महीपालाः स्नेहाद्द्युश्च वाञ्छितम् ।   |    |
| प्रपामुत्सवकाले हि ये तु कुर्वन्ति देहिनः ॥         | ३० |
| मच्चितं तान्त्समुद्दिश्य शीतलं भवति क्षणात् ।       |    |
| अन्नदानं प्रशस्तं स्यात् विशेषेण महोत्सवे ॥         | ३१ |
| येऽपि चान्नं प्रयच्छन्ति तेषां सप्तकुलवधि ।         |    |
| अन्नं बहुविधं चित्तं दीयते हि मया विधे ! ॥          | ३२ |
| ते तु भुक्त्वा बहून् भोगान् मया दत्तानभीप्सितान् ।  |    |
| अन्ते हि मत्पदं यान्ति स्वर्गं भुक्त्वा तु मध्यतः ॥ | ३३ |
| काणान्धपङ्गुमूकानामन्येषां विकलाङ्गिनाम् ।          |    |
| अन्नवस्त्रहिरण्यादिदातॄणां सम्पदः सदा ॥             | ३४ |
| अनायासेन सिद्धयन्ति मच्छन्दात् पद्मसम्भव ! ।        |    |
| ये हि चात्र स्थितिं नित्यं वाञ्छन्ति मनुजा भुवि ॥   | ३५ |
| तेषामिहैव दास्यामि सम्पदं सन्ततिं तथा ।             |    |
| तारतम्यवशाद्भक्तेः तेषां सिद्धयन्ति सम्पदः ॥        | ३६ |
| जननं मरणं येषां स्थितिर्वाऽस्मिन्महीधरे ।           |    |
| तेषां मुक्तिः कस्य हि ज्ञानसाध्या हि दुर्लभा ॥      | ३७ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५२ तमोऽध्यायः ८१

यानि कानि च दानानि सन्ति शास्त्रे दितानि च ।  
तानि सर्वाणि दानानि क्रियमाणानि चेदिह ॥ ३८  
ऐहिकञ्च फलं दत्त्वा स्वर्गमीप्सितमेव वा ।  
मत्पदञ्च शरीरान्ते ददाम्येषां न संशयः ॥ ३९  
गिरेश्च परिजो भूमौ ग्रामान्वा पत्तनानि वा ।  
करोति श्रद्धया राजा ब्राह्मणो योऽपि कोऽपि वा ॥ ४०  
स वै राज्यश्रियं भुक्त्वा भुक्त्वा स्वर्गादिकं चिरम् ।  
मत्सायुज्यं व्रजत्येव नालं कार्या विचारणा ॥ ४१  
'पुण्यं क्षेत्रमिदं भूमौ स्थातव्यं हि सदाऽत्र तु' ।  
इति बुद्ध्याऽत्र वसतां गृहक्षेत्रादिकं तु ये ॥ ४२  
ददतीह नरास्ते वै लब्ध्वा वासफलानि च ।  
प्राप्नुवन्ति पुनश्चैव मामकञ्च फलं ध्रुवम् ॥ ४३  
अत्र ये वसतां प्राज्ञा विद्यादानमनुत्तमम् ।  
कुर्वन्ति तेषां विदुषां कीर्तिस्त्रैलोक्यगामिनी ॥ ४४  
तद्धन्धुबन्धुतद्धन्धुतद्धन्धुजनान्धवाः ।  
सर्वेऽपि तत्फलं लब्ध्वा मेदन्ते दिवि देवताः ॥ ४५

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सववैभववर्णनं  
नाम एकपञ्चाशोऽध्यायः

अथ द्विपञ्चाशोऽध्यायः

वेङ्कटाद्रौ पुण्योद्याननिर्माणादिप्रशंसा

श्रीसूतः —

उक्त्वा चैवं वेङ्कटेशः पुनः प्रीत्या जगाद च ॥ १

श्रीभगवान्—

|                                                        |    |
|--------------------------------------------------------|----|
| ‘ शृणुध्वं विबुधा यूयमन्यत्किञ्चिद्ब्रवीमि वः ।        |    |
| ये हि चात्र प्रकुर्वन्ति वृन्दावनमनुत्तमम् ॥           | २  |
| उद्यानानि च पुण्यानि नानावृक्षयुतानि च ।               |    |
| पुष्पोद्यानानि कृत्वा च तत्पुष्पैरर्चयन्ति माम् ॥      | ३  |
| दलस्यैकस्य दिव्यानि वत्सराण्यर्बुदानि च ।              |    |
| स्वर्गे भुक्त्वा परान् भोगान् अन्ते यान्ति च मत्पदम् ॥ | ४  |
| अवान्तरफलं तेषामीप्सितं हि महीतले ।                    |    |
| न च सन्ततिविच्छेदः तेषां पुण्यकृतां भुवि ॥             | ५  |
| फलपुष्पाणि पत्राणि यावन्ति प्रतिवत्सरम् ।              |    |
| उद्भवन्ति तथा कामाः तेषामपि महीतले ॥                   | ६  |
| प्रत्यहं मम नैवेद्यं यावत्प्रस्थचतुष्टयम् ।            |    |
| सव्यञ्जनं कल्पयन्ति ते हि पुण्यतमा भुवि ॥              | ७  |
| ब्रह्मेन्द्रलोकप्रमुखाः तैः सुखेन जिता नरैः ।          |    |
| तदीयदर्शनात्पुंसो भवन्ति महिमादयः ॥                    | ८  |
| तेषामैश्वर्यसम्पत्तौ वक्तव्यं नावशिष्यते ।             |    |
| अन्ते यान्ति परं धाम पुनरावृत्तिवर्जितम् ॥             | ९  |
| भूषणं स्वर्णखचितं वज्रमाणिक्यसंयुतम् ।                 |    |
| प्रयच्छन्ति च ये पुण्या मामुद्दिश्य महीतले ॥           | १० |
| रूपलावण्यसम्पन्ना विद्यावन्तश्चिरायुषः ।               |    |
| भवन्ति पुत्रास्तेषाञ्च मच्छन्दात्सम्पदोऽपि च ॥         | ११ |
| पद्मकङ्कहारतुलसीचम्पकैर्दामकारिणः ।                    |    |
| मदर्चननिमित्तं ये प्रत्यहं श्रद्धयाऽन्विताः ॥          | १२ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५२ तमोऽध्यायः ८३

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| लक्ष्म्या समेतस्तेषां हि गृहे वत्स्याम्यहं सुराः । |    |
| तेषां येऽपि च साहाय्यं कुर्वते श्रद्धयाऽन्विताः ॥  | १३ |
| तेषामपि सदा सम्पत्प्रदोऽहं कमलासन ! ।              |    |
| भोः सुरा यं गिनः सर्वे येऽपि चाल समागताः ॥         | १४ |
| युष्माकं यद्यदिष्टं तत् दास्येऽहं सकलं वरम् ।      |    |
| पुत्रान् पौत्राञ्छ्रियं वाऽपि राज्यमारोग्यमेव वा ॥ | १५ |
| आयुः कीर्तिञ्च यच्चान्यत् मतो वाञ्छति यः पुमान् ।  |    |
| तत्तद्दाम्यहं तस्मै सत्यं सत्यं न संशयः ॥          | १६ |
| बहुनेह विमुक्तेन ये चात्र वसतां पुनः ।             |    |
| कुर्वन्ति चानुकूल्यं वै ते मे प्रियतरा मताः ॥      | १७ |
| निवसद्भ्योऽत्र मनुजा द्रुहन्ति विबुधाश्च ये ।      |    |
| असुरा राक्षसा यक्षाः पिशाचाः प्राणिनोऽपि वा ॥      | १८ |
| तानहं नाशयिष्यामि सपुत्रपशुचान्धवान् ।             |    |
| नियतोऽनियतो वाऽपि वेङ्कटाद्रिमिमं जनः ॥            | १९ |
| व्याजाद्वा यः समारुह्य स्नात्वा स्वामिसरोजले ।     |    |
| नमस्यति च मां सोऽपि सकामः सर्वथा सुराः ॥           | २० |
| कूलङ्कषमहौदार्यगुणक्षीरपर्योनिधिः ।                |    |
| इति श्रीवेङ्कटाधीशः तेभ्यो दत्त्वा वराण्यहो ! ॥    | २१ |
| भेरीमृदङ्गपणवमङ्गलस्वनसंयुतः ।                     |    |
| पुष्पवृष्ट्या युतः श्रीमान् श्रीभूमिसहितस्तदा ।    |    |
| विवेशान्तर्महद्दिव्यं विमानं रत्नजोरणम् ॥          | २२ |
| ब्रह्मादयो देवगणाः सम्भूय प्रीतमानसाः ।            |    |
| जयेति चास्तुवस्तेन घोषेणाऽऽपूरितं जगत् ॥           | २३ |

ब्रह्माऽपि वेङ्कटेशस्य दिव्यमङ्गलसम्भ्रमम् ।  
ऋषिभिः सह धर्मात्मा यथाशास्त्रमकारयत् ॥ २४

### महोत्सवावभृथस्नानप्रशंसा

ततः श्रवणनक्षत्रे देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।  
चकारावभृथं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ॥ २५  
स्वामिपुष्करिणीपुण्यसलिले लोकपूजिते ।  
सस्तुर्ब्रह्मादिदेवाश्च मुनयो योगिनोऽपि च ॥ २६  
राजानश्च तथा विप्राः सर्वे चैव नरास्तदा ।  
तत्र स्नात्वा तु योगीन्द्रः सनकः सर्ववित् स्वयम् ॥ २७  
सर्वेषां पुरतश्चेदमुवाच वचनं तदा ।  
'सर्वे शृण्वन्तु मद्वाक्यमुद्धृत्य भुजमुच्यते ॥ २८  
ज्ञातश्च ध्यानयोगेन सम्यक्छास्त्रैश्च चिन्तितम् ।  
समस्ततीर्थभूतस्य देवदेवस्य चक्रिणः ॥ २९  
यः स्नात्यवभृथे पुण्ये तस्य तत्पूर्वजन्मसु ।  
अनन्तेषु कृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ' ॥ ३०  
इति श्रुत्वा महादेवः 'तत्तथैवे' ति चाब्रवीत् ।  
'एवमेवे' ति भगवान् विष्णुरप्यब्रवीत्तदा ॥ ३१  
प्रशशंसुस्तदा देवाः स्वामिपुष्करिणीं तदा ।  
विविधैर्दिव्यकुसुमैः राशीभूतैः सुगन्धिभिः ॥ ३२  
उपचारैरनेकैश्च वेदघोषैः सुखश्रवैः ।  
नृत्यगीतादिवादित्रैः दिव्यमङ्गलनिस्स्रवैः ॥ ३३  
इष्टा प्रसूनयागञ्च तोषयित्वा जनार्दनम् ।  
प्रणाममकरोद्ब्रह्मा सर्वदेवैः समन्वितः ॥ ३४

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५२ तमोऽध्यायः ८५

ततः प्रीतिसमायुक्तो ब्रह्मकल्लोत्सवेन सः ।  
उवाच च विधिं विष्णुः 'ब्रह्मन्! प्रीतोऽस्मि साम्प्रतम् ॥ ३५  
एतत्प्रीतिसमं किञ्चित् दातुं तव न विद्यते ।  
ब्रह्मन्! यद्वाऽथ किं दास्यं जगत्सृष्टिपटो विधे! ॥ ३६  
त्वमेवाहमहं त्वं हि यद्यस्त्यन्यद्वदस्व तत् ।'  
इति पृष्टोऽवदद्ब्रह्मा 'स्वामिन् यद्यस्ति ते कृपा ॥ ३७  
कृतार्थोऽस्मि वरं नान्यत् लोकस्यानुग्रहं विना ।  
एवमेव हरे स्वामिन् दद चेप्सितमर्थिने ॥ ३८  
स्थातव्यं भवता विष्णो! लोकानुग्रहकाम्यया ।  
इदमेव ममाभीष्टं याचनीयं पुनः पुनः ' ॥ ३९  
इति पृष्ठो रमाधीशः 'तथैवा' स्त्विति चावदत् ।  
उक्त्वा चैवं पुनः प्राऽह ब्रह्माणममिजसम् ॥ ४०

**ब्रह्मादीनां स्वावासगमनार्थं भगवदभ्यनुज्ञा**

'ब्रह्मस्त्वं सृष्टिकार्येषु नियुक्तः पूर्वमेव हि ।  
गत्वा त्वदीयलोकञ्च कुरु सृष्टिं सुखी भव ॥ ४१  
'इन्द्र गच्छ स्वकं लोकं शाधि राज्यं स्वकीयकम्' ।  
'पिनाकपाणे भूतेश लोकं गत्वा त्वदीयकम् ॥ ४२  
उमया विहरस्व त्वमवाससकलेप्सितः ' ।  
'अगस्त्य मुनिशार्दूल शिष्यैः सह तपोधन ॥ ४३  
स्वमाश्रमं प्रविश्यैव कुरु नित्यान्यतन्द्रितः ' ।  
'योगिनश्च यथायोग्यं गच्छताऽसमुत्तमम् ॥ ४४  
ध्यानामृतसुतृप्तैश्च स्थातव्यं योगिभिश्चिरम् ' ।  
इति श्रीवेङ्कटाधीशः सर्वानुत्सवसङ्गतान् ॥ ४५

तत्तत्स्थानं समुद्दिश्य विसृज्य प्रीतिपूर्वकम् ।

अन्तर्विमानं श्रीभूमिसहितः प्रविवेश ह ॥

४६

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाद्रौ पुष्पोद्यान-  
निर्माणादिप्रशंसावर्णनं नाम द्विपञ्चाशोऽध्यायः



अथ त्रिपञ्चाशोऽध्यायः

### श्रीवेङ्कटाद्रीशवैभवप्रशंसा

मुनयः —

‘ भगवन् वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञानसुनिष्ठित ! ।  
श्रुतं सूत ! महाश्चर्यमिहाऽख्यान्मनुत्तमम् ॥ १  
वेङ्कटाद्रिप्रभावोऽयमीदृशः पापनाशनः ।  
तल्लैव भगवत्प्रीतिरीदृशी निस्तुल्य खलु ॥ २  
वेङ्कटेशो महाश्चर्यदिव्यचारित्रभूषणः ।  
आश्चर्यं तस्य चारित्रमद्भुतं परमाद्भुतम् ॥ ३  
अदृष्टाश्रुतपूर्वं तत् कुत्राऽपि जगतीतले ।  
शृण्वतामिदमाख्यान् नास्ति तृप्तिस्तपोधन ॥ ४  
विसृज्य विबुधान् विष्णुरकरोत्किं रमापतिः ।  
विसृष्टास्तेन देवाश्च विमकुर्वन् मुने वद ’ ।  
इति पृष्टोऽवदत्सूतः ‘ श्रूयता ’ मिति तान् मुनीन् ॥ ५

### ब्रह्मादीनां स्वावासगमनम्

श्रीसूतः —

आरुह्य हंसं ब्रह्मा तु स्तूयमानः सुरैस्तथा ।  
सत्यलोकं जगामाऽऽशु सर्वलोकपितामहः ॥ ६

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५३ तमोऽध्यायः ८७

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| दिव्यं विमानमास्थाय सहस्राक्षः पुरन्दरः ।           |    |
| गन्धर्वैर्गीयमानश्च प्रविवेशामरावतीम् ॥             | ७  |
| नन्दिकेश्वरमुख्यैश्च गणैः प्रमथसंज्ञकैः ।           |    |
| सहितः पार्वतीनाथः पर्वतं वेङ्कटाभिधम् ॥             | ८  |
| कुर्वन् प्रदक्षिणं पश्यन् वस्तु स्थलमनुत्तमम् ।     |    |
| आग्नेयां दिशि चाद्राक्षीत् वेङ्कटाद्रेः सरः शिवम् ॥ | ९  |
| तत्र दृष्ट्वा सरः पुण्यं कापिलं लोकपावनम् ।         |    |
| ‘रमणीयमिदं स्थानं स्थातव्यमुमया सह ॥                | १० |
| अत्रैव’ वेति विनिश्चित्य जगाम रजताचलम् ।            |    |
| योगिनः सनकाद्याश्च पापनाशनतीरतः ॥                   | ११ |
| अतिष्ठन् परमप्रीताः काननेषु महत्सु वै ।             |    |
| ऋषयः सप्त तत्रैव दिशि चोत्तरपूर्वतः ॥               | १२ |
| फल्गुनीश्वरतीरे तु स्वाश्रमेष्ववसन् सुखम् ।         |    |
| फाल्गुन्यां पूर्णिमायां तु तत्तीरे कमलालया ।        |    |
| अरुन्धतीतपःप्रीता प्रादुरासीत्पुरा विल ॥            | १३ |

### फल्गुनीतीर्थमाहात्म्यम्

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| तस्यै दत्त्वा वरं चेष्टं प्रार्थिता च तया रमा । |    |
| ददौ च सरितो नाम फल्गुनीशब्दपूर्वकम् ॥           | १४ |
| ‘फाल्गुने मासि राकाऽऽख्ये फल्गुनीतारके तिथौ ।   |    |
| स्नास्यन्त्यत्र तु ये केचित् जनास्तेषामहं सदा ॥ | १५ |
| प्रीतो गृहे निवत्स्यामि सर्वकामफलप्रदा ’ ।      |    |
| इति दत्त्वा वरं तस्यै पुनः श्रीकमलासना ।        |    |
| अन्तर्धानं गता तत्र तत्तीरे मुनयोऽवसन् ॥        | १६ |

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| देवाः केचन सम्भूय विनिश्चित्य विचार्य च ।     |    |
| ‘ अत्रैव वर्तते श्रीशः तस्मादत्रैव सर्वदा ।   |    |
| सेवमाना वेङ्कटेशं स्थास्याम ’ इति निश्चिताः ॥ | १७ |
| उत्तरे स्वामितीर्थस्य देवनद्यास्तथोत्तरे ।    |    |
| कृत्वाऽऽश्रमं सुखं तत्र न्यवसंस्ते दिवौकसः ॥  | १८ |

## जाबालि तीर्थं ।हात्म्यम्

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| तत उत्तरदिग्भागे सरसः पश्चिमे तटे ।              |    |
| जाबालिः स्वाश्रमे शिष्यैः न्यवसद्विगतश्रमः ॥     | १९ |
| केचिद्गिरौ स्थिताश्चैव नित्यमीशं नमन्ति च ।      |    |
| गिरेः परिसरे केचित् न्यवसन्नित्यमेव हि ॥         | २० |
| पुनरप्यागमिष्याम इति जम्मुः परे तदा ।            |    |
| अगस्त्यो भगवांस्तत्र श्रीमद्वेङ्कटनायकम् ॥       | २१ |
| अर्चयन् विविधैः पुष्पैः कृत्वा चोद्यानमुत्तमम् । |    |
| चिरकालं महाभागः सह शिष्यैर्महासुनिः ॥            | २२ |
| पिबन्नानन्दपीयूषं न्यवसद्वेङ्कटाचले ।            |    |
| वेङ्कटेशः श्रिया भूम्या समेतः पुरुषोत्तमः ॥      | २३ |
| कृतत्रेताद्वापरेषु देवराजैर्महीक्षितैः ।         |    |
| कल्पितैर्विविधैर्नित्यमुत्सवैः परमाद्भुतैः ॥     | २४ |
| पूजितो मोदते नित्यं ददन्निष्टं च याचते ।         |    |
| कलौ युगे तटिद्वृत्तिः आस्ते श्रीवेङ्कटाचले ॥     | २५ |
| एतद्वः सर्वमाख्यानं कथितं मुनयोऽमलाः ।           |    |
| श्रोतुमिच्छथ भूयोऽपि किञ्चिद्वक्ष्यामि शंसत ।    |    |
| इत्युक्त्वा मुनयः सर्वे प्रोचुरेतद्वचस्तदा ॥     | २६ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५३ तमोऽध्यायः

८९

पूर्वस्यां दिशि सुदर्शनकृतासुग्वधप्रकारः

मुनयः—

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| ‘वेङ्कटेशाभ्यनुज्ञातः चक्रेण निहता रणे ।       |    |
| दुष्टदानवसङ्घाश्च दुष्टचोरा महीभृतः ॥          | २७ |
| इत्युक्तं हि त्वया पूर्वं कथं के वा हता मुने । |    |
| श्रेतुमिच्छा हि महती यद्यस्मासु दया तव ॥       | २८ |
| शंस सूत ! रथाङ्गस्य वृत्तान्तं रणभूमिषु ।      |    |
| इति पृष्टो जगादासौ सूतः परमवार्तिकः ।          | २९ |

श्रीसूतः—

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| श्रूयतां चक्रराजस्य चरित्रं परमाद्भुतम् ।         |    |
| पराक्रमं सङ्गृहेण वक्ष्यामि शृणुतामल्यः ॥         | ३० |
| न शक्यं विस्तराद्भुक्तं चक्रराजस्य वैभवम् ।       |    |
| ‘दुष्टान्निवर्ह’ येत्युक्तः चक्रराजो महाद्युतिः ॥ | ३१ |
| आज्ञां वेङ्कटनाथस्य धारयञ्छिरसा तदा ।             |    |
| निर्जगाम गिरेः शृङ्गात् गन्धर्वगणसेवितः ॥         | ३२ |
| उद्यतायुधशस्त्रैस्तैः महामुसलपाणिभिः ।            |    |
| प्रासजोमरहस्तैश्च शूलपट्टसन्धारिभिः ॥             | ३३ |
| असिचर्मचरैः शूरैः बाणशार्ङ्गासिन्धारिभिः ।        |    |
| गजवाजिरथैरुष्टैः युद्धसन्नाहसम्भ्रमैः ॥           | ३४ |
| भेरीमृदङ्गपटहैः ढक्कानिस्ताणमर्दलैः ।             |    |
| जयव्यञ्जकवाद्यैश्च संयुजोऽयं पदातिभिः ॥           | ३५ |
| राजवेषधरः श्रीमान् सहस्रभुजमण्डितः ।              |    |
| विरीटहारमकुटकेयूराङ्गदशोभितः ॥                    | ३६ |

|                                                                                                            |    |
|------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| दंष्ट्राकरालवदनो ज्वलदग्निसमप्रभः ।                                                                        |    |
| प्रवर्तकास्त्रसंयुक्तः पञ्चाशच्छतपाणिकः ॥                                                                  | ३७ |
| निवर्तकास्त्रसंयुक्तः पञ्चाशच्छतहस्तकः ।                                                                   |    |
| पद्मरागसमोद्योतरक्तवस्त्रविभूषितः ॥                                                                        | ३८ |
| अनेकतुरगव्यूढं दिव्यं स्यन्दनमास्थितः ।                                                                    |    |
| प्राचीं दिशं ययौ पूर्वं महावोषसमन्वितः ॥                                                                   | ३९ |
| तेन घोषेण महता जगत्तूस्तं चराचरम् ।                                                                        |    |
| ‘स्फुटितं वा महद्योम दारिताः किमु पर्यताः’ ।                                                               |    |
| इति भूतानि सर्वाणि चुक्रुशुश्च भृशं तदा ॥                                                                  | ४० |
| इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाद्रिवैभव-<br>प्रशंसादिवर्णनं नाम त्रिपञ्चाशोऽध्यायः |    |

अथ चतुःपञ्चाशोऽध्यायः



### सुदर्शनसैन्यासुरसैन्ययोर्धुद्वप्रशंसा

|                                                 |   |
|-------------------------------------------------|---|
| शेषाचलस्य पूर्वस्यां दिशि केचिन्महानगाः ।       |   |
| आसंस्तत्र वनोद्देशे दस्यवो बलदर्पिताः ॥         | १ |
| उद्यतायुवनिस्त्रिंशाः खड्गचर्मासिपाणयः ।        |   |
| मायाविनो महाघोरा वज्रकाः प्राणिहिंसकाः ॥        | २ |
| क्षेत्रवित्तापहारेण नानाप्राणिभयङ्कराः ।        |   |
| असाध्या नृपवर्याणां वनदुर्गसमाश्रयाः ॥          | ३ |
| बाधमाना द्विजान् नित्यं साधूंश्चाऽसन् विशेषतः । |   |
| गर्जन्तो मेघसङ्काशा नीलाञ्जनचयोपमाः ॥           | ४ |

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५४ तमोऽध्यायः        | ९१ |
| तेषां शतसहस्राणि चोराणां निर्गतानि च ।         |    |
| सुदर्शनमहाराजसेनायां तु पुरस्सराः ॥            | ५  |
| केचिद्विख्यातसामर्थ्या निर्गताश्च तयोर्मिथः ।  |    |
| अभूतपूर्वं तुमुलमभूत् युद्धमनुत्तमम् ॥         | ६  |
| समाप्तायुष्यशेषास्ते शलभा इव पावकम् ।          |    |
| विविशुश्चक्रराजस्य ज्वलन्तीं वाहिनीं तदा ॥     | ७  |
| विनिर्दग्धाश्च ते सर्वे दस्युरूपा वनेचराः ।    |    |
| तद्वंशजास्तादृशाश्च शिशुवालाः स्त्रियोऽपि च ॥  | ८  |
| ययुस्ते विलयं सर्वे चोरा मायोपजीविनः ।         |    |
| निष्कण्टकमभूत्तच्च वनं पक्षिमृगाऽकुलम् ॥       | ९  |
| वेङ्कटाद्रिं समारभ्य यावद्वेला महोदधेः ।       |    |
| तावान् देशश्च सङ्ग्रामः सपत्तनवनालयः ॥         | १० |
| सर्वबाधाविनिर्मुक्तः सपर्वतनदीतटः ।            |    |
| बभूव परमानन्दो राहुमुक्त इवोडुराट् ॥           | ११ |
| बभूवुर्मुदिताः सर्वे जना जानपदाश्च ये ।        |    |
| तुष्टुवुर्बाह्विणाः सर्वे मुनयो योगिनोऽपि च ॥  | १२ |
| निवसन्ति तदारभ्य तस्मिन् देशे हि देहिनः ।      |    |
| तदा प्रभृति तद्देशे वासवश्चक्रशासनात् ॥        | १३ |
| काले वर्षति सस्यानि फलन्ति बहुधा तदा ।         |    |
| बहुक्षीरदुहा गावः तथा स्वादूदकं सरः ॥          | १४ |
| नीरोगाश्च जनाः सर्वे यथा कृतयुगे तथा ।         |    |
| कुशलाः कृषिविद्यायां विप्रा वेदेषु निष्ठिताः ॥ | १५ |
| तपस्विनस्तपोधर्मे योगाभ्यासे च योगिनः ।        |    |
| वाणिज्ये वणिजः सर्वे स्वस्वधर्मेषु निष्ठिताः ॥ | १६ |

देशमध्ये समागत्य सुदर्शनहरिः प्रभुः ।  
 समाहूय जनान्सर्वान् वचनं चेदमब्रवीत् ।  
 'कर्तव्यं भवतां किं तदस्ति चेद्वक्तुमर्हथ' ॥ १७

जनाः—

'इतः पूर्वं वयं सर्वे पीडिताः सुमृशं प्रभो ! ।  
 दस्युन्निस्तस्कुरैश्चोरैः चोरप्रायैश्च राजभिः ॥ १८  
 प्रसादाद्भवतः स्वामिन् ! देशोऽयं निरुपद्रवः ।  
 आसीद्वयं कृतार्थास्मे' त्युक्तः प्राह च चक्राट् ॥ १९  
 'धर्मात्मानं नृपं कञ्चित् कृत्वा देशाधिपं पुनः ।  
 न्याये वर्मनि वर्तध्वं यूयं तेन गतश्रमाः' ।  
 एवं सुरक्षितं चक्रे तं देशं हेतिभूपतिः ॥ २०

आग्नेयदिशि सुदर्शनकृतासुरवधप्रकाशः

आग्नेयां दिशि शेषाद्रेः केचित् दैत्यांशसम्भवाः ।  
 महामायाविनो घोरा वज्रकाः क्षत्रवान्धवाः ॥ २१  
 बाधमाना द्विजानासन् साधून्सर्वान् जनांस्तथा ।  
 देवब्राह्मणविश्वासः तेषां नाऽसीत्कदाचन ॥ २२  
 वने दुर्गं गिरौ दुर्गं स्थले दुर्गं तथैव च ।  
 एवमावासदेशन्तु कृत्वाऽतिष्ठन्तु तत्र हि ॥ २३  
 ते हि ज्ञात्वा महासेनामागतामुद्यतायुधाम् ।  
 अयुध्यन्त महाघोरं शस्त्रैरस्त्रैः परश्वधैः ॥ २४  
 पाशैः खड्गैस्त्रिशूलैश्च तोमरैर्मुद्गरैस्तथा ।  
 निघ्नन्ति स्म तथा योधान् अध्वानुष्टांश्च वारणान् ॥ २५

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५४ तमोऽध्यायः ९३

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| शिरोमिच्छिन्नपादैश्च कबन्धैश्च तथा करैः ।         |    |
| केचित् पादेषु सम्मिन्नाः केचिद्वस्तेष्वशेरत ॥     | २६ |
| शिरोमिच्छिन्नपादैश्च कबन्धैश्च तथा करैः ।         |    |
| शस्त्रैरस्त्रैस्तनुत्रागैः उष्णीषैश्च शिरोरुहैः ॥ | २७ |
| रक्तौघैर्मसखण्डैश्च कीकसैरान्तराशिभिः ।           |    |
| आस्तृता युद्धभूमिः सा प्रेतराजस्य विस्तृता ॥      | २८ |
| पुरीवाऽसीत्तदा तैस्तु सैन्यं सन्नञ्च तत्तदा ।     |    |
| सेनैकदेशं क्षुभितं दृष्ट्वा दौरात्म्यमेव च ॥      | २९ |
| क्रुद्धो बभूव हेतीनां राजा परमकोपनः ।             |    |
| त्रिपुरारिर्यथा क्रुद्धः पुराणां सूदनेऽभवत् ॥     | ३० |
| तादृशानाञ्च चोराणां मायिनां निग्रहे तथा ।         |    |
| ज्वालामुखं बलाध्यक्षं ससैन्यं सन्दिदेश ह ॥        | ३१ |
| ‘निशेषं कुरु राज्ञस्तान् चोरांश्च मददुर्मदान् ’ । |    |
| इत्याज्ञप्तस्तदा तेन चक्रराजेन वै बली ॥           | ३२ |
| ज्वालामुखस्तथा चक्रे युद्धं परमदारुणम् ।          |    |
| तत्सैन्यं लोडयामास मदमत्त इव द्विपः ॥             | ३३ |
| छिन्ना भिन्नास्तथा जम्मुः चोरास्तत्र वनेचराः ।    |    |
| पल्लयन्ते स्म भीतास्ते त्यक्तशस्त्राऽयुवास्तदा ॥  | ३४ |
| त्यक्त्वा समरभूमिञ्च वने लीनाश्च सानुषु ।         |    |
| न हि तत्र जनः कश्चित् ददृशे वनभूमिषु ॥            | ३५ |
| गिरेर्दुर्गेषु सर्वेषु वनदुर्गेषु सानुषु ।        |    |
| महाबिलेषु कुञ्जेषु कुटीरेषु गुहासु च ॥            | ३६ |
| मृगयामासुरव्यग्राः तस्य चानुचरास्तदा ।            |    |
| ददृशुर्न हि कश्चिच्च विनिर्गत्य तु विस्मिताः ॥    | ३७ |

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| ज्वालामुखाय ते सर्वे प्रोचुरेवं पदातयः ।         |    |
| विस्मितः सोऽपि तां मायां ज्ञात्वा परमदुर्जयः ॥   | ४८ |
| तद्देशवासिनः साधूनाहूयेदं वचोऽब्रवीत् ।          |    |
| ‘इमं देशं विसृज्याऽऽशु गन्तव्यं देशमन्यकम् ॥     | ३९ |
| क्षणमाला’ दिति प्रोक्त्वा जग्राह परमं धनुः ।     |    |
| अस्त्रं च सन्दधे तस्मिन् आग्नेयं मन्त्रवत्तदा ॥  | ४० |
| प्रजज्वाल च तद्विव्यमस्त्रं परमभास्वरम् ।        |    |
| कृशानवस्तदस्त्राच्च निष्पेतुश्च सहस्रशः ॥        | ४१ |
| विचुक्रुशुश्च भूतानि चुक्षुभुः सागरास्तदा ।      |    |
| ‘अन्तर्धानं गता यत्नं चोरास्तिष्ठन्ति वञ्चकाः ॥  | ४२ |
| गत्वा च देशे तत्रापि भस्मसात्कुरु तानरीन्’ ।     |    |
| इति चिक्षेप तद्विव्यमस्त्रमाग्नेयमुत्तमम् ॥      | ४३ |
| आक्रम्य रोदसी तच्च ज्वालामालासमाकुलम् ।          |    |
| चोरदेशं समाक्रम्य गिरिदुर्गवनानि च ॥             | ४४ |
| यत्र यत्नं च तिष्ठन्ति मायिनस्ते वनेचराः ।       |    |
| अदहत्तानि सर्वाणि स्थलान्यन्यानि यानि च ॥        | ४५ |
| ते च सर्वे दुरात्मानो दग्धकेशतनूरूहाः ।          |    |
| तेषां ह्रियश्च बालाश्च सर्वे दग्धाश्च वह्निना ॥  | ४६ |
| विलेभ्यः कन्दरेभ्यश्च निष्पेतुः क्षत्रबान्धवाः । |    |
| वनं तदीयं तत्सर्वं भस्मीभूतञ्च तत्क्षणात् ॥      | ४७ |
| निर्वीजं तत्कुलं सर्वं दग्धमस्त्रस्य तेजसा ।     |    |
| भस्मीकृत्य तु तान्त्सर्वान् प्रविवेशेषुधिं तदा ॥ | ४८ |
| वृष्टिं समानयामास सद्यः शीतलकारिणीम् ।           |    |
| ‘आप्लावयत तं देशमाजम्मुर्निर्गता जनाः ॥          | ४९ |

|                                                                                                                      |    |
|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५५ तमोऽध्यायः                                                                              | ९५ |
| निहताः सर्वचोराश्च तेजसा भवतः प्रभो ।                                                                                |    |
| इति विज्ञापितस्तेन बलाध्यक्षेण स प्रभुः ॥                                                                            | ५० |
| सन्तुष्टस्तत्र तं देशमागत्य च सुदर्शनः ।                                                                             |    |
| तानि दुर्गाणि सर्वाणि स्थलीकृत्य वनानि च ॥                                                                           | ५१ |
| प्रकाशानि ततश्चक्रे देशं प्रहृतमार्गकम् ।                                                                            |    |
| तत्रत्यान् स्थापयामास साधून् विप्रादिकानपि ॥                                                                         | ५२ |
| स्थापयित्वा च तद्देशे धर्माध्यक्षं दयापरम् ।                                                                         |    |
| वृष्टिशाल्यादिवृद्ध्या च पोषयामास देशिकान् ॥                                                                         | ५३ |
| इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुदर्शनसैन्यासुरसैन्ययोः<br>युद्धप्रशंसादिवर्णनं नाम चतुः पञ्चाशोऽध्यायः |    |



अथ पञ्चपञ्चाशोऽध्यायः

सुदर्शनस्यासुरवधार्थं दक्षिणदिग्गमनम्

श्रीसूतः—

|                                         |   |
|-----------------------------------------|---|
| सुदर्शनो महाराजः कृत्वा देशमकण्टकम् ।   |   |
| तस्माद्देशादपक्रम्य भागं दक्षिणमाययौ ॥  | १ |
| आगत्य दक्षिणं देशं ससैन्यः सपरिच्छदः ।  |   |
| वादयामास वाद्यानि निस्साणप्रमुखानि च ॥  | २ |
| तेन शब्देन महता दारिता इव भूधराः ।      |   |
| मदमत्तगजैरश्वैः सुन्दरैः पर्वतोपमैः ॥   | ३ |
| अनेकैश्च वनं तत्र चूर्णितं हि सहस्रधा । |   |
| विपिनानि प्रकाशानि कृतानि गिरयस्तथा ॥   | ४ |

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| वनदुर्गाणि तैः सर्वैः सुगमानि कृतानि वै ।           |    |
| तत्र दैत्यांशसम्भूताः शूराः शूद्रकुलोद्भवाः ॥       | ५  |
| अङ्को वङ्कः पुलिन्दश्च विडालो वालुकस्तथा ।          |    |
| एते शूराः प्रधानाश्च पञ्चैते पञ्च पापिनः ॥          | ६  |
| बाधन्ते स्म द्विजान् नित्यं क्षेत्रवित्तापहारतः ।   |    |
| योगनिष्ठांस्तपोनिष्ठान् यज्ञकर्मसु निष्ठितान् ॥     | ७  |
| पीडयन्ति स्म बालांश्च स्त्रियो वृद्धांश्च नित्यशः । |    |
| अग्निहोत्राणि वेदाश्च यज्ञाश्चोत्सव एव च ॥          | ८  |
| आचारा वैदिकास्तत्र प्रावर्तन्त न च क्वचित् ।        |    |
| पीड्यमानाः सदा चोरैः पञ्चभिः प्राणिनो भृशम् ॥       | ९  |
| क्षुद्राश्च बहवश्चासन् प्राणिपीडाकरा अपि ।          |    |
| ते सर्वे सहसा तत्र विचार्य च पुनः पुनः ॥            | १० |

### सुदर्शनानुरसेनयोर्युद्धप्रकारः

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| सुदर्शनं च राजानं ज्ञात्वा तत्र समागतम् ।      |    |
| ‘सर्वैः सम्भूय योद्धव्यं नान्यथा गतिरस्ति नः ॥ | ११ |
| राजा सुदर्शनो नाम सहस्रभुजमण्डितः ।            |    |
| विक्रमे स च राजा तु सहस्रविज्रणोपमः ॥          | १२ |
| यत्र यत्र स वै राजा क्रुद्धः पश्यति सत्वरम् ।  |    |
| तत्तत्सर्वेच्च सहसा दग्नं किल भविष्यति ॥       | १३ |
| अतः सर्वे वयं चोराः सावधानाश्च सर्वदा ।        |    |
| योत्स्याम ’ इति निश्चित्य तेऽथ सम्भूय दस्यवः ॥ | १४ |
| परिधानपट्टसान्प्रासान् शक्तिशूलपरश्वधान् ।     |    |
| धनुंषि च सबाणानि खड्गांश्च विपुलाञ्जुनान् ॥    | १५ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५५ तमोऽध्यायः २७

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| प्रगृह्य परमक्रुद्धा वरदानबलोद्धताः ।              |    |
| विचित्रवाससः सर्वे विविधाः शस्त्रपाणयः ॥           | १६ |
| निर्ययुर्मदमत्ताश्च चलन्त इव पर्वता ।              |    |
| ते युद्धकुशल्यः शूराः तोमराङ्कुशपाणयः ॥            | १७ |
| अन्ये लक्षणसंयुक्ता वरचर्मासिपाणयः ।               |    |
| ‘अहमेव वधिष्यामि सर्वा’ निति बलोद्धताः ॥           | १८ |
| तत्र सर्वे समाजम्मुः युद्धार्थं यमचोदिताः ।        |    |
| सुदर्शनोऽपि तान् दृष्ट्वा क्रुद्धो नाग इव श्वसन् ॥ | १९ |
| स्फुलिङ्गाक्षं बलाभ्यक्षं ज्वालाकेशं महासटम् ।     |    |
| अलान्तकं रणघ्नञ्च पञ्च स्तूषा तु मानसान् ॥         | २० |
| ससैन्यान् प्रेषयामास चोराणां निग्रहे तथा ।         |    |
| निर्ययुस्ते रथैरश्वैः नागानीकैः सुसंवृताः ॥        | २१ |
| परिधान् पट्टसांश्चैव शूलखड्गपरश्वधान् ।            |    |
| गृहीत्वा विविशुर्बुद्धभूमिं ज्वलितकुण्डलाः ॥       | २२ |
| चिक्षिपुर्दुष्टचोरेषु बाणान् प्राणहरान् रणे ।      |    |
| ते गदाभिर्विचित्राभिः प्रासैः खड्गैः परश्वधैः ॥    | २३ |
| अन्योन्यं समरे जघ्नुः अस्त्रैः शस्त्रैश्च योधकाः । |    |
| एवं प्रवृत्ते सङ्ग्रामे निर्धूतं सुमहद्वजः ॥       | २४ |
| दुष्टानां दैत्यजातानां शान्तं शोणितविस्रवैः ।      |    |
| रथमातङ्गकूलाश्च हयमत्स्या ध्वजद्रुमाः ॥            | २५ |
| शरीरसंघ्न तवहाः सुसुवू रक्तनिम्नगाः ।              |    |
| स्फुलिङ्गाक्षो बलाभ्यक्षः शरैरङ्गं जघान च ॥        | २६ |
| वङ्गं जघान समरे ज्वालाकेशः शिनैः शरैः ।            |    |
| महासटः पुलिन्दश्च जघान समरे शरैः ॥                 | २७ |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| कालान्तको बिडालश्च वालुकं रणहा युधि ।           |    |
| जघान समरे क्रूरैः शरैराशीविषोपमैः ॥             | २८ |
| ततः सुदर्शनो राजा हयशीर्षं महाशरम् ।            |    |
| ‘अन्तर्धानं गता यत्र तिष्ठन्ति गिरिसानुषु ॥     | २९ |
| प्राणिर्पीडाकरा ये तु ये तु दैत्यांशसम्भवाः ।   |    |
| यत्र कुत्र च तिष्ठन्ति तान् ज’ हीति सुदारुणम् ॥ | ३० |
| सन्धाय धनुषि क्षिप्रं विससर्ज महाप्रभुः ।       |    |
| तदस्त्रनिर्गमध्वानैः भग्नं सैन्यं दुरात्मनाम् ॥ | ३१ |
| दैत्यान्धान् खरानुष्टान् रथान् युद्धसमागतान् ।  |    |
| द्विधा चकार समरे हयशीर्षं महाशरः ॥              | ३२ |
| वनेषु गिरिदुर्गेषु ग्रामे वा पत्तनेऽपि वा ।     |    |
| यत्र यत्र दुरात्मानः ते सर्वे च द्विधा कृताः ॥  | ३३ |
| तज्जातीयाश्च शिशवः तेषां दाराश्च बालिकाः ।      |    |
| द्विधा कृताश्च ते सर्वे चित्रमस्त्रस्य तेजसा ॥  | ३४ |
| तद्दृष्ट्वा देवताः सर्वा देशीयाश्च जना अपि ।    |    |
| विस्मयं परमं जम्मुः किमिदं चेति तेजसा ॥         | ३५ |
| छिन्नं भिन्नं शरैर्दग्धं प्रभग्नं शरपीडितम् ।   |    |
| बलं सर्वन्तु दुष्टानां ददृशे रणभूमिषु ॥         | ३६ |
| देशबाधकदुष्टेषु न कश्चिद्दृशे तदा ।             |    |
| जलदुर्गं गिरौ दुर्गं वनदुर्गं तथैव च ॥          | ३७ |
| स्थलदुर्गञ्च यश्चान्यो निवासो दुष्टदेहिनाम् ।   |    |
| तत्तत्सर्वं महाराजो भग्नं कृत्वा महागजैः ॥      | ३८ |
| कृत्वा प्रकाशं तं देशं कृत्वा प्रहतमार्गकम् ।   |    |
| महामार्गञ्चसर्वत्र कृत्वा निहतकण्टकम् ॥         | ३९ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५६ तमोऽध्यायः ९९

|                                                                                                   |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| विप्रक्षतादिकान् साधून् अन्यानपि जनान् बहून् ।<br>स्वे स्वे धर्मे नियुज्यैव स्थापयामास वै सुखम् ॥ | ४० |
| नीरोगाश्च जनाः सर्वे कामक्रोधपराङ्मुखाः ।<br>वेदशास्त्रपराः सर्वे सर्वे यज्ञैः सुनिष्ठिताः ॥      | ४१ |
| काले वर्षन्त मेघाश्च फलन्तु च महीरुहाः ।<br>समृद्धानि च सस्यानि सन्तु नः शासना ' दिति ॥           | ४२ |
| अनुगृह्य च तान्त्सर्वान् तस्थौ तद्देशवासिनः ।<br>ववृधे वेङ्कटाचीश करपङ्कजानुमान् ॥                | ४३ |
| तत्र देवाः समागत्य स्तुत्वा देवं हरिं प्रभुम् ।<br>ववर्धुः पुष्पवर्षाणि गन्धर्वाश्च जगुः कलम् ॥   | ४४ |
| इदानीमत्र वसतां लब्धं ब्राह्मण्यमुत्तमम् ।<br>प्रसादाद्भवतः सोऽयं कृतो देशः सुखी प्रभो ॥          | ४५ |
| इदानीं पश्चिमे भागे किञ्चित्कार्यं भविष्यति ।<br>इति विज्ञाप्य ते सर्वे दिवं जम्बुयथागतम् ॥       | ४६ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुदर्शनस्यासुरवधार्थं  
दक्षिणदिग्गमनादिवर्णनं नाम षष्ठपञ्चाशोऽध्यायः

अथ षट्पञ्चाशोऽध्यायः

चरुणादिश्यसुरसुदर्शनसेनापुद्गलशंसा

श्रीसुतः —

|                                                                                         |   |
|-----------------------------------------------------------------------------------------|---|
| राजा सुदर्शनः श्रीमान् प्रतापहतकण्ठकः ।<br>दक्षिणां दिशमासाद्य कृत्वा निर्बाधमेव ताम् ॥ | १ |
|-----------------------------------------------------------------------------------------|---|

|                                                                                              |    |
|----------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| देशस्य रक्षणार्थाय कञ्चिन्नृपवरं तदा ।<br>धर्मात्मानं प्रतिष्ठाप्य प्रतस्थे पश्चिमां दिशम् ॥ | २  |
| शतं शतसहस्राणि मेरीणां व्यनदंस्तदा ।<br>पताकिनो गजास्तत्र ध्वजयुक्ताश्च वाजिनः ॥             | ३  |
| मत्तेभाः कलभाश्चैव तथा गम्भीरवेदिनः ।<br>शस्त्रवर्मायुधोपेताः सन्नद्धा युद्धकारणात् ॥        | ४  |
| घोटाश्च द्वीपसम्भूता वायुवेगास्तथाऽपरे ।<br>वर्मास्त्रशस्त्रसम्भिन्ना निर्ययुश्च सहस्रशः ॥   | ५  |
| शताध्वस्त्रिशताध्वश्च सहस्राध्वश्च यूथशः ।<br>सर्वायुधैश्च सम्पूर्णाः पताकालङ्कृतास्तथा ॥    | ६  |
| विमानानीव सिद्धानां शतशोऽथ सहस्रशः ।<br>स्यन्दनानि विचित्राणि निर्ययुर्भास्वराणि च ॥         | ७  |
| उद्यतायुधनिस्त्रिंशाः तथोद्यतपरश्वधाः ।<br>उद्यतासिगदाशूलाः तथोद्यतकरायुधाः ॥                | ८  |
| अट्टहासान् विमुञ्चन्तो निर्ययुश्च पदातयः ।<br>मध्ये रराज राजाऽसौ सहस्रभुजमण्डितः ॥           | ९  |
| निदाघे प्रतपन् सूर्यः सहस्रांशुरिवाऽवभौ ।<br>तत्राऽसीत्पश्चिमे भागे वेङ्कटाद्रेरदूरतः ॥      | १० |
| काननं पर्वताकीर्णं सिंहव्याघ्रनिषेवितम् ।<br>मातङ्गैर्नर्दमानैश्च वराहमहिषैस्तथा ॥           | ११ |
| वृकभल्लकसंयुक्तं तस्मिन् महति कानने ।<br>दैत्यांशः कश्चिदुत्पन्नः किरातः पर्वतोपमः ॥         | १२ |
| नाम्ना काननकर्ता च रिपुघ्नस्य सुतो बली ।<br>स तु शम्भुं समुद्दिश्य व्रतचर्यापरोऽभवत् ॥       | १३ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५६ तमोऽध्यायः १०१

|                                                                                                |    |
|------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| यक्षराक्षससिद्धानां मनुष्याणां महात्मनाम् ।<br>दुर्जयत्वमसाविच्छन् साहसी तु कदाचन ॥            | १४ |
| क्रतुध्वंसकरं रुद्रं ध्यात्वा च धृतिमान् नरः ।<br>खड्गमादाय चिच्छेद स्वशिरः पुष्पसम्भृतम् ॥    | १५ |
| अलङ्कृतञ्च गन्धाद्यैः शम्भवेऽर्पयितुं तदा ।<br>प्रसादात्तत्क्षणाद्भुद्रो जीवयित्वा च तं पुनः ॥ | १६ |
| ददौ च तदभिप्रेतं लब्ध्वा सादरमुत्तमम् ।<br>वनकर्ता समागत्य वने तस्मिन् दुरासदम् ॥              | १७ |
| स्थानं दुर्गं पराभेद्यमधिष्ठाय महाबलः ।<br>अनेकशतसाहस्रैरनीकैः परिवारितः ॥                     | १८ |
| लोकानुत्सादयामास वरदानबलोद्धतः ।<br>चुक्रुशुः पीडिताः सर्वे विप्राद्याः प्राणिनस्तदा ॥         | १९ |
| स तु ज्ञात्वा दुरात्मा च सुदर्शनमहानृपम् ।<br>नृप इत्येव तं मत्वा निर्जगाम रणाय सः ॥           | २० |
| एकामक्षौहिणीं सेनां गृहीत्वा सशरासनः ।<br>सन्नद्धः कवची खड्गी दण्डी परबलार्दनः ॥               | २१ |
| रथमारुह्य सज्जश्च सर्वशस्त्रास्त्रभूषितः ।<br>ययुश्च तस्य पुरतस्तुरगाश्च महागजाः ॥             | २२ |
| पदातयश्च सरथा ययुः शस्त्रास्त्रपाणयः ।<br>प्रावर्तत महद्युद्धं सेनयोरुभयोरपि ॥                 | २३ |
| शस्त्रैरस्त्रैः शितैर्वाणैः मिण्डिपालैः परश्वधैः ।<br>कुन्ततोमरचक्रैश्च परिधैः पट्टसैः शितैः ॥ | २४ |
| शक्तितोमरशूलैश्च गजचर्मासिसाधनैः ।<br>शतघ्नीपरिघाभिश्च चित्तरन्ध्रैश्च साधनैः ॥                | २५ |

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| अन्योन्यञ्च यथापूर्वं देवदानवराजयोः ।              |    |
| सुदर्शनभटाश्चापि निजधनुस्तान् किरातकान् ॥          | २६ |
| विविधायुधहस्ताश्च शूलमुद्गरपाणयः ।                 |    |
| गदाभिः पट्टसैर्दण्डैः आयसैर्मुसलैर्भृशम् ॥         | २७ |
| परिधैर्भिण्डिपालैश्च भल्लैः प्रातैः परश्वधैः ।     |    |
| रथैः कवचिनस्त्वन्ये ध्वजैश्च समलङ्कृतैः ॥          | २८ |
| हिरण्यजालविहितैः खरैश्च विविधाननैः ।               |    |
| हयैः परमशार्धैश्च गजेन्द्रैश्च मदोत्कटैः ॥         | २९ |
| सुदर्शनभटाश्चापि निर्जघ्नुस्ते किरातकाः ।          |    |
| तैर्गदामिश्च भीमभिः पट्टसैः कूटमुद्गरैः ॥          | ३० |
| घोरैश्च परिधैश्चित्रैः त्रिशूलैरपि संशितैः ।       |    |
| विदार्यमाणास्ते शूला निपेतुर्भुवि संयुगे ॥         | ३१ |
| अमर्षाज्जितोद्धर्षाः चक्रुः कर्माण्यभीतवत् ।       |    |
| शरनिर्भिन्नगात्रास्ते शूलनिर्भिन्नदेहिनः ॥         | ३२ |
| ममन्थुर्दुष्टचोरांश्च नामानि च बभूवुरे ।           |    |
| तद्बभूवाद्भुतं घोरं युद्धं सैन्यद्वयस्य च ॥        | ३३ |
| ववर्धु रूधिरं केचित् मुखैस्ते वनवासिनः ।           |    |
| पार्श्वेषु दारिताः केचित् केचिद्वस्तेषु दारिताः ॥  | ३४ |
| पट्टसैश्चूर्णिताः केचित् प्रातैः केचिद्विदारिताः । |    |
| ध्वजैर्निपतितैर्नागैः अश्वैश्च विनिपातितैः ॥       | ३५ |
| रथैर्विमृदिताः केचित् व्यथिताः कानने स्थिताः ।     |    |
| मुद्गरैराहताः केचित् पतिता धरणीतले ॥               | ३६ |
| परिधैर्मथिताः केचित् भिण्डिपालैश्च दारिताः ।       |    |
| केचिद्विनिहता भूमौ रूधिरार्द्रा वनौकसः ॥           | ३७ |

श्रीबाराहपुराणे प्रथमभागे ५६ तमोऽध्यायः १०३

|                                                                                                   |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| केचिद्विप्रासिता नष्टाः केचित्पार्श्वेन शायिताः ।<br>विभिन्नहृदयाः केचित् त्रिशूलैर्दारिताः परे ॥ | ३८ |
| एवं विद्रावितं सैन्यं वनकर्ता विलोक्य तत् ।<br>बभूव क्रोधताम्राक्षः सेनाध्यक्षमुवाच ह ॥           | ३९ |
| ‘ज्वालापातं महाशूरं जहि त्वं गच्छ शीघ्रतः’ ।<br>इत्याज्ञस्ततस्तूर्णं ज्वालापातः प्रतापवान् ॥      | ४० |
| धनुर्विष्कारयामास रथस्थः कनकाङ्गदः ।<br>सुदर्शनमहाराजः सेनाध्यक्षं सृजन् रुषा ॥                   | ४१ |
| बडवामुखनमानं बडवानलविक्रमम् ।<br>‘जहि त्वं समरे गच्छ शत्रुसैन्यमशेषतः’ ॥                          | ४२ |
| इत्यब्रवीत्ततः सोऽपि निर्गतः सरथस्तथा ।<br>शार्ङ्गमादाय सुमहत् तस्मिन् बाणान् युयोज च ॥           | ४३ |
| मुमोच च ततः सैन्ये शरसङ्घान् महारथः ।<br>शतं सहस्रमयुतं नराणां बडवाननः ॥                          | ४४ |
| बाणेनैकेन सहसा निजघान महारथः ।<br>दश वा विंशतिं वऽपि त्रिशतं वा रथान् हयान् ॥                     | ४५ |
| गजानां च घटामेकां एकेन शितपत्रिणा ।<br>जघान स महातेजाः कालानल्यमोपमः ॥                            | ४६ |
| बडवापापको यद्वत् अम्भांसि ग्रसते क्षणात् ।<br>तद्वत्सैन्यं परं चक्रे भस्मसात् बडवाननः ॥           | ४७ |
| एकामक्षौहिणीं सेनां सुदर्शनबलाग्रणीः ।<br>प्रापयद्यमलोकं हि मुहूर्तद्वयमात्रतः ॥                  | ४८ |
| निश्शेषं स्वबलं सर्वं हतमालोक्य वेगतः ।<br>दिव्यमस्त्रञ्च सन्धाय ‘तिष्ठ ति’ ष्ठेति च ब्रुवन् ॥    | ४९ |

आजगाम रथाच्छीघ्रं किरातो लघुविक्रमः ।  
 सुदर्शनमहाक्रोपसञ्जातो बडवाननः ॥ ५०  
 विष्णुचक्रेण तं घोरं जघान वनगोचरम् ।  
 हते किरातराजे तु तद्वनं निर्मलं बनौ ॥ ५१

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वरुणदिश्यसुरसुदर्शनसेना-  
 युद्धप्रशंसादिवर्णनं नाम षट्पञ्चाशोऽध्यायः

अथ सप्तपञ्चाशोऽध्यायः

### सुदर्शनस्यासुरवधार्थमुत्तरदिग्गमनम्

श्रीसूत —

सुदर्शनमहाराजः सहस्रकिरणोपमः ।  
 तं देशं हतदुष्टं हतावग्रहकण्टकम् ॥ १  
 कृत्वा सर्वाणि दुर्गाणि गिरिस्थलवनानि च ।  
 विनिहत्य गजैरश्वैः सर्वदिक्षु महापथम् ॥ २  
 कृत्वा च तत्र मनुजान् स्थापयित्वा यथासुखम् ।  
 तद्देशरक्षकं कञ्चित् धर्मिष्ठं सत्यवादिनम् ॥ ३  
 निवेश्य देशमध्ये च जनानामन्वय सत्वरम् ।  
 प्रतस्थे सबलस्तस्मात् दुष्टचोरजिगीषया ॥ ४  
 ततश्चोत्तरदिग्भागं सहस्रकिरणो यथा ।  
 नीहारशोषणार्थाय श्रीमान् भुजसहस्रवान् ॥ ५  
 प्रतापविक्रमादित्यः सुदर्शनमहाप्रभुः ।  
 श्रीवेङ्कटनगाभीशदिव्याज्ञापरिपालकः ॥ ६



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५७ तमोऽध्यायः १०५

पदातयो गजाश्वाश्च रथाश्च गिरिसन्निभाः ।  
ययुरग्रे च वाद्यानि वादयन्ति स्म सर्वतः ॥ ७  
ततः प्रचोदिता भेर्यो मर्दलानकपुष्कराः ।  
हेमकोणहतास्तीव्रं बलानां चाग्रतस्तदा ॥ ८  
विनेदुश्च महाघोषाः शङ्खाः शतसहस्रशः ।  
तडिद्वास्करकल्पाश्च खड्गाः प्रासाश्च पट्टसाः ॥ ९  
बुभुस्तस्मिन् महासैन्ये यथा मेघेषु विद्युतः ।  
उत्तरे वेङ्कटाद्रेस्तु भागे कश्चिन्महासुरः ॥ १०

भेरुण्डासुः सुदर्शनसेनयोर्युद्धप्रशंसा

भेरुण्डो नाम दैत्यानां प्रवरो बलदर्पितः ।  
ब्रह्मणाऽसीत्पुरा दत्तवरः पर्वतसन्निभः ॥ ११  
स तु तत्र निवासञ्च कृत्वा तु बहुभिर्वृतः ।  
वेङ्कटाद्रौ तदन्यस्मिन् गिरौ वा काननेऽपि वा ॥ १२  
तपांसि कुर्वतां विघ्नं कुर्वन् प्राणिभयङ्करः ।  
ग्रामे वा पत्तने वाऽपि स्थितान् विप्रादिमानुषान् ॥ १३  
बबाधे सततं तीक्ष्णं तेन देशः प्रपीडितः ।  
काम्भोजा यवनाश्चापि स्लेच्छाः सङ्करजातिजाः ॥ १४  
भेरुण्डस्य बलोद्रिक्ताः तत्राऽसन् प्राणिपीडकाः ।  
ते सर्वे पापकर्माणः सम्भूय मुसलायुधाः ॥ १५  
भेरुण्डमग्रतः कृत्वा सरथाश्चगजास्तदा ।  
युद्धार्थमागतं ज्ञात्वा राजानञ्च सुदर्शनम् ॥ १६  
युद्धाय निर्ययुः सर्वे गदाशक्तिपरश्चधान् ।  
गृहीत्वाऽङ्कुशपाशांश्च खड्गांश्च कनकत्सरून् ॥ १७

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| केचिचर्मयुधधराः केचित्तोमरपाणयः ।                  |    |
| केचित्तिशूलहस्ताश्च शरचापधरा अपि ॥                 | १८ |
| अट्टहासं विमुञ्चन्तो नर्दन्तस्ते महाबलाः ।         |    |
| वाद्यवोषांश्च महतः कारयन्ति स्म केचन ॥             | १९ |
| सन्नद्धाश्चैवमागत्य चक्रुस्ते कदनं महत् ।          |    |
| सुदर्शनभटाश्चापि भेरुण्डस्य भटा अपि ॥              | २० |
| हताः सुदर्शनभटाः विराटैरधिकोर्जितैः ।              |    |
| निकृत्तशिरसः केचित् छिन्नपादास्तथाऽपरे ॥           | २१ |
| केचित्कृत्तशिरस्त्राणाः केचिद्वक्षसि ताडिताः ।     |    |
| केचिच्छिन्नतनुत्राणाः केचिच्छिन्नोखाहवः ॥          | २२ |
| एवं हतं बलं सर्वमसुरेण दुरात्मना ।                 |    |
| तं दृष्ट्वा निहतं सैन्यं सुदर्शनमहाप्रभुः ॥        | २३ |
| क्रोधेनारुणताम्राक्षः प्रज्ज्वालन्तको यथा ।        |    |
| क्रुद्धे तस्मिन् प्रभौ सर्वं न बभौ क्लृप्तं जगत् ॥ | २४ |
| चन्द्रसूर्यौ तदाऽऽकाशे बभूवुः न च किञ्चन ।         |    |
| नक्षत्राणि न भान्ति स्म पेतुरुल्काः सहस्रशः ॥      | २५ |
| वाति स्म जवनोऽत्यर्थं सह धूल्या प्रभञ्जनः ।        |    |
| चकम्पे वसुधा कृत्वा पेतुः शैलाश्च पादपाः ॥         | २६ |
| चुक्षुमुः सागराः सर्वे नेदुर्भूतानि तत्क्षणात् ।   |    |
| युद्धार्थमागता दैत्याः किराताः पुल्कसास्तथा ॥      | २७ |
| कम्पलोपहताः सर्वे विषण्णवदनास्तदा ।                |    |
| तत्कोपाग्निसमुत्थश्च पुरुषः परमाद्भुतः ॥           | २८ |
| चापी खड्गी रथी तूणी कश्चित् कनकपिङ्गलः ।           |    |
| नाम्ना पावकसङ्काशः साक्षात्पावकविक्रमः ॥           | २९ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५७ तमोऽध्यायः १०७

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| स तमाज्ञापयद्राजा 'जहि दैत्या'नितीश्वरः ।         |    |
| पावकः सर्वशस्त्रास्त्रसम्पन्नः समरे बभौ ॥         | ३० |
| प्रल्याग्निरिवादित्यसहस्रसदृशप्रभः ।              |    |
| मुमोच बाणवर्षाणि परसैन्येषु पावक ॥                | ३१ |
| विनोदं कारयामास कञ्चिद्विषयकारकम् ।               |    |
| सम्प्लोहनार्थं दैत्यानां गान्धर्वं समचोदयत् ॥     | ३२ |
| मोहिताः परमास्त्रेण त्यक्तोद्यतवरायुधा ।          |    |
| परसैन्यञ्च तत्सर्वं मत्वा स्वजनसार्धगम् ॥         | ३३ |
| नायुध्यन्त तदा योधा दृष्ट्वा सेनापतिं पुनः ।      |    |
| नाम्ना पावकसङ्काशं जनकं स्वकुलोद्भवम् ॥           | ३४ |
| मत्वा सर्वे नमन्ति स्म पतित्वा वसुधातले ।         |    |
| तद्दृष्ट्वा देवगन्धर्वाः सिद्धविद्याधरादयः ॥      | ३५ |
| विस्मयं परमं जग्मुः 'साधु सा'ध्विति चाब्रुवन् ।   |    |
| तान् दृष्ट्वा पावकप्रस्थो मोहितानां प्रमापणम् ॥   | ३६ |
| अयुक्तमपि तद्विव्यम् उपसंहृतवांस्तदा ।            |    |
| विमुक्तमोहास्ते सर्वे गृहीत्वा शस्त्रबाणकान् ॥    | ३७ |
| चक्रुस्ते कदनं घोरमसिभिः पट्टसायुधैः ।            |    |
| क्रौञ्चमस्त्रं समादाय परेषां युद्धकाङ्क्षिणाम् ॥  | ३८ |
| 'छिन्दि भोः कर्णनासे त्व'मिति मन्त्रं जजाप ह ।    |    |
| तत्क्षणात्कृत्तनासाश्च कृत्तकर्णाश्च संयुगे ॥     | ३९ |
| विलोक्य ते हि तत्कर्म क्रुद्धा जग्मुश्च तद्वलम् । |    |
| पुनः पावकसङ्काशः सर्वास्त्रकुशलो युधि ॥           | ४० |
| भिण्डिपालेन सर्वेषां बाहून् चिच्छेद सर्वतः ।      |    |
| सर्वे ते वीतहस्ताश्च परान् खादितुमुद्यताः ॥       | ४१ |

|                                                                                                        |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| तच्च दृष्ट्वा तु पैशाचमलं मन्त्रेण मन्त्रितम् ।<br>विससर्ज तदा घोरं सर्वविस्मयकारकम् ॥                 | ४२ |
| ग्रस्ताः पिशाचभूतैश्च स्लेच्छा दैत्यादयस्तथा ।<br>अन्योन्यखादने सक्ता ययुर्विलयमञ्जसा ॥                | ४३ |
| स्वसैन्यं निहतं दृष्ट्वा निश्शेषं युद्धभूमिषु ।<br>भेरुण्डभ्तु ततः क्रुद्धः शूलं परमदारुणम् ॥          | ४४ |
| गृहीत्वा पावकप्रख्यमभिदुद्राव संयुगे ।<br>योजनत्रितयोत्सेधः कम्पयन् मेदिनीं तदा ॥                      | ४५ |
| वायव्यमलं प्रायुङ्क्त पावकार्चिसमप्रभः ।<br>भ्रामयामास वात्येव तृणं पर्वतसन्निभम् ॥                    | ४६ |
| प्रदक्षिणं कारयित्वा वेङ्कटाद्रेश्च दानवम् ।<br>पुनरुत्क्षिप्य तं दैत्यम् आकाशे दशयोजनम् ॥             | ४७ |
| पातयामास भूमौ तत् वायव्यं परमाद्भुतम् ।<br>जीर्णकूष्माण्डवद्भूमौ स शीर्णः पर्वतोपमः ॥                  | ४८ |
| एवं निहत्य तं दैत्यं कृत्वा देशमकण्टकम् ।<br>वनदुर्गाणि सर्वाणि खिलीकृत्य तदा जनान् ॥                  | ४९ |
| ससुखं स्थापयामास वेङ्कटाद्रौ सुदर्शनः ।<br>आकाशे देवगन्धर्वाः पुष्पवर्धं विकीर्य च ॥                   | ५० |
| ‘साधु सा’ धिति तं देवम् अस्तुवंस्तुतिभिस्तदा ।<br>स्वामिन्! जनपदाः सर्वे कृताः स्वस्थाः त्वया प्रभो! ॥ | ५१ |
| गच्छ त्वं वेङ्कटाशीशसमीपं त्वरितं पुनः ।<br>इत्युक्त्वा च ययुः सर्वे दिवं देवा मुदऽन्विताः ॥           | ५२ |
| स्वसैन्येषु हता ये तु जीवयित्वा च तान् पुनः ।<br>स्वस्थं चकार तं देशं वेङ्कटेशाऽज्ञया तदा ॥            | ५३ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५८ तमोऽध्यायः १०९

काले ववर्ष पर्जन्यः फलवन्तश्च पादपाः ।  
सर्वसस्यानि तत्र स्म फलन्ति सुतरां तदा ॥ ५४  
नीरोगाश्च जनाः सर्वे दुष्टवाधा न च क्वचित् ।  
'वैकुण्ठोऽयमथाऽन्यो वा स्वर्गो वा भोगतः विस्तु ' ॥ ५५  
इति तं मेनिरे सर्वे देशं श्रीवेङ्कटाभिधम् ।  
वाञ्छन्ति जन्म तत्रैव देवा अपि दिवौकसः ॥ ५६  
सुदर्शनमहाराजः सहस्रभुजमण्डितः ।  
आज्ञां वेङ्कटनाथस्य कृत्वा सम्यक् प्रतापवान् ॥ ५७  
जयमङ्गलघोषैश्च कुसुमोत्करवृष्टिभिः ।  
सर्वसैन्यैश्च संयुक्तः सर्वाभरणभूषितः ।  
प्रविवेश विमानं तद्वेङ्कटेशस्य मङ्गलम् ॥ ५८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुदर्शनस्यासुरवधार्थं  
उत्तरदिग्गमनादिवर्णनं नाम सप्तपञ्चाशोऽध्यायः



अथ अष्टपञ्चाशोऽध्यायः

श्रीवेङ्कटेशस्य कलिद्रोपोपहतेषु विशेषतः कृपाऽधिक्यवर्णनम्

श्रीसूतः —

मुनयः श्रुतमाख्यां किमु चक्रकृताऽश्रयम् ।  
वक्तुमर्हथ यूयं हि किं भूयः श्रोतुमिच्छथ ? ॥ १

मुनयः—

'पिबतां वेङ्कटेशस्य कथां दिव्यरसायनम् ।  
अस्त्यत्र तृप्तिर्नास्माकं भूयस्तृष्णा च भूयसी ॥ २

|                                                |   |
|------------------------------------------------|---|
| कलौ कलौ यथा तिष्ठेत् वेङ्कटाद्रिशिखामणिः ।     |   |
| पूजयिष्यति को वा तं वरदानञ्च कीदृशम् ? ॥       | ३ |
| वक्तुमर्हसि तत्सर्वं शृण्वतां नो महामुने ! ।   |   |
| इति पृष्टोऽब्रवीत्सूतः कथां श्रीवेङ्कटेशितुः ॥ | ४ |

श्रीसूतः —

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| सन्धावपि कलेश्चैवं वेङ्कटेशस्य वर्तनम् ।       |    |
| ततः परमियान् भेदो मौनं तत्रैव तु स्थितिः ॥     | ५  |
| अर्चावतारवद्भूयात् नराणां मांसचक्षुषाम् ।      |    |
| वैकुण्ठादागतं दिव्यं विमानन्तु तिरोहितम् ॥     | ६  |
| विमानमात्रतु कलौ कारयिष्यन्ति मानवाः ।         |    |
| पुण्यशीला महात्मानः कदाचित् क्षलसम्भृताः ॥     | ७  |
| कदाचिद्वाङ्मनाः पुण्याः कदाचिद्वाङ्मना नराः ।  |    |
| अर्चावतार इत्येव वदिष्यन्ति च मोहिताः ॥        | ८  |
| तथैवावमर्तिं केचित् करिष्यन्ति कलौ युगे ।      |    |
| साक्षात्पश्यन् हि तत्सर्वमपश्यन्निव तिष्ठति ॥  | ९  |
| साक्षाद्वाषणमेकन्तु नास्ति तस्य तपोधनाः ।      |    |
| परन्तु सर्वमस्त्येव निग्रहानुग्रहावपि ॥        | १० |
| अधिकं वरदानन्तु भविष्यति कलौ युगे ।            |    |
| कृतकन्तु विमानं स्यात् इत्याख्यामालमेव हि ॥    | ११ |
| किन्तु दर्शनमात्रेण पापकोटिं हरेद्द्रुवम् ।    |    |
| कदाचिन् महती पूजा स्वल्पैव तु कदाचन ॥          | १२ |
| स्वयं हि वेङ्कटाधीशः प्रकाशं हि व्रजेत्कचित् । |    |
| अप्रकाशं कदाचिच्च वेङ्कटाद्रिशिरोमणिः ॥        | १३ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५८ तमोऽध्यायः १११

एवं हि रमया सार्धं क्रीडत्येव च तत्र हि ।  
कलौ युगे तु वैचित्र्यं दर्शयिष्यति केशवः ॥ १४  
अल्पदानेन वै भक्त्या स्वल्पं पूजया तथा ।  
भविष्यति प्रसन्नश्च स्मृतिमात्रेण केशवः ॥ १५  
नृणां गमनमात्रेण वेङ्कटाख्यगिरिं प्रति ।  
प्रसन्नः स्यादयं क्षिप्रं दास्यतीष्टञ्च तद्बहु ॥ १६  
स्वयमप्राकृतो विष्णुः चरित्रं प्राकृतो यथा ।  
करिष्यति तथा देवो मोहयिष्यति तान् जनान् ॥ १७  
मानुषांश्चैव भोगांश्च भोक्ष्यते प्रीतमानसः ।  
उत्सवान् विविधांस्तस्य कारयिष्यन्ति मानवाः ॥ १८  
आगमिष्यन्ति देवाश्च सर्वार्थे वै कलौ युगे ।  
स्नास्यन्ति स्वामितीर्थे वै करिष्यन्ति निवेदनम् ॥ १९  
निवेदितं भक्षयेयुः मनुष्याणामगोचराः ।  
विमानं तद्धि पश्येयुः पूजयेयुर्हि सादराः ॥ २०  
प्रार्थयिष्यन्ति देवाश्च भविष्यामो नरा इति ।  
तेषां हि वेङ्कटाधीशः क्षिप्रं दास्यति चेप्सितम् ॥ २१  
स्वल्पधर्मेण सन्तुष्टः पुत्रं क्षेत्रं कलत्रकम् ।  
आरोग्यं भूतिमैश्वर्यं राज्यप्राप्तिञ्च सत्वरम् ॥ २२  
आयुश्च दुर्लभं नृणां स्वर्गलं कादिकानपि ।  
जन्मकोटिशतैश्चैव कृतैः पुण्यैर्दुरासदाम् ॥ २३  
नित्यभूतिञ्च देवोऽसौ दास्यत्याचार्यसंश्रयात् ।  
अहो वै वैष्णवो धर्मः चित्रो वेङ्कटभूधरे ॥ २४  
अश्र्वर्यमाश्र्वर्यमिति ब्रुवन्तो वैमानिकास्ते कमलासनाद्याः ।  
यथा व्रजेयुर्हि तथा मयाऽपि गीतं भविष्यद्भवतां पुरस्तात् ॥ २५

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| कलौ युगे तु सम्प्राप्ते विशेषाद्वेङ्कटाचलः ।       |    |
| प्रख्यातो ह्यधिकं भूमौ भविष्यति तपेधनाः ॥          | २६ |
| सान्निध्यमधिकं तत्र करिष्यति रमापतिः ।             |    |
| म्लेच्छसङ्करजातीनां श्वपाकाधमयोषिताम् ॥            | २७ |
| किरातपुल्कसादीनां शूद्राणां हीनजन्मनाम् ।          |    |
| भक्तिः श्रीवेङ्कटाधीशो ह्यधिकञ्च भविष्यति ॥        | २८ |
| तेषामपि रमाधीशः शीघ्रं दास्यत्यभीप्सितम् ।         |    |
| सान्निध्यं तत्र कुरुते भक्त्या क्रीतो यतो हरिः ॥   | २९ |
| आर्यास्तुरुका मालव्या गौडा वङ्गाः कलिङ्गकाः ।      |    |
| आन्ध्राः कर्णाटदेशीयाः कोसलोद्भूतमानुषाः ॥         | ३० |
| अङ्गाश्चोलश्च पाण्ड्याश्च नानादेशेषु सम्भवाः ।     |    |
| द्वीपान्तरगताश्चापि वेङ्कटेशमहोत्सवे ॥             | ३१ |
| धारयन्तो महाभक्तिमागमिष्यन्ति कोटिशः ।             |    |
| सर्वे लब्ध्वा वरं चेष्टं भविष्यन्ति मुदाऽन्विताः ॥ | ३२ |
| अप्राकृतः स्वर्णसानुरपि श्रीवेङ्कटाचलः ।           |    |
| प्राकृताचलवद् भूमौ भविष्यति कलौ युगे ॥             | ३३ |
| मतान्तरप्रविष्टानामपि भक्तिर्भविष्यति ।            |    |
| सर्वात्मके रमाऽधीशो वेङ्कटेशो पराऽत्मनि ॥          | ३४ |
| एवं कृत्वा परां भक्तिं भविष्यन्ति च पावनाः ।       |    |
| भक्तिमन्तः परो दृष्ट्वा भक्तिं गच्छेद्वि केशवे ॥   | ३५ |
| तथा दृष्टफलार्थञ्च भजमानाय सादरम् ।                |    |
| दृष्टप्रदं वेङ्कटेशं दृष्ट्वा तं तु व्रजेत् पुनः ॥ | ३६ |
| सोऽपि दृष्टफलं लब्ध्वा वरानपि शतं व्रजेत् ।        |    |
| चित्तं कलियुगे श्रीशो विहरिष्यति भूधरे ॥           | ३७ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमोऽध्यायः ५२. तमोऽध्यायः ११३

अत एव 'कलिः साधुः साधु शूद्रश्च योषितः ।  
विशेषाद्वेङ्कटात्रीशसेवनं साधुभूषणम्' ॥ ३८  
इत्येवं मुनयो देवा वदिष्यन्ति कलौ युगे ।  
कलिदोषपरीतानां नराणां पापकर्मणाम् ॥ ३९  
वेङ्कटेशात्परो देवो नास्त्यन्यः शरणं भुवि ।  
“वेङ्कटेशसमो देवो नास्ति नास्ति महीतले ॥ ४०  
स्वामिपुष्करिणीतीर्थसमं नास्ति न चास्ति हि ।”  
द्रव्यार्जनपरो नित्यं भविष्यति कलौ युगे ॥ ४१  
अनुग्रहाय लोकानां कामैः पूर्णोऽपि सर्वदा ।  
'इदं द्रव्यं त्वया तावत् दातव्यं मम सम्प्रति ॥ ४२  
तवानीष्टमहं दास्ये दास्य' इत्येव च ब्रुवन् ।  
इति सर्वजनैः सार्धं क्रीडमाणो भविष्यति ॥ ४३  
कलौ तदीयचारित्रं वक्तुं कल्पशतैरपि ।  
न शक्यमुक्तं लेशेन चरित्रं तस्य मङ्गलम् ॥ ४४

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटेशस्य कलिदोषो-  
पहतेषु विशेषतः कृपाधिक्यवर्णनं नाम अष्टपञ्चाशोऽध्यायः

अथ एकोनषष्टितमोऽध्यायः

चेतनस्य आचार्याश्रयणात् पुण्यार्थप्राप्तिनिरूपणम्

मुनयः —

भगवन् सर्वशास्त्रार्थवेदवेदाङ्गपारग ! ।  
आचार्यसंश्रयादेव लभन्ते हि परां गतिम् ॥ १  
अहो हि वैष्णवो धर्म इति चोक्तं त्वया पुरा ।  
सूत ! त्वया तु तत्सर्वं वक्तव्यं नस्तपोधन ! ॥ २

श्रीसूतः—

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| श्रूयतामभिधास्यामि सङ्गहेण तपोधनाः ।                |    |
| उद्धृत्य भूमिं पातालात् वेङ्कटाह्वयभूधरे ॥          | ३  |
| सितेन भूवराहेण धरण्यै भाविता पुरा ।                 |    |
| पृच्छन्त्यै वैष्णवान् धर्मान् ये ये धर्मा मनोहराः ॥ | ४  |
| व्यासप्रसादात् तान् धर्मान् वेङ्गयहं मुनिसत्तमा ।   |    |
| सङ्गहेण प्रवक्ष्यामि गोप्याद्गोप्यतरानपि ॥          | ५  |
| तेषां वैष्णवधर्माणां विश्वासस्तु परा गतिः ।         |    |
| यावानपि च विश्वासः तावती सिद्धिरीरिता ॥             | ६  |
| गुरुरेव परो धर्मो गुरुरेव परा गतिः ।                |    |
| पापं क्षमयति क्षिप्रं गुरुरेवाऽऽत्मनिवनः ॥          | ७  |
| तस्मात्सर्वप्रयत्नेन विश्वसेत्परमं गुरुम् ।         |    |
| तत्पापं तद्गुरुर्हन्ति तत्पापं तद्गुरुर्हरेत् ॥     | ८  |
| पारम्पर्यक्रमाद्विष्णुः सर्वपापहरो गुरुः ।          |    |
| कारुण्यवर्तिः श्रीविष्णुः गुरुरूपी च पापिनः ॥       | ९  |
| शास्त्रहस्तेन संसारमग्नानुद्धरते जनान् ।            |    |
| न्यायविच्छास्त्रवेदी च धर्माधर्मविवेकवान् ॥         | १० |
| तपोनिष्ठो ब्रह्मनिष्ठः तप स्वाध्यायने रतः ।         |    |
| निर्ममो निरहङ्कारः शान्तो दान्तो विमत्सरः ॥         | ११ |
| गुरुरित्युच्यते यस्तु परार्थैकप्रयोजनः ।            |    |
| भीतः संसारदावेभ्यः शान्तो दान्तः शुचिर्बुधः ॥       | १२ |
| अतः परमनिर्विण्णो निर्वैरः सर्वजन्तुषु ।            |    |
| समाश्रयेद्गुरुं भक्त्या महाविश्वापपूर्वकम् ॥        | १३ |

|                                                      |     |
|------------------------------------------------------|-----|
| श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५९ तमोऽध्यायः              | ११५ |
| निक्षिपेत्सर्वभारांश्च गुरोः श्रीपादपङ्कजे ।         |     |
| नित्यनैमित्तिके कुर्वन् यथाशक्ति भयाद्धरे ॥          | १४  |
| मोक्षार्थं निर्नरस्तिष्ठेत् मन्त्रान्तरविवर्जितः ।   |     |
| साधनान्तरहीनश्च द्वयानुष्ठानतत्परः ॥                 | १५  |
| “नाष्टाक्षरात्परो मन्त्रो नास्ति नारायणात्परः ।      |     |
| नास्ति न्यासात्परो योगो ” ब्रवीति च तथा श्रुतिः ॥    | १६  |
| एवं हि वर्तमानस्य देहान्ते परमं पदम् ।               |     |
| न्यासविद्यापरश्चैवं वर्तते परमार्थवित् ॥             | १७  |
| ध्याननिष्ठश्च लब्धाशी वैराग्यं परमाश्रितः ।          |     |
| अहङ्कारविहीनश्च यतवाक्कायमानसः ॥                     | १८  |
| सर्वेन्द्रियाणि संयम्य विवर्त्तं स्थूलमाश्रितः ।     |     |
| बलदर्भविहीनश्च कामक्रोधविवर्जितः ॥                   | १९  |
| शान्तश्च निर्ममश्चापि परिग्रहविवर्जितः ।             |     |
| कल्पते ब्रह्मभूयाय ब्रह्मध्यानस्य वैभवात् ॥          | २०  |
| ब्रह्मभावं गतस्यास्य प्रसन्नं मानसं भवेत् ।          |     |
| तस्य शोको न चेच्छा च सर्वभूतसमो भवेत् ॥              | २१  |
| हरिभक्तिर्भवेत्तस्य भक्त्या जानाति केशवम् ।          |     |
| भगवत्तत्त्वयाथात्म्यं वेत्ति पश्चात् प्रसन्नाश्रीः ॥ | २२  |
| ततः परमसङ्गाच्च विष्णोः सायुज्यमश्रुते ।             |     |
| न्यासविद्यानिविष्टस्य कर्मणां त्याग इष्यते ॥         | २३  |
| त्यागश्च फलतः प्रोक्तः स्वरूपेण न च कश्चित् ।        |     |
| कर्मणो नियतस्यैव त्यागो वै मोहहूलकः ॥                | २४  |
| कर्माणि त्यजतः पुंसो नास्ति देहस्य धारणम् ।          |     |
| यज्ञादीनां त्यक्तसङ्गः कुर्यात्कर्माण्यशेषतः ॥       | २५  |

|                                                        |    |
|--------------------------------------------------------|----|
| सृष्ट्वा यज्ञान् प्रजाश्चापि प्राह ब्रह्मा चतुर्मुखः । |    |
| ‘यज्ञ एव परं धर्मो भगवत्प्रीतिकारक ॥                   | २६ |
| अभीष्टकामधुक् यज्ञः तस्माद्यज्ञः परा गतिः ।            |    |
| तस्माद्यज्ञं प्रजाः सर्वाः कुर्युः सङ्गविवर्जिताः ॥    | २७ |
| यज्ञैः प्रीतो हरिः सर्वमभीष्टञ्च प्रयच्छति ।           |    |
| लब्ध्वाऽभीष्टं वरं तस्मात् यज्ञं कुर्यात् न चेत्पुन ॥  | २८ |
| स्तेन एव स विज्ञेयः सर्वकर्मबहिष्कृतः ।                |    |
| ततः कर्म च कर्तव्यं फलसङ्गविवर्जितम् ॥                 | २९ |
| कर्मणैव पुरा केचित् परां सिद्धिमितो गताः ।             |    |
| भगवत्तत्त्वनिष्ठस्य तदाज्ञालङ्घनं महान् ॥              | ३० |
| देवः तदाज्ञा वेदाश्च स्मृतयो धर्मसङ्गताः ।             |    |
| आज्ञानुवर्तनं पुंसां आदौ कार्यं हि सर्वदा ॥            | ३१ |
| हरौ सर्वाणि कर्माणि सन्न्यसेद्योगवित्तमः ।             |    |
| निर्ममो नित्यतृप्तश्च भगवद्भयानभाश्रितः ॥              | ३२ |
| सुखदुःखे समे कृत्वा लाभं हानिं जयं तथा ।               |    |
| पराजयञ्च शीतोष्णे मानं चाय्यवमानकम् ॥                  | ३३ |
| सर्वत्रगं परं ब्रह्म ध्यायन् सन्ततमात्मनि ।            |    |
| प्रातरारभ्य कर्माणि कुर्वन्निज्यादिकं तथा ॥            | ३४ |
| स्वाध्यायञ्च तथा योगं तत्कालेन हापयेत् ।               |    |
| नित्यं नैमित्तिकं कर्म यथाशक्ति विनिर्वहेत् ॥          | ३५ |
| वृन्दावनं वेङ्कटाद्रौ मालाकरणमेव च ।                   |    |
| विमानलेपनञ्चैव यच्चान्यत् प्रीतिकारकम् ॥               | ३६ |
| उत्सवे सेवनञ्चैव यथाशक्ति निवेदनम् ।                   |    |
| तदीयाराधनञ्चापि कुर्वन्नेष्टमात्मसु ॥                  | ३७ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमोऽङ्के ६० तमोऽध्यायः ११७

श्रीमद्वेङ्कटनाथस्य जलैस्तु विनिवेदिनैः ।  
अन्नैर्वस्त्रैस्तथा माल्यैः शरीरस्य च पोषणम् ।  
कुर्वन्नाचार्यमाहात्म्यात् परां गतिमवाऽऽप्नुयात् ॥ ३८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये चेतनस्य आचार्याश्रयणात्  
पुरुषार्थप्रातिवर्णनं नाम एकोनषष्टितमोऽध्यायः

अथ षष्टितमोऽध्यायः

अष्टाङ्गयोगस्वरूपनिरूपणम्

श्रीसूतः —

द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परञ्चापरमेव च ।  
अपरं ब्रह्म जीवस्तु क्षराक्षरविभेदवान् ॥ १  
क्षरस्तु सर्वभूतं स्यात् कूटस्थो ह्यक्षरः स्मृतः ।  
परं ब्रह्म तु सर्वात्मा परमात्मा प्रकीर्तितः ॥ २  
विनर्ति सर्वलोकांश्च प्रविश्यान्तर्नियच्छति ।  
ईश्वरो योऽव्ययो नित्यः स एव पुरुषोत्तमः ॥ ३  
अतीतः क्षरमत्यर्थं अक्षरञ्च परः पुमान् ।  
यस्मात्तस्मात्तु विख्यातो लोकेऽसौ पुरुषोत्तमः ॥ ४  
इति यो वेत्ति पुरुषं असम्बुद्धः परार्थवित् ।  
स सर्वविद्भजेदेनं वेङ्कटेशसमाधिना ॥ ५  
यस्तु वेदविदां श्रेष्ठो योगमारभ्य बुद्धिमान् ।  
यमञ्च नियमञ्चैव पीठभेदांस्तथैव च ॥ ६  
प्राणायामांश्च विविधान् प्रत्याहारञ्च साधयेत् ।  
धारणं ध्यानभेदांश्च स समाधिं प्रसाधयेत् ॥ ७

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| यमादिध्यानपर्यन्ताः समाधेः सिद्धिहेतवः ।           |    |
| समाधिः स्वाङ्गसहितस्त्वष्टाङ्गो योग उच्यते ॥       | ८  |
| कुर्याद्वि प्रत्यहं योगं एतावदिति निश्चयः ।        |    |
| निबिद्धाचारतः पुंसो निवृत्तिर्यम उच्यते ॥          | ९  |
| स्वाध्यायो नियमः प्रोक्तः स्वस्तिकाद्यासनं विदुः । |    |
| रेचकः पूरकश्चापि कुम्भकश्चेति विश्रुतः ॥           | १० |
| प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तः प्रत्याहारः स कथ्यते ।  |    |
| चित्तोपसंहारिण्या तु विषयेभ्यश्च योगिनः ॥          | ११ |
| आत्मन्येवात्र मनसः स्थापनं धारणं स्मृतम् ।         |    |
| तैलधारवदच्छिन्नज्ञानसन्तानलक्षणम् ॥                | १२ |
| ध्यानं स्यादात्मविज्ञानं ज्ञातृज्ञेयभिदात्मकम् ।   |    |
| ज्ञातृज्ञेयस्य बुद्धेश्च भेदज्ञानं यदा न हि ॥      | १३ |
| परमानन्दजनने परानन्दे चिदात्मनि ।                  |    |
| मनो यदा महायोगं समाधिर्गीयते तदा ॥                 | १४ |
| एवमभ्यस्य मेधावी पञ्चकालपरायणः ।                   |    |
| तत्तत्कालविधानोक्तं आचारश्च समाचरेत् ॥             | १५ |
| सायङ्काले प्रतिदिनं योगं कुर्याद्विचक्षणः ।        |    |
| विविक्तदेशे कीटादिसर्वबाधाविवर्जिते ॥              | १६ |
| मृद्धासने सुखासीनः स्वस्तिकाद्यासने तथा ।          |    |
| ऋजुकायशिरोग्रीवो न साग्रन्यस्तलोचनः ॥              | १७ |
| इडया वायुमाकृष्य कुम्भयेच्च शनैःशनैः ।             |    |
| उद्धोध्य कुण्डलीं सुप्तां सुषुम्नायां प्रवेशयेत् ॥ | १८ |
| यदा तु योगिनो देहे जिह्वास्ता वर्तते तदा ।         |    |
| ओमित्युच्चारयेद्योगी वेङ्कटेशमुत्सरन् ॥            | १९ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ६० तमोऽध्यायः ११९

ब्रह्मरन्ध्राद्विनिर्गच्छन् प्रविशेदर्चिराकृतिम् ।  
अर्चिरादिकमार्गेण प्रविश्य परमं पदम् ॥ २०  
सायुज्यं वेङ्कटेशस्य लब्ध्वाऽऽनन्दी भवेच्चिरम् ।  
यदि स्यात् वेङ्कटेशस्य कैङ्कर्ये धीर्विलीयसी ॥ २१  
तदा योगं स्थिरः कुर्यात् उपदेशाद्गुरोः स्वयम् ।  
पूर्वोक्तैर्नैव मार्गेण योगं कुर्याद्विचक्षणः ॥ २२

श्रीभगवान्—

इडया वायुमाकृष्य सुषुम्नायां प्रवेशयेत् ।  
अर्चिषा सह कोष्ठाग्नेः प्रविशेद्धृदयान्बुजम् ॥ २३  
तलस्थं केशवं बुद्ध्वा शङ्खचक्रगदाधरम् ।  
आज्ञास्थानमतीत्यैवं भूमध्यं प्रविशेत् सुधीः ॥ २४  
नीवारशूकवत्सूक्ष्मं तत्र पश्येच्छूल्यपत्तिम् ।  
सहस्रपत्रकमलमध्यस्थं चन्द्रमण्डलम् ॥ २५  
तत्र पश्येद्रमाग्नीशं सुराग्नीशं सुधात्मकम् ।  
तत्सङ्कल्पाच्चन्द्रविम्बात् स्रवर्त्ययूषविन्दुना ॥ २६  
अन्तर्बहिस्तथा व्याप्तं स्वस्य देहं विचिन्तयेत् ।  
सुषुम्नायास्तथा मार्गात् अवरुह्य शनैःशनैः ॥ २७  
प्राणादीन् स्थापयेद्वायौ तत्तत्स्थानेषु पूर्ववत् ।  
एवञ्च प्रत्यहं कुर्वन् सन्ध्यामध्यमरात्रिषु ॥ २८  
विना हस्तेन कुर्वीत वायोर्धारात्मात्मनि ।  
शारीरादधिकं वायुं द्वादशाङ्गुलमानकम् ॥ २९  
शरीरेण समं कुर्यात् न्यूनं वा वायुमात्मनि ।  
एवमभ्यासयोगेन वज्रकायो भवेन्नरः ।  
कालमृत्यू विनिर्जित्य जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥ ३०

## सनकसनन्दनतीर्थमाहात्म्यम्

|                                                                                            |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| अस्य योगस्य विघ्नाश्चेत् भवन्ति बहवो भुवि ।<br>अविघ्नयोगसिद्धयर्थं वेङ्कटाह्वयभूधरे ॥      | ३१ |
| अस्ति किञ्चित् सरः पुण्यं नाम्ना सनकनन्दनम् ।<br>उत्तरे पापनाशस्य क्रोशार्थं सिद्धसेविते ॥ | ३२ |
| अतिगोप्यं न तत् केऽपि जानन्ति मनुजा भुवि ।<br>मार्गशीर्षे सिते पक्षे द्वादश्यामरुणोदये ॥   | ३३ |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थं स्नात्वा नियतमानसः ।<br>त्रयोदशीं समारभ्य स्नायात् सनकनन्दने ॥       | ३४ |
| स्नात्वा तु तत्र विमलो वेङ्कटाद्रिपतेः पुनः ।<br>श्रीमदष्टाक्षरं मन्त्रं जपेद्युतमन्वहम् । |    |
| पश्चात् समभ्यसेद्योगं ततः सिद्धो भविष्यति ॥                                                | ३५ |

## क यरसायनतीर्थमाहात्म्यम्

|                                                                                                     |    |
|-----------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| रहस्यं तत्समीपेऽस्ति तीर्थं कायरसायनम् ।<br>तस्य पानात्तु देहोऽपि शुद्धो भवति तत्क्षणात् ॥          | ३६ |
| यत्किञ्चित् पाण्डुपलन्तु परीक्षार्थं विनिक्षिपेत् ।<br>तस्मिंस्तीर्थे क्षणादेव श्यामं भवति शोभनम् ॥ | ३७ |
| शिलया पिहितं तत्तु योगिनिः सनकादिभिः ।<br>महात्मनां पुण्यवतां दर्शनं हि ददाति तत् ॥                 | ३८ |
| येन केन प्रकारेण कृत्वा देहं दृढं बुधः ।<br>कैङ्कर्यमेव कुर्वीत वेङ्कटेशस्य सर्वदा ॥                | ३९ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ६० तमोऽध्यायः १२१

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| स्वरूपमात्मनो यस्मात् कैङ्कर्यं शेषिणो हरेः ।    |    |
| कैङ्कर्यहीनः पुरुष स्वामिद्रोहा न संशयः ॥        | ४० |
| तस्मादेव तु कुर्वीत नित्यं नैमित्तिकं बुधः ।     |    |
| अन्यच्च प्रीतिकर्मापि यत्तु शास्त्रैरनिन्दितम् ॥ | ४१ |
| इत्युक्तं प्राक् वराहेण धरण्यै वेङ्कटाचले ।      |    |
| शरीरधारणं भोगो ज्ञानं सामर्थ्यमेव च ॥            | ४२ |
| क्षेत्रं गृहं धनं धान्यं यच्चान्यदुपकल्पितम् ।   |    |
| सर्वं वेङ्कटनाथस्य कुर्यात् स्वाय नमज्जसा ॥      | ४३ |
| विनश्चरमिदं सर्वं जगत् पश्येद्धि बुद्धिमान् ।    |    |
| निरये पापकारी तु पतत्येव न संशयः ॥               | ४४ |
| पुण्यकृत् सुखमाप्नोति ध्रुवमित्येव बुद्धिमान् ।  |    |
| चिन्तयेत्सततं योगी चित्ते वेङ्कटनायकम् ॥         | ४५ |
| धर्मशास्त्रं सदा पश्येत् गुरुशुश्रूषणे रतः ।     |    |
| गृहस्थः स्वेषु दारेषु रमेत् योगी जितेन्द्रियः ॥  | ४६ |
| साधून् सदा योगी पृच्छेद्वै हितमात्मनः ।          |    |
| विचारयेच्च वेदार्थान् सदा वेदान्तमभ्यसेत् ॥      | ४७ |
| बहुनेह किमुक्तेन विहितं नैव सन्त्यजेत् ।         |    |
| निषिद्धं नानुष्ठेद्वि सारोऽयं धर्मसङ्ग्रहः ॥     | ४८ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अष्टाङ्गयोगस्वरूपादि-

वर्णनं नाम षष्ठितमोऽध्यायः



## श्रीवेङ्कटेशाष्टोत्तरशतनामावलिः

मुनयः —

‘सूत सर्वार्थतत्त्वज्ञ सर्ववेदान्तपारग ! ।  
 येन चाऽऽराधितः सद्यः श्रीमद्वेङ्कटनायकः ॥ १  
 भवत्यनीष्टसर्वार्थप्रदः तद्ब्रूहि नो मुने !’ ।  
 इति पृष्टस्तदा सूतो ध्यात्वा स्वात्मनि तत्क्षणात् ।  
 उवाच मुनिशार्दूल्यन् श्रूयतामिति वै मुनिः ॥ २

श्रीसुतः —

अस्ति किञ्चिन्महद्गोप्यं भगवत्प्रीतिकारकम् ।  
 पुरा शेषेण कथितं कपिलाय महात्मने ॥ ३  
 नाम्नामष्टशतं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।  
 आदाय हेमपद्मानि स्वर्णदीसम्भवानि च ॥ ४  
 ब्रह्मा तु पूर्वमभ्यर्च्य श्रीमद्वेङ्कटनायकम् ।  
 अष्टोत्तरशतैर्दिव्यैः नामभिः मुनिपूजितैः ॥ ५  
 स्वामीष्टं लब्धवान् ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः ।  
 भवद्विरपि पन्नैश्च समर्च्यः तैश्च नामभिः ॥ ६  
 तेषां शेषनगाधीशमानसोल्लासकारिणाम् ।  
 नाम्नामष्टशतं वक्ष्ये वेङ्कटाद्रिनिवासिनः ॥ ७  
 आयुरारोग्यदं पुंसां धनधान्यसुखप्रदम् ।  
 ज्ञानप्रदं विशेषेण महदैश्वर्यकारकम् ॥ ८  
 अर्चयेत् नामभिर्दिव्यैः वेङ्कटेशपदाङ्कितैः ।  
 नाम्नामष्टशतस्यास्य ऋषिर्ब्रह्मा प्रकीर्तितः ॥ ९

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ६१ तमोऽध्यायः १२३

छन्दोऽनुष्टुप् तथा देवो वेङ्कटेश उदाहृतः ।  
नीलगोक्षीरसम्भूतो बीजमित्युच्यते बुधैः ॥ १०  
श्रीनिवासस्तथा शक्तिः हृदयं वेङ्कटाधिपः ।  
विनियोगस्तदाऽभीष्टसिद्धयर्थे च निगद्यते ॥ ११

### नामावलिस्तोत्रम्

ॐ नमो वेङ्कटेशाय शेषाद्रिनिलयाय च ।  
वृषट्पङ्क्त्या चरायाथ विष्णवे सततं नमः ॥ १२  
मेरुपुत्रगिरीशाय सरस्वामितटीजुषे ।  
कुमाराकल्पसेव्याय वज्रदन्तिविषयाय च ॥ १३  
सुवर्चलासुतन्यस्तसैनापत्यभराय च ।  
रामाय पद्मनाभाय सदा वायुस्तुताय च ॥ १४  
त्यक्तवैकुण्ठलोकाय गिरिकुञ्जविहारिणे ।  
हरिचन्दनगोत्रेन्द्रस्वामिने सततं नमः ॥ १५  
शङ्कराजन्यनेत्राब्जविषयाय नमो नमः ।  
वसूपरिचरत्रात्रे कृष्णाय सततं नमः ॥ १६  
अब्धिकन्यापरिष्वक्तवक्षसे वेङ्कटाय च ।  
सनकादिमहायोगिपूजिताय नमो नमः ॥ १७  
देवजित्प्रमुखानन्तदैत्यसङ्घप्रणाशिने ।  
श्वेतद्वीपवसन्मुक्तपूजिताङ्घ्रियुगाय च ॥ १८  
शेषपर्वतरूपत्वप्रकाशनपराय च ।  
सानुस्थापिततार्क्ष्याय तार्क्ष्याचलनिवासिने ॥ १९  
मायागूढविमानाय गरुडस्कन्धवासिने ।  
अनन्तशिरसे नित्यं अनन्ताक्षाय ते नमः ॥ २०

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| अनन्तचरणायाथ श्रीशैलनिलयाय च ।              |    |
| दामोदराय ते नित्यं नीलमेघनिभाय च ॥          | २१ |
| ब्रह्मादिदेवदुर्दशविश्वरूपाय ते नमः ।       |    |
| वैकुण्ठागतसद्धेमदिमानान्तर्गताय च ॥         | २२ |
| अगस्त्याभ्यर्थिताशेषजनदृग्गोचराय च ।        |    |
| वासुदेवाय हरये तीर्थपञ्चकवासिने ॥           | २३ |
| वामदेवप्रियायाथ जनकेष्टप्रदाय च ।           |    |
| मर्कण्डेयमहातीर्थजातपुण्यप्रदाय च ॥         | २४ |
| वाक्पतिब्रह्मदात्रे च चन्द्रलावण्यदायिने ।  |    |
| नारायणनगेशाय ब्रह्मल्लोत्सवाय च ॥           | २५ |
| शङ्खचक्रवरानम्रलसत्करतलाय च ।               |    |
| द्रवन्मृगमदासक्तविश्रहाय नमो नमः ॥          | २६ |
| केशवाय नमो नित्यं नित्ययौवनमूर्तये ।        |    |
| अर्थितार्थप्रदात्रे च विश्वतीर्थाघहारिणे ॥  | २७ |
| तीर्थस्वामिसरस्नातजनाभीष्टप्रदायिने ।       |    |
| कुमारधारिकावासस्कन्दाभीष्टप्रदाय च ॥        | २८ |
| जानुदघ्नसमुद्भूतपोत्रिणे कूर्ममूर्तये ।     |    |
| विघ्नरद्वन्द्वशापान्तप्रदात्रे विश्वे नमः ॥ | २९ |
| वैखानसमुनिश्रेष्ठपूजिताय नमो नमः ।          |    |
| सिंहाचलनिवासाय श्रीमन्नारायणाय च ॥          | ३० |
| सद्भक्तनीलकण्ठार्च्यनृसिंहाय नमो नमः ।      |    |
| कुसुदाक्षगणश्रेष्ठसैष्यप्रदाय च ॥           | ३१ |
| दुर्मेघप्राणहर्त्रे च श्रीधराय नमो नमः ।    |    |
| क्षत्रियान्तकरामाय मत्सरूपाय ते नमः ॥       | ३२ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथम ागे ६१ तमोऽध्यायः १२५

|                                            |    |
|--------------------------------------------|----|
| पाण्डवारिप्रहर्ते च श्रं कराय नमो नमः ।    |    |
| उपत्यकाप्रदेशस्थ शङ्करध्यातमूर्तये ॥       | ३३ |
| रुक्माब्जसरसीकूलक्ष्मीकृततपस्विने ।        |    |
| लसलक्ष्मीकराग्नोजदत्तकल्हारकक्षजे ॥        | ३४ |
| सालग्रामनिवासाय शुक्लहगोचराय च ।           |    |
| नारायणार्थिताशेषजनदृग्बध्याय च ॥           | ३५ |
| मृगयारसिकायाथ वृषभासुरहारिणे ।             |    |
| अञ्जनागेलपतये वृषाचलवासिने ॥               | ३६ |
| अञ्जनासुतदात्रे च माधवीयावहारिणे ।         |    |
| प्रियङ्गुप्रिय क्षाय श्वेतकोलवराय च ॥      | ३७ |
| नीलधेनुपयोधारासेकदेहोद्भवाय च ।            |    |
| शङ्करप्रियमित्ताय चोलपुत्रप्रियाय च ॥      | ३८ |
| सुधर्मिणीसुचैतन्यप्रदात्रे मधुघातिने ।     |    |
| कृष्णाख्यविप्रवेदान्तदेशिकत्वप्रदाय च ॥    | ३९ |
| वराहाचलनाथाय बलभद्राय ते नमः ।             |    |
| त्रिविक्रमाय महते हृषीकेशाय ते नमः ॥       | ४० |
| अच्युताय नमो नित्यं नीलाद्रिनिलयाय च ।     |    |
| नमः क्षीराब्धिनाथाय वैकुण्ठाचलवासिने ॥     | ४१ |
| मुकुन्दाय नमो नित्यं अनन्ताय नमो नमः ।     |    |
| विरिञ्चाभ्यर्थिताऽनीतसौम्यरूपाय ते नमः ॥   | ४२ |
| सुवर्णमुखरीस्तातमनुजा िष्टदायिने ।         |    |
| हलायुधजगतीर्थसमस्तफलदायिने ।               |    |
| गोविन्दाय नमो नित्यं श्रं निवासाय ते नमः ॥ | ४३ |

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| अष्टोत्तरशतं नाम्नां चतुर्थ्यां नमसाऽन्वितम् । |    |
| यः पठेच्छृणुयान्नित्यं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥  | ४४ |
| तस्य श्रीवेङ्कटेशस्तु प्रसन्नो भवति ध्रुवम् ।  |    |
| अर्चनायां विशेषेण ग्राह्यमष्टोत्तरं शतम् ॥     | ४५ |
| वेङ्कटेशाभिधेयैर्यो वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ।     |    |
| अर्चयेन्नामभिस्तस्य फलं मुक्तिः न संशयः ॥      | ४६ |
| गोपनीयमिदं स्तोत्रं सर्वेषां न प्रकाशयेत् ।    |    |
| श्रद्धाभक्तियुजामेव दापयेत् नामसङ्ग्रहम् ॥     | ४७ |
| इति शेषेण कथितं कपिलाय महात्मने ।              |    |
| कपिलाख्यमहायोगिसकाशात्तु मया श्रुतम् ।         |    |
| तदुक्तं भवतामद्य सद्यः प्रीतिकरं हरेः ॥        | ४८ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटेशाष्टोत्तरशतनामावलि-  
कीर्तनं नाम एकषष्ठितमोऽध्यायः

अथ द्विषष्ठितमोऽध्यायः

महर्षीणां श्रीवेङ्कटेशसेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलः गमनम्

श्रीसूतः —

‘ब्रूत यूयं पुनः श्रोतुं किमिच्छथ तपोधनाः ! ।  
वक्ष्यामि तदशेषञ्च नात्र कार्या विचारणा ।’  
इत्युक्ता मुनयः सर्वे प्रोचुरेवमिदं वचः ॥ १

मुनयः —

‘भगवन् भगवद्भक्तिर्क्षीरसागरचन्द्रमाः ! ।  
वेङ्कटेशस्य माहात्म्यं उक्तं सूत त्वयाऽनघ ! ॥ २

श्रीवाराहपुराणे प्रथमनागे ६२ तमोऽध्यायः १२७

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| विचित्रं तस्य चारित्रं औदार्यं निस्तुलं तथा ।       |    |
| रहस्यानि च नामानि सम्यगस्मान्निरेव हि ॥             | ३  |
| श्रोत्राभ्यां पीतमेतत्तु वेङ्कटेशकथाऽमृतम् ।        |    |
| तस्माच्चक्षुर्द्रव्यस्यापि पिपासा तु गरीयसी ॥       | ४  |
| अस्माँस्त्वमतुजानीहि सेवार्थं वेङ्कटेशितुः ।        |    |
| रहस्यानि च नामानि शेषादेश्च तदीशितुः ॥              | ५  |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थमाहात्यञ्च प्रकाशितम् ।         |    |
| अत्यद्भुतं हरेर्दिव्यं कलौ माहात्यमेव तु ॥          | ६  |
| श्रुतञ्च मुनिशार्दूल ! सम्यगस्मान्निरेव हि ।        |    |
| श्रोत्राभ्यां सम्यगपीतं वेङ्कटेशकथाऽमृतम् ॥'        | ७  |
| इत्युक्तस्तु ततः सूतः प्रोवाच मुनिपुङ्गवान् ।       |    |
| 'गच्छध्वं मुनयो यूयं शनैः श्रीवेङ्कटाचलम् ॥         | ८  |
| तत्र गत्वा गिरिं पुण्यं कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ।   |    |
| स्नात्वा पर्यन्ततीर्थेषु नत्वा पर्यन्तगान् सुरान् ॥ | ९  |
| आरुह्य रत्नसानुं तं शुककोविलमञ्जुलम् ।              |    |
| स्वामिपुष्करिणीं पद्मवनवातेन रञ्जिताम् ॥            | १० |
| प्राप्य स्नात्वा च तत्तीर्थं प्रदक्षिणविधानतः ।     |    |
| परिस्तृत्य विमानञ्च दर्शनात् पापनाशनम् ॥            | ११ |
| हृदयानन्दजननं पुलकोद्गमकारकम् ।                     |    |
| प्रविश्य भूवराहञ्च नत्वा श्रीवेङ्कटाधिपम् ॥         | १२ |
| श्रीभूमिभ्यां मुदा युक्तं शङ्खचक्रवरायुधे ।         |    |
| दधानं पुण्डरीकाक्षं स्मयमानमुखाब्जम् ॥              | १३ |
| दयाऽमृततरङ्गाब्धिमन्दसितमनेहरम् ।                   |    |
| सम्यग्दृष्ट्वा च नत्वा च स्तुत्वा नामानि रेव च ॥    | १४ |

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| अर्चयित्वा च कमलैः लब्ध्वाऽभीष्टञ्च दुर्लभम् ।    |    |
| कृतकृत्या विवर्तध्वं 'इत्युक्ता मुः यस्तथा ॥      | १५ |
| आमन्त्र्य सूतं ते सर्वे प्रहृष्टाश्च प्रतस्थिरे । |    |
| भरद्वाजः कौशिकश्च जाबालिरथ काश्यपः ॥              | १६ |
| क्रतुर्दक्षः पुलस्त्यश्च गौतमः पुलहस्तथा ।        |    |
| आङ्गीरसो देवलश्च देवदर्शन एव च ॥                  | १७ |
| कौत्सः कण्वो मृकण्डुश्च शतानन्दो महामुनिः ।       |    |
| मैत्रेयप्रमुखास्तत्र सङ्गता ये तपोधनाः ॥          | १८ |
| घुप्यन्तः सङ्घं श्रोत्रैः गोविन्देति पुनः पुनः ।  |    |
| तीर्त्वा भागीरथीं पश्चात् गौतमीं कृष्णवेणिकाम् ॥  | १९ |
| तत्र तत्र महानद्यां स्नात्वा स्नात्वा तपोधनाः ।   |    |
| वेङ्कटाद्रिं समागत्य तसज्जम्बूनदात्मकम् ॥         | २० |
| सर्वे तीर्थमयं पुण्यं सर्वसिद्धनिषेवितम् ।        |    |
| मदमञ्जुलमायूरकेकास्वनमनोहरम् ॥                    | २१ |
| दिव्यनिर्झरसम्पूर्णं फलपुष्पद्रुमैर्युतम् ।       |    |
| अनङ्गिर्मयं सूक्तोक्तसेवाक्रममिमे बुधाः ॥         | २२ |
| चक्रुः श्रीवेङ्कटेशस्य सेवां परमपावनीम् ।         |    |
| स्नानं मन्त्रैश्च कुर्वन्तो निर्झरेषु सरस्सु च ॥  | २३ |
| पश्यन्तस्तानि रम्याणि सानूनि मणिमन्ति च ।         |    |
| शृण्वन्तः श्रेत्ररम्याणि पक्षिणां वचनान्यपि ॥     | २४ |
| गायन्तः सामगानानि पठन्तः स्तुतिसञ्चयम् ।          |    |
| नृत्यन्तः सम्भ्रमात् सर्वे श्वेलन्तश्च तपोधनाः ॥  | २५ |
| उत्पतन्तः पतन्तश्च हर्षविशवशं गताः ।              |    |
| गिरिप्रदक्षिणं सम्यक् कुर्वन्तस्ते शनैः शनैः ॥    | २६ |



श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ६२ तमोऽध्यायः १२९

|                                                                                                                                                  |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| स्नात्वा कापिलतीर्थे च दृष्ट्वा नत्वा शिवं गिरिम् ।<br>आरुह्य मेरुशृङ्गाभं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ॥                                                 | २७ |
| ‘ अत्यद्भुतात् रत्नसानोः हेमाद्रेरद्भुतो गिरिः ।<br>अयं ह्यभूतपूर्वो हि श्रीमद्वेङ्कटभूधरः ’ ॥                                                   | २८ |
| इति ब्रुवन्तस्ते सर्वे ददृशुर्दिव्यमुत्तमम् ।<br>विमानं स्वामितीर्थे च स्नात्वा देवं श्रियःपतिम् ॥                                               | २९ |
| कोटिकन्दर्पलावण्यं विरीटमकुटोज्ज्वलम् ।<br>उरस्थितश्रियाऽऽक्रान्तमुक्तादामोपशोभितम् ॥                                                            | ३० |
| चतुर्भुजमुदाराङ्गं शङ्खचक्रधरं परम् ।<br>नीलमेघनिभं श्यामं पीतवाससमच्युतम् ॥                                                                     | ३१ |
| श्रीभूमिसहितं विष्णुं पद्मार्चितपदाम्बुजम् ।<br>प्रणमुः सहसा हृष्टाः हर्षोत्फुलविलोचनाः ।<br>तुष्टुवुर्वेदमन्त्रैश्च स्तोत्रैश्च श्रुतिसम्मतैः ॥ | ३२ |

### महर्षिकृतभगवत्स्तुतिः

मुनयः —

|                                                                                                   |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| ‘ यः पार्थिवानि गणयेत् रजांसि सुबहून्यपि ।<br>विष्णोर्वीर्याणि गणयेत् निश्शेषं स पुमान् हरेः ॥    | ३३ |
| त्रेधा च निदधे पादान् भूमौ विष्णुस्त्रिविक्रमः ।<br>धर्माश्च धारयन् यस्तु तस्मै ते विष्णवे नमः ॥  | ३४ |
| अत्यतिष्ठद्विधतो यो व्याप्य भूमिं दशाङ्गुलम् ।<br>भूतं भव्यञ्च यद्व्याप्तं तस्मै ते विष्णवे नमः ॥ | ३५ |
| पादो विश्वं त्रिपाट्योम यस्य तस्मै नमो नमः ।<br>ऋचः सामानि यस्मात्तु जज्ञिरे तुरगास्तथा ॥         | ३६ |

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| विप्रो मुखात् भुजात् राजा वैश्यश्चोर्वोरनन्तरम् ।    |    |
| शूद्रः पद्भ्यां मुखादग्निः इन्द्रश्च मनसो विधुः ॥    | ३७ |
| नेत्रात् सूर्योऽथ सञ्जज्ञे तस्मै ते ब्रह्मणे नमः ।   |    |
| इयत्तया गुणानां ते निवर्तन्ते न मानवाः ।             |    |
| बुद्धीनां किन्तु दौर्बल्यात्, वेदश्चापि तथैव भोः ' ॥ | ३८ |
| एवं तं बहुधा स्तुत्वा स्तोत्रैः श्राव्यैर्मनोहरैः ।  |    |
| आदाय पद्मपत्राणि श्रीपादं वेङ्कटेशितुः ॥             | ३९ |
| अर्चयामासुरव्यग्रं नामभिः सूतभाषितैः ।               |    |
| ततः प्रीतो जगद्धाता बभाषे वेङ्कटेश्वरः ॥             | ४० |
| ‘ तत्रैवं नैमिशारण्ये प्रीतोऽस्मि भवतामहम् ।         |    |
| वेङ्कटाचलमाहात्म्यश्रवणान्मुनयो बुधाः ॥              | ४१ |
| चिरकालतपोलभ्यं अपि दत्तं फलं मया ।                   |    |
| यद्यदिष्टं मुनीनान्तु भवतां दत्तमेव तत् ॥            | ४२ |
| वेङ्कटाद्रेस्तु माहात्म्यं बहुदूरस्थितोऽपि यः ।      |    |
| शृणोति वा श्रावयति पठेद्वा श्रद्धयाऽन्वितः ॥         | ४३ |
| कन्यामासे विशेषेण तस्याहं सुलभो ह्यहम् ।             |    |
| धनं धान्यं महीमिष्टां पुत्रान् पौत्रान् ददाम्यहम् ॥  | ४४ |
| ददामि सर्वान् कामांश्च देहान्ते मत्पदं तथा ' ।       |    |
| इति लब्ध्वा वरांस्ते तु तत्र वत्सरपञ्चकम् ॥          | ४५ |
| स्नात्वा सर्वेषु तीर्थेषु वेङ्कटाद्रौ तपोधनाः ।      |    |
| आश्चर्याप्यपि दृष्ट्वा ते सम्यगाराध्य माधवम् ।       |    |
| पुनश्च नैमिशारण्यं ययुः सर्वे तपोधनाः ॥              | ४६ |

सूतं प्रति शौनकादिस्तुतिः

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| गत्वा तु नैमिशारण्यं मुनिसङ्घनिषेवितम् ।           |    |
| उपसृत्य पुनः सूतं प्रोचुरेवमिदं वचः ॥              | ४७ |
| ‘अहो! तव तु विज्ञानं अहो! सामर्थ्यमेव ते ।         |    |
| यथोक्तं भवता विष्णोः वेङ्कटादिनिवासिनः ॥           | ४८ |
| रूपमौदार्यरूपञ्च गिरिरूपं तथैव च ।                 |    |
| स्थितं तथैव तत्सर्वं अहो! वेङ्कटभूधरः ॥            | ४९ |
| त्वत्प्रसादात् वयं सर्वे कृतार्थाः स्मो महामुने! । |    |
| संस्थानं वेङ्कटेशस्य गिरेस्तस्य च सर्वतः ॥         | ५० |
| दृष्टमेतत् त्वया किं वा श्रुतं वा सूत तन्मुने!’ ।  |    |
| इति स्तुतः ततः सूतः प्रोवाचेदं वचस्तदा ॥           | ५१ |
| व्यासस्यानुग्रहात् सर्वं वेद्मि तत्त्वं तपोधनाः ।  |    |
| वेङ्कटाचलमाहात्म्यं कल्पकोटिशतैरपि ॥               | ५२ |
| न शक्यं वर्षसाहस्रैः शेषाणाञ्च सहस्रकैः ।          |    |
| बक्तुं तथाऽपि माहात्म्यं कीर्तितं किञ्चिदेव हि ॥   | ५३ |
| पुण्यं पवित्रमायुष्यं माहात्म्यमिदमुत्तमम् ।       |    |
| यः पठेत्प्रयतो भक्त्या शृणुयाद्वा लिखेदपि ।        |    |
| सर्वान् कामान् अवाप्नोति सम्प्राप्नोति च मङ्गलम् ॥ | ५४ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये महर्षीणां श्रीवेङ्कटेश्वरसेवार्थं

श्रीवेङ्कटाचलगमनादिवर्णनं नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः

प्रथमो भगः समाप्तिमगमत्

॥ ॐ तत् सत् ॥

श्री वाराहपुराण प्रथमभागान्तर्गत समुदिताध्यायसंख्या — ३०.



श्रीरस्तु  
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः  
श्रियै पद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् ( श्रीवाराहपुराणद्वितीयभागान्तर्गतम् )

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥  
श्रीवेङ्कटाचलाधीशं श्रियाऽध्यासितवक्षसम् ।  
श्रितचेतनमन्दारं श्रीनिवासमहं भजे ॥

हरिः ॐ

प्रथमेऽध्यायः

नारदस्य सुमेरुशिखरस्थयज्ञवराहदर्शनम्

ऋषयः—

‘रौमहर्षण ! सर्वज्ञ ! पुराणार्थविशारद ! ।  
माहात्म्यं श्रोतुमिच्छामो गिरीन्द्राणां महीतले ।  
ब्रूहि त्वं नो महाभाग ! के प्रधाना महीवराः ?’ ॥ १

श्रीसूतः—

एतमेव पुरा प्रश्नं अपृच्छं जाह्नवीतटे ।  
व्यासं मुनिवरश्रेष्ठं सोऽब्रवीन्मे गुरुत्तमः ॥ २

व्यासः —

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| ‘पुरा देवयुगे सूत! नारदो मुनिसत्तमः ।          |    |
| सुमेरुशिखरं गत्वा नानारत्नसुशोभितम् ॥          | ३  |
| तन्मध्ये विपुलं दीप्तं ब्रह्मगो दिव्यमालयम् ।  |    |
| दृष्ट्वा तस्योत्तरे देशे पिप्पलद्रुममुत्तमम् ॥ | ४  |
| सहस्रयोजनोच्छ्रायं विस्तीर्णं द्विगुणं तथा ।   |    |
| तन्मूले मण्डपं दिव्यं नानारत्नसमन्वितम् ॥      | ५  |
| पद्मरागमणिस्तम्भैः सहस्रैः समलङ्कृतम् ।        |    |
| वैडूर्यमुक्तामणिभिः कृतस्वस्तिकमालिकम् ॥       | ६  |
| नवरत्नसमाकीर्णं दिव्यतोरणशोभितम् ।             |    |
| मृगपक्षिभिराकीर्णं नवरत्नमयैः शुभैः ॥          | ७  |
| पुष्परागमहाद्वारं सप्तभूमिकगोपुरम् ।           |    |
| सन्दीपवज्रसुकृतकवाटद्वयशोभितम् ॥               | ८  |
| प्रविश्याऽदौ ददर्शान्तः दिव्यमौक्तिकमण्डपम् ।  |    |
| वैडूर्यवेदिकं तुङ्गं आरुरोह महामुनिः ॥         | ९  |
| तन्मध्ये तुङ्गमतुलं वसुपादविराजितम् ।          |    |
| ददर्श मुक्तासङ्कीर्णं सिंहासनमहर्द्युति ॥      | १० |
| तन्मध्ये पुष्करं दिव्यं सहस्रदलशोभितम् ।       |    |
| स्थितं चन्द्रसहस्राभं कर्णिकाकिसरोज्ज्वलम् ॥   | ११ |
| तस्य मध्ये समासीनं पूर्णचन्द्रायुतप्रभम् ।     |    |
| कैलासपर्वताकारं सुन्दरं पुरुषाकृतिम् ॥         | १२ |
| चतुर्बाहुमुदाराङ्गं वराहवदनं शुभम् ।           |    |
| शङ्खचक्राभयवरान् बिभ्राणं पुरुषोत्तमम् ॥       | १३ |

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| पीताम्बरधरं देवं पुण्डरीकायतेक्षणम् ।          |    |
| पूर्णेन्दुसौम्यवदनं वपागन्धिमुखाम्बुजम् ॥      | १४ |
| सामध्वनिं यज्ञमूर्तिं सुक्तपुण्डं सुवनासिकम् । |    |
| क्षीरसागरसङ्काशं किरीटोज्ज्वलिताननम् ॥         | १५ |
| श्रीवत्सवक्षसं शुभ्रं यज्ञसूत्रविराजितम् ।     |    |
| कौस्तुभश्रीसमुद्द्योतं समुन्नतमहोरसम् ॥        | १६ |
| जाम्बूनदमयैर्दिव्यैः सुरत्नाभरणैर्युतम् ।      |    |
| विद्युन्मालापरिक्षितशरन्मेघमिवोज्ज्वलम् ॥      | १७ |
| वामपादतलाक्रान्तपादपीठविराजितम् ।              |    |
| कटकाङ्गदकेयूरकुण्डलोज्ज्वलितं सदा ।            | १८ |
| चतुर्मुखवसिष्ठात्रिमार्कण्डेयैर्मुनीश्वरैः ।   |    |
| भृगुवादिभिरनेकैश्च सेव्यमानमहर्निशम् ॥         | १९ |
| इन्द्रादिलोकपालैश्च गन्धर्वाप्सरसां गणैः ।     |    |
| सेवितं देवदेवेशं प्रणिपत्याभिगम्य च ॥          | २० |
| दिव्यैरुपनिषद्भागैः अभिष्टूय धराधरम् ।         |    |
| नारदः परमप्रीतः स्थितो देवस्य सन्निधौ ॥        | २१ |

### वराहसन्निधिं प्रति धरण्यागमनम्

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| एतस्मिन्नन्तरे चाभूत् दिव्यदुन्दुभिनिस्स्वनः । |    |
| ततः समागता देवी धरणी सखिसंयुता ॥               | २२ |
| सरत्नसागराकारदिव्याम्बरसमुज्ज्वला ।            |    |
| सुमेरुमन्दराकारस्तनभारावनामिता ॥               | २३ |
| नवदूर्वादलद्वयाभा सर्वाभरणभूषिता ।             |    |
| इडया वै पिङ्गलया सखीभ्याञ्च समन्विता ॥         | २४ |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे प्रथमोऽध्यायः १३५

ततस्ताभ्यां समानीतं पुष्पाणां निचयं मही ।  
श्रीमद्वाराहदेवस्य पादमूले विकीर्य च ॥ २५  
प्रणम्य देवदेवेशं कृताञ्जलिपुटा स्थिता ।  
तां देवीं श्रीवराहोऽपि ह्यालिङ्गचाङ्के निधाय च ।  
पप्रच्छ कुशलं पृथ्वीं प्रीतिप्रवणमानसः ॥ २६

### ध० णीवराहसंवादः

श्रीवराहः ---

‘त्वां निवेक्ष्य महीदेवि ! शेषशीर्षे सुखावहे ।  
लोकं त्वयि निवेक्ष्यैव त्वत्सहायान् धराधरान् ।  
इहागतोऽस्म्यहं देवि किमर्थं त्वमिहागता ? ’ ॥ २७

‘मां समुद्धृत्य पातालात् सहस्रफणशोभिते ।  
रत्नपीठ इवोत्तुङ्गे सरत्नेऽनन्तमूर्धनि ॥ २८  
कृत्वा मां सुस्थिरां देव ! धरां श्वापि न्यवेक्ष्ययः ।  
मद्भारणक्षमान् पुण्यान् त्वन्मयान् पुरुषोत्तम ! ।  
तेषु मुख्यान् महाबाहो ! मदाधारान् वदस्व मे ’ ॥ २९

### शेषाचलस्य सर्वपर्वतातिशायित्ववर्णनम्

श्रीवराहः---

सुमेरुः हिमवान् विन्ध्यो मन्दरो गन्धमादनः ।  
सालग्रामः चित्रकूटो माल्यवान् पारियात्रकः ॥ ३०  
महेन्द्रो मलयः सद्यः सिंहाद्रिरपि रैवतः ।  
मेरुपुत्रोऽञ्जनो नाम शैलः स्वर्णमयो महान् ॥ ३१

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| एते शैलवराः सर्वे त्वदाधारा वसुन्धरे ! ।             |    |
| ये मया देवसङ्घैश्च ऋषिसङ्घैश्च सेविताः ॥             | ३२ |
| एतेषु प्रवरान् वक्ष्ये तत्त्वतः शृणु माधवि ! ।       |    |
| सालग्रामश्च सिंहाद्रिः शैलेन्द्रो गन्धमादनः ॥        | ३३ |
| एते शैलवरा देवि ! दिशं हैमवतीं श्रिताः ।             |    |
| दक्षिणस्यां प्रतीतांस्तु वक्ष्ये शैलान् वसुन्धरे ! ॥ | ३४ |
| अरुणाद्रि हस्तिशैलो गृध्राद्रिः घटिकाचलः ।           |    |
| एते शैलवराः सर्वे क्षीरनद्याः समीपगाः ॥              | ३५ |
| हस्तिशैलादुत्तरतः पञ्चयोजनमात्रतः ।                  |    |
| सुवर्णमुखरी नाम नदीनां प्रवरा नदी ॥                  | ३६ |
| तस्या एवोत्तरे तीरे कमलाख्यः सरोवरः ।                |    |
| तत्तीरे भगवान् आस्ते शुक्लस्य वरदो हरिः ॥            | ३७ |
| बलभद्रेण संयुक्तः कृष्णो भक्तार्तिनाशनः ।            |    |
| वैखानसैः मुनिगणैः नित्यमाराधितोऽमलैः ॥               | ३८ |
| कमलाख्यस्य सरस उत्तरे काननोत्तमे ।                   |    |
| कोशद्वयार्थमात्रे तु हरिचन्दनशोभिते ॥                | ३९ |
| श्रीवेङ्कटाचलो नाम बासुदेवालयो महान् ।               |    |
| सप्तयोजनविस्तीर्णः शैलेन्द्रो योजनोच्छ्रितः ॥        | ४० |
| अस्ति स्वर्णमयो देवि ! रत्नसानुभृदायतः ।             |    |
| इन्द्राद्या दैवतगणा वसिष्ठाद्या मुनीश्वराः ॥         | ४१ |
| सिद्धाः साध्याश्च मरुतो दानवा दैत्यराक्षसाः ।        |    |
| रम्भाद्या अप्सरस्सङ्घा वसन्ति नियतं धरे ॥            | ४२ |
| तपश्चरन्ति नागाश्च गरुडाः किन्नरास्तथा ।             |    |
| एतैरधिष्ठितास्तत्र सरितः पुण्यदर्शनाः ॥              | ४३ |



श्रीवराहपुराणे द्वितीयभागे प्रथमोऽध्यायः १३७

सरांसि विविधान्यत्र सन्ति दिव्यानि माधवि ! ।  
तीर्थानाञ्चैव सर्वेषां शृणुष्व प्रवराणि वै ॥ ४४

स्वामिपुष्करिण्याः सर्वतीर्थातिशायित्ववर्णनम्

चक्रतीर्थं दैवतीर्थं वियद्गङ्गा तथैव च ।  
कुमारधारिकातीर्थं पापनाशनमेव च ॥ ४५  
पाण्डवं नाम तीर्थञ्च स्वामिपुष्करिणी तथा ।  
सप्तैतानि वराण्याहुः नारायणगिरौ शुभे ॥ ४६  
एतेषु प्रवरा देवि ! स्वामिपुष्करिणी शुभा ।  
अस्यास्तु पश्चिमे तीरे निवसामि त्वथा सह ॥ ४७  
आस्तेऽस्या दक्षिणे तीरे श्रीनिवासो जगत्पतिः ।  
गङ्गाद्यैः सकलैर्स्तार्थैः समा सा सागराम्बरे ! ॥ ४८  
त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि सरांसि सरितस्तथा ।  
तेषां स्वामित्वमापन्नं धरे ! स्वामिसरोवरम् ॥ ४९  
स्वामिपुष्करिणीं पुण्यां सेवितुं दिव्यभूधरे ।  
वसन्ति सर्वतीर्थानि तेषां सङ्ख्यां वदामि ते ॥ ५०  
षट्षष्टिकोटितीर्थानि पुण्येऽस्मिन् भूधरोत्तमे ।  
तेषु चात्यन्तमुत्ख्यानि षट् तीर्थानि वसुन्धरे ! ॥ ५१  
पञ्चानां तीर्थराजानां तुम्बो गर्भसमो महान् ।  
गर्भवासभयध्वंसी स्नातानां भूधरोत्तमे ॥ ५२

धरणी —

षट् तीर्थानि महाबाहो ! त्वयोक्तानि महीधरे ।  
माहात्म्यं वद तेषां मे यथाकालं यथाविधि ।  
फलानि तेषु स्नातानां नराणां वद भूधरे ॥ ५३

श्रीवराह. —

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| ‘ नारायणाद्रिमाहात्म्यं वदामि शृणु माधवि ।     |    |
| देवाश्च ऋषयश्चैव योगिनः सनकादयः ॥              | ५४ |
| कृतेऽञ्जनाद्रिं त्रेतायां नारायणगिरिं तथा ।    |    |
| द्वापरे सिंहशैलश्च कलौ श्रीवेङ्कटाचलम् ॥       | ५५ |
| प्रवदन्तीह विद्वांसः परमात्माऽऽलयं गिरिम् ।    |    |
| योजनानां सहस्रान्ते द्वीपान्तरगतोऽपि वा ॥      | ५६ |
| यो नमेत् भूधरेन्द्रं तद्दिशमुद्दिश्य भक्तितः । |    |
| सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥      | ५७ |
| तस्मिन् षट्तीर्थमाहात्म्यं यथाकालं वदामि ते ।  |    |
| शृणुध्वावहिता भद्रे ! सर्वपापप्रणाशनम् ॥       | ५८ |

## कुमारधारामाहात्म्यम्

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| कुम्भसंस्थे रवौ माघे पौर्णमास्यां महातिथौ ।        |    |
| मघानक्षत्रयुक्तायां भूधरेन्द्रे वसुन्धरे ! ॥       | ५९ |
| कुमारधारिका नाम सरसी लोकपवनी ।                     |    |
| यत्नाऽऽस्ते पार्वतीसूनुः कार्तिकेयोऽग्निसम्भवः ॥   | ६० |
| देवसेनासमायुक्तः श्रीनिवासार्चकोऽमले ।             |    |
| तस्यां यः स्नाति मध्याह्ने तस्य पुण्यफलं शृणु ॥    | ६१ |
| गङ्गादिसर्वतीर्थेषु यः स्नाति नियमात् धरे ! ।      |    |
| द्वादशाब्दं जगद्वात्रि ! तत्फलं समवाप्नुयात् ॥     | ६२ |
| योऽन्नं ददाति तत्तीर्थं शक्त्या दक्षिणयाऽन्वितम् । |    |
| स तावत् फलमाप्नोति स्नाने तूक्तं फलं यथा ॥         | ६३ |

श्रीवराहपुराणे द्वितीयभागे प्रथमोऽध्यायः १३९

### तुम्बतीर्थमाहात्म्यम्

मीनसंस्थे सवितरि पौर्णमासीतिथौ धरे ! ।  
उत्तराफाल्गुनीयुक्ते चतुर्थे कालसत्तमे ॥ ६४  
पञ्चानामपि तीर्थानां तुम्बेऽथ गिरिगह्वरे ।  
यः स्नाति मनुजो देवि ! पुनर्गर्भे न जायते ॥ ६५

### आकाशगङ्गामाहात्म्यम्

अग्निवाहस्थिते भानौ चित्रानक्षत्रसंयुते ।  
पूर्णिमाख्ये तिथौ पुण्ये प्रातःकाले तथैव च ।  
आकाशगङ्गासरिति स्नातो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ ६६

### पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम्

वृषभस्थे रवौ राधे द्वादश्यां रविवासरे ।  
शुक्ले वाप्यऽथ वा कृष्णे पक्षे भौमसमन्विते ॥ ६७  
तीर्थे पाण्डवनाम्यत्र सङ्गवे स्नाति यो नरः ।  
नेह दुःखमवाप्नोति परत्र सुखमश्नुते ॥ ६८

### पापनाशनतीर्थमाहात्म्यम्

शुक्ले पक्षेऽथ वा कृष्णे याङ्कवारेण सप्तमी ।  
युक्ता पुण्यक्षसंयुक्ता हस्तक्षेण युताऽपि वा ॥ ६९  
तस्यां तिथौ महाभागे पापनाशनसंज्ञके ।  
तीर्थे यः स्नाति नियमात् भूधरेन्द्रस्य मस्तके ॥ ७०

कोटिजन्मार्जितैः पापैः मुच्यते स नरोत्तमः ।  
शृणु देवि ! परं गुह्यमनन्ताख्ये महागिरौ ॥

७१

### देवतीर्थमाहात्म्यम्

महिव्याल्यवायव्ये शिखरे गिरिगह्वरे ।  
देवतीर्थमिति ख्यातं तटाकमतिशोभनम् ॥ ७२  
तस्मिन् पुण्यतमे देवि स्नानकालं वदामि ते ।  
गुरुपुण्ये व्यतीपाते सोमश्रवणके तथा ॥ ७३  
दिनेष्वेतेषु यः स्नाति तस्य पुण्यफलं शृणु ।  
यानि कानीह पापानि ज्ञानाज्ञानकृतानि च ॥ ७४  
तानि सर्वाणि नश्यन्ति देवतीर्थेऽतिपावने ।  
पुण्यान्यपि च वर्धन्ते देवतीर्थनिमज्जनात् ॥ ७५  
दीर्घमायुरवाप्नोति पुत्रपौत्रसमन्वितः ।  
अन्ते स्वर्गं समासाद्य चन्द्रलोके महीयते ॥ ७६  
तद्दिनेष्वन्नदो देवि ! यावज्जीवान्नदो भवेत् ।  
अतिगुह्यतमं देवि ! प्रोक्तं तुभ्यं वसुन्धरे ! ॥ ७७  
श्रुत्वाऽथ पृथिवी देवी प्रीतिप्रवणमानसा ।  
इष्टाभिर्वाग्भिरतुलं तुष्टाव धरणीधरम् ॥ ७८

### धरणीकृतवराहस्तुतिः

धरणी —

“ नमस्ते देवदेवेश वराहवदनाऽच्युत ! ।  
क्षीरसागरसङ्काश ! वज्रशृङ्ग ! महाभुज ! ॥

७९

श्रीवराहपुराणे द्वितीयभागे प्रथमोऽध्यायः १४१

उद्धृताऽस्मि त्वया देव ! कल्पादौ सागराम्भसः ।  
सहस्रबाहुना विष्णो ! धारयामि जगन्त्यहम् ॥ ८०  
अनेकदिव्याभरण ! यज्ञसूत्रविराजित ! ।  
अरुणारुणाम्बरधर दिव्यरत्नविभूषित ! ॥ ८१  
उद्यद्भानुप्रतीकाशपादपद्म ! नमो नमः ।  
बालचन्द्राभदंष्ट्राग्र ! महाबलपराक्रम ! ॥ ८२  
दिव्यचन्दनलिप्ताङ्ग ! तप्तकाञ्चनकुण्डल ! ।  
इन्द्रनीलमणिद्योतिहेमाङ्गदविभूषित ! ॥ ८३  
वज्रदष्ट्राग्रनिर्भिन्नहिरण्याक्ष ! महाबल ! ।  
पुण्डरीकाभिताम्राक्ष ! सामस्वनमनोहर ! ॥ ८४  
श्रुतिसीमन्तभूषात्मन् ! सर्वात्मन् ! चारुविक्रम ! ।  
चतुराननशम्भुभ्यां वन्दिताऽऽयतलोचन ! ॥ ८५  
सर्वविद्यामयाकार ! शब्दातीत ! नमो नमः ।  
आनन्दविग्रहानन्त ! कालकाल ! नमोनमः ॥ ८६  
इति स्तुत्वाऽचला देवी वन्दे पादयोर्विशुम् ॥ ८७

वराहस्य भगवतो धरण्या साकं शेषाचलागमनम्

वन्दमानां समुद्रीक्ष्य प्रीत्युत्फुल्लविलोचनः ।  
उद्धृत्य धरणीं देवीं आलिलिङ्गं च बाहुभिः ॥ ८८  
आघ्राय धरणीवक्त्रं वामाङ्के सन्निवेश्य च ।  
आरुह्य गरुडेशानं जगाम वृषभाचलम् ॥ ८९  
मुनीन्द्रैः नारदाद्यैश्च स्तूयमानो महीपतिः ।  
स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्चिमे लोकपूजिते ॥ ९०  
तदाद्यैः तैः श्रीवराहो मुनीन्द्रैः तत्र पूजितः ।  
वैखानसैः महाभागैः ब्रह्मतुल्यैः महात्मभिः ॥ ९१

## अध्यायफलश्रुतिः

व्यासः—

‘ तद्दृष्ट्वा नारदः सूत ! मुनीनामुक्तवान् पुरा ।  
 तदेतदहमश्रौषं तत्र वै मुनिसंसदि ॥ ९२  
 यत्पृष्टोऽहं त्वया सूत माहात्म्यं धरणीभृताम् ।  
 मया तूक्तं यथावद्धि नारदाच्च पुरा श्रुतम् ॥ ९३  
 य इदं धर्मसंवादं आवयोः सूत ! पावनम् ।  
 पठेद्वा देवपुरतो ब्राह्मणानां पुरस्तथा ॥ ९४  
 सर्वेषामपि वर्णानां शृण्वतां भक्तिपूर्वकम् ।  
 स प्रतिष्ठामवाप्नोति पुत्रपौत्रसमन्वितः ।  
 शृण्वतामपि सर्वेषां यदिष्टं तद्भविष्यति ’ ॥ ९५

श्रीसूतः—

‘ इति मे भगवान् व्यासः प्रोवाच मुनिसेवितः ।  
 यथाश्रुतं मया पूर्वं कृष्णद्वैपायनाद्गुरोः ॥ ९६  
 तत्तथा सर्वमेवात्र मयाऽप्युक्तं मुनीश्वराः ! ’ ।  
 श्रुत्वा सूतवचस्त्वत्थं ते प्रीतमनसोऽभवन् ॥ ९७

ऋषयः—

सूत ! त्वयोक्तं भुवि पर्वतेषु पुण्येषु पुण्यस्य महीधरस्य ।  
 माहात्म्यमस्माकमहीन्द्रनाम्नः पापापहं मोक्षफलप्रदायकम् ॥९८  
 ततो वृषाद्रिं सम्प्राप्य वराहो धरणीयुतः ।  
 किमुक्तवान् धरण्यै स तन्नो ब्रूहि महामते ! ’ ॥ ९९

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 उत्तरभागे नारदस्य सुमेरुशिखरस्थयज्ञवराहदर्शनप्राप्त्यादिवर्णनं

नाम प्रथमोऽध्यायः



अथ द्वितीयोऽध्यायः

### श्रीवराहमन्तराधनविधिः

श्रीसूतः —

शृणुध्वं मुनयः सर्वे कथां पुण्यां पुरातनीम् ।  
वैवस्वतेऽन्तरे पूर्वं कृते पुण्यतमे युगे ॥ १  
नारायणाद्रौ देवेशं निवसन्तं क्षमापतिम् ।  
वराहरूपिणं देवं धरणीं सखिभिर्वृता ।  
प्रणम्य परिपप्रच्छ रक्तपद्मायतेक्षणम् ॥ २

धरणी —

‘आराध्यः केन मन्त्रेण भवान् प्रोतो भविष्यति ।  
तं मे वद त्वं देवेश ! यः प्रियो भवतः सदा ॥ ३  
जपतां सर्वसम्पत्तिकारकं पुत्रपौत्रदम् ।  
सार्वभौमत्वदश्चैव कामिनां कामदं सदा ॥ ४  
अन्ते यस्त्वत्पदप्राप्तिं ददाति नियताऽत्मनाम् ।  
एवंभूतं वद प्रीत्या मयि वाराह मानद ! ’ ॥ ५

श्रीसूतः —

इति पृष्टस्तथा भूम्या प्राह प्रीतिस्मिताननः ॥ ६

श्रीवराहः —

‘शृणु देवि परं गुह्यं सद्यः सम्पत्तिकारकम् ।  
भूमिदं पुलदं गोप्यं अप्रकाश्यं कदाचन ॥ ७  
किञ्च शुश्रूषवे वाच्यं भक्ताय नियतात्मने ।  
“ ॐ नमः श्रीवराहाय धरण्युद्धरणाय च ॥ ८

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| वह्निजायासमायुक्तः ” सदा जप्यो मुमुक्षुभिः ।       |    |
| अयं मन्त्रो धरादेवि ! सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥         | ९  |
| ऋषिः सङ्कर्षणः प्रोक्तो, देवता त्वहमेव हि ।        |    |
| छन्दः पङ्क्तिः समाख्याता श्रीं बीजं समुदाहृतम् ॥   | १० |
| चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं सद्गुरोर्लब्धतन्मनुः ।     |    |
| जुहुयात्पायसान्नं वै क्षौद्रसर्पिःसमन्वितम् ॥      | ११ |
| अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि मनःशुद्धिप्रदायकम् ।        |    |
| “ शुद्धस्फटिकशैल्यमं रक्तपद्मदलेक्षणम् ॥           | १२ |
| वराहवदनं सौम्यं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ।             |    |
| श्रीवत्सवक्षसं चक्रशङ्खाभयकराम्बुजम् ॥             | १३ |
| वामोरुस्थितया युक्तं त्वया मां सागराम्बरे ।        |    |
| रक्तपीताम्बरधरं रक्ताऽभरणभूषितम् ॥                 | १४ |
| श्रीकूर्मपृष्ठमध्यस्थशेषमूर्त्यब्जसंस्थितम् ” ।    |    |
| एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सदा चाष्टोत्तरं शतम् ॥   | १५ |
| सर्वान् कामानवाप्नोति मोक्षञ्चान्ते व्रजेद्भुवम् । |    |
| प्रोक्तं मया ते धराणि ! यत्पृष्टोऽहं त्वयाऽमले ! । |    |
| अतः किं ते व्यवसितं ब्रूहि तत् विमलनने ! ’ ॥       | १६ |

### श्रीवराहमन्त्रेण धर्मादीनां स्वाभीष्टसिद्धिवर्णनम्

श्रीसूतः —

|                                                       |    |
|-------------------------------------------------------|----|
| एतच्छ्रुत्वा ततो भूमिः पप्रच्छ पुनरेव तम् ।           |    |
| ‘ केनैवानुष्ठितं देव ! पुरा प्राप्तं फलञ्च विम् ? ’ ॥ | १७ |
| इति पृष्ठः पुनर्देवः श्रीवराहोऽब्रवीदिदम् ।           |    |
| ‘ पुरा कृतयुगे देवि धर्मो नाम मनुः महान् ॥            | १८ |



श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे तृतीयोऽध्यायः १४५

ब्रह्मणोऽमुं मनुं लब्ध्वा जप्त्वाऽस्मिन् धरणीधरे ।  
मां च दृष्ट्वा वरं लब्ध्वा प्रातोऽभूत् मामकं पदम् ॥ १९  
इन्द्रो दुर्वाससः शापात् पुरा अष्टः त्रिविष्टपात् ।  
अनेनेष्टाऽल मां देवि पुनः प्राप्तः त्रिविष्टपम् ॥ २०  
अन्येऽपि मुनयो भूमे ! जप्त्वा प्राप्ताः परां गतिम् ।  
अनन्तः पन्नगाधीशो ह्यमुं लब्ध्वाऽथ कश्यपात् ॥ २१  
श्वेतद्वीपे जपित्वैव बभूव धरणीधरः ।  
तस्माज्जप्यः सदा चेह मनुष्यैश्च धरार्थिभिः ॥ २२

श्रीसूतः—

एतच्छ्रुत्वाऽथ सुप्रीता पुनः प्राह धराधरम् ॥ २३

धरणी—

‘वेङ्कटाख्ये महाशैले श्रीनिवासो जगत्पतिः ।  
कदा ह्यायाति देवेशः श्रीभूमिसहितोऽमलः ? ॥ २४  
कथं कल्पान्तरस्थायी भविष्यति जनार्दनः ? ।  
एतद् ब्रूहि वराहात्मन् ! महत् कौतूहलं मम ’ ॥ २५

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलब्रह्माहात्म्ये  
उत्तरार्धे श्रीवराहमन्त्राराधनविध्यादिवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः



अथ तृतीयोऽध्यायः

अगस्त्यप्रार्थनया भगवतः सर्वजनदृग्गोचरत्ववर्णनम्

श्रीवराहः—

‘हन्त ! ते कथयिष्यामि पुरा वृत्तं वरानने ! ।  
शृणु पुण्यं महादेवि ! सभविष्यं सहोत्तरम् ॥

१

|                                                |   |
|------------------------------------------------|---|
| वैवस्वतेऽन्तरे देवि ! पूर्वे कृतयुगान्तरे ।    |   |
| वायोस्तपो महद्दृष्ट्वा श्रीभूमिसहितोऽनघे ॥     | २ |
| आगच्छत् श्रीनिवासश्च स्वामिपुष्करिणीतटे ।      |   |
| दक्षिणेऽस्मिन् पुण्यतमे विमाने नन्दसंज्ञके ॥   | ३ |
| वसिष्यति च श्रीकान्तो वायोः प्रियकरो हरिः ।    |   |
| तदारभ्य हृषीकेशः सेनान्याऽऽराधितोऽनिशम् ।      |   |
| आकल्पान्तमदृश्येऽस्मिन् विमानेऽसौ वसिष्यति ' ॥ | ४ |

धरणि—

|                                                   |   |
|---------------------------------------------------|---|
| ‘ अदृश्यो भगवान् मर्त्यैः कथं दृश्यो भविष्यति ? । |   |
| श्रीनिवासोऽपि देवेशो भवद्वक्षिणपार्श्वर्गः ।      |   |
| एतद्वद सुराधीश ! जनैराराध्यते कथम् ? ’ ॥          | ५ |

श्रीवराह —

|                                                       |    |
|-------------------------------------------------------|----|
| ‘ अगस्त्योऽस्मिन् समासाद्य पुरा देवं सनातनम् ।        |    |
| आराध्य द्वादशाब्दं तं प्रीणयित्वा पुनः पुनः ॥         | ६  |
| ययाच्चे तत्र सान्निध्यं ‘ भवान् दृश्यो भव ’ त्विति ।  |    |
| एवमुक्तो हृषीकेशः श्रीभूमिसहितो धरे ! ॥               | ७  |
| ‘ अहं दृश्यो भविष्यामि त्वत्कृते सर्वदेहिनाम् ।       |    |
| एतद्विमानं देवर्षे न दृश्यं स्यात् कदाचन ॥            | ८  |
| आकल्पान्तं मुनीन्द्रास्मिन् दृश्योऽहं नात्र संशयः ’ । |    |
| मुनिस्तद्वचनं श्रुत्वा प्रीतः प्रायात् स्वमाश्रमम् ॥  | ९  |
| ततश्चतुर्भुजो देवः स दृश्योऽभून्नरादिभिः ।            |    |
| विमाने मुनिचिन्त्येऽस्मिन् आसिता च तथोत्तरम् ॥        | १० |
| आराध्यमानः स्कन्देन वायुना सेवितः सदा ।               |    |
| एवं गते महाकाले चतुर्युगसमन्विते ॥                    | ११ |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे तृतीयोऽध्यायः १४७

**मित्रवर्मणः आकाशराजाख्यसुतोत्पत्तिवर्णनम्**

अष्टाविंशे तु सञ्जाते द्वापरान्ते वसुन्धरे ! ।  
युद्धे च भारतेऽतीते तिष्ये सति युगे तथा ॥ १२  
विक्रमार्कादयो भूपाः शकाः शूद्रादयस्तथा ।  
गमिष्यन्ति स्वर्गलोकं मामज्ञात्वा वरानने ! ॥ १३  
ततः सोमकुलोद्भूतो मित्रवर्मा महारथः ।  
तुण्डीरमण्डले राजा नारायणपुरे वसन् ॥ १४  
भविष्यति वरारोहे ! महाभाग्योदयो महान् ।  
तस्मिन् शासति भूलोकं धर्मेण पृथिवीपतौ ॥ १५  
अकृष्टपत्न्या पृथिवी सर्वसत्यविभूषणा ।  
निरीतिकोऽभवत् सर्वो जनो धर्मसमन्वितः ॥ १६  
तस्य पत्नी समभवत् पाण्ड्यकन्या मनोरमा ।  
तस्य जज्ञे कुलोत्तंसो वियन्नामा सुतोऽस्य वै ॥ १७  
तस्य पत्नी तु धरणी नाम्नाऽऽसीच्छलकवंशजा ।  
तस्मिन् राज्यं विनिक्षिप्य मित्रवर्मा नृपोत्तमः ।  
ययौ तपोवनं पुण्यं वेङ्कटद्रेः समीपतः ॥ १८

**धरणीतलात् पद्मावत्युत्पत्तिक्रमः**

आकाशनामा तु महान् राजाऽभूत् सार्वभौमकः ।  
एकद्वारव्रतो राजा धरणीसक्तचेतनः ॥ १९  
यज्ञार्थं शोधयामास भुवमारणितीरतः ।  
काञ्चनेन हलेनैव कृष्यमाणे धरातले ॥ २०

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| बीजमुष्टिं विकिरता दृष्टा कन्या धरोद्धता ।           |    |
| पद्मशय्यागता रम्या सर्वलक्षणलक्षिता ॥                | २१ |
| तप्तजाम्बूनदमयी पुत्रिकेव विराजती ।                  |    |
| तां दृष्ट्वा स महीपालो विस्मयोत्फुल्लोचनः ॥          | २२ |
| आदाय 'तनया चेयं ममै' वेति पुनः पुनः ।                |    |
| जहर्ष मन्त्रिभिश्चैनं प्राह वागशरीरिणी ॥             | २३ |
| 'सत्यं तवैव तनया वर्धयस्व सुलोचनाम्' ।               |    |
| ततः प्रीतमना राजा स्वपुरं प्रविवेश ह ॥               | २४ |
| आहूय धरणीं देवीं इदमाह महीपतिः ।                     |    |
| 'देवदत्तामिमां पश्य भूतलादुत्थितां मम ॥              | २५ |
| आवाभ्यां तदपुत्राभ्यां पुत्रीयं भविता ध्रुवम्' ।     |    |
| इत्युक्त्वा प्रददौ देव्या हस्ते प्रीत्या वियन्नृपः ॥ | २६ |

आकाशराजस्य धरण्याख्यपत्न्यां वसुदानाख्यसुतोत्पत्तिः

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| तस्यां गृहं प्रविष्ट्यां धरणी गर्भमादधौ ।       |    |
| वियन्नृपश्च सुप्रीतो वीक्ष्य स्निग्धविलोचनाम् । |    |
| उवाच 'फलिता सुभ्रु ! लता सान्तानिकी च मे' ॥     | २७ |
| अथ सा धरणीदेवी काले कमललोचना ।                  |    |
| सुप्रशस्ते मुहूर्ते च स्वोच्चसंस्थेषु पञ्चसु ॥  | २८ |
| ग्रहेषु सुषुप्ते पुत्रं मेघस्थे च दिशकरे ।      |    |
| देवदुन्दुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिः गृहेऽपतत् ॥     | २९ |
| ववौ वायुः सुखस्पर्शः तज्जन्मदिवसे तदा ।         |    |
| पुत्रसूतिप्रवक्तृणां सुप्रीतः पुत्रजन्मनि ॥     | ३० |

श्रीवराहपुराणे द्वितीयभागे चतुर्थोऽध्यायः १४९

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| सर्वस्वदानमकरोत् छत्रचामरवर्जितम् ।              |    |
| कपिलकोटिदानञ्च वृषभाणां शताधिकम् ॥               | ३१ |
| दिवसे द्वादशे पुण्ये जातकर्मादिकाः क्रियाः ।     |    |
| चकार नामधेयञ्च 'वसुदान' इति स्वयम् ॥             | ३२ |
| आकाशतनयो देवि ! वसुदानो मनोरमः ।                 |    |
| ववृधे दिवसैर्बालः शुक्लपक्ष इवोडुराट् ॥          | ३३ |
| उपनीतो चिनीतोऽसौ गुरुभिः ब्रह्मपारगैः ।          |    |
| पितुरस्त्राणि शस्त्राणि मन्त्रवत् सोऽप्यशिक्षत ॥ | ३४ |
| चतुष्पादं धनुर्वेदं साङ्गोपाङ्गमधीतवान् ।        |    |
| पिता तेनातिबलिना दुराधर्षः परैरभूत् ॥            | ३५ |
| आकाश इव निष्पङ्को ग्रीष्मे भानुमता युतः ।        |    |
| वैशाख इव मध्याह्ने दुःसहो दुर्निरीक्षकः ' ॥      | ३६ |

इति श्रीवराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
उत्तरार्धे अगस्त्यप्रार्थनया भगवतः सर्वजनदृग्गोचरत्वादिवर्णनं  
नाम तृतीयोऽध्यायः

अथ चतुर्थोऽध्यायः

उद्यानवासिन्याः पद्मावत्याः समीपे नारदागमनम्

' उक्तं भगवता तस्य वियत्पुत्रस्य नाम च ।  
अयोनिजायास्तत्पुत्र्याः किं नाम च तदाऽकरोत् ' ॥ १

श्रीमत्तः

इति पृष्ठः पुनः प्राह श्रीवराहो जगत्पतिः ।

श्रीवराहः —

|                                             |   |
|---------------------------------------------|---|
| ‘ आकाशराजो मतिमांस्तां दृष्ट्वा कमलेशयाम् ॥ | २ |
| पद्मिनी ’ ति च नाम्ना वै चकार वसुधासुताम् । |   |
| तां तुं यौवनसम्पन्नां सखीभिः परिवारिताम् ॥  | ३ |
| आरामे विहरन्तीञ्च शुककोकिलनादिते ।          |   |
| यदृच्छयाऽऽगतस्तत्र नारदो मुनिसत्तमः ।       |   |
| वनलक्ष्मीमिवालोक्य विस्मयादिदमब्रवीत् ॥     | ४ |

नारदः —

|                                                      |   |
|------------------------------------------------------|---|
| ‘ काऽसि कस्य सुता भीरु ! हस्तं दर्शय मे तव ’ ।       |   |
| इत्युक्ता सा सुचार्वाङ्गी स्वात्मानं मुनयेऽब्रवीत् ॥ | ५ |
| ‘ वियद्राजसुता ब्रह्मन् लक्षणानि वदस्व मे ’ ।        |   |
| इत्युक्तः स तदा प्राह नारदो मुनिसत्तमः ॥             | ६ |

नारदोदीरितपद्मावतीशरीरलक्षणानि

नारदः —

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| ‘ शृणु त्वं चारुवदने लक्षणानि वदामि ते ।       |    |
| पादौ प्रतिष्ठितौ सुभ्रु ! रक्तपद्मदलान्वितौ ॥  | ७  |
| पादाङ्गुल्यः समा रक्ता रक्ततुङ्गनखान्विताः ।   |    |
| गुल्फौ गूढौ समावेतौ जङ्घे चारोमशे शुभे ॥       | ८  |
| जानुनी समसुस्त्रिगुणे समावूरू क्रमादुरू ।      |    |
| नितम्बौ पृथुलौ पीनौ जघनं चिन्त्यमेव हि ॥       | ९  |
| नाभिर्मण्डलवान् निम्नः पार्श्वौ ते मेचकावुभौ । |    |
| त्रिवलीललितं मध्यं रोमराजिविराजितम् ॥          | १० |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे चतुर्थोऽध्यायः १५१

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| स्तनौ पीनौ घनौ स्निग्धवृक्षतौ ममचूचुकौ ।            |    |
| करौ ते रक्तपद्माभौ पद्मरेखासमन्वितौ ॥               | ११ |
| सुसूक्ष्मौ रक्तसत्पर्वनिरन्तरसमाङ्गुली ।            |    |
| शुकतुण्डसमाकारनखपङ्क्तिविराजितौ ॥                   | १२ |
| दीर्घौ च कोमलौ मद्रे भुजौ ते पुष्पदण्डवत् ।         |    |
| पृष्ठं ते वेदिवद्भाति विलम्बमृजुमध्यमम् ॥           | १३ |
| कण्ठस्तु रक्तो दीर्घश्च स्कन्धौ चावनतौ शुभे ।       |    |
| मुखं प्रसन्नं सततमकलङ्कशशिप्रभम् ॥                  | १४ |
| कपोलौ कनकादर्शसदृशौ कुण्डलोज्ज्वलौ ।                |    |
| तिलपुष्पसमाकारा नासिका ते शुभानने ॥                 | १५ |
| अकलङ्काष्टमीचन्द्रसदृशोऽतिमनोहरः ।                  |    |
| दृश्यतेऽयं ललाटस्ते नीलालकसुशोभितः ॥                | १६ |
| मूर्धा ते समवृत्तश्च स्निग्धाऽऽयतकचान्वितः ।        |    |
| स्मितसंशोभिदशनं बिम्बाधरसमन्वितम् ॥                 | १७ |
| मुखं ते विष्णुयोग्यं स्यादिति मे निश्चिता मतिः ।    |    |
| नाभिस्ते दक्षिणावर्त आवर्त इव गाङ्गजः ।             |    |
| त्वं हि क्षीराब्धिसम्भूता लक्ष्मीरिव हि दृश्यसे ' ॥ | १८ |

श्री वराहः—

|                                                  |   |
|--------------------------------------------------|---|
| इत्युक्त्वा पूजितस्ताभिः नारदोऽन्तर्दधे तदा ।    |   |
| एतच्छ्रुत्वाऽथ तत्सख्यः तामूचुः पद्मिनीं सखीम् ॥ | १ |

पद्मावत्याः स्वगर्भीभिः साकं पुष्पाटवीगमनम्

|                                            |    |
|--------------------------------------------|----|
| ‘ वनं गच्छाम पुष्पार्थं वसन्तः समुपागतः ।  |    |
| कर्णिकाराश्च चूताश्च चम्पकाः पारिभद्रकाः ॥ | २० |

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| पालशः पाटलाः कुन्दा रक्ताशोकाश्च पुष्पिताः ।     |    |
| पद्मिन्यः सिन्धुवाराश्च माल्यो यूथिकालताः ॥      | २१ |
| कल्हारकरवीराश्च सङ्घर्षादिव पुष्पिताः ।          |    |
| पुष्पापचयनं कुर्मो वनेऽस्मिन् सुमनोहरे ' ॥       | २२ |
| इत्युक्त्वा ता वनं जम्बुराकाशतनयायुताः ।         |    |
| पुष्पाण्याहरमाणास्तु विचरन्त्यस्ततस्ततः ॥        | २३ |
| कश्चिद्भजेन्द्रं ददृशुः शुभ्रदन्तद्वयोज्ज्वलम् । |    |
| गण्डभित्तितलोद्भूतमदधाराद्वयोज्ज्वलम् ॥          | २४ |
| उन्नतं करिणीयूथैः समुपेतं रजोज्ज्वलम् ।          |    |
| फूत्कारिपुष्करप्रोद्यच्छीकरापूर्तिताननम् ।       |    |
| दृष्ट्वा चोद्विग्नहृदया वनस्पतिसुपाश्रिताः ॥     | २५ |

### मृगयार्थं पुष्पाटवीं प्रति श्रीनिवासागमनम्

|                                           |    |
|-------------------------------------------|----|
| एतस्मिन्नन्तरे चाशु ददृशुर्हयमुत्तमम् ।   |    |
| अकलङ्केन्दुधवलं जाम्बूनदपरिष्कृतम् ॥      | २६ |
| स्फुरद्विद्युलतायुक्तशरन्मेघमिवोन्नतम् ।  |    |
| तस्मिंस्तु पुरुषं कृष्णं मदनाकारवर्चसम् ॥ | २७ |
| पुण्डरीकदलाकारकर्णान्तायतलोचनम् ।         |    |
| सुसूक्ष्मक्षौमसंवीतनीलचूलिकयोज्ज्वलम् ॥   | २८ |
| पद्मरागमणिद्योति स्फुरत्कुण्डलमण्डितम् ।  |    |
| सुवर्णरत्नखचितशार्ङ्गदिव्यधनुर्धरम् ॥     | २९ |
| अपरेण करेणैव वहन्तं काञ्चनं शरम् ।        |    |
| पीतकक्ष्यासुसंवीतकटिदेशं सुमध्यमम् ॥      | ३० |



श्रीवराहपुराणे द्वितीयभागे चतुर्थोऽध्यायः १५३

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| रत्नकङ्कणकेयूरकटिसूत्रविराजितम् ।                   |    |
| विशालवक्षःसंशोभिदक्षिणावर्तसंयुतम् ॥                | ३१ |
| स्वर्णयज्ञोपवीतेन स्फुरत्स्क्रन्धं मनोहरम् ।        |    |
| ईहामृगं समुद्दिश्य महावेगादनुद्भुतम् ॥              | ३२ |
| तं दृष्ट्वा विस्मिता नार्यः सस्मिताः तस्थुरत्र वै । |    |
| तं दृष्ट्वा हयमारूढं गजेन्द्रो नम्रमस्तकः ॥         | ३३ |
| तुण्डमुद्धृत्य गर्जन् वै विनिवृत्य ययौ वनम् ।       |    |
| तस्मिन् गते गजे तत्र हयाऽऽरूढः समाययौ ।             |    |
| ईहामृगं विचिन्वानः पुष्पलावीसमीपतः ॥                | ३४ |

भगवतः कन्यकानां चान्योन्यसंवादः

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| ताः समेत्य स चोवाच तुरगोपरि संस्थितः ।      |    |
| ‘अत्राऽगतो मृगः कश्चिदीहामृग इतीरितः ।      |    |
| दृष्टो वा भवतीभिः स ब्रूत मे कन्यका ’ इति ॥ | ३५ |

श्रीवराहः—

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| प्रत्यूचुस्तास्तु तं कन्या ‘दृष्टोऽस्माभिः न कश्चन । |    |
| किमर्थमागतोऽस्माकं वनं वरधनुर्धरः ॥                  | ३६ |
| अत्रावध्या मृगाः सर्वे वर्तमाना निषादप ! ।           |    |
| आशु गच्छ वनादस्मात् आकाशात्मजपालितात् ’ ॥            | ३७ |
| इति तासां वचः श्रुत्वा हयादवरुरोह सः ।               |    |
| ‘कास्तु यूयमियं चापि कनकाम्बुजसन्निभा ॥              | ३८ |

- सुभगा चारुसर्वाङ्गी पीनोन्नतपयोधरा ।  
 ब्रूत मेऽहं गमिष्यामि श्रुत्वा स्वस्याऽऽलयं गिरिम् ' ॥ ३९  
 इति तस्य वचः श्रुत्वा धरण्यात्मजयेरिता ।  
 सखी पद्मावती प्राह निषादं पर्वतालयम् ॥ ४०  
 ' आकाशराजतनया वसुधातलसम्भवा ।  
 अस्माकं नायिका शूर ! पद्मिनी नाम नामतः ॥ ४१  
 ब्रूहि, त्वं सुभगाकार । किं नामा कस्य वा सुतः ? ।  
 जातिः का कुल ते वासः किमर्थं त्वमिहागतः ? ' ॥ ४२  
 इति पृष्ठः स ताः प्राह मन्दस्मितमुखाम्बुजः ।  
 ' दिवाकरकुलं प्राहुः अस्माकं तु पुराविदः ॥ ४३  
 यस्य नामान्यनन्तानि पावनानि मनीषिणाम् ।  
 वर्णतो नामतश्चापि कृष्णं प्राहुस्तपस्विनः ॥ ४४  
 ब्रह्मद्विषां सुरारीणां यस्य चक्रं भयावहम् ।  
 यस्य शङ्खध्वनिं श्रुत्वा मोहमीयुर्हि वैरिणः ॥ ४५  
 यस्य वै धनुषस्तुल्यं धनुर्नैवामरेष्वपि ।  
 तं मां वीरपतिं प्राहुः वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ॥ ४६  
 तस्मादद्रितटात् सोऽहं निषादैरनुगैर्वृतः ।  
 मृगयार्थं हयारूढो युष्माकं वनमागतः ॥ ४७  
 मयाऽप्यनुद्भुतः कश्चित् मृगो वायुगतिर्ययौ ।  
 तमदृष्ट्वा वनं पश्यन् दृष्टवान् सुभगामिमाम् ॥ ४८  
 कामादिहाऽऽगतोऽहं वा मया किं लभ्यते त्वियम् ' ? ।  
 इति कृष्णवचः श्रुत्वा क्रुद्धास्ताः पुनरब्रुवन् ॥ ४९  
 ' आकाशराजो दृष्टा त्वां कृत्वा निगडबन्धनम् ।  
 यावन्नयति तावत्त्वं गच्छ शीघ्रं स्वमायलम् ' ॥ ५०

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे पञ्चमोऽध्यायः १५५

तर्जितस्ताभिरेवं स हयमारुह्य शीघ्रगम् ।

युक्तः स्वानुचरैः सर्वैः ययौ द्रुततरं गिरिम् ' ॥ ५१

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे उद्यानवासिन्याः पद्मावत्याः समीपे नारदागमन - श्रीश्रीनिवास-

मृगयादिवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः

अथ पञ्चमोऽध्यायः

पद्मावतीदर्शनेन श्रीनिवासस्य मोहप्राप्तिः

श्रीवराहः—

सम्प्राप्य चाऽऽल्यं दिव्यमवतीर्य हयोत्तमात् ।

विसृज्य सानुगान् सर्वान् देवान् कैरातरूपकान् ॥ १

‘विश्रमध्व’ मिति प्रोच्य दिवेश मणिमण्डपम् ।

आरुह्य मणिसोपानं पञ्चकक्ष्या अतीत्य च ॥ २

मुक्तागृहं समासाद्य तस्मिँल्लोलयिते शुभे ।

नवरत्नमये मञ्चे संविवेशावशो हरिः ॥ ३

संस्मरन् पद्मगर्भाभां तामेवाऽऽयतलोचनाम् ।

तनुमध्यां पीनकुचां मन्दस्मितमुखाम्बुजाम् ॥ ४

क्षीराब्धितनयामेव मेने पद्मोद्भवां शुभाम् ।

तस्यां गतमना देवः श्रीनिवासो मुमोह च ॥ ५

मुह्यमानं श्रीनिवासं प्रति वकुलमालिकोक्तिः

ततो मध्याह्नसमये कृत्वाऽन्नं दिव्यमुत्तमम् ।

सूपदंशं सुगन्धञ्च देवार्हमतिशोभनम् ॥ ६

|                                                               |    |
|---------------------------------------------------------------|----|
| शुद्धान्नं पायसान्नञ्च गौडं मुद्गान्नमेव च ।                  |    |
| कृत्वा पञ्चविधापूपान् पूरिकावटकानपि ॥                         | ७  |
| देवं द्रष्टुं ययौ शीघ्रं सखी वकुलमालिका ।                     |    |
| पद्मावती पद्मपत्रा चित्ररेखासमन्विता ॥                        | ८  |
| निवेश्य द्वारि देवस्य ताः सर्वाः प्रमदोत्तमाः ।               |    |
| विवेश तत्समीपं सा स्वयं वकुलमालिका ॥                          | ९  |
| गत्वा समीपं देवस्य ववन्दे भक्तिभावतः ।                        |    |
| दृष्ट्वाऽथ देवं विवशं पर्यङ्के रत्नभूषिते ॥                   | १० |
| पादसंवाहनं कृत्वा निमीलितविलोचनम् ।                           |    |
| तं ध्यायन्तश्च विभ्रमपि व्याजहार शुचिस्मिता ॥                 | ११ |
| ‘उत्तिष्ठ देवदेवेश ! किं शेषे पुरुषोत्तम ! ।                  |    |
| परमान्नं कृतं देव भोक्तुमागच्छ माधव ! ॥                       | १२ |
| किं वा त्वमार्तवच्छेषे सर्वलोकार्तिनाशन ! ।                   |    |
| मृगयामटता देव ! किं दृष्टं भवता वने ॥                         | १३ |
| अवस्था ते विशालाक्ष ! कामुकस्येव दृश्यते ।                    |    |
| का दृष्टा देवकन्या वा मानुषी वाऽहिकन्यका ? ।                  |    |
| ब्रूहि मे त्वमचिन्त्यात्मन् ! कन्यां तां चित्तहारिणीम् ’ ॥ १४ |    |

श्रीवराहः—

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा निःश्वासमकरोद्विभुः । |    |
| निःश्वासन्तं पुनः प्राह प्रीता वकुलमालिका ॥   | १५ |
| ‘एवं मनोहरा का सा तवापि पुरुषोत्तम ! ? ’ ।    |    |
| तामवोचद्वृषीकेशो वक्ष्यामि शृणु तत्त्वतः ॥    | १६ |



श्रीबाराहपुराणे द्वितीयभागे पञ्चमोऽध्यायः

१५७

### श्रीनिवासोक्तपद्मावतीपरिणयकारणानि

श्रीभगवान्—

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| ‘पुरा त्रेतायुगे पुण्ये रावणं हतवानहम् ।           |    |
| तदा वेदवती कन्या साहाय्यमकरोच्छ्रियः ॥             | १७ |
| सीतारूपाऽभवच्छ्रीः जनकस्य महीतलात् ।               |    |
| गते मयि तु मारीचं हन्तुं पञ्चवटीवने ॥              | १८ |
| ममानुजोऽपि मामेव सीतया चोदितोऽन्वियात् ।           |    |
| तदन्तरे राक्षसेन्द्रो हर्तुं सीतामुपाययौ ॥         | १९ |
| अग्निहोत्रगतो वह्निः तं ज्ञात्वा रावणोद्यमम् ।     |    |
| आदाय सीतां पाताले स्वाहायां सन्निवेश्य च ॥         | २० |
| तेनैव रक्षसा स्पृष्टां पुरा वेदवतीं शुभाम् ।       |    |
| अग्नौ विसृष्टदेहां तां संहर्तुं रावणं पुनः ॥       | २१ |
| सीताया रूपसदृशीं कृत्वा चैवोत्ससर्ज ह ।            |    |
| सा रावणहता भूत्वा लङ्कायाञ्च निवेशिता ॥            | २२ |
| हते तु रावणे पश्चात् पुनरग्निं विवेश सा ।          |    |
| अग्निस्तु रक्षितां लक्ष्मीं स्वाहायां मम जानकीम् ॥ | २३ |
| दत्त्वा हस्ते च मामाह सीतया सहितं शिखी ।           |    |
| “इयं वेदवती देव ! सीतायाः प्रियकारिणी ॥            | २४ |
| सीतार्थं राक्षसपुरे तेन बन्दीकृता स्थिता ।         |    |
| तस्मादेनां वरेणैव प्रीणय त्वं श्रिया सह ” ॥        | २५ |
| इति वह्निवचः श्रुत्वा सीता मामवदच्छुभा ।           |    |
| “मम प्रीतिकरी नित्यमियं वेदवती विभो ।              |    |
| तस्मात्परं भागवतीं देवैनां वरय प्रभो ” ॥           | २६ |

|                                                                                                  |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| “ तथा देवि करिष्यामि ह्यष्टाविंशे कलौ युगे ।<br>तावदेषा ब्रह्मलोके वसत्वमरपूजिता ॥               | २७ |
| पश्चात्तु भूमितनया भविष्यति वियत्सुता ” ।<br>इति दत्तवरा पूर्वं मया लक्ष्म्या च सुन्दरी ॥        | २८ |
| अद्य नारायणपुरे सम्भूता धरणीतलात् ।<br>पद्मासमा पद्मनेत्री पद्मा दत्तवरा सती ॥                   | २९ |
| सखीभिरनुरूपाभिः वने पुष्पाणि चिन्वती ।<br>मृगयामटता तत्र मया दृष्टा मनोरमा ॥                     | ३० |
| तस्या रूपं मया वक्तुं न शक्यं शतहायनैः ।<br>लक्ष्म्येव च तथा मेऽद्य सङ्गमो भविता यदि ॥           | ३१ |
| प्राणाः स्थिरा भविष्यन्ति सत्यमित्यवधारय ।<br>त्वं तत्र गत्वा तां कन्यां दृष्ट्वा वकुलमालिके ! ॥ | ३२ |
| जानीहि रूपलावण्यादियं योग्येति चास्य वै ।<br>अनवधा विशालाक्षी पद्मेन्दीवरलोचना ’ ॥               | ३३ |

### वियद्राजपुरं प्रति वकुलमालिकागमनम्

|                                                                                                 |    |
|-------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| इत्युक्त्वा मोहमापन्नं तं प्राह वकुल पुनः ।<br>‘ इतो गच्छामि देवेश ! मनोज्ञा तव यत्र सा ॥       | ३४ |
| मार्गं वद रमाधीश ! गमिष्ये येन तां प्रति ’ ।<br>एवमुक्तो रमाधीशः तां प्राह वकुलस्रजम् ॥         | ३५ |
| ‘ इतो गच्छ महाभागे ! श्रीनृसिंहगुहा यतः ।<br>तन्मार्गेणावतीर्याऽस्मात् भूधरेन्द्रात् मनोरमात् ॥ | ३६ |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे पञ्चमोऽध्यायः १५९

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| अगस्त्याश्रममासाद्य दृष्ट्वा लिङ्गं तदर्चितम् ।  |    |
| ‘ अगस्त्येश ’ इति ख्यातं सुवर्णमुखरीतटे ॥        | ३७ |
| तीरेणैव ततो गच्छ शुक्रब्रह्मऋषेर्वनम् ।          |    |
| पश्यन्ती स्वर्णमुखरीं तत्र कलोलमालिनीम् ॥        | ३८ |
| तत्र पद्मसरो नाम पावनं पद्मसंयुतम् ।             |    |
| तत्र स्नात्वाऽथ तत्तीरे तपन्तं मुनिसत्तमम् ॥     | ३९ |
| छायाशुकं नमस्कृत्य कृष्णञ्च बलसंयुतम् ।          |    |
| आराध्यमानं मुनिना शुकेन सततं शुभे ! ॥            | ४० |
| इन्द्रनीलमणिश्यामं पीतनिर्मलवाससम् ।             |    |
| तीर्थयात्रां गमिष्यन्तं बलभद्रं सिताऽकृतिम् ॥    | ४१ |
| उपासयन्तं मन्त्राणि मुक्तान्वितकरद्वयम् ।        |    |
| उद्यन्तं पादुकायुक्तं बलभद्रं प्रणम्य च ॥        | ४२ |
| आदाय स्वर्णकमलं सरसोऽस्माद्वरानने ।              |    |
| तीर्त्वा सुवर्णमुखरीं वनान्युपवनानि च ॥          | ४३ |
| अरणीतीरमासाद्य विश्रम्य च वनान्तरे ।             |    |
| नारायणपुरीं दृष्ट्वा विस्मयञ्च गमिष्यसि ॥        | ४४ |
| तस्याश्चोपवने वृक्षान् पुष्पाढ्यान् फलसंयुतान् । |    |
| पनसाप्रशिरीषांश्च कुन्दतिन्दुकपाटलान् ॥          | ४५ |
| पुन्नागनागरुणरसालाङ्गोलचम्पकान् ।                |    |
| वकुलमलकान् सालान् तालहिन्तालपद्मकान् ॥           | ४६ |
| जम्बूनिम्बकदम्बैलापिप्पलीमधुकार्जुनान् ।         |    |
| प्रियङ्गुहिङ्गुर्वज्रजूरमायूरशोकलोध्रकान् ॥      | ४७ |
| अश्वत्थोदुम्बरसृक्षवदरीभूर्जकीचकान् ।            |    |
| चिञ्चार्किशुकमन्दारशल्मलीवीजपूरकान् ॥            | ४८ |

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| पूगनारङ्गलिकुचनारिके लवनाकुलान् ।               |    |
| मल्लिकामालीकुन्दयूथिकाकेतकीयुतान् ॥             | ४९ |
| करवीराब्जसम्पन्नान् राजरम्भाविराजितान् ।        |    |
| मयूरकीरगरुडशुकसारससङ्कुलान् ॥                   | ५० |
| भृङ्गझङ्कारनिविडान् आरामान् सुमनोहरान् ।        |    |
| पश्यन्ती परमं हर्षमवाप्य च नदीतटे ॥             | ५१ |
| गत्वा पुष्पोत्तरे मार्गे पुरीमिन्द्रपुरीसमाम् । |    |
| गङ्गायेवावृतां नित्यं सरि 'ताडरणि' नामया ।      |    |
| आकाशराजनगरीं गत्वा तत्रोचितं कुरु' ॥            | ५२ |

श्रीवराहः --

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| इत्यादिश्य सुराधीशः सखीं तां वकुलमिधाम् ।        |    |
| विस्तृज्य शयेन शुभ्रे स शिश्ये श्रीसमन्वितः ॥    | ५३ |
| प्रणम्य देवदेवेशसखी वकुलमालिका ।                 |    |
| गुञ्जामणिसमाकारं रक्ताश्वमधिरुह्य सा ॥           | ५४ |
| यथोक्तमार्गेण ययौ पश्यन्ती विविधान् मृगान् ।     |    |
| मत्तेभान् पर्वताकारान् श्वेतदन्तविभूषितान् ॥     | ५५ |
| करिणीयूथसहितान् जलदाऽऽदानतत्परान् ।              |    |
| सिंहान् श्वेतघनप्रख्यानं सिंहीयूथैरनुदुतान् ॥    | ५६ |
| शार्दूलक्षींश्च खड्गांश्च शरभान् गवयान् मृगान् । |    |
| कृष्णसारंश्च गोमायून् शशांश्च प्रियकानपि ॥       | ५७ |
| सारसांश्च मयूरांश्च मार्जारान् वनगोचरान् ।       |    |
| वृकान् शुकान् सूकरांश्च सुवाचः पक्षिणस्तथा ॥     | ५८ |
| पश्यन्ती विविधाकारान् तुप्यन्ती च मुहुर्मुहुः ।  |    |
| आससादाऽरणीतीरं पश्चिमं पादपाकुलम् ॥              | ५९ |



श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे षष्ठोऽध्यायः १६१

अवतीर्याऽरुणादध्वात् अगस्त्येशसमीपतः ।  
दृष्ट्वाऽगस्त्येश्वरं लिङ्गमगस्त्येन सुपूजितम् ।  
तत्र स्नात्वा च पीत्वा च विशश्राम नदीतटे ॥ ६०

दिव्योद्यानस्थपद्मावतीसखीः प्रति वकुलमालिकोक्तिः

तन्नाऽऽगता राजगृहात् योषितो देवसन्निधौ ।  
सखीः पद्मालयायास्ता दृष्ट्वा वकुलमालिका ।  
गत्वा समीपे तासां सा किंवदन्तीं स्म पृच्छति ॥ ६१

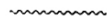
वकुलमालिका --

‘ का यूयं योषितो ब्रूत विचित्राऽऽभरणस्रजः ।  
कुतः समागता ह्यत्र किं कार्यं वोऽमलाननाः ? ’ ॥ ६२  
तास्तु तस्या वचः श्रुत्वा स्मितपूर्वमथाऽब्रुवन् ।  
‘ शृणुष्ववहिता देवि ! वयं वक्ष्यामहेऽधुना ’ ॥ ६३

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
उत्तरार्धे पद्मावतीदर्शनेन श्रीनिवासस्य मोहप्राप्त्यादिवर्णनं  
नाम पञ्चमोऽध्यायः



अथ षष्ठोऽध्यायः



वकुलमालिकां प्रति सखीविनिवेदितपद्मावत्युदन्तः

योषितः --

“ वयमाकाशराजस्य शुद्धान्तनिलयाः स्त्रियः ।  
सख्यः पद्मालयाया वै दुहितुर्वसुधापतेः ॥ १  
राजपुत्रीं पुरस्कृत्य गताः पूर्वं वनान्तरम् ।  
कुर्वन्त्यः पुष्पापचयं राजपुत्र्यर्थमाकुलाः ॥ २

|                                                                                                                                               |    |
|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| वृक्षमूले समासीनाः तत्र पश्याम पूरुषम् ।<br>इन्द्रनीलशिलाश्यामं इन्दिरामन्दिरोरसम् ॥                                                          | ३  |
| ईषत्स्मितमुखं चारुपीनदीर्घभुजद्वयम् ।<br>मृष्टपीताम्बरं हेमबाणबाणाऽऽसनोज्ज्वलम् ॥                                                             | ४  |
| सुवर्णमकुटं हारकेयूरादिविभूषितम् ।<br>तं तु पद्मालया दृष्ट्वा सखी कमललोचनम् ॥                                                                 | ५  |
| द्रुतहेमनिभाकारा 'पश्य पश्ये' ति साऽब्रवीत् ।<br>पश्यन्तीनां तदाऽस्माकं गतोऽन्तर्धानमाशु सः ।<br>सा सखी मूर्च्छिताऽस्माभिर्नीता राजगृहं ततः ॥ | ६  |
| पद्मावतीमुदिश्य दैवज्ञं प्रति विद्यद्राजकृतप्रश्नादिः                                                                                         |    |
| दृष्ट्वाऽस्वस्थां नृपः पुत्रीमपृच्छदैवचिन्तकम् ।<br>'वद विप्रेन्द्र ! पुत्र्या मे ग्रहचारफलं मुने' ॥                                          | ७  |
| बृहस्पतिसमो विप्रो विचार्याऽऽत्मनि खेचरान् ।<br>'अनुकूला ग्रहाः सर्वे तव पुत्र्या नृपोत्तम ! ॥                                                | ८  |
| किन्तु नित्यं ग्रहफलं किञ्चित् भ्रान्तिकरं नृप' ! ।<br>तमुवाच पुनर्धीमान् प्रश्नकालं विचार्य च ॥                                              | ९  |
| छायां गुणित्वा लग्नञ्च फलानि च विचार्य च ।<br>'लग्ने लग्नाधिपश्चन्द्रः केन्द्रे चैव बृहस्पतिः ॥                                               | १० |
| निद्राति दिनपक्षी तु प्रश्नपक्षी तु राज्यगः ।<br>शृणु राजन् ! फलं तस्य स्वास्थ्यमेव भविष्यति ॥                                                | ११ |
| उत्तमः पुरुषः कश्चित् आगतः कन्यकां प्रति ।<br>तं दृष्ट्वा मूर्च्छिता पुत्री तेन योगं समेष्यति ॥                                               | १२ |
| तेनैव प्रेषिता काचित् आगमिष्यति कन्यका ।<br>सा तु वक्ष्यति यद्वाक्यं तद्धितं ते भविष्यति ॥                                                    | १३ |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे षष्ठोऽध्यायः १६३

तत्कुरुष्व महाराज ! सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।  
किञ्च सर्वार्थदं यत्तु सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ १४  
वक्ष्यामि तत्कुरुष्वैव पुण्यास्तव सुखावहम् ।  
कारयागस्त्यलिङ्गस्य ब्राह्मणैरभिषेचनम् ॥ ' १५

दैवज्ञोक्त्या अगस्त्यलिङ्गार्चनाय विप्रादिप्रेषणम्

इत्युक्त्वाऽथ गृहं यातो राजानं दैवचिन्तकः ।  
आकाशराजोऽपि तदा विप्रानाहूय वैदिकान् ॥ १६  
अभ्यर्च्यऽऽज्ञापयामास ' गत्वा देवालयं द्विजाः ।  
महाभिषेकं शम्भोश्च कुरुष्वं मन्त्रपूर्वकम् ॥ ' १७  
इत्यनुज्ञाप्य तानस्मान् आहूयाभ्यवदच्छुभे ! ।  
' महानिषेकसम्भारान् सम्पादयत कन्यकाः ॥ ' १८  
इत्याज्ञप्ता नृपेणैव वयं देवाऽल्यं गताः ।  
ब्रूहि त्वं सुभगेऽस्माकं त्वदागमनमञ्जसा ॥ १९  
कुतोऽसि कस्य वाऽर्थेन क्व वा जिगमिषा हि ते ।  
दिव्याश्वमधिरुद्धं देवलोकादिवागता ॥ ' २०

श्रीवाराहः —

इति ताभिस्तदा पृष्ट्वा हृष्टा वकुलमालिका ।  
प्रोवाच वाचं मधुरां हर्षयन्तीव बालिकाः ॥ २१

वकुलमालिका —

' श्रीवेङ्कटाद्रेः प्राप्ताऽहं नाम्ना वकुलमालिका ।  
धरणीं द्रष्टुमाऽहं आरुह्येन तुरङ्गमम् ॥ २२  
द्रष्टुं शक्या भवेद्देवि ! किमु तत्र नृपाऽलये ।'  
इति तस्या वचः श्रुत्वा ताः प्रोचुर्नृपकन्यकाः ॥ २३

‘अस्माभिः सहिता त्वं वै द्रक्ष्यसे धरणीं शुभे ।’  
 इत्युक्ता सा ततस्ताभिरागता नृपमन्दिरम् ॥ २४  
 आगच्छन्तीषु तास्वेवं धरणी तु पुलिन्दिनीम् ।

धरणीकृतप्रश्नस्य पुलिन्दिनीप्रतिवचनम्

आयान्तीं वीथिकायां सा सगुञ्जाशङ्खभूषिताम् ॥ २५  
 शिशुं स्तनन्धयं पृष्ठे बद्धा वस्त्राञ्चलेन वै ।  
 ‘वदामि सत्यं शृणुत भूतं भव्यं भविष्यकम् ॥’ २६  
 वदन्तीं वीथिवीथीषु, तामाहूय शुचिस्मिता ।  
 स्वर्णशूर्पं समादाय तस्मिन् मुक्ता निधाय च ॥ २७  
 त्रिप्रस्थमात्रान् तीन राक्षीन् कृत्वा तस्यै निधाय च ।  
 ‘वद सत्यं पुलिन्दे त्वं एष्यद्वा भूतमेव वा ॥’ २८  
 इत्येवं धरणी देवी पृच्छन्ती तां स्थिताऽभवत् ।  
 पृष्ट्वा साऽवददस्यास्तु मनसा यद्विचिन्तितम् ॥ २९  
 ‘मध्यराशौ चिन्तितं ते वद कल्याणि मे ऋजु ।’  
 ‘ओ’ मित्याहाऽथ धरणी पुलिन्दां राजवल्लभा ॥ ३०

धरणी —

‘राशिरुक्तः फलं ब्रूहि धनराशिं ददामि ते ।’

पुलिन्दा —

‘सत्यं वदामि ते सुभ्रु ! शिरोरत्नं प्रयच्छ मे’ ॥ ३१  
 इत्युक्ता सा तु धरणी स्वर्णपात्रेऽन्नमाददे ।  
 दत्त्वा तस्यै पुलिन्दिन्यै ‘सत्यं ब्रू’ हीति साऽवदत् ॥ ३२  
 सक्षीरमन्नमादाय दत्त्वा पुत्राय भामिनी ।  
 सा सत्यमवदत् ‘सुभ्रुः दुहितुर्देहशोषणम् ॥ ३३

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे षष्ठोऽध्यायः १६५

|                                                           |    |
|-----------------------------------------------------------|----|
| पुरुषादागतं भीरु तद्रूपादर्शनादियम् ।                     |    |
| अङ्गतापं समापन्ना ह्यनङ्गशरपीडिता ॥                       | ३४ |
| स तु देवादिदेवो वै वैकुण्ठादागतः स्वयम् ।                 |    |
| श्रीवेङ्कटाद्रिशिखरे स्वामिपुष्करिणीतटे ॥                 | ३५ |
| मायावी परमानन्दः श्रिया सह रमापतिः ।                      |    |
| कामरूपी विहरते स्वभक्ताभीष्टदो हरिः ॥                     | ३६ |
| स तुरङ्गं समारुह्य विहरन् काननान्तरे ।                    |    |
| आगत्योपवनं राज्ञि ! तव कन्यां स दृष्टवान् ॥               | ३७ |
| रमासमामिमां दृष्ट्वा स्वयं कामवशं गतः ।                   |    |
| स्वसखीं ललितां देवः प्रेषयिष्यति तेऽन्तिकम् ॥             | ३८ |
| रमेव तं समेत्यैषा रमिष्यति सुखं चिरम् ।                   |    |
| एतत्सत्यं मम वचः तस्याऽद्यैव नृपात्मजे ॥                  | ३९ |
| पुत्रस्यान्नं प्रय 'च्छेति तूष्णीमास पुलिन्दिनी ।         |    |
| अन्नं दत्त्वा पुनर्भूमिं तस्यै तां विससर्ज ह ॥            | ४० |
| तस्यां विनिर्गतायां तु पुलिन्दिन्यामनिन्दिता ।            |    |
| उत्थाय चाङ्गणात्तस्मात् विवेशान्तःपुरं शुभम् ॥            | ४१ |
| यत्न पद्मालया कन्या समास्ते स्वसखीवृता ।                  |    |
| गत्वा पुत्रीसमीपस्थाः कन्याः कामातुरां सुताम् ॥           | ४२ |
| ‘पुत्रि ! किं ते करिष्यामि वस्तु किं वा प्रियं शुभे ’ ! । |    |
| इति मात्राऽभिपृष्टा सा मन्दमाह मनस्विनी ॥                 | ४३ |

पद्मावतीनिवेदित भगवद्भ्रागवतलक्षणानि

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| ‘नेत्राभिरामं यलोके सतामपि मनःप्रियम् ।         |    |
| यं द्रष्टुकामा ब्रह्माद्या यत्तु सर्वगतं महत् ॥ | ४४ |

तेजसामपि तेजस्वी देवानामपि दैवतम् ।  
 भक्तैस्सद्भिरिह प्राप्यमभक्तैर्न कदाचन ॥ ४५  
 तस्मिन्नेव मनो मेऽम्ब वस्तुनीह प्रवर्तते ।  
 तदेवा न्वप्यतां मातः भक्तानां सर्वकामदम् ॥ ' ४६

श्रीवराहः —

एतच्छ्रुत्वाऽथ धरणी तामपृच्छत् पुनः सुताम् ।  
 'तद्वक्तृलक्षणं ब्रूहि यैः प्राप्यं तत् सुलोचने ' ॥ ४७

पद्मालयः —

'भक्तानां लक्षणं मातः शृणु गुह्यं समाहिता ।  
 शङ्खचक्राङ्किते नित्यं भुजयुग्मे वसुन्धरे ॥ ४८  
 ऊर्ध्वपुण्ड्रं सान्तरालं तेषामेव विशेषतः ।  
 पुण्ड्राणि द्वादश पुनः धारयन्ति तथाऽपरे ॥ ४९  
 ललाटोदरहृत्कण्ठे जठरे पार्श्वयोरपि ।  
 भुजद्वन्द्वे सयुग्मे च पृष्ठे च गलपृष्ठके ॥ ५०  
 केशवादीनि नामानि द्वादशाङ्गेषु द्वादश ।  
 'वासुदे ' वेति तन्मूर्ध्नि धारयन्ति नमोऽस्त्विति ॥ ५१  
 तेषां तु नियमान् वक्ष्ये मातः शृणु मनोरमान् ।  
 वेदपारयणरताः कर्म कुर्वन्त वैदिकम् ॥ ५२  
 सत्यं वदन्ति ये देवि ! नासूयन्ति परान् क्वचित् ।  
 परनिन्दां न कुर्वन्ति परस्वं न हरन्ति ये ॥ ५३  
 न स्मरन्ति न पश्यन्ति न स्पृशन्ति कदाचन ।  
 परदारान् सुरूपांश्च ये च तान् विद्वि वैष्णवान् ॥ ५४  
 सर्वभूतदयावन्तः सर्वभूतहिते रताः ।  
 सदा गायन्ति देवेशमेतान् भक्तानवेहि वै ॥ ५५

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे षष्ठोऽध्यायः १६७

येन केन च सन्तुष्टाः स्वदारनिरताश्च ये ।  
वीतरागभयक्रोधाः तान् भक्तान् विद्धि वैष्णवान् ॥ ५६  
एवं विधैर्गुणैर्युक्ताः पञ्चायुधधरा अपि ।  
पित्वा चाऽऽचार्यरूपेण शिष्टेनान्येन वा पुनः ॥ ५७  
स्वगृह्योक्तविधानेन वह्निमादाय वै बुधः ।  
चक्राद्यायुधमन्त्रेण जुहुयात् षोडशाहुतीः ॥ ५८  
मूल्मन्त्रेण सूक्तेन पौरुषेण ततः परम् ।  
जातवेदः सुमन्त्रेण पश्चादष्टोत्तरं शतम् ॥ ५९  
हुत्वा महाव्याहृतिभिः चक्रादींस्तत्र तापयेत् ।  
सद्भान् सुतप्तान् गुरुणा मन्त्रवद्धारयेद् बुधः ॥ ६०  
भुजद्वये शङ्खचक्रे मुष्टिं शार्ङ्गशरौ तथा ।  
लल्यटे तु गदा धार्या हृदये सङ्गमेव च ॥ ६१  
एवं धार्याणि पञ्चैव विष्णुभक्तैर्मुमुक्षुभिः ।  
अथवा भुजयोश्चक्रशङ्खौ चैव सुलक्षणौ ॥ ६२  
एवं लाञ्छनयुक्ता ये भक्तास्ते वैष्णवाः स्मृताः ।  
तैरेव लभ्यं तद्ब्रह्म सदाचारसमन्वितैः ॥ ६३  
तस्मिन्नेव मम प्रीतिः तत्प्राप्तिं काङ्क्षते मनः ।  
मातर्विष्णुं विनाऽन्येषु वाञ्छा काचिन्न जायते ॥ ६४  
स्मरामि श्यामलं विष्णुं वदामि हरिमच्युतम् ।  
तेनैव मातर्जीवामि तद्योगे चिन्त्यतां विधिः ॥ ६५

श्रीवाराहः —

इत्युक्त्वा मातरं दीनां विररामाम्बुजानना ।  
तच्छ्रुत्वा चिन्तयामास विष्णुः प्रीतः कथं भवेत् ? ॥ ६६

## वकुलमालिक्या सार्धं सखीनां धरणीपमीये आगमनम्

एतस्मिन्नन्तरे कन्या अगस्त्येशं समर्च्य च ।  
 आगता धरणीं द्रष्टुं सहैव वकुलस्रजा ॥ ६७  
 आगतान् ब्राह्मणांस्तत्र पूजयित्वा सुभोजनैः ।  
 दत्त्वाऽथ दक्षिणाः पूर्णा वस्त्रालङ्कारसंयुताः ॥ ६८  
 आशिषो वाचयित्वाऽथ वाञ्छितार्थस्य सिद्धये ।  
 विसृज्य ब्राह्मणान् सर्वानथापृच्छत् स्वयोषितः ।  
 पूजयित्वा ह्यगस्त्येशमागतास्ता मनस्वनीः ॥ ६९

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 उत्तरार्धे वकुलमालिकां प्रति सखीविनिवेदितपद्मावत्युदन्तविष्णुभक्त-  
 लक्षणादिवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः

अथ पप्तमोऽध्यायः

धरणीदेव्यै वकुलमालिकानिवेदितश्रीनिवासोदन्तः

धरणी —

‘कैषा ब्रूत वरा कन्या युष्माभिः सङ्गता कुतः ।  
 किमर्थमागता चेह पूज्यैषा प्रतिनाति मे? ॥’ १

कन्यकाः —

‘एषा दिव्याङ्गना देवी त्वयि कार्यार्थमागता ।  
 देवालये सङ्गतेयमस्माभिः शिवसन्निधौ ॥ २  
 पृष्टाऽवदच्च ‘भवतीं द्रष्टुमेवाऽऽगतेति वै ।  
 शक्या द्रष्टुं राजगृहे मया राज्ञो मुखेन वः’ ॥ ३



श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे सप्तमोऽध्यायः १६९

एवं पृष्ठास्ततो ब्रूमः 'सहास्राभिश्च गम्यताम् ।  
वयन्तु धरणीदास्यो गमिष्यामो नृपाल्यम्' ॥ ४  
इत्युक्त्वाऽस्माभिरायाता त्वत्समीपं वसुन्धरे ।  
भवत्या पृच्छ्यतामेषा 'किमित्यागमनं तव' ॥ ५

श्रीवाराहः —

इति तासां वचः श्रुत्वा तामपृच्छत् वसुन्धरा ।

धरणी —

'कुतस्त्वमागता देवि ! किं वा कार्यं मया तव ।  
ब्रूहि सत्यं करिष्यामि त्वदागमनकारणम्' ॥ ६

वकुलमालिका —

'वेङ्कटाद्रेः समायाता नाम्ना वकुलमालिका ।  
स्वामी नारायणोऽस्माकमास्ते श्रीवेङ्कटाचले ॥ ७  
कदाचित् हयमारुह्य हंसशुक्लं मनोजवम् ।  
मृगयार्थं गतो राज्ञो वेङ्कटाद्रेः समीपतः ॥ ८  
वनानि विचरन् काले शोभने कुसुमाकरे ।  
पश्यन् मृगान् गजान् सिंहान् गवयान् शरभान् रुरुन् ॥ ९  
शुकान् पारावतान् हंसान् पत्त्रिणोऽन्यान् वनान्तरे ।  
गजराजं तत्र कञ्चिन् यूथपं मदवर्षिणम् ।  
करेणुसहितं तुङ्गमन्वगच्छत् सुरोत्तमः ॥ १०

श्रीनिवासोक्त्या शङ्खनृपस्य स्वामितीर्थे तपःकरणम्

वनाद्वनान्तरं गत्वा नृपं शङ्खमुपागमन् ।  
तपस्यन्तं बृहच्छैले प्रतिष्ठाप्य जनार्दनम् ॥ ११

श्रीभूमिसहितं नित्यमर्चयन्तश्च भक्तितः ।  
 शङ्खनागविलं नाम सरः पावनमुत्तमम् ॥ १२  
 तत्सरस्तीरमासाद्य तुरङ्गादवरोह्य च ।  
 राजवेषं समासाद्य तमपृच्छन्नरोत्तमम् ।  
 ' कियते किं नृपश्रेष्ठ ! पादेऽस्मिच्छेषभूभृतः ' ॥ १३

शङ्खः —

' अहं हैहयदेशीयः पुत्रः श्वेतस्य भूभृतः ।  
 महाविष्णोः प्रीतयेऽत्र कृतवानखिलान् क्रतून् ॥ १४  
 अदर्शनान्महाविष्णोः निर्विष्णोऽहं नृपात्मज ! ।  
 तदानीमवदद्विद्या वाणी सर्वार्तिनाशिनी ॥ १५  
 ' राजन् नात्र भविष्यामि प्रत्यक्षं ते वचः शृणु ।  
 गच्छ नारायणाद्रिं त्वं तपः कु ' र्विति मां स्फुटम् ॥ १६  
 ततो देशमहं त्यक्त्वा तपसाऽऽराधयाम्यहम् ।  
 अत्र देवं नृपाचिन्त्यं प्रतिष्ठाप्य श्रियःपतिम् ॥ १७  
 अगस्त्यानुग्रहान्नित्यमर्चयामि विधानतः ' ।  
 इति तस्य वचः श्रुत्वा सोत्प्रासं प्राह तं विभुः ॥ १८  
 ' गच्छ नारायणाद्रिं त्वं अस्य पादे किमास्यते ? ।  
 आरुह्यानेन मार्गेण पश्चिमे शिखरे स्थितम् ॥ १९  
 प्रणम्य विष्वक्सेनं त्वं बालं न्यग्रोधमूलतः ।  
 स्वामिपुष्करिणीं गत्वा स्नात्वा तीरेऽथ पश्चिमे ॥ २०  
 अधत्थं तत्र वल्मीकं द्रक्ष्यसे नृपनन्दन ! ।  
 तयोर्मध्यं समासाद्य तपः कु ' र्वित्यचोदयत् ॥ २१  
 कश्चिच्छ्वेतो वराहोऽस्मिन् वल्मीके चरति ध्रुवम् ।  
 स तु पुण्यवतामेव सेवां यच्छति भूपते ! ॥ २२

श्रीवाराहः ---

|                                                                                                      |    |
|------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| इत्यादिश्य हयारूढो जगाम मृगयां विभुः ।<br>चरन् वनाद्वनं सुभ्रुः ! समासाद्याऽरणीं नदीम् ॥             | २३ |
| अवरुह्य हयात्तत्र विचचार तटे शुभे ।<br>वनान्तादागतो वायुः पद्मकङ्कहारशीतलः ।                         |    |
| श्रमापनयनो मन्दं सिषेवे पुरुषोत्तमम् ॥                                                               | २४ |
| तरवः पुष्पवर्षाणि विकिरन्तः सिषेविरे ।<br>एवं स विचरन् देवः पुष्पभारनतांस्तरून् ॥                    | २५ |
| विचिन्वन् गजराजं तं पुष्पलवीर्ददर्श ह ।<br>कन्याः सुवेषा रुचिरा मेघेष्विव शतहृदाः ॥                  | २६ |
| तासां मध्यगतां तन्वीं ददर्शातिमनोहराम् ।<br>लक्ष्मीसमां हेमवर्णां तस्यां सक्तमना अभूत् ॥             | २७ |
| तां गृध्रुराह ताः कन्याः ' केय ' मित्येव पूरुषः !<br>उक्तस्तामि ' रियं कन्या वियद्राज्ञो महाबल ! ' ॥ | २८ |
| इदं श्रुत्वा वचस्तासां हयमारुह्य वेगवान् ।<br>आजगामाशु भगवान् स्वालयं रुचिरं गिरिम् ॥                | २९ |
| तत्र स्वालयमासाद्य स्वामिपुष्पकरिणीतटे ।<br>मामाहूयावददेवो ' हला वकुलमालिके ! ॥                      | ३० |
| वियद्राजपुरं गत्वा प्रविश्यान्तपुरं सखि ! ।<br>तत्पत्नीं धरणीं प्राप्य पृष्ट्वा कुशलमेव च ॥          | ३१ |
| याचस्व तनयां तस्या रुचिरां कमलालयाम् ।<br>राज्ञोऽभिमतमाज्ञाय शीघ्रमागच्छ भामिनि ! ' ॥                | ३२ |
| इत्थं देवेन चाज्ञप्ता देवि ! त्वद्गृहमागता ।<br>यथोचितं कुरुष्वेह राज्ञा मन्त्रियुतेन च ॥            | ३३ |

## वकुलमालिकोत्तया धरण्यादिकृतविवाहनिश्चयः

कन्यया च विचार्यैव प्रोच्यतामुत्तरं वचः ॥ ' ३४

श्रीवराहः ---

अथ तस्या वचः श्रुत्वा प्रीता राज्ञी बभूव ह ।  
आहूयाऽऽकाशराजं तमुपेत्य कमलालयम् ॥ ३५  
मन्त्रिमध्येऽवदद्देवी वचनं वकुलस्रजः ।  
श्रुत्वा प्रीतोऽवदद्राजा मन्त्रिणः सपुरोहितान् ॥ ३६

आकाशराजः ---

' कन्या त्वयोनिजा दिव्या सुभगा कमलालया ।  
अर्थिता देवदेवेन वेङ्कटाद्रिनिवासिना ॥ ३७  
पूर्णो मनोरथो मेऽद्य ब्रूत किं संमतं तु वः । '  
श्रुत्वा मन्त्रिगणाः सर्वे राज्ञो वचनमुत्तमम् ॥ ३८  
प्रोचुः सुप्रीतमनसो वियद्राजं महीपतिम् ।  
' वयं कृतार्था राजेन्द्र ! कुलं सर्वोन्नतं भवेत् ॥ ३९  
भवत्कन्येयमतुला श्रिया सह रमिष्यति ।  
दीयतां देवदेवाय शार्ङ्गिणे परमात्मने ॥ ४०  
अयं वसन्तः श्रीमांश्च शुभं शीघ्रं विधीयताम् ।  
आहूय धिषणं लक्ष्य विवाहार्थं विधीयताम् ॥ ' ४१

## बृहस्पत्युत्तया विवाहलग्नस्थिरीकरणम्

तथास्त्वित्याह्वयामास सुरलोकाद् बृहस्पतिम् ।  
पप्रच्छ कन्यावरयोर्विवाहार्थं नरेश्वरः ॥ ४२

राजोवाच—

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| कन्याया जन्मनक्षत्रं मृगशीर्षमिति स्मृतम् ।   |    |
| देवस्य श्रवणक्षन्तु तयोर्योगो विचार्यताम् ॥   | ४३ |
| श्रुत्वाऽब्रवीत्स धिषणस्तयोरुत्तरफल्गुनी ।    |    |
| सम्मतात्सुखवृद्धयर्थं प्रोच्यते दैवचिन्तकैः ॥ | ४४ |
| तयोरुत्तरफल्गुन्यां विवाहः क्रियतामिति ।      |    |
| वैशाखमासे विधिवत् क्रियतामिति सोऽब्रवीत् ॥    | ४५ |

श्रीवाराह —

|                                              |    |
|----------------------------------------------|----|
| राजा तु धिषणं तत्र संपूज्याथ विसृज्य च ।     |    |
| देवस्य दृतिकामाह गच्छ देवालयं शुभे ॥         | ४६ |
| वैशाखे देवदेवाय कल्याणं वद सुव्रते ।         |    |
| वैवाहिकविधानं तु कृत्वा चागम्यतामिति ॥       | ४७ |
| ततो देव्याः प्रियकरं शुक्रं दत्तं तया सह ।   |    |
| विसृज्य वायुं स्वसुतमिन्द्राद्यानयनेऽसृजत् ॥ | ४८ |

### विश्वकर्मादिकृतपुरालङ्कारादिक्रमः

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| आहूय विश्वकर्माणं पुरालङ्कारकर्मणि ।           |    |
| नियोजयामास सोऽपि निर्ममे निमिषान्तरात् ॥       | ४९ |
| इन्द्रोऽसृजत्पुष्पवृष्टिं ननृतुश्चाप्सरोगणाः । |    |
| धनदो धनधान्याद्यैः पूरयामास वेश्म तत् ॥        | ५० |
| यमस्तु रोगरहितांश्चकार मनुजान् भुवि ।          |    |
| वरुणो रत्नजालानि मौक्तिकादीन्यपूरयत् ।         |    |
| एवं संपाद्य सर्वाणि ययुर्देवा वृषाचलम् ॥       | ५१ |

## पद्मावती शुक्रेण सह वकुलायाः श्रीनिवाससमीपे गमनम्

श्रीवराहः —

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| ततः सा हयमारुह्य शुक्रेण सहिता ययौ ।           |    |
| श्रीवेङ्कटाद्रिमासाद्य देवालयसमीपतः ॥          | ५२ |
| अवरुह्य तुरङ्गात्सा सशुकाऽभ्यन्तरं ययौ ।       |    |
| दृष्ट्वा देवं रत्नपीठे श्रिया सह सुलोचनम् ॥    | ५३ |
| प्रणम्य ह्यवदत्प्रीता कृत्यं तत् कृतं विभो ! । |    |
| माङ्गल्यवार्ता वृत्तं वै शुक एष समागतः ॥       | ५४ |

## श्रीनिवासाय शुकावेदितपद्मावतीपरिणयवृत्तान्तः

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| वदेति देवेनाज्ञप्तः शुको नत्वा तमब्रवीत् ।     |    |
| त्वां प्रत्याह सुता भूमेः ' मामङ्गीकुरु माधव ॥ | ५५ |
| वदामि तव नामानि स्मरामि त्वद्वपुस्सदा ।        |    |
| ध्रियन्ते तव चिह्नानि भुजाद्यङ्गै रमापते ॥     | ५६ |
| त्वद्वत्तानर्चयामीह पञ्चसंस्कारसंयुतान् ।      |    |
| त्वत्प्रीतये हि कर्माणि करोमि मधुसूदन ! ॥      | ५७ |
| एवं सदैवाचरन्त्याः पित्रोरनुमते मम ।           |    |
| कुरु प्रसादं देवेश मामङ्गीकुरु माधव ! ॥ '      | ५८ |

शुकः —

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| इति विज्ञापयामास कमलस्था धरासुता ।             |    |
| शुकस्य वचनं श्रुत्वा सुप्रियं त्वात्मनो हरिः ॥ | ५९ |

## पद्मावत्या शुकदत्तश्रीनिवासमालाधारणम्

श्रीभगवान् —

|                                              |    |
|----------------------------------------------|----|
| ' कर्तुं कल्याणमुद्गाहमागमिष्यामि चामरैः ' । |    |
| शुक गच्छ वदैवं तामित्थं देवोऽब्रवीदिति ॥     | ६० |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे सप्तमोऽध्यायः १७५

|                                                                                             |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| शुकः श्रुत्वा देववाक्यमादाय वनमालिकाम् ।<br>देवदत्तां ययौ शीघ्रं वियद्राजसुतां प्रति ॥      | ६१ |
| तुलसीमालिकां दत्त्वा मृगनाभिसुगन्धिनीम् ।<br>प्रणम्य देवीमवदत् शुको देववचः शुभम् ॥          | ६२ |
| श्रुत्वा तन्मालिकां गृह्य भूमिजा शिरसा दधौ ।<br>चक्रेऽलङ्कारमुचितं देवागमनकाङ्क्षिणी ॥      | ६३ |
| वियद्राजोऽपि सानन्दं इन्दुमाहूय सादरम् ।<br>अन्नं विधीयतां राजन् विविधं रससंयुतम् ॥         | ६४ |
| विष्णोर्नैवेद्ययोग्यं यत् परमान्नं विधीयताम् ।<br>देवानाञ्च ऋषीणाञ्च नराणामपि सम्मतम् ॥     | ६५ |
| चतुर्विधं सुगन्धाढ्यं अमृतांशैः सुधाकर ! ।<br>एवं कृत्वा संविधानं प्रतीक्ष्याऽऽगमनं विभोः ॥ | ६६ |
| सभायां मन्त्रिसहितः समास्त प्रीतमानसः ।<br>पुत्रीमलङ्कृतां कृत्वा धरणीसहितो नृपः ॥          | ६७ |

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
उत्तरार्धे धरणीदेव्यै वकुलमालिकानिवेदितश्रीनिवासोदन्त-

कमलालयाकल्याणविध्यादिवृत्तान्तवर्णनं

नाम सप्तमोऽध्यायः





## श्रीनिवासस्य लक्ष्म्यादिकृतपरिणयालङ्कारः

श्रीवराहः ---

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| ततो देवाधिदेवोऽपि लक्ष्मीमाहूय भामिनीम् ।       |    |
| ‘ किं कार्यं वद कल्याणि विवाहार्थं सुलोचने ! ॥  | १  |
| आज्ञापयस्व स्वसखि रमे ! कार्यं कुरु प्रियम् ’ । |    |
| श्रीस्तु कृष्णवचः श्रुत्वा सखीनामभ्यचोदयत् ॥    | २  |
| श्रियाऽऽज्ञप्ता ततः प्रीतिः सुगन्धं तैलमाददौ ।  |    |
| श्रुतिः क्षौमं समादाय तस्थौ देवस्य सन्निधौ ॥    | ३  |
| भूषणानि समादाय स्मृतिरप्याययौ मुदा ।            |    |
| धृतिरादर्शमादत्त कान्तिर्मृगमदं ददौ ॥           | ४  |
| यक्षकर्दममादाय ह्रीः स्थिता पुरतो हरेः ।        |    |
| कीर्तिः कनकपट्टञ्च सरलं मकुटं ददौ ॥             | ५  |
| छत्रं ददौ तदेन्द्राणी चामरन्तु सरस्वती ।        |    |
| द्वितीयं चामरं गौरी व्यजने विजयाजये ॥           | ६  |
| आगतास्ताः समालोक्य श्रीरुत्थायाऽथ सत्त्वरा ।    |    |
| सुगन्धं तैलमादाय देवमभ्यज्य शीर्षतः ॥           | ७  |
| उद्धर्तितं गन्धचूर्णैः देवाङ्गं परिमृज्य च ।    |    |
| आनीतान् करिमिस्तोयकलशान् काञ्चनान् शतम् ॥       | ८  |
| वियद्गङ्गादितीर्थेभ्यः कर्पूरादिसुवासितान् ।    |    |
| एवमेकं समादाय त्वभ्यषिञ्चद्रमा हरिम् ॥          | ९  |
| सन्धूप्य केशान् धूपेन तानाश्यामान् बबन्ध च ।    |    |
| सुगन्धेनानुलिप्याङ्गं स्वर्णवर्णेन तद्विभोः ॥   | १० |



श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे अष्टमोऽध्यायः १७७

पीतकौशेयकं वद्धा कट्यां काञ्चीसमन्वितम् ।  
मुकुटादिविभूषाभिः भूषयामास चेन्दिरा ॥ ११  
अङ्गुलीयकरत्नानि सर्वास्वेवाङ्गुलिषु च ।  
आदर्शं दर्शयामास धृतिर्देवस्य सन्निधौ ॥ १२  
दृष्ट्वाऽऽदर्शं देवदेवो ह्यूर्ध्वपुण्ड्रं स्वयं दधौ ।  
आरुह्य गरुडं पश्चात् स्वयं लक्ष्मीसमन्वितः ॥ १३

ब्रह्मादिभिस्साकं श्रीनिवासस्य विद्यद्राजपुङ्गव नमः

ब्रह्मेशवज्रिवरुणयमयक्षेशसेवितः ।  
वसिष्ठार्चैर्मुनीन्द्रैश्च सनकाद्यैश्च योगिभिः ॥ १४  
भक्तैर्भागवतैर्युक्तो नारायणपुरीं ययौ ।  
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ १५  
देवदुन्दुभयो नेदुः तदा देवस्य सन्निधौ ।  
जपन्तः स्वस्तिसूक्तानि मुनयस्तं समन्वयुः ॥ १६  
देवो देवगणैर्युक्तो विष्वक्सेनादिपार्षदैः ।  
सखीभिस्स्यन्दनस्थानिः वकुलाद्यानिरन्वितः ।  
आकाशराजस्य पुरमाससाद स्वलङ्कृतम् ॥ १७

पद्मावतीपरिणयघट्टः

देवमागतमालोक्य कन्यामैरावतस्थिताम् ।  
पुरीं प्रदक्षणीकृत्य गोपुरद्वारमागताम् ॥ १८  
आलोक्याऽऽकाशराजोऽपि समानीय वधूवरौ ।  
बन्धुनिः सहितस्तस्थौ देवमालोक्य केशवम् ॥ १९  
विष्णुर्मालां स्वकण्ठस्थां हस्तेनाऽऽदाय सस्मितः ।  
कमलायाः स्कन्धदेशे मुमोच सुमनश्चिताम् ॥ २०

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| आदाय मलिकामालां साऽस्य कण्ठे समर्पयत् ।             |    |
| एवं त्रिवारं तौ कृत्वा वाहनादवस्थ च ॥               | २१ |
| स्थित्वा पीठे क्षणं पश्चात् गृहं विविशतुः शुभम् ।   |    |
| ब्रह्मादिदेवयूथैश्च सहितौ भूमिजाहरी ॥               | २२ |
| माङ्गल्यसूत्रबन्धादि साङ्करार्पणमञ्जजः ।            |    |
| वैवाहिकं कारयित्वा लाजहोमान्तमेव च ॥                | २३ |
| व्रतादेशं समाज्ञाय शायितौ कमलाहरी ।                 |    |
| चतुर्थे दिवसे सर्वं समाप्य चतुर्मुखः ॥              | २४ |
| अनुज्ञाप्य वियद्राजमारोप्य गरुडे हरिम् ।            |    |
| देवीभ्यां सहितं देवं देवैर्गन्तुं प्रचक्रमे ॥       | २५ |
| दिव्यदुन्दुभिनिर्घोषैः संप्राप्य वृषभाचलम् ।        |    |
| तुष्टुवुर्देवदेवेशं ब्रह्माऽऽद्या देवतागणाः ॥       | २६ |
| शुकादयो मुनिगणाः तुष्टुवुः पुरुषोत्तमम् ।           |    |
| स्तूयमानोऽथ देवोऽपि विवेश मणिमण्डपम् ।              |    |
| रमाधरणिजाभ्याञ्च तत्र सिंहासनं ययौ ॥                | २७ |
| बभूवरयोर्विपद्मजवितीर्णप्राभृतादिकम् ।              |    |
| आकाशराजोऽपि तदा महेन्द्रादिसुरैः सह ।               |    |
| पुत्रीविण्णोः प्रियार्थन्तु प्राभृतं कर्तुमुद्यतः ॥ | २८ |
| सौवर्णेषु कटाहेषु तण्डुलान् शालिसम्भवान् ।          |    |
| मुद्गपात्राण्यनेकानि घृतकुम्भशतानि च ॥              | २९ |
| पयोघटसहस्राणि दधिभाण्डान्यनेकशः ।                   |    |
| दिव्यानि चूतकदलीनारिकेलफलानि च ॥                    | ३० |
| धात्रीफलानि कूष्माण्डराजरम्भाफलानि च ।              |    |
| पनसान् मातुलुङ्गांश्च शर्करापूरितान् घटान् ॥        | ३१ |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे अष्टमोऽध्यायः १७९

सुवर्णमणिमुक्ताश्च क्षौमकोट्यम्बराणि च ।  
दासीदाससहस्राणि कोटिशो गास्तथैव च ॥ ३२  
हंसेन्दुशुक्लवर्णानां हयानामयुतं ददौ ।  
तुङ्गानां नित्यमत्तानां गजानामधिकं शतात् ॥ ३३  
अन्तःपुरचरा नारीः नृत्तगीतविशारदाः ।  
ददौ चतुःसहस्राणि श्रीनिवासाय विष्णवे ॥ ३४  
दत्त्वा चैतानि सर्वाणि तस्थौ देवपुरो विभुः ।

श्रीनिवासकृपया वियद्राजस्य भक्तिप्राप्तिरूपवरप्राप्तिः

दृष्ट्वा देवोऽपि तत्सर्वं देवीभ्यां सहितो हरिः ॥ ३५  
सुप्रीतः प्राह राजानं श्वशुरं वेङ्कटेश्वरः ।  
'वरं वृणीष्व हे राजन् ! गुरो मत्तो यदिच्छसि' ॥ ३६  
इति श्रीशवचः श्रुत्वा वियद्राजोऽवदद्विभुम् ।  
त्वत्सेवैवेह देवैवं भूयादव्यभिचारिणी ।  
मनस्त्वत्पादकमले त्वयि भक्तिर्ममास्तु वै' ॥ ३७

श्रीभगवान् —

'त्वया यदुक्तं राजेन्द्र ! सर्वमेतद्विष्यति ।'  
इति दत्त्वा वरं तस्मै सम्मान्यैव यथोचितम् ॥ ३८

चिवाहार्थमागतानां ब्रह्मादीनां स्वाऽऽवासगमनम्

ब्रह्मेशादिसुरान् सर्वान् समभ्यर्च्य यथोचितम् ।  
स्वर्लोकागमानाथैवमनुमेने मुदा हरिः ।  
गतेषु तेषु सर्वेषु श्रिया भूमिजया युतः ॥ ३९

विहरन् स यथापूर्वं स्वामिपुष्करिणीतटे ।

आस्ते दिव्यालये देवोऽप्यर्च्यमानो गुहेन वै ॥ ४०

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे ब्रह्मादिभिः साकं श्रीनिवासस्य वियद्राजपुरगमनक्रमलया-

परिणयादिवर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः

अथ नवमोऽध्यायः

वसुनामकनिषादवृत्तान्तः

धरणी :—

‘ कलौ युगे भूमिधर ! केन त्वं द्रक्ष्यसे प्रिय ।

विमानं केन ते देव कार्यतेऽस्मिन् महीधरे ॥ १

श्रीनिवासोऽपि केनैव द्रक्ष्यते सुभगाकृतिः ।

एतद्ब्रूहि मम प्रीत्या श्रोतुं कौतूहलं विभो ’ ॥ २

श्रीवराहः --

वक्ष्यामि शृणु हे देवि ! भविष्यद्यद्वदामि ते ।

अस्मिन् महीधरे पुण्ये निषादो वसुनामकः ॥ ३

श्यामाकवनपालोऽभूद्भक्तिमान् पुरुषोत्तमे ।

श्यामाकतण्डुलान् पक्ता मधुना परिषिच्य च ॥ ४

निवेद्य देवदेवाय श्रीभूमिसहिताय च ।

एवं भक्तिमतस्तस्य भार्या चित्रवती शुभा ॥ ५

असूत तनयं बाला वीरनामानमुत्तमम् ।

वसुः पुत्रेण सहितो भार्यया पतिभक्त्या ॥ ६

कस्मिंश्चिद्विसे पुत्रं श्यामाकं पालयेति च ।

विस्तृज्य पत्न्या सहितो मध्वन्वेषणतत्परः ॥ ७

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे नवमोऽध्यायः १८१

गतो वनान्तरं शीघ्रं मधुच्छत्रदिदक्षया ।  
बालः श्यामाकपक्वानि गृहीत्वाऽमौ निधाय च ॥ ८  
पिष्टा निवेदयामास वृक्षमूले श्रियःपतेः ।  
नैवेद्यं भक्षयित्वैव वीरस्त्वास सुखेन वै ॥ ९  
तदन्तरे वसुश्चापि मध्वादाय समागतः ।  
श्यामाकान् भक्षितान् दृष्ट्वा सन्तर्ज्य सुतमात्मनः ।  
खड्गमादाय तं हन्तुं त्वरया हस्तमुद्धधौ ॥ १०

सुतहननोद्युक्तं वसुं प्रति भगवदुक्तिः

तद्वृक्षस्थस्तदा विष्णुः खड्गं जग्राह पाणिना ।  
खड्गं गृहीतं केनेति पश्यन् वृक्षं ददर्श सः ॥ ११  
शङ्खचक्रगदापाणिं वृक्षगूढार्थविग्रहम् ।  
मुक्त्वा वसुश्च तं खड्गं प्रणम्योवाच केशवम् ॥ १२  
“किमिदं देवदेवेश चेष्टितं क्रियते त्वया ? ” ।

श्रीभगवान् —

“वसो ! शृणु वचो मे त्वं पुत्रस्ते भक्तिमान् मयि ॥ १३  
त्वत्तोऽपि मे प्रियतमः तस्मात् प्रत्यक्षमागतः ।  
तस्य सर्वत्र तिष्ठामि तव स्वामिसरस्तटे ” ।  
इति देववचः श्रुत्वा प्रीतिमानभवद्वसुः ॥ १४  
एतस्मिन्नेव काले तु पाण्ड्यदेशात् समागतः ।  
बाल्यात्प्रभृति शूद्रोऽपि विष्णुभक्तिसमन्वितः ॥ १५

रङ्गदासस्य श्रीनिवाससेवार्थं श्रीशेषाचलागमनम्

नारायणपुरीं प्राप्य श्रीवाराहं प्रणम्य च ।  
तत्र श्रुत्वा श्रीनिवासं वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ॥ १६

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| स्वयम्भूदेवदेवेशसेवितं प्रययौ ततः ।                 |    |
| सुवर्णमुखरीं प्राप्य स्नात्वा चोत्तीर्य तत्तटे ॥    | १७ |
| कमलालये सरसि च स्नात्वा पुण्यप्रदायिनि ।            |    |
| तत्तीरवासिनं देवं कृष्णं रामेण संयुतम् ॥            | १८ |
| नमस्कृत्य ततः प्रायात् वनं गजघटायुतम् ।             |    |
| शनैः सम्प्राप्य शेषाद्रिं निर्झरं सन्ददर्श ह ॥      | १९ |
| तत्समीपं समासाद्य कपिलपूजितं शिवम् ।                |    |
| तत्पुरश्चक्रतीर्थं तत् अगाधं पापनाशनम् ॥            | २० |
| तत्र स्नात्वा ततोऽगच्छत् वेङ्कटाद्रिं शनैः शनैः ।   |    |
| आराद्धुं गच्छता मार्गे युक्तो वैखानसेन च ॥          | २१ |
| रङ्गदासस्त्वारुरोह बालो द्वादशवार्षिकः ।            |    |
| स्वामिपुष्करिणीं प्राप्य स्नात्वा भक्तिसमन्वितः ॥   | २२ |
| वैखानसेन मुनिना गोपीनाथेन पूजितम् ।                 |    |
| वनमध्ये तरोर्भूले स्वामिपुष्करिणीतटे ॥              | २३ |
| तिष्ठन्तं पुण्डरीकाक्षं श्रीभूमिसहितं हरिम् ।       |    |
| आकाशस्थं सन्ददर्श पीतनीलाकृतिं शुभम् ॥              | २४ |
| पार्श्वस्थशङ्खचक्राभ्यां गदाऽसिभ्यां निषेवितम् ।    |    |
| पक्षौ विस्तार्य चाक्रशे देवमूर्ध्नि वितानवत् ।      |    |
| स्थितञ्च गरुडेशानं पश्चाच्छाङ्गं शरं तथा ॥          | २५ |
| श्रीनिवासार्थं रङ्गदासकृतदिव्योद्यानमण्डपनिर्माणानि |    |
| एवं दृष्ट्वा श्रीनिवासं विस्मितो रङ्गदासकः ।        |    |
| अस्य देवस्य चारामं करिष्यामीत्यचिन्तयत् ॥           | २६ |
| निश्चित्य मनसा सर्वं तरुमूलेऽवसत् सुधीः ।           |    |
| कृत्वा वैखानसाद्विष्णोः नैवेद्यञ्च दिने दिने ॥      | २७ |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे नवमोऽध्यायः १८३

शनैश्छित्वा वनं घोरं वृक्षांश्चिच्छेद पार्श्वगान् ।  
आस्थानचिञ्चां देवस्य रमायाश्चम्पकं तरुम् ॥ २८  
देवाज्ञतो वर्जयित्वा तावुभौ देवसेवितौ ।  
देवस्य परितो भूमौ शिलाकुड्यं तदाऽकरोत् ॥ २९  
तत्कुड्यस्यैव परितः पुष्पारामांश्चकार ह ।  
मल्लिकाकरवीराब्जकुन्दमन्दारमालतीः ॥ ३०  
तुलसीचम्पकानाञ्च वनान्येव चकार ह ।  
खनित्वा तत्र कूपं तु वर्धयंस्तज्जलैर्वनम् ॥ ३१  
आरामपुष्पाण्यादाय स्वयं दामान्यथाऽकरोत् ।  
विचित्राणि तदा बद्ध्वा पूजकस्य करे ददौ ॥ ३२  
आदाय पूजकस्तानि स्कन्धे मूर्ध्नि बबन्ध च ।  
श्रीनिवासस्य देवस्य श्रीभूमिसहितस्य च ॥ ३३  
एवं देवस्य कैङ्कर्यं कुर्वन्तस्थावुदारधीः ।  
तस्यैव वर्तमानस्य समास्त्वासप्ततेर्गताः ।  
कुर्वाणे पुष्पापचयं रङ्गदासे महात्मनि ॥ ३४

रङ्गदासस्य गन्धर्वक्रीडादर्शनेन भगवत्कैङ्कर्यविस्मृतिः

आरामे सरसि स्नातुं गन्धर्वः कश्चिदाययौ ।  
गन्धर्वराजः ३न्याभिः तरुणीभिः समन्वितः ॥ ३५  
जलक्रीडां करोति स्म दिवि स्थाप्य विमानकम् ।  
सुरूपभिश्च सहितं क्रीडन्तं कमलाकरे ॥ ३६  
पश्यन् श्रीरङ्गदासोऽयं व्यस्मरन्माल्यसञ्चयम् ।  
जितेन्द्रियोऽपि तत्क्रीडां पश्यन् रेतः ससर्ज ह ॥ ३७  
पश्यतस्तस्य सरसः समुत्तीर्य मनोहरः ।  
दिव्यवस्त्राणि चाच्छाद्य कान्ताभिः सह सस्मितम् ॥ ३८

अधिरुह्य विमानं तु ययौ स धनदालयम् ।  
 गते गन्धर्वराजे तु रङ्गदासो विमोहितः ॥ ३९  
 त्यक्त्वा च तानि माल्यानि स्नात्वा सरसि लज्जितः ।  
 पुनराहृत्य पुष्पाणि शनैर्देवालयं ययौ ॥ ४०  
 वैखानसस्तु तं दृष्ट्वा पूजाकालमतीत्य च ।  
 आगतं किमिति प्राह “ सखेऽतिक्लम्य चागतः ।  
 न बद्धा मालिकाश्चापि त्वयाऽऽरामे च किं कृतम् ? ॥ ” ४१

श्रीवराह —

इत्थं पृष्ठो रङ्गदासो नावदलज्जया ततः ।  
 लज्जितं रङ्गदासं तं प्रोवाच मधुसूदनः ॥ ४२

स्वरूपानुसन्धानेन लज्जितं रङ्गदासं प्रति श्रीनिवासवचनम्

श्रीभगवान् —

“ लज्जया किं रङ्गदास ! मया त्वं मोहितो ह्यसि ।  
 न तावलज्जितकामस्त्वं धीरो भव महामते ! ॥ ४३  
 गन्धर्वराजवद्राजा भविताऽसि महीतले ।  
 तत्र भुक्त्वा महाभोगान् भक्तिमान्मयि सर्वदा ॥ ४४  
 प्राकारञ्च विमानञ्च कारयिष्यसि मे तदा ।  
 तत्र मुक्तिं प्रदास्यामि प्रीत्या परमया युतः ॥ ४५  
 अतैव कुरु सेवां त्वं आशरीरविमोक्षणात् ।  
 मद्भक्तानां सकामानामेवं मुक्तिर्भविष्यति ॥ ” ४६  
 इत्युक्त्वा भगवान् विष्णुः पुनर्नोवाच किञ्चन ।  
 श्रुत्वा तद्रङ्गदासोऽपि चकाराऽऽराममुत्तमम् ॥ ४७



श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे नवमोऽध्यायः १८५

तोण्डमानाभकनृपवृत्तान्तः

साग्रं शताब्दं सेवित्वा गतः स्वर्गममन्दधीः ।  
जातः सोमकुले तुङ्गे ' तोण्डमा ' निति विश्रुतः ॥ ४८  
सुवीरतनयो वीरो नन्दिनीगर्भसम्भवः ।  
स पञ्चवर्षादुद्धूतविष्णुभक्तिः स्वयं सुधीः ।  
सौशील्यशौर्यवीर्यादिगुणानामाकरो महान् ॥ ४९  
पाण्ड्यस्य तनयां पद्मां उपयेमे मनोहराम् ।  
ततो राजा शतं कन्या नानादेश्याः स्वयंवराः ॥ ५०  
रेमे देवेन्द्रवद्भूमौ नारायणपुरे वसन् ।  
अनुज्ञां प्राप्य पितृतः पुत्रः पञ्चास्यविक्रमः ।  
उद्दिश्य मृगयां वीरो वेङ्कटाद्रेः समीपतः ॥ ५१

तोण्डमान्नृपस्य मृगयार्थं श्रीशेषाचलगमनम्

पादचारेण विचरन् परिवारैः समन्वितः ।  
मदधारां विमुञ्चन्तं ददर्श गजयूथपम् ॥ ५२  
तं दृष्ट्वा विस्मितो भूत्वा गृहीतुं तमनुद्रुतः ।  
सुवर्णमुखरीं तीर्त्वा ब्रह्मर्षिं शुकमुत्तमम् ॥ ५३  
नमस्कृत्याऽभ्यनुज्ञातः ततोऽगच्छद्वनान्नमम् ।  
ददर्श रेणुकां देवीं वल्मीकाऽऽकारसंस्थिताम् ॥ ५४  
इष्टदामिष्टभक्तानां दिव्यारामनिवासिनीम् ।  
परिवारैः सदोपेतां पूजितां त्रिदशैरपि ।  
तोण्डमानपि तां नत्वा ततः पश्चान्मुखो ययौ ॥ ५५

## श्रीनिवासममीपस्थपञ्चवर्णशुकवृत्तान्तः

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| पञ्चवर्णं शुकं दृष्ट्वा तं जिघृक्षुरनुद्रुतः ।      |    |
| स वदन् “ श्रीनिवासे ” ति गिरिं शीघ्रतरं ययौ ॥       | ५६ |
| अनुद्रवन् स राजापि गिरिराजं समारुहत् ।              |    |
| दरीश्च विविधाः पश्यन् शिखराणि समन्ततः ॥             | ५७ |
| शुकमन्वेषमाणोऽसौ श्यामाकवनमेधिवान् ।                |    |
| तमदृष्ट्वा शुकवरं वनपालं ददर्श ह ॥                  | ५८ |
| तं तु राजानमायान्तं प्रत्युद्गच्छन् स सत्वरः ।      |    |
| प्रणम्य विनयोपेतः कृताञ्जलिपुटः स्थितः ॥            | ५९ |
| तोण्डमानपि सम्पूज्य तं पप्रच्छ वनेचरम् ।            |    |
| ‘ पञ्चवर्णः शुकः कश्चित् दृष्टश्चात्माऽऽगतस्त्वया । |    |
| “ श्रीनिवासे ” ति च वदन् क्व गतोऽसौ वनेचरः ? ॥ ’    | ६० |

वनेचरः —

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| ‘ स पञ्चवर्णो राजेन्द्र श्रीनिवासप्रियः सदा ।   |    |
| पार्श्ववर्ती सदा तस्य श्रीभूमिभ्यां विवर्धितः ॥ | ६१ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे सदाऽऽस्ते देवसन्निधौ ।      |    |
| गृहीतुं स शुकः श्रीमान् न तु केनापि शक्यते ॥    | ६२ |
| विहृत्य स्वेच्छया नित्यमस्मिन् गिरिवरे शुभे ।   |    |
| दिनान्ते देवमासाद्य तत्समीपे वसत्ययम् ॥         | ६३ |
| तं देवमाराधयितुं गमिष्यामि नृपात्मज ! ।         |    |
| विश्रम्यतां वृक्षमूले यावदागमनं मम ।            |    |
| पुत्रेणानेन सहितो विहर त्वं यथासुखम् ॥ ’        | ६४ |

राजा —

|                                                        |    |
|--------------------------------------------------------|----|
| ‘ त्वया सहाऽऽगमिष्यामि द्रष्टुं देवं जनार्दनम् ।       |    |
| त्वं मे दर्शय देवेश वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ॥ ’           | ६५ |
| तस्य राज्ञो वचः श्रुत्वा श्यामाकं मधुमिश्रितम् ।       |    |
| चूतपत्रपुटे क्षिप्त्वा राजा सह ययौ हरिम् ॥             | ६६ |
| <b>तोण्डमान्नृपस्य निषादेन सह श्रीनिवाससेवागमनम्</b>   |    |
| गत्वा सुदूरमध्वानं पश्यन्तौ तौ शिलातलम् ।              |    |
| मुहूर्तादेव सम्प्राप्तौ स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ॥      | ६७ |
| स्नात्वा तत्र विधानेन राज्ञा सह निषादपः ।              |    |
| दर्शयामास देवेश राज्ञस्तस्य महात्मनः ॥                 | ६८ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे स्थितं श्रीवृक्षमूलके ।            |    |
| अतसीपुष्पसङ्काशं अम्बुजायतलोचनम् ॥                     | ६९ |
| चतुर्भुजमुदाराङ्गं ईषत्स्मितमुखाम्बुजम् ।              |    |
| दिव्यपीताम्बरधरं किरीटकटकोज्ज्वलम् ॥                   | ७० |
| पार्श्वस्थाभ्यां सुरूपाभ्यां श्रीभूमिभ्यां समन्वितम् । |    |
| परितः शङ्खचक्रासिगदाशार्ङ्गेषु सेवितम् ॥               | ७१ |
| अन्यैर्दिव्यायुधैश्चापि दिव्यमाल्यैर्निषेवितम् ।       |    |
| स्कन्देनाऽऽराध्यमानं तं त्रिसन्ध्यं पुरुषोत्तमम् ॥     | ७२ |
| वल्मीकगूढपादाब्जं आजानुपुरुषोत्तमम् ।                  |    |
| ततो दृष्ट्वा मुदा देवं प्रमणेतुरुभौ तदा ॥              | ७३ |
| राजा तु प्राञ्जलिभूत्वा विस्मयोत्कुललोचनः ।            |    |
| आनन्दलहरीं प्राप्य न प्राज्ञायत किञ्चन ॥               | ७४ |
| निषादोऽपि निवेद्यैव श्यामाकं मधुमिश्रितम् ।            |    |
| राज्ञे तदर्धं दत्त्वैव शिष्टार्धं भुक्तवान् स्वयम् ॥   | ७५ |

पीत्वा पुष्करिणीतोयं तेन राज्ञा समन्वितः ।  
 स पुनः श्यामाकवने पुण्यां पर्णकुटीं ययौ ॥ ७६  
 उषित्वा चैकरालन्तु प्रातरुत्थाय भूमिपः ।  
 स्वसैन्येन समायुक्तो निवृत्तः स्वपुरं ययौ ॥ ७७

तोण्डमान्नृपं प्रति रेणुकोक्तिः

पुनर्देवीवनं गत्वा हयादवततार ह ।  
 चैत्रशुद्धनवम्यां तु पूजयामास रेणुकाम् ॥ ७८  
 हविष्यं परमान्नञ्च सोपस्करमनेकशः ।  
 पशूपहारसहितं धूपदीपसमन्वितम् ॥ ७९  
 सुराघटीशतं दत्त्वा जातीकेसरवासितम् ।  
 एवं संपूजिता देवी प्रीता राज्ञे वरं ददौ ॥ ८०  
 आविष्टः पुरुषः कश्चित् अवदन्तृपसत्तमम् ।  
 'शृणु राजन् ! भविष्यं ते राज्यं निहतकण्टकम् ॥ ८१  
 राजंस्तवैव नाम्नाऽत्र राजधानी भविष्यति ।  
 मत्समीपे महाराज ! चिरं राज्यं करिष्यसि ॥ ८२  
 देवदेवप्रसादश्च भविष्यति तवानघ ! ।'  
 इति दत्त्वा वरं तस्मै आविष्टः प्रकृतिं ययौ ।  
 ततो लब्धवरो राजा ययौ शुक्मुनिं पुनः ॥ ८३

शुक्वर्णितपद्मसरोवरमाहात्म्यम्

अभिवाद्य मुनिं तेन पूजितो मुदितोऽभवत् ।  
 'माहात्म्यं सरसो ब्रूहि कमलाख्यस्य मे मुने !' ॥ ८४

श्रीशुकः —

पुरा दुर्वाससः शापात् अवतीर्णा सुरालयात् ।  
 पद्मा पद्माक्षदयिता विष्णुना सहिता नृप ॥ ८५

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे नवमोऽध्यायः १८९

सरः काञ्चनपद्मादयं इदं प्राप्य महेश्वरी ।  
तपश्चकार वर्षाणां दिव्यानामयुतं रमा ॥ ८६  
ततो देवा विचिन्वन्तः श्रियं विष्णुसमन्विताम् ।  
पुरन्दरेण संयुक्ता राजन् अस्मिन् सरोवरे ॥ ८७  
स्थितां सुवर्णकमले पुण्डरीकाक्षसंयुताम् ।  
दृष्ट्वा प्रीतिसमायुक्ताः प्रणम्याम्बुजधारिणीम् ।  
कृताञ्जलिपुटाः सेन्द्राः तुष्टुवुर्लोकमातरम् ॥ ८८

द्वादिकृत श्रीलक्ष्मीस्तुतिः

देवाः —

‘ नमः श्रियै लोकधात्र्यै ब्रह्ममात्रे नमो नमः ।  
नमस्ते पद्मनेत्रायै पद्ममुख्यै नमो नमः ॥ ८९  
प्रसन्नमुखपद्मायै पद्मकान्त्यै नमो नमः ।  
नमो विल्ववनस्थायै विष्णुपत्न्यै नमो नमः ॥ ९०  
विचित्रक्षौमधारिण्यै पृथुश्रोण्यै नमो नमः ।  
पद्मविल्वफलापीनतुङ्गस्तन्यै नमो नमः ॥ ९१  
सुरक्तपद्मपत्राभकरपादतले शुभे ।  
सुरत्नाङ्गदकेयूरकाञ्चीनूपुरशोभिते ।  
यक्षकर्मसंलिप्तसर्वाङ्गे कटकोज्ज्वले ॥ ९२  
माङ्गल्याभरणैश्चित्रैः मुक्ताहारैर्विभूषिते ।  
ताटङ्कैरवतंसैश्च शोभमानमुखाम्बुजे ॥ ९३  
पद्महस्ते नमस्तुभ्यं प्रसीद हरिवल्लभे ।  
ऋग्यजुःसामरूपायै विद्यायै ते नमो नमः ॥ ९४  
प्रसीदास्मान् कृपादृष्टिपातैरालोकयाब्धिजे ।  
ये दृष्टास्ते त्वया ब्रह्मरुद्रेन्द्रत्वं समाम्नुयुः ॥ ’ ९५

## इन्द्रादीन् प्रति स्तुतिप्रसन्नलक्ष्मीवचनम्

श्रीशुकः —

इति स्तुता तदा दैवैः विष्णुवक्षःस्थलाल्या ।  
विष्णुना सह सन्दृश्या रमा प्रीताऽवदत्सुरान् ॥ ९६

श्रीः —

‘सुरारीन् सहसा हत्वा स्वपदानि गमिष्यथ ।  
ये स्थानहीनाः स्वस्थानात् भ्रंशिता ये नरा भुवि ॥ ९७  
ते मामनेन स्तोत्रेण स्तुत्वा स्थानमवाप्नुयुः ।  
अखण्डैर्बिल्वपत्रैर्मामर्चयन्ति नरा भुवि ॥ ९८  
स्तोत्रेणानेन ये देवा नरा युष्मत्कृतेन वै ।  
धर्मार्थकाममोक्षाणां आकरास्ते भवन्ति वै ॥ ९९  
इदं पद्मसरो देवा ये केचन नरा भुवि ।  
प्राप्य स्नानं करिष्यन्ति मां स्तुत्वा विष्णुवल्लभाम् ॥ १००  
तेऽपि श्रियं दीर्घमायुः विद्यां पुत्रान् सुवर्चसः ।  
लब्ध्वा भोगांश्च मुक्त्वाऽन्ते नरा मोक्षमवाप्नुयुः ॥’ १०१  
इति दत्त्वा वरं देवी देवेन सह विष्णुना ।  
आरुह्य गरुडेशानं वैकुण्ठस्थानमाययौ ॥ १०२

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे वसुनामकनिषादवृत्तान्त-पद्मसरोमाहात्म्यादिवर्णनं

नाम नवमोऽध्यायः ।



तोण्डमान्नृपस्य स्वपितुःसकाशाद्राज्यप्राप्तिः

श्रीशुक -

‘ इदं पद्मसरो नाम सर्वपापप्रणाशनम् ।  
कीर्तनात् स्मरणात् स्नानान्नुणां लक्ष्मीप्रदं भुवि ॥  
कृत्वा स्नानं त्वमप्यस्मिन् व्रज स्वपितुरन्तिकम् ।’

श्रीवाराहः -

एतच्छुक्वचः श्रुत्वा स्नात्वा पद्मसरोवरे ॥ २  
तं नत्वा हयमारुह्य तोण्डमान् स्वपुरं ययौ ।  
तं पिता युवराजानं कृत्वा त्रीन् वत्सरानथ ॥ ३  
रज्जकत्वं च सामर्थ्यं शौर्यं वीर्यं सुशीलताम् ।  
भक्तिं विप्रेषु पुत्रस्य वीक्ष्य राजा स्वमन्त्रिभिः ॥ ४  
स्वपदे स्थापयामास स्वभिषिच्य विधानतः ।  
अनुनीय सुतं पत्न्या सार्धं राजा वनं ययौ ॥ ५

वसोर्वल्मीके श्रीवाराहसन्दर्शनम्

तोण्डमानपि साम्राज्यं लब्ध्वा राज्यं चक्र ह ।  
निषादस्य वने देवो वाराहं रूपमास्थितः ॥ ६  
श्यामाकपकं भक्षित्वा रात्रौ रात्रौ चचार ह ।  
पदानि स वराहस्य चान्वियेष दिवा दिवा ॥ ७  
अदृष्ट्वा तं वराहं स रात्रौ जाग्रदनुर्धरः ।  
स्थितोऽपश्यत् चरन्तं तं चन्द्रकोटिसमप्रभम् ॥ ८  
वराहं सुभगाकारं श्यामाकवनमध्यतः ।  
तं दृष्ट्वा धनुरादाय सिंहनादं चक्र ह ॥ ९

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| वराहः तद्वृत्तिं श्रुत्वा वनान्निष्क्रम्य सत्वरम् ।  |    |
| ययौ तं चाप्यनुययौ वराहं स निषादपः ॥                  | १० |
| रात्रिशेषमनुद्गत्य वने चन्द्रसमप्रभम् ।              |    |
| वल्मीकं प्रविशन्तश्च ददर्श स निषादपः ॥               | ११ |
| गच्छन्तं पूर्णिमाचन्द्रं अस्तं गिरिवरं यथा ।         |    |
| विस्मितोऽखानयत् कोपात् वल्मीकं स निषादपः ॥           | १२ |
| धरावराहो ददृशे मूर्छितोऽयं पपात ह ।                  |    |
| पितरं मूर्च्छितं दृष्ट्वा तत्पुत्रो भक्तिर्मास्तदा ॥ | १३ |
| वराहदेवं तुष्टाव येन प्रीतो भवेद्भरिः ।              |    |
| आविश्य पितरं तस्य प्रोवाच मधुसूदनः ॥                 | १४ |

श्रीभगवान् —

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| ‘अहं वराहदेवेशो नित्यमस्मिन् वसाम्यहम् ।             |    |
| राज्ञे त्वमुक्त्वा मामत्र प्रतिष्ठाप्यैव पूजय ॥      | १५ |
| वल्मीकं कृष्णगोक्षीरैः क्षालयित्वा तदुत्थिते ।       |    |
| शिलातले च वाराहमुद्गत्य धरणीस्थितम् ॥                | १६ |
| कारयित्वा प्रतिष्ठाप्य विषैर्वैतानसैश्च माम् ।       |    |
| पूजयेद्विविधैर्भोगैः तोण्डमान् राजसत्तमः ॥ ’         | १७ |
| इत्युक्त्वा तं जहौ देवः स च स्वस्थो बभूव ह ।         |    |
| सुखासीनन्तु पितरं नमस्कृत्य निषादजः ॥                | १८ |
| न्यवेदयद्देववचः पित्रे सर्वं यथातथम् ।               |    |
| स श्रुत्वा विस्मितो भूत्वा कृत्स्नं पुत्रवचः शुभम् ॥ | १९ |
| तोण्डमन्त्रपाय वसुनिवेदितवराद्गोदन्तः                |    |
| राज्ञे वक्तुं ययौ शीघ्रं निषादः स्वानुगैः सह ।       |    |
| वसुर्निषादाधिपतिः राजद्वारमुपागमत् ॥                 | २० |



श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः १९३

निषादाधिपमाज्ञाय द्वारपालैः नृपोत्तमः ।  
आहूय तं निषादेश सभायां मन्त्रिभिः सह ॥ २१  
सत्कृत्य तं वसुं राजा सपुत्रं सपरिच्छदम् ।  
पप्रच्छ प्रीतिमान् राजा वसुं तं वनगोचरम् ॥ २२  
'किमागमनकृत्यं ते वद त्वं वनगोचर ।'

वसुः —

'राजन् मम वने दृष्टं आश्चर्यं शृणु भूपते ! ॥ २३  
कश्चित् श्वेतवराहस्तु श्यामाकमचरन् निशि ।  
तं वराहं धनुष्पाणिः अन्वधावमहं नृप ! ॥ २४  
अनुद्रुतो वायुवेगो गत्वा वल्मीकमाविशत् ।  
स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्यतो मम भूपते ॥ २५  
वल्मीकमखनं क्रोधात् मूर्च्छितो न्यपतं भुवि ।  
मत्पुत्रोऽयं समागत्य मां दृष्ट्वा मूर्च्छितं भुवि ॥ २६  
शुचिर्भूत्वा देवदेवं तुष्टाव मधुसूदनम् ।  
ततो मयि समाविश्य वराहोऽप्यवदत्सुतम् ॥ २७  
'राज्ञे निवेदय क्षिप्रं मच्चरितं निषादप ! ।  
कृष्णगोक्षीरसेकेन वल्मीकं क्षालयेन्नृपः ॥ २८  
दृश्यते च शिला कश्चित् वल्मीकस्था सुशोभना ।  
वामाङ्गस्थभुवं मां च वराहवदनं स्थितम् ॥ २९  
कारयित्वा शिल्पिनाऽथ प्रतिष्ठाप्य मुनीश्वरैः ।  
वैखानसैर्भुनिवरैः अर्चयेत् तोण्डमानपि ॥ ३०

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| अथ गत्वा श्रीनिवासं बल्मीकावृतपट्टयम् ।       |    |
| कपिलाकृष्णगोक्षीरसेचनैः क्षालयेच्छनैः ॥       | ३१ |
| आपादपीठपर्यन्तं क्षालयित्वा दिने दिने ।       |    |
| कुर्यात् प्राकारमुभयोः उत्तरे दक्षिणे तथा ' ॥ | ३२ |
| इत्युक्त्वा चैवमामुञ्चदेवः स्वस्थोऽभवं नृप ।  |    |
| इदं ते वक्तुमायातो देवदेवचिकीर्षितम् ॥        | ३३ |

### नृपस्य निषादवाक्यस्वप्नाभ्यां विलमार्गेण शेषाचलगमनम्

श्रीवराहः —

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| तोण्डमानपि तच्छ्रुत्वा सुपीतो विस्मितोऽभवत् ।       |    |
| ततः कार्यं विनिश्चित्य मन्त्रिभिः पुष्करादिभिः ॥    | ३४ |
| वेङ्कटाद्रिं जिगमिषुः गोपानाहूय सर्वशः ।            |    |
| 'कृष्णाश्च कपिला गावो याः काश्चित्सन्ति मामिकाः ॥   | ३५ |
| ताः सवत्सा आनयध्वं वेङ्कटाद्रिसमीपतः ।'             |    |
| इत्याज्ञप्य नृपो गोपान् श्वो यात्रेति च मन्त्रिणः ॥ | ३६ |
| विसृज्य प्रकृतीः सर्वाः विवेशान्तःपुरं वशी ।        |    |
| उक्त्वा कथां तां पत्नीभ्यः सुष्वाप निशि पार्थिवः ॥  | ३७ |
| तं स्वप्ने श्रीनिवासोऽपि विलमार्गं ह्यदर्शयत् ।     |    |
| स्वपुरादाविलं मार्गं पल्लवानसृजद्धरिः ॥             | ३८ |
| एवं स्वप्नं नृपो दृष्ट्वा प्रातरुत्थाय सत्वरः ।     |    |
| आहूय मन्त्रिणः सर्वान् प्रकृतीः ब्राह्मणानपि ॥      | ३९ |

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः १९५

स्वप्नं तथाविधं चोक्त्वाऽपश्यत्द्वारेऽथ प्लवम् ।  
युक्ते मुहूर्ते प्रययौ हयमारुह्य तोण्डमान् ॥ ४०  
पश्यंश्च प्लववान् गाश्च शनैः प्रीतो ययौ बिलम् ।  
दृष्ट्वा विस्मयमापन्नो निर्ममे तत्र पत्तनम् ॥ ४१

भगवदुक्त्या तोण्डमान् नृपकृतक्षीरामिषेकप्रनिर्माणादिकम्

बिलमन्तःपुरे कृत्वा प्राकारं चाप्यकारयत् ।  
वसंस्तत्र नृपेन्द्रोऽसौ निर्जित्य पृथिवीमिमाम् ॥ ४२  
यथोक्तं देवदेवेन क्षीरप्रक्षालनादिकम् ।  
कृत्वा प्राकारनिर्माणं कर्तुमुद्यं गमाययौ ॥ ४३  
तदानीं देवदेवेन स्वयमाज्ञापितो नृपः ।  
'तिन्त्रिणीं चम्पकं चोभौ पालयैतौ नगोत्तमौ ॥ ४४  
मम चाऽस्थानिकी चिञ्चा लक्ष्म्याः स्थानञ्च चम्पकः ।  
नमस्कार्यौ नृपैस्तौ हि ऋषिदेवनरैः सदा ॥ ४५  
संस्थाप्यैतौ नृपश्रेष्ठ छेदयान्द्वान् नगोत्तमान् ।  
प्राकारमात्रं कुरु मे द्वारगोपुरसंयुतम् ॥ ४६  
विमानं तु भवद्वंशयो नाम्ना नारायणो नृपः ।  
कारयिष्यति मद्भक्तः स्वर्णेनालङ्कारिष्यति ।'  
एवमुक्त्वा तोण्डमानं विरराम श्रियःपतिः ॥ ४७

श्रीवाराहः -

एवं देववचः श्रुत्वा कृत्वा प्राकारमेव च ।  
पूजयामास मुनिभिः वैखानसकुलोद्भवैः ॥ ४८

नित्यं बिलेन चागत्य देवं नत्वा नृपोत्तमः ।  
 राज्यं चकार धर्मेण भुञ्जानो भोगमुत्तमम् ।  
 एतस्मिन्नेव काले तु दाक्षिणात्यो द्विजोत्तमः ॥ ४९

### गङ्गास्नानागतवीरशर्माख्यविप्रचरित्रम्

गङ्गास्नानाय गच्छन्वै सदारः प्रययौ पुरात् ।  
 मार्गेऽथ गर्भिणी जाता ब्राह्मणी ब्राह्मणः स च ॥ ५०  
 तां तु गर्भवतीं दृष्ट्वा स्वात्मानुगमनेऽक्षमाम् ।  
 राजानं द्रष्टुकामोऽसौ राजद्वारमुपागमत् ॥ ५१  
 द्वाःस्थेन ज्ञापितो राजा तमाहूय द्विजोत्तमम् ।  
 पूजयित्वा तु विधिवत् पप्रच्छ कुशलं द्विजम् ॥ ५२

राजा —

‘ विष्णुगमनकृत्यं ते किं करिष्याम्यहं द्विज ! ’ ।

द्विजः —

‘ वासिष्ठो वीरशर्माऽहं सामवेदी नृपोत्तम ! ॥ ५३  
 सदारो निर्गतो राजन् गङ्गास्नानाय सादरः ।  
 मार्गे च गर्भिणी चेयं कौशिकी पुण्यशालिनी ॥ ५४  
 नाम्ना लक्ष्मीरिति ख्याता सुशील्य च पतिव्रता ।  
 स्थाप्य चैनां तव गृहे व्रतं निर्वर्तयाम्यहम् ॥ ५५

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः १९७

तस्माद्राजन् प्रयच्छास्यै यथेष्टं भक्तवेतने ।  
तावच्च रक्ष्यतां लक्ष्मीः यावदागमनं मम ' ॥ ५६

श्रीबराहः —

राजा तस्य वचः श्रुत्वा तण्डुलानि धनान्यपि ।  
दत्त्वा षण्मासपर्यन्तं गृहमन्तःपुरे ददौ ॥ ५७  
तां न्यस्य ब्राह्मणः प्रीतो गङ्गास्नानाय निर्ययौ ।  
गत्वा भागीरथीं गङ्गां प्रयागे क्षेत्र उत्तमे ॥ ५८  
स्नात्वा काशीं ततो गत्वा तत्रोषित्वा दिनत्रयम् ।  
गयां प्राप्य पितृश्राद्धं अकरोत् ब्रह्मणोत्तमः ॥ ५९  
गत्वाऽयोध्यामपि पुरीं प्रययौ बदरीवनम् ।  
सालग्रामं ततो गत्वा स्वदेशं प्रति निर्ययौ ॥ ६०  
संवत्सरद्वयेऽतीते चैत्रे मासि शुभे दिने ।  
निवृत्तोऽसौ द्विजश्रेष्ठः शनैरागत्य माधवे ॥ ६१  
एकादश्यां शुक्लपक्षे पुनः राजानमाययौ ।  
राजा तु विस्मृत्य तदा ब्राह्मणीं नास्मरन्तृपः ॥ ६२  
ब्राह्मणीं मानिनीं गेहे मृता शुष्का बभूव ह ।  
वीरशर्मा ततो विप्रो गङ्गातोयकरण्डके ॥ ६३  
विमुच्य बन्धनं त्वेकं गाङ्गं तु करकं शुभम् ।  
प्रदाय राज्ञे पप्रच्छ ' पत्नी कुशलि ' नीति मे ॥ ६४  
स्मृत्वाऽथ राजा विप्रं तं ' स्थायता ' मिति चाब्रवीत् ।  
अन्तःपुरं ततो गत्वा तामपश्यन्मृतां गृहे ॥ ६५

अनुक्त्वा ब्रह्मणे तस्मै प्रविश्य च विलोत्तमम् ।  
 श्रीनृसिंहं नमस्कृत्य पुनः प्राप्य विलोत्तमम् ॥ ६६  
 श्रीनिवासं ययौ द्रष्टुं श्रीभूमिसहितं परम् ।  
 तं दृष्ट्वा सहसायान्तं जुगूहाते धरारमे ॥ ६७  
 प्रणमन्तमवोचत् तं 'किमकाले नृप आगतः ?' ।  
 नृपोऽवदत् प्रणम्येशं भीतोऽथ 'ब्राह्मणीं मृताम्' ॥ ६८

### अस्थिसरोवरमाहात्म्यम्

तच्छ्रुत्वा देवदेवोऽपि 'मा भी राजन्! द्विजोत्तमात् ।  
 आन्दोलिकां तामारोप्य स्त्रीभिः स्वाभिः समन्वताम् ॥ ६९  
 मदाल्यात् पूर्वभागे द्वादश्यां स्नापय प्रभो ! ।  
 अस्थिनाम्नि सरस्यस्मिन् अपमृत्युनिवारणे ॥ ७०  
 प्राप्तजीवा समं स्त्रीभिः ब्राह्मणेन च योक्ष्यते ।  
 शीघ्रं याहि नृपश्रेष्ठ यथोक्तं वचनं कुरु ' ॥ ७१  
 इति देववचः श्रुत्वा प्रययौ स्वपुरं नृपः ।  
 आन्दोलिकासु रम्यासु स्त्रिय आरोप्य तामपि ॥ ७२  
 ब्राह्मणञ्च पुरस्कृत्य द्रष्टुं देवं ययौ नृपः ।  
 अस्थिकूटसरः प्राप्य स्नापयामास ताः स्त्रियः ॥ ७३  
 त्वगस्थिरूपा सा चापि ताभिः क्षिप्ता सरोवरे ।  
 प्राप्तजीवा यथापूर्वं सुव्यञ्जितशरीरजा ॥ ७४  
 उत्थिता सरसः स्नात्वा राज्ञीभिः सह मङ्गला ।  
 प्राप्ता च ब्राह्मणं प्रीता भर्तारं पुनरागतम् ॥ ७५

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः १९९

राजा हरिं पूजयित्वा ब्राह्मणाय धनं ददौ ।  
सहस्रनिष्कपर्यन्तं वस्त्राणि विविधानि च ॥ ७६  
स्वदेशगमनायैव सादरं विससर्ज ह ।  
विप्रः श्रुत्वा स्त्रियो वृत्तं प्रभावं वेङ्कटेशितुः ॥ ७७  
आशीः प्रयुज्य राज्ञेऽथ स्वदेशं प्रययौ द्विजः ।  
विप्रे गते श्रीनिवासो राजानं पुनरब्रवीत् ॥ ७८  
'दिने दिने च मध्याह्ने नैवेद्यानन्तरं नृप ! ।  
आगत्य मामर्चयित्वा यथेष्टं स्वर्णपङ्कजैः ॥ ७९  
गत्वा पुरीं स्वधर्मेण राज्यं कुरु नराधिप ! ।  
यद्यदिष्टं तव नृप भविष्यति न संशयः ॥ ८०  
नागन्तव्यमकाले तु त्वया नृप कदाचन ।  
एवं कालार्चनं कृत्वा गत्वा त्वं स्वपुरे वस ' ॥ ८१

राजा

'तथा करिष्ये देवेश मध्याह्ने चार्चयाम्यहम् ' ।  
इति देवाज्ञया नित्यमर्चयन् स्वर्णपङ्कजैः ।  
तदूर्ध्वं तुलसीपुष्पं जात्वपश्यत् स मृण्मयम् ॥ ८२

कुर्वग्रामस्थकुलालवंशजभीमाख्यभक्तोदन्तः  
विस्मितो देवदेवेशमपृच्छत् नृपसत्तमः ।

राजा

'केनार्च्यसे मृण्मयैश्च कोमलैः तुलसीसुमैः ' ॥ ८३  
राज्ञा पृष्टो देवदेवः स्मृत्वा राजानमब्रवीत् ।  
'कश्चित्कुललो मद्भक्तः कुर्वग्रामे वसत्यसौ ॥ ८४

स्वगृहेऽर्चयते राजन् ! तदङ्गीक्रियते मया ।  
 इति देववचः श्रुत्वा तं द्रष्टुं प्रययौ नृपः ॥ ८५  
 गत्वा कुर्वपुरं तस्य कुलालस्य गृहं ययौ ।  
 राजानमागतं दृष्ट्वा प्रणम्यैवाग्रतः स्थितः ॥ ८६  
 स्थितं तं भीमनामानं पप्रच्छ नृपसत्तमः ।

तोण्डमान्—

‘भीम पूजयसे देवं कथं वद कुलोत्तम !’ ॥ ८७

श्रीवहाह—

पृष्ठः प्राह कुलालोऽपि ‘जातु जाने न चार्चनम् ।  
 केनोक्तं नृपतिश्रेष्ठ ! कुलालोऽर्चयतीति हि’ ॥ ८८

तोण्डमान्—

‘देवेन श्रीनिवासेन ममोक्तं हि त्वदर्चनम्’ ।  
 स तु श्रुत्वा नृपवचः स्मृत्वा देववरं पुरा ॥ ८९

भीमः—

‘यदा प्रकाशिता पूजा यदा राजा समागतः ।  
 तोण्डमांस्तेन संवादस्तदा मोक्षं गमिष्यसि’ ।  
 इति पूर्वं वरं देवो दत्तवान् वेङ्कटेश्वरः’ ॥ ९०

कुर्वग्रामस्थभीमाख्यभक्तस्य पत्न्या सह वैकुण्ठप्राप्तिः

इत्युक्त्वाऽथ कुलालोऽपि पत्न्या सार्धं तदैव च ।  
 विमानमागतं दृष्ट्वा देवं दृष्ट्वा जनार्दनम् ॥ ९१



श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः २०१

प्रणमन् प्रजहौ प्राणान् सदारो भक्तसत्तमः ।  
पश्यतो राजराजस्य विमानमधिरुह्य च ॥ ९२  
दिव्यरूपधरो देव्या सार्धं विष्णुपदं ययौ ।  
दृष्ट्वा राजाऽद्भुतं तत्र स्वपुरं प्राप्य हर्षितः ॥ ९३  
स्वपुत्रं श्रीनिवासारूप्यं अभिषिच्य विधानतः ।  
'परिपाल्य धर्मेण मानवांश्च वसुन्धराम्' ॥ ९४  
इत्याज्ञाप्य सुतं धीमांस्तताप परमं तपः ।  
तप्यतस्तस्य देवोऽपि प्रत्यक्षमभवद्धरिः ॥ ९५

श्रीनिवासकृपया तोण्डमान् नृपस्य सारूप्यप्राप्तिः

आरुह्य गरुडं देवो रमाभूमिसमन्वितः ॥ ९६

श्रीभगवान्—

'किं करोमि नृपश्रेष्ठ तपसा तोषितस्तव' ।  
इत्युक्तो देवदेवेन तोण्डमानपि राजराट् ॥ ९७  
प्रीतिमान् प्राञ्जलिर्भूत्वा सगद्गदमुवाच ह ।  
'त्वल्लोके वस्तुमिच्छामि जरामरणवर्जिते ॥ ९८  
इदमेव वरं देहि माधवैतन्ममेप्सितम् ।'

श्रीवाराहः—

इत्युक्त्वा निपपातोऽन्यां साष्टाङ्गं देवसन्निधौ ।  
तदा कलेवरं मुक्त्वा विमानं त्वारुरोह च ॥ ९९  
गन्धर्वैः स्तूयमानोऽसौ सारूप्यं प्राप्य शार्ङ्गिणः ।  
यच्छोकमोहरहितं जरामरणवर्जितम् ।  
पुनरावृत्तिरहितं तद्विष्णोः पदमाययौ ॥ १००

**एतन्माहात्म्यश्रवणपठनफलश्रुतिः**

एतद्भविष्यं देवेशि मयोक्तं वरवर्णिनि ।

यः श्रावयेद्यः शृणुयात् विष्णुलोकं स गच्छति ॥ १०१

श्रीसूतः—

इत्युक्तां देवदेवेन सभविष्यां सहोत्तराम् ।

शृणुयाद्यः पठेद्भक्त्या कथां पुण्यां पुरातनीम् ।

स तु भुक्त्वाऽखिलान् कामान् अन्ते विष्णुपदं व्रजेत् ' ॥ १०२

॥ हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीवाराहपुराणे उत्तरार्धे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भविष्यद्वर्णने तोण्डमानचक्रवर्ति-

चरितवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥

इति श्रीवाराहपुराणान्तर्गत वेङ्कटाचलमाहात्म्यं पूर्वभागोत्तरार्द्धात्मिकं

॥ संपूर्णम् ॥



॥ श्रीरन्तु ॥

श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः

श्रियै श्रीपद्मावत्यै नमः

श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः

( अथ श्रीपाद्मपुराणान्तर्गत श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् )

## श्री पाद्मपुराणारम्भः



श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।

श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

मेरुशिखराच्छुक्रब्रह्मर्षेः वेङ्कटाचलागमनम्

देवः—

‘देवदर्शन ! देवर्षे ब्रह्मभूयकरं परम् ।

मुकुन्दानन्दनं ब्रूहि धर्मं कर्मविमोचनम् ’ ॥

१

देवदर्शनः—

‘साधु देवल भूदेव यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ।

शृणु विद्वन् ! विशेषेण वक्ष्यामि तव सुव्रत ॥

२

इतिहासमिमं पुण्यं चतुर्वर्गफलप्रदम् ।

यशस्करं रञ्जनकं आयुरारोग्यभूतिदम् ॥

३

पुरा सुमेरुशिखरे नानारत्नविचित्रिते ।

खचितानेकमाणिक्ये सौवर्णे कुट्टिमस्थले ॥

४

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| अनुस्यूतस्रवदेवस्रवन्ती निर्झराऽऽप्लुते ।       |    |
| मयूखोद्गामरत्नौघखण्डितध्वान्तकुञ्जके ॥          | ५  |
| सान्द्रस्निग्धतरुच्छायसुरद्रुमवनोदरे ।          |    |
| मकरन्दं स्रवन्तीभिः स्रग्भिस्तु परिलम्बिते ॥    | ६  |
| माणिक्यस्तम्भमहिते मकराननतोरणे ।                |    |
| विचित्ररत्नप्रत्युप्तस्वर्णस्तम्भचतुष्कके ॥     | ७  |
| सिंहासने महारत्नविचित्रांशुविराजिते ।           |    |
| सावित्र्या च सरस्वत्या सदाऽऽसीनः पितामहः ॥      | ८  |
| गन्धर्वैर्गर्विनिर्वाहैः गानविद्याविचक्षणैः ।   |    |
| गायद्भिः विन्नरगणैः गीयमानश्च वीणया ॥           | ९  |
| स्तूयमानस्तुम्बुरुणा हाहाहूहूत्थतेजसा ।         |    |
| सेव्यमानः सहस्राक्षप्रमुखैः सुरसत्तमैः ॥        | १० |
| ब्राह्मीभिः शक्तिभिर्ब्रह्मभाषाभूषाभिरात्मभूः । |    |
| अंशुकाभरणालेपाकल्पहस्ताभिरन्तिके ॥              | ११ |
| वसिष्ठप्रमुखैः ब्रह्ममुनिभिः सिद्धचारणैः ।      |    |
| मार्कण्डेयमरीच्यतिभृगुपूर्वैः महर्षिभिः ॥       | १२ |
| शापानुग्रहसामर्थ्यसाधनैश्च तपोधनैः ।            |    |
| माहात्म्यं पुण्यदेशानां ऊचिवद्भिः परस्परम् ॥    | १३ |
| समन्ततः सेव्यमानः सेवारसविशारदैः ।              |    |
| निषद्गणैरुपनिषद्गणैः श्रुतिगणैरपि ॥             | १४ |
| साङ्गैः संशिक्षितमना विश्वसर्गविलासभूः ।        |    |
| आस्ते समालपन् ब्रह्मा स्वपदाह्लादनिर्भरः ॥      | १५ |
| कथाप्रसङ्गादत्रैव नारायणगिरेर्महत् ।            |    |
| माहात्म्यमाविर्भावञ्च श्रीनिवासस्य शार्ङ्गिणः ॥ | १६ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः २०५

श्रुत्वा शुकः परमन्त्रुषिः सभायां समुपस्थितः ।  
स देशं तं दिदृक्षुः सन् कौतूहलसमाकुलः ॥ १७  
विज्ञापयन् ब्रह्मणे तं नमस्कृत्य च सर्वतः ।  
जगाम तस्मादेशाद्वै दक्षिणाभिमुखः सुधीः ॥ १८  
वासुदेवे वहन् भक्तिं पुराणपुरुषोत्तमे ।  
तत्कथाऽऽलापकुतुकः समयमानमुखो मुनिः ।  
ददर्श नारायणाद्रिं तत्र नारायणाश्रमम् ॥ १९

### श्रीवेङ्कटाचलवर्णनम्

नीलजीमूतमुदितनीलकण्ठविडम्बनम् ।  
शृङ्गकोटीरविश्रान्तवालखिल्यकुलाकुलम् ॥ २०  
तिग्मांश्चश्वरक्षुण्णशृङ्गमाणिक्यमण्डलम् ।  
अमृतांशुकरस्पर्शनिर्यदिन्दुदृषद्द्रवम् ॥ २१  
तुङ्गशृङ्गस्फुरद्रत्नतरलीकृततारकम् ।  
माणिक्यकुण्डलमहोमाद्यद्द्युमणिमण्डलम् ॥ २२  
वियलिहोतुङ्गशृङ्गविशङ्कटविटङ्ककम् ।  
चन्द्रकान्तस्रवास्वादिचकोरकुलसङ्कुलम् ॥ २३  
स्फाटिकाश्मदरीशृङ्गनिर्यन्निर्मलनिर्झरम् ।  
अधित्यकारूढफुल्लोद्गसिंहविडम्बनम् ॥ २४  
माकन्दकुसुमामन्दमकरन्दसमुक्षितम् ।  
दन्तावलघटाघातदुर्दुरप्रस्थकन्दरम् ॥ २५  
व्युत्क्रमक्रमणाक्रान्तशरभप्रस्थदुःस्थलम् ।  
महाऽन्धकारमहिमदुर्निरीक्ष्यमहर्षभम् ॥ २६

|                                                                                                                                      |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| आघ्रातव्याकुलप्राणिव्याघ्रभीमभृगुस्थलम् ।<br>निर्झरापातपर्यन्तप्रस्तमुस्तार्धसूकरम् ॥                                                | २७ |
| यमवाहनदुर्दर्शनिनदन्महिषाकुलम् ।<br>शाखाशिखाक्रमच्छाखामृगसानुमहीरुहम् ॥                                                              | २८ |
| विकीर्णश्वापदानीकाधित्यकोपत्यकात्यधम् ।<br>अभ्रङ्कषाग्रविविधविटपाटविपाटनम् ॥                                                         | २९ |
| धातुप्रस्थस्थलीनिर्यदोघप्रस्रवणाकुलम् ।<br>अन्तकास्यप्रतीकाशगुहागोहोषितार्णकम् ॥                                                     | ३० |
| झिल्लिकानादवधिरीभूतदिवक्त्रवालकम् ।<br>दिव्यं विभूत्यपादानं तत् गायद्भिरुषितान्तरम् ॥                                                | ३१ |
| नानामणिमयूखौघमहेन्द्रायुधवर्चसम् ।<br>कृष्णसारवरोद्रिक्तहरिणीकुलसङ्कुलम् ॥                                                           | ३२ |
| विधुन्वद्वालविमलचमरीचङ्क्रमोत्कटम् ।<br>लाङ्गूलवेलितलसद्गोलङ्गूलकुलाकुलम् ॥                                                          | ३३ |
| प्रवालकाण्डप्रस्तारमण्डितान्तरकन्दरम् ।<br>इतस्ततस्तपस्यद्भिः ऋषिभिः निर्झरान्तिके ॥                                                 | ३४ |
| आस्थातव्यप्रस्थदेशं ब्रह्मध्यानपरायणैः ।<br>आश्रितार्तिहरच्छायविशालवनपादपम् ।<br>तस्य सानुमतः सोऽपि पादानाश्रित्य सत्वरः ॥           | ३५ |
| शुक्रस्य श्रीवेङ्कटाचलस्थपुण्यतीर्थावगाहनम्<br>निर्झरेष्वाप्लवं कुर्वन् विमलोद्देष्वनन्यधीः ।<br>हृदेषु देवखातेषु नदीप्रस्रवणेषु च ॥ | ३६ |
| अन्येष्वमल्लतीर्थेषु त्रिवृद्धस्र जपन् मुनिः ।<br>संसारमोचनीं ब्रह्मविद्यां विद्याविजृम्भिणीम् ॥                                     | ३७ |

श्रीपद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः २०७

जपन्नुपांशु मनसाऽवद्याविद्यानिर्वाहणीम् ।  
निवसन् रजनीमेकां तत्र तत्र समाहितः ॥ ३८  
अतन्द्रितोऽञ्जनगिरिं प्राप विप्रोपवेशनम् ।  
तत्र तत्र गुहागेहेष्वासीनैः मुनिपुङ्गवैः ॥ ३९  
योगिभिः सिद्धसङ्घैश्च विशुद्धज्ञानशालिभिः ।  
वैखानसैश्च मुनिभिः कृतातिथ्यसपर्यकम् ॥ ४०  
शिल्पतलेषु निवसन् विपुलेषु शनैःशनैः ।  
कुमारधारां धारालच्यवमानामलोदकाम् ।  
आससादाह्वं चात्र चक्रे व्यासौरसो मुनिः ॥ ४१

स्कन्दस्य कुमारधारास्नानेन शक्त्यायुधप्राप्तिः

अस्या माहात्म्यमतुलं तुलितानन्यतीर्थकम् ।  
शक्तिप्रदं शक्तिपाणेः शरण्यं शरणार्थिनाम् ।  
पुराऽमरैः प्रार्थितेन शङ्करेण पुरारिणा ॥ ४२  
औमापत्यो बाहुलेयः सैनापत्ये नियोजितः ।  
तद्वोदुमसहन् सोऽपि सैनापत्ये निविष्टधीः ॥ ४३  
अनेकापायसदनमुपायरहितो गुहः ।  
दैत्यारेः प्राप्तुकामस्सन् तत्पतीकरमाप्तवान् ॥ ४४  
त्रिसन्ध्यमाह्वं कुर्वीच्छिवद्वह्म जपन् सुधीः ।  
त्रिसन्ध्यमर्चयन् विष्णुं दिव्यैः पुष्पैरनन्यधीः ॥ ४५  
अस्या निर्झरधारायां तपस्तेपे समीपतः ।  
तपसा तस्य सन्तुष्टो भगवान् विष्टरश्रवाः ॥ ४६  
आविर्भूय ददौ शक्तिं तस्मै सोऽपि तिरोदधे ।  
कुमारस्तं प्रणम्याथ देवं स्वर्गं जगाम सः ॥ ४७

|                                                         |    |
|---------------------------------------------------------|----|
| तेन प्रवर्तते लोकः पुरुषार्थात्मकेन तु ।                |    |
| अज्ञानिनो नरा मुह्यन्त्यन्योन्यप्रणयादिह ॥              | ६५ |
| पुरुषाश्च स्त्रियो दृष्ट्वा तांश्च दृष्ट्वा च तास्तथा । |    |
| तितीर्षुस्तपसाऽज्ञानमयं संसारसागरम् ॥                   | ६६ |
| निवृत्तविषयोऽतैव स्थितोऽस्मिन् विजने वने ।              |    |
| विधिनाऽऽपादितश्चैवान्तरायस्तपसो मम ॥                    | ६७ |
| स्त्रियस्तपोविघ्नकर्यः परिहार्याः प्रयत्नतः ।           |    |
| तितीर्षुं दुस्तरं घोरं महासंसारसागरम् ॥                 | ६८ |
| गृह्णाति विषयग्राहो मध्ये पुरुषमित्युत । '              |    |
| तपोलोभमयादित्थं चिन्तयन् सहसा मुनिः ॥                   | ६९ |
| समदर्शी तु सर्वत्र जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।             |    |
| कन्दर्पसायकान् घोरान् जित्वाऽक्षोभ्यो हि निर्ममः ।      |    |
| श्रीनिवासं हृषीकेशं सहसा शरणं ययौ ॥                     | ७० |
| कमलविभवलोभनैरनङ्गभिनवविभूतिविभागभागधेयैः ।              |    |
| अधरितमुनिमानसानुभावैः अवमतिमाकलयन् विलोकनैश्च ॥         | ७१ |
| शिखरदशनदीधितिप्रतानप्रसभनिरस्ततमश्छटैः प्रहासैः ।       |    |
| नटनविकटविभ्रमैः चिकीर्षन् नयनविलासभरैः तपोऽन्तरायम् ॥   | ७२ |
| इति विबुधविलसिनीगणस्तं मुनिमभितः परिवार्य चावतस्थे ।    |    |
| व्यवसितमतिरच्युतप्रपत्तौ स च न शशाप तपोविनाशभीरुः ॥     | ७३ |

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवल-देवदर्शनसंवादे

पाद्मसरस्तीरस्थदिव्यारामे शुकब्रह्मर्षेः महानियमपूर्वकतपः-

करणादिवर्णनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः २०९

|                                                       |    |
|-------------------------------------------------------|----|
| ‘ अमृतोदन्वदुत्तुङ्गतरङ्गमहिमावली ।                   |    |
| श्रीवत्सवक्षा नित्यश्री अदृश्यश्च मलात्मनाम् ॥        | ५७ |
| अनन्तभोगायतनोऽनन्तोऽनन्तफलप्रदः ।                     |    |
| अतोऽस्मादग्निदिग्गणे सार्धयोजनमात्रके ॥               | ५८ |
| अस्य सानुमत पादमूले कूलङ्कषद्रुमे ।                   |    |
| नद्याः सद्योऽघनाशिन्याः स्वर्णमुख्यास्तटे शुभे ॥      | ५९ |
| ‘ पद्म ’ मित्युत्तरे ख्यातं पवित्रं परमं सरः ।        |    |
| तस्य गत्वा तटे तूर्णं अत्युग्रं तप आचर ॥              | ६० |
| पश्चादचञ्चलत्वं ते मनीषाया विविप्यति ।                |    |
| तदा स्याद्भगवान् विष्णुः प्रत्यक्षः सर्वसाक्षिभूः । ’ |    |
| एवं सादरमुक्त्वा वाक् जनानां शृण्वतामपि ॥             | ६१ |

### अशरीरोक्तं या शुकस्य पद्मसरोवरगन्धनम्

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| प्रक्षालयन्ती शमलं मुनेर्याताऽशरीरिणी ।       |    |
| एवमेतां नशम्यसौ जलादुत्तीर्य तीर्थतः ॥        | ६२ |
| अतिस्नेहो विस्मितश्च वैश्रसि मुनिरत्वरः ।     |    |
| एवमालोचयन् बुद्ध्या शरीरात्मविशोधनीम् ।       | ६३ |
| प्रसादसूचिनीं विष्णोः प्रविष्णोः प्रसंसिर्नमः |    |
| जगाम वेगात्तं देशं यत्र पद्मसरोवरः ॥          | ६४ |

### पद्मसरोवरवर्णनम्

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| प्रसन्नं सन्मन इव वैडूर्यविमलदकम् ।            |    |
| उत्फुल्लैः पुण्डरीकैश्च कल्हारैः कनकाम्बुजैः ॥ | ६५ |

|                                                         |    |
|---------------------------------------------------------|----|
| नीलोत्पलैः कुवल्यैः रक्ताब्जैरञ्जितान्तरम् ।            |    |
| मकरन्दमदोन्मत्तमधुरालिकुलोज्ज्वलम् ॥                    | ६६ |
| कारण्डवैः कलरवैः वाचाटितदिगन्तरम् ।                     |    |
| भ्रमद्भ्रमरवृन्दैश्च मधुपानमदोद्धतैः ॥                  | ६७ |
| गृहीतग्राहदुर्ग्राहं वलमानसुमीनकम् ।                    |    |
| वराहसङ्घैरभितो ग्रस्तमुस्तैरलङ्कृतम् ॥                  | ६८ |
| मृणालकवलाऽऽकीर्णकरैः करिकदम्बकैः ।                      |    |
| एणैः सशवैरेणीभिः उपान्ते परितो वृतम् ॥                  | ६९ |
| मदोन्मत्तैर्वनचरैः वयोभिरभितो वृतम् ।                   |    |
| तपस्यत्तापसक्लेशहरणं रमणं हरेः ।                        |    |
| श्रीमदेतत् पद्मतीर्थं महातीर्थं शुको मुनिः ॥            | ७० |
| <b>शुकस्य पद्मसरसि श्रीनिवासध्यानपूर्वकस्नानादिकम्</b>  |    |
| ददर्श स गतक्लेशः स्नानपाननिषेवणैः ।                     |    |
| स्मरन् नारायणं विष्णुमभूत् निश्चलचेतनः ॥                | ७१ |
| मुहूर्तं तत्र विश्रम्य संयमी नियमस्थितः ।               |    |
| वन्यैरपाकैः पक्षैश्च फलैः स्वपतितैरपि ॥                 | ७२ |
| दिनस्य पञ्चकाले वै कृताहारोऽभवन्मुनिः ।                 |    |
| शिश्ये च दर्भशय्यायां स निवर्त्याऽऽह्निर्कीं क्रियाम् ॥ | ७३ |
| ब्राह्मे मुहूर्ते चान्येद्युः उत्थाय प्रयतो वशी ।       |    |
| चिन्तयन् पुण्डरीकाक्षं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥                | ७४ |
| करुणारसकलोलतरङ्गितकटाक्षकम् ।                           |    |
| शरत्पूर्णेन्दुवत्त्राभं पीतकौशेयवाससम् ॥                | ७५ |
| महोरस्कमुदाराङ्गं श्रीनिवासं महामतिः ।                  |    |
| सन्ध्यामुपास्य विधिवत् स्नानपूर्वं समाहितः ॥            | ७६ |

पद्मसरोवरतीरस्थदिव्याऽग्रमवर्णनम्

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| ददर्श सरसस्तस्य तीरे त्वभिनवं वनम् ।               |    |
| पुन्नागनागपनसपाटलशोककिंशुकैः ॥                     | ७७ |
| कुन्दमन्दारमाकुन्दहरिचन्दनचन्दनैः ।                |    |
| तालचम्पकहिन्तालहरितालतमालकैः ॥                     | ७८ |
| नक्तमालैश्च सरलैः नारिकेलैश्च केसरैः ।             |    |
| पनसैः केतकैः सालैः पालारैः पिप्पलैः वटैः ॥         | ७९ |
| खर्जूरैः खादिरैः प्लक्षैः रुद्राक्षैः रसनैर्धवैः । |    |
| सङ्कीर्णमभितः सान्द्रं महेन्द्रोपवनोपमम् ॥         | ८० |
| माधवीमल्लिकायूथीवनयूथीसुताभिः ।                    |    |
| शतपत्रिनिराकीर्णं सुमनोभिः सुगन्धिभिः ॥            | ८१ |
| दमनीमरुशाखाभिः तुलसीभिः विजृम्भितम् ।              |    |
| कुन्दमल्लिकयोपेतं कुशकाशप्रकाशितम् ।               |    |
| विश्वामित्रैः पत्रित्रैश्च मुञ्जैरप्यभिजृम्भितम् ॥ | ८२ |

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवल - देवदर्शनसंवादे  
सुमेरुशिखरात् शुकस्य श्रीवेङ्कटाचलागमन - पद्मसरप्राप्त्यादिवर्णनं

नाम चतुर्विंशोऽध्यायः



## दिव्यारामे शुकब्रह्मर्षेः महानियमपूर्वकृतपोनुष्ठानम्

देवदर्शनः —

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| तटे श्रीपद्मतीर्थस्य पद्मवाटीपटीयसः ।          |    |
| वटाटवीजटाऽऽटोपविशङ्कटवियत्तटे ॥                | १  |
| अधीतवेदवेदान्ततापसौघनिषेविते ।                 |    |
| अनूदितब्रह्मवोषैः अन्विते वयसां गणैः ॥         | २  |
| पतङ्गाऽध्यापिताऽऽम्नायप्रमोदार्षिकुमारके ।     |    |
| हुतवैतानवह्युत्थहविर्गन्धसुमोदिते ॥            | ३  |
| मृगशावविल्लनाग्रकुशगुल्मविजृम्भिते ।           |    |
| मनःशन्तोषकरणे सर्वोपकरणान्विते ॥               | ४  |
| विचित्रविविधाऽऽमोदे वने चैत्ररथोपमे ।          |    |
| तपःकरिष्यन् दिष्ट्या तु समाहितमना मुनिः ॥      | ५  |
| विचिन्तयन् वियद्वाक्यं विमलाल्मा व्यतिष्ठत ।   |    |
| स्वाध्यायं समधीयानो विष्णुमेवाग्रतो यजन् ॥     | ६  |
| पर्णाशनो हिताचारनियतो नियमस्थितः ।             |    |
| मितभाषी मिताहारः शान्तो दान्तो गुरुप्रियः ॥    | ७  |
| सात्त्विकः सत्त्वसम्पन्नो विष्णुभक्तो बभूव ह । |    |
| श्रीनिवासमनाराध्य किञ्चिन्नाश्नाति नित्यशः ॥   | ८  |
| क्षुधाक्षामोऽप्यनैवेद्यं नोपजीवति चैकदा ।      |    |
| विष्णुपादोदकादन्यत् तृष्णार्तोऽपि न चापिबत् ॥  | ९  |
| निर्द्वन्द्वो निरहङ्कारो धीरो विगतमत्सरः ।     |    |
| कुशेशयासनासीनः कुशास्तरणभूतले ॥                | १० |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे पञ्चविंशोऽध्यायः २१३

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| कुशाग्रबुद्धिरचलः कुशहस्तपवित्रकः ।           |    |
| कृष्णाजिनोत्तरासङ्गः कृष्णवर्त्मशिखाजटः ॥     | ११ |
| कृष्णाजिनाम्बरधरः कृष्णद्वैपायनात्मजः ।       |    |
| अक्षमालाधरकरो विजिताक्ष क्षमाक्षमः ॥          | १२ |
| नासाग्रन्यस्तनयनः आर्जवोर्जितकायकः ।          |    |
| दन्तैरसंस्पृशन् दन्तान् जिह्वागूहिततालुकः ॥   | १३ |
| धारणाध्यानसम्पन्नः प्राणायामविशुद्धधीः ।      |    |
| उपांशु मानसजपगूढोष्ठस्फुरणाननः ॥              | १४ |
| वैकुण्ठेऽकुण्ठितमतिः गायत्रीं वैष्णवीं जपन् । |    |
| वर्षासु जलमध्यस्थो ग्रीष्मे पञ्चाग्निमध्यगः ॥ | १५ |
| अध्यर्कदृक्समद्वन्द्वोपद्रवो वीतनिद्रकः ।     |    |
| कालानलप्रतिभटकायः कमललोचनः ॥                  | १६ |

शुकमुनिर्तपोग्रिज्जालाभिर्लोकोपद्रवोत्पत्तिः

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| एवं प्रवृत्तो घोरश्च तपश्चर्तुं तपोधनः ।    |    |
| तपसा तस्य सन्तप्ता चचाल च वसुन्धरा ॥        | १७ |
| मार्तण्डश्चण्डकिरणो न तताप नभोऽन्तरे ।      |    |
| अब्धयः क्षुभिताः सर्वे वर्षुः न बलहकाः ॥    | १८ |
| जातवेदा न जज्वाल विमानानि दिवौकसाम् ।       |    |
| नभोमध्ये न चेरुश्च बभूवेन्द्रश्च शङ्कितः ॥  | १९ |
| वृत्तवैरी महेन्द्रोऽपि किंकर्तव्यविमूढधीः । |    |
| चिन्तयन्नस्य तपसो विघ्नमप्सरसस्तदा ।        |    |
| समाहूयाऽऽह वचनं सादरं सान्त्वपूर्वकम् ॥     | २० |

## शुकतपोभङ्गाय महेन्द्रोत्तरम्भादिसान्त्ववचनानि

- ‘ विसृष्टा वेधसा यूयं निसर्गात् जगतो हि ते ॥ २१  
 रूपयौवनलावण्यशालिन्यः पद्मलोचनाः ।  
 मत्तमातङ्गगामिन्यो मन्दमन्थरगीतयः ॥ २२  
 सुभ्रुवश्च सुकेशान्ताः घनपीनपयोधराः ।  
 शुचिस्मिताः पङ्कविम्बाधरोष्ठा मदलालसाः ॥ २३  
 युष्माभिर्मोहितं विश्वं ससुरासुरमानुषम् ।  
 वीक्षणाद्यैर्वैलसैस्तु निर्जिता मम शत्रवः ॥ २४  
 कामिनीः पुरतो दृष्ट्वा कः समागौ प्रवर्तते ।  
 निर्याति मानसं तस्मात् कर्मुक्ता न सायको यथा ॥ २५  
 यूयमापदि सर्वत्र बलमस्माकमेव हि ।  
 नाशक्यमस्ति वः किञ्चित् सर्वेषु भुवनेष्वपि ॥ २६  
 उपस्थितमिदानीं नः सकलानर्थकं भुवि ।  
 कर्तव्यः प्रशमस्तस्य भवतीभिः झटित्यपि ॥ २७  
 वासवेनैवमुक्तानां प्रधानाप्सरसां वरा ।  
 प्रणम्य प्राञ्जलिः प्राह रम्भा मधुरभाषिणी ॥ २८

## महेन्द्रनिकटे रम्भादिकृतप्रतिज्ञा

- ‘ यच्छाससि सुरेशान् ! तदद्य विदधीमहि ।  
 भवत्कृते जीवितं नः त्रिदशाध्यक्ष केवलम् ॥ २९  
 श्वेतद्वीपं ब्रह्मलोकं कैलासं वाऽन्यमूर्जितम् ।  
 प्रवेक्ष्यामो वयं देशं वर्तन्ते यत्नं तेऽरयः ॥ ३०  
 मोहिताश्च भविष्यन्ति तेऽस्मद्वीक्षणवीक्षिताः ।  
 एकाकिनः सदैकान्तभावाः सात्त्विकसत्तमाः ॥ ३१

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे पञ्चविंशोऽध्यायः २१५

प्रणमन्ति स्म नः पादान् शिरोभिः मोहिताः स्वयम् । '  
एवमुक्तस्तु देवेशः तथा मधुरभाषया ॥ ३२  
एवमाह स सन्तुष्टो रम्भामप्सरसां वराम् ।  
' सत्यमुक्तं त्वया रम्भे ! मुनिमोहनरूपया ॥ ३३  
भूमौ कश्चित् मुनिवरः 'शुक' इत्येव नामतः ।  
सुवर्णमुखरीतीरे तपश्चरति दुश्चरम् ॥ ३४  
तत्र गत्वा मुनिश्रेष्ठं मोहयध्वं वराङ्गनाः ।  
इत्युक्ता देवराजेन प्रेषिताः सादरं किल ।  
देवस्त्रियस्तं प्रणम्य जम्भुर्यत्नं तपोधनः ॥ ३५

**शुकतपोवनं प्रत्यागतानां रम्भादीनां शृङ्गारलीलाः**

मुनेः समीपतो गत्वा ताः स्त्रियो मधुरं जगुः ।  
मदोद्धताश्च ननृतुः वेणुवीणारवान्वितम् ॥ ३६  
कन्दर्पदर्पकलिताः कथयन्त्यः कथा मिथः ।  
वदन्ति स्म हसन्ति स्म क्ष्वेलयन्ति मदालसाः ॥ ३७  
स्थित्वा पुरस्तात् तस्येत्थं मदान्धाः सुरयोषितः ।  
शृङ्गारचेष्टाः चक्रुश्च विविधाः चाटुपूर्वकम् ॥ ३८  
इन्द्रप्रचोदितस्तत्र तपनो न तताप च ।  
वायुः कल्हारसुरभिः ववौ मन्दः सुखावहः ॥ ३९  
सुधानिधिश्च ववृधे मदयन् सुरसुन्दरीः ।  
कालः सर्वर्तुकुसुमोपेतस्तत्र बभूव ह ॥ ४०  
एवंविधे मधूद्वेगमहितेऽस्मिस्तपोवने ।  
इतस्तनः शम्बरारिर्विशङ्को विचचार ह ॥ ४१  
अतश्चानङ्गविवशाः चेष्टयन्त्योऽमराङ्गनाः ।  
ता न शेकुस्तस्य नेत्रे निवर्तयितुमग्रतः ॥ ४२

## श्रीनिवासध्यानेन जितकानं शुकं प्रति रम्भादिहासोक्तिः

|                                                           |    |
|-----------------------------------------------------------|----|
| सोऽपि ध्यायन् श्रीनिवासं शङ्खार्यब्जगदाधरम् ।             |    |
| वासुदेवं हृषीकेशं जगतां कारणं परम् ॥                      | ४३ |
| समाश्रितार्तिहरणं सुहृदं सर्वदेहिनाम् ।                   |    |
| नाबिन्दयच्चान्तिकस्थाः ताः स्त्रियस्तपसैवितः ॥            | ४४ |
| समीक्ष्य तास्तं दुर्धर्षनूचुरप्सरसस्तदा ।                 |    |
| लज्जाकोधसमाविष्टाश्चैवमूचुः परस्परम् ॥                    | ४५ |
| ‘को वा ह्याऽस्तेऽत्र दुर्बुद्धिः पूणिं निक्षिप्तवीक्षणः । |    |
| उपस्थितमुपेक्ष्येमं गणमप्सरसां स्वयम् ॥                   | ४६ |
| समीपस्थमसम्प्रेक्ष्य सर्वस्य तपसः फलम् ।                  |    |
| दुरात्मनाऽतिभूढेनामुत्र किं चिन्त्यतेऽधुना ॥              | ४७ |
| दृष्ट्वा सुखान्यप्सरसां सहस्राक्षः शचीपतिः ।              |    |
| सुराधीशः सहस्राक्षणां साफल्यं सम्यगश्नुते ॥               | ४८ |
| यागादिकाः क्रियाः सर्वाः कुर्वन्त्यस्मत्कृते नराः ।       |    |
| ददुश्च धनधान्यानि तप्यन्ति स्म तपांसि च ॥                 | ४९ |
| यस्त्वस्माकं प्रियालापान् न शृणोति मनोरमान् ।             |    |
| अचेतनो वृथाजीवी भवत्यल्पमतिः स हि ॥                       | ५० |
| स्तनाश्लेषं नरोऽस्माकं लभते यः सुदुर्लभम् ।               |    |
| स धन्यः पुरुषो लोके गण्यते पुण्यकोविदैः ॥                 | ५१ |
| विद्यानामार्जनं बाल्ये यौवने विषयैषिता ।                  |    |
| वृद्धत्वे तपसां वृत्तिः इत्युशन्ति मनीषिणः ॥              | ५२ |
| सुकुमारो युवाऽत्यन्तसुभगः तपसि स्थितः ।                   |    |
| शृङ्गारिणीनां शृङ्गारः सुन्दरीजनसुन्दरः ॥                 | ५३ |



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे पञ्चविंशोऽध्यायः २१७

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| देशकालवतिक्रम्य यत्कर्म कुरुते नरः ।          |    |
| तत्तस्य निष्फलमिति प्रवदन्ति मनीषिणः ॥        | ५४ |
| स्वधर्माचारनिरता वेदशास्त्रविशारदाः ।         |    |
| करस्थरत्नमुत्सृज्य मूढधीः अन्यदिच्छति ॥       | ५५ |
| दिव्याङ्गनाः पूजनीया मनुष्याणां विशेषतः ।     |    |
| अयमस्मान् अनादृत्य त्रिष्टयत्यन्तदुर्मतिः ॥   | ५६ |
| पूज्यपूजाविपर्यासः श्रेयो हन्तीत्युशन्ति हि । |    |
| तास्वित्थं जल्पमानासु सुरयोषित्सु सुव्रतः ॥   | ५७ |

रम्भादिदुर्व्यापारान् विलोक्य शुकब्रह्मर्ष्यनुतापः

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| तपःकृशतराकारः कृष्णद्वैपायनाऽत्मजः ।             |    |
| नाचिन्तयत् समस्तास्ता घुष्यन्तीरिव गर्दभीः ॥     | ५८ |
| उपस्थितं तपोविघ्नं चिन्तयामास च स्थिरः ।         |    |
| ‘केनेमाः प्रेषिताः ह्यस्मत्तपोभङ्गचिकीर्षुणा ॥   | ५९ |
| अव्याजत्रैरिणा कश्चित् लोभोपहतचेतसा ।            |    |
| निदानं पापचेष्टानां पापीयस्यः स्वतः स्त्रियः ॥   | ६० |
| अनेकानर्थसार्थास्ता व्यक्तमुक्ता मनीषिभिः ।      |    |
| व्रीडा विज्ञानमास्तिक्यं पौरुषं श्रुतिरुन्नतिः ॥ | ६१ |
| दर्शनादेव नश्यन्ति स्त्रीणामेतानि सर्वशः ।       |    |
| धैर्यपारंगतः सर्वधर्मशास्त्रविशारदः ॥            | ६२ |
| योषिर्दर्शनमात्रेण मुह्यति क्षुभ्यति स्वयम् ।    |    |
| स्त्रियो हि नरकद्वारं निर्मितं परमेष्ठिना ॥      | ६३ |
| तस्मात्तद्दर्शनं पापं नराणान्तु तपस्विनाम् ।     |    |
| स्त्रीपुंविभागो जगतां भूत्यै धात्वा विनिर्मितः ॥ | ६४ |



## अथ षड्विंशोऽध्यायः

श्रीनिवासमुद्दिश्य रम्भद्यप्सरस्सङ्घभीतशुकस्तुतिः

- अथ विबुधविलासिनीषु विष्वङ् मुनिममितः परिवार्य तस्थुषीषु ।  
 मदविकृतिविकल्थनप्रलापास्ववमतिनिर्मितनैजचापलासु ॥ १
- त्रिभुवनमुदमुद्यतासु कर्तुं मधुसहसाऽगतिगर्वनिर्वहासु ।  
 मधुरसभरिताखिलात्मभावास्वगणितभीतिषु शापतः शुकस्य ॥ २
- अतिविमलमतिर्महानुभावो मुनिरपि शान्तमनाः निजात्मगुप्त्यै ।  
 अखिलभुवनरक्षकस्य विष्णोः स्तुतिमथ कर्तुमना मनाक् बभूव ॥ ३
- “ श्रियः श्रियं षड्गुणपूरपूर्णं श्रीवत्सचिह्नं पुरुषं पुराणम् ।  
 श्रीकण्ठपूर्वामरवृन्दवन्द्यं श्रियःपतिं तं शरणं प्रपद्ये ॥ ४
- विभु हृदिस्थं भुवनेशमीड्यं निराश्रयं निर्मलचित्तचिन्त्यम् ।  
 परात्परं पारमपारमेनं उपेन्द्रमूर्तिं शरणं प्रपद्ये ॥ ५
- स्मेरातसीसूनसमानकान्तिं सुरक्तपद्मप्रभपादहस्तम् ।  
 उन्निद्रपङ्केरुहचारुनेत्रं पवित्रपाणिं शरणं प्रपद्ये ॥ ६
- सहस्रभानुप्रतिमोपलौघस्फुरत्किरीटप्रवरोत्तमाङ्गम् ।  
 प्रवालमुक्तानवरत्नतारहारं हरिं तं शरणं प्रपद्ये ॥ ७

तत्र तत्कृतदशावतारस्तोत्रम्

- “ पुरा रजोदुष्टाधियो विधातुः अपाकृतान् यो मधुकैटभाभ्याम् ।  
 वेदानुपादाय ददौ च तस्मै तं मत्त्यरूपं शरणं प्रपद्ये ॥ ८
- पयोधिमध्ये पृथुमन्दराद्रिं धर्तुं च यः कूर्मवपुर्वभूव ।  
 सुधां सुराणामवनार्थमिच्छन् तमादिदेवं शरणं प्रपद्ये ॥ ९
- वसुन्धरां दुर्भरदैत्यपीडितां रसातलान्तर्विवराभिविष्टाम् ।  
 उद्धारणार्थञ्च वराह आसीच्चतुर्भुजं तं शरणं प्रपद्ये ॥ १०

- नखैरुस्तीक्ष्णमुखैर्हिरण्यं अरातिमार्दितसर्वसत्त्वम् ।  
विदारयामास हि यो नृसिंहो हिरण्यगर्भं शरणं प्रपद्ये ॥ ११
- यो यज्ञवाटमभिगम्य पूर्वं बलेर्ययाचे त्रिपदीं भुवश्च ।  
पश्चाद्ददौ तत्पदमेव तस्मै श्रीवामनं तं शरणं प्रपद्ये ॥ १२
- त्रिस्सप्तकृत्वः क्षितिपाललोकं परश्चथेनापि निहत्य पित्ने ।  
ददौ निवापं तदसृग्जलैर्घैः तं भार्गवं राममहं प्रपद्ये ॥ १३
- दशाननं दाशरथिः स भूयः छित्त्वा शिरांस्येकशरेण वीरः ।  
लङ्कां ददौ यश्च विभीषणाय तं रामभद्रं शरणं प्रपद्ये ॥ १४
- हलायुधो यो यदुवंशदीपः प्रलम्बपूर्वामरवैरिहन्ता ।  
अभूद्वद्वान्यो बलभद्ररामो विराट् परं तं शरणं प्रपद्ये ॥ १५
- वृष्ण्यन्ववायप्रभवं धरित्री भारापहारप्रथितप्रभावम् ।  
कृष्णं परं पाण्डवभागधेयं योगीन्द्रवन्द्यं शरणं प्रपद्ये ॥ १६
- कलिं स्वतः कल्मषदुष्प्रधर्षं कलानुविद्धं विकरालवेषम् ।  
संहर्तुकामो भविता च कल्की यस्तं मुकुन्दं शरणं प्रपद्ये ॥ १७
- अहं महत्वेन्द्रियपञ्चभूततन्मात्रमात्रा प्रकृतेः पुराणी ।  
यतः प्रसूता पुरुषः तदात्मा तमात्मनाथं शरणं प्रपद्ये ॥ १८
- पुरा य एतत्सकलं बभूव येनापि तद्यत्नं च लीनमेतत् ।  
आस्तां यतोऽनुग्रहनिग्रहौ च तं श्रीनिवासं शरणं प्रपद्ये ॥ १९
- निरामयं निश्चलनीरराशिनिकाशसद्रूपमयं महस्तत् ।  
निश्चिन्तुनिर्मातृनिहन्तृनित्यं निद्राणामेकं शरणं प्रपद्ये ॥ २०
- जगन्ति यः स्थावरजङ्गमानि संहृत्य सर्वाण्युदरेशयानि ।  
एकार्णवान्तर्वेष्टपत्ततल्पे स्वपित्यनन्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २१
- निरस्तदुःखौघं अतीन्द्रियं तं निष्कारणं निष्कलमप्रमेयम् ।  
अणोरणीयांसमनन्तमन्तः आत्मानुभावं शरणं प्रपद्ये ॥ २२

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकण्डे षड्विंशोऽध्यायः २२१

सप्ताम्बुजीरञ्जकराजहंसं सप्तार्णवीसंस्तुतिकर्णधारम् ।  
सप्ताश्वविम्बस्थहिरण्मयं तं सप्तार्चिरङ्गं शरणं प्रपद्ये ॥ २३  
निरागसं निर्मलपूर्णविम्बनिशीथिनीनाथनिभाननाभम् ।  
निर्णीतनीतिं निगमान्तनित्यनिश्श्रेयसं तं शरणं प्रपद्ये ॥ २४  
द्वितीयहीनं रचिताजडात्मनिजान्तरारोपितविश्वविश्वम् ।  
निस्सीमकल्याणगुणात्मभूतं निधिं निधीनां शरणं प्रपद्ये ॥ २५

### श्रीनिवासमुद्दिश्य शुकब्रह्मर्षिप्रार्थना

त्वक्चर्ममांसास्थ्यसृग्शुक्रमूत्रश्लेष्मान्त्रविट्छुक्कसमुच्चयेषु ।  
देहेष्वसारेषु न मे स्पृहैषु ध्रुवं ध्रुवं त्वं भगवन्! प्रसीद ॥ २६  
कारुण्यपाथोनिधिवलगदूर्मिमाल्यलसच्छैवलकज्जलत्तैः ।  
राजीवराजीरमणैरपाङ्गैरनाथमानन्दय नाकनाथ! ॥ २७  
भक्तिः क मे त्वच्चरणारविन्दमधूदमाद्यन्महिमाऽप्यनन्या ।  
बुद्धिः क दुष्टेन्द्रियवाजिरूढा नैकल तेजस्तिमिरस्थितिर्हि! ॥ २८  
न विद्यते त्वत्पदपद्मपीठनिषेविणां काप्यशुभं नराणाम् ।  
उपस्थितं मे भयमुत्पलाक्षीविलोकनैर्लोपय लोकनाथ! ॥ २९  
समाधिभङ्गोऽयमिह प्रवृत्तो दुरात्मना केन दुरन्तचिन्तः ।  
त्वमेव मां रक्ष भयादमुष्मात् त्वदन्यतो नास्ति गतिर्मुकुन्द ॥ ३०  
अनाथनाथ! धिषणा मम त्वय्येव वर्तते ।  
सर्वथा सर्वकालेषु तदाऽऽस्तां त्वत्प्रसादतः ॥ ३१  
प्रसन्ने त्वयि गोविन्दे लभ्यं सर्वत्र किं प्रभो ।  
स्वर्गापवर्गौ भगवन् त्वद्भक्तानामदुर्लभौ ॥ ३२  
भवता वीक्ष्यते यस्तु तस्य त्वद्भक्तिरुज्जिता ।  
उपेक्ष्यते तु यस्तस्य भोगेच्छा चाभिजायते ॥ ३३

अतः शृङ्गारयोग्यस्त्रीभयविह्वलमत्र माम् ।  
 रक्ष त्वमेव शरणं अनन्यशरणो गतः ॥ ३४  
 नमः सकलकल्याणकारिणे करुणात्मने ।  
 श्रीवत्सवक्षसे तस्मै लक्ष्मीनारायणात्मने ॥ ” ३५

### रम्भादीनां स्वलावण्यनिन्दापूर्वकं यथागतं गमनम्

पाराशरे ब्रह्ममुनौ पुराणं पुमांसमित्थं शरणं प्रपन्ने ।  
 देवस्त्रियः कामशरेण विद्धा यथागतं क्षीणधियः प्रतीयुः ॥ ३६  
 अथ सुरवनिताभिरीक्षणाद्यैः निर्जविकृतैरगृहीतचित्तवृत्तिः ।  
 विधुरिव तमसा गृहीतमुक्तो मुनिरपि निश्चलधीः तपः प्रपन्नः ॥  
 फलान्यलभमानासु तपोभङ्गे महामुनेः ।  
 रूपवेषाभ्यसूयासु निर्गतास्वप्सरस्वितः ॥ ३८

### भगवत्कृपया शुक्रकृतदृढतरभक्तिपूर्वकभगवदुपासनम्

ततःस्मरन् भगवतो हृषीकेशस्य शार्ङ्गिणः ।  
 इन्द्रियग्राममखिलं संयम्यास्मै समर्पयन् ॥ ३९  
 परां काष्ठां समाकाङ्क्षन् काष्ठाश्मसमकायकः ।  
 अतितापसचारित्रं कुर्वन्नुष्टभूमिगः ॥ ४०  
 भक्तार्तिभञ्जनपरं भक्तवत्सलमव्ययम् ।  
 हृत्पुण्डरीकनिलयं चिन्तयन् पुष्करेक्षणम् ॥ ४१  
 विज्ञानवैराग्यनिधिः कार्णवैपायनिर्मुनिः ।  
 अतिघोरतरं क्रूरं चकार सुमहत्तपः ।  
 तपसा तस्य सर्वात्मा सन्तुष्टः पद्मलोचनः ॥ ४२

शुकमुनिं प्रति तपस्तुष्टश्रीनिवासागमनम्

|                                                                                          |    |
|------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| संहर्ता रक्षिता स्रष्टा भुवनानि चतुर्दश ।<br>अनुग्रहीताऽन्तर्यामी निग्रहीता निरन्तरः ॥   | ४३ |
| शङ्खचक्रगदाम्भोजराजत्करचतुष्टयः ।<br>मुक्तातपत्रितानन्तसहस्रफणमण्डलः ॥                   | ४४ |
| नवैरभिनवाकल्पैः तपनीयमयांशुकैः ।<br>सुमनोभिः दिव्यगर्घैर्दिव्यालेपनचन्दनैः ॥             | ४५ |
| अलङ्कृताङ्गमहिमा स्मयमानमुखाम्बुजः ।<br>मकरन्दस्रवत्पद्मप्रभावगुणवीक्षणः ॥               | ४६ |
| आपादचूडमाधुर्यमहिमा महतो महान् ।<br>सेवाविशारदैः सार्धं गणैस्तु कुमुदादिभिः ॥            | ४७ |
| विचित्रहेतिहस्तेन विष्वक्सेनेन सेवितः ।<br>पञ्चायुधैः मूर्तिमद्भिः परीक्षितसमीक्षणः ॥    | ४८ |
| महर्षिभिः मरीच्यत्रिभृगुपूर्वैः महात्मभिः ।<br>इन्द्रादिभिः लोकपालैः सेवानुगुणभूतिभिः ॥  | ४९ |
| तयस्त्रिंशत्कोटिभिश्च देववृन्दैरभिष्टुतः ।<br>पञ्चात्मनः सुपर्णस्य पञ्चोपनिषदात्मनः ॥    | ५० |
| पञ्चवक्त्रप्रतिकृतेः पञ्चाथर्वाङ्गसम्पदः ।<br>ऋग्यजुस्सामवपुषो नागाभरणभूषिणः ॥           | ५१ |
| अप्रमेयप्रभावस्य स्कन्धपीठमधिष्ठितः ।<br>अहंप्रथमपूर्वाभिः द्वात्रिंशत्कोटिशक्तिभिः ॥    | ५२ |
| वैष्णवीभिः सेव्यमानो देवः पद्मसरस्तटे ।<br>श्रीभूर्मिनीलासहितः प्रादुरासीत् परः पुमान् ॥ | ५३ |

|                                                                                                                                                                  |    |
|------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| भगवन्तं विलोक्य शुक्रमुनिकृतनटनादिकम्<br>ततस्तपःकर्षिताङ्गो मुक्तः परमपावनः ।<br>पुरुहूतजितस्कन्धं पुरुषीठमविष्टितम् ।<br>पुरुहूतानुजं पूतं पुरुषं तं पुरातनम् ॥ | ५४ |
| कटाक्षवीक्षाविध्वस्तश्रितक्लेशभरं परम् ।<br>प्रसन्नवदनं दृष्ट्वा विष्टरश्रवसं विभुम् ॥                                                                           | ५५ |
| वैयासिर्मुनिशार्दूलः तपोविगतकल्मषः ।<br>ससम्भ्रमं समुत्थाय निविष्टः कुशविष्टरात् ॥                                                                               | ५६ |
| रोमाञ्चकञ्चुकतनुः हर्षोत्फुल्लविलोचनः ।<br>स हसन् उत्तरासङ्गं छिन्दन् कृष्णमृगतत्वचम् ॥                                                                          | ५७ |
| विक्षिपन् अक्षमालाञ्च तूर्णं गिन्दन् कमण्डलुम् ।<br>आनन्दाश्रुपरीताक्षो गद्गददलकन्धरः ॥                                                                          | ५८ |
| ततश्च नर्तनं कर्तुं प्रिकर्तनविभास्वरः ।<br>निवृत्तिधर्मनिष्णातो मुनिः प्रववृते मुदा ॥                                                                           | ५९ |
| मतङ्गजक्रमभ्रमोभ्रमन्मतङ्गजभ्रमः<br>सुधानिलाषदेवभूः अमन्दमन्दविक्रमः ।<br>निवातदीपनिश्चलः चलत्कर रवस्फुटत्<br>दिगन्तरालमण्डलो ननर्त नन्दयन् विभुम् ॥             | ६० |
| परिभ्रमन् अदक्षिणं प्रदक्षिणं परिभ्रमन्<br>विभावयन् विलोकयन् अभावयन् अलोकयन् ।<br>शनैःशनैरसञ्चरन् सुसञ्चरन् शनैः शनैः<br>मुदाविलावलोकनो मदाविलावलोकनः ॥          | ६१ |
| ततस्तु ते टकं वृत्तं करताडनपूर्वकम् ।<br>रचयन् दण्डमादाय कराभ्यामवलम्बयन् ॥                                                                                      | ६२ |



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे षड्विंशोऽध्यायः २२५

आस्फोटयन् क्ष्वेलयंश्च स्वपदस्पर्शमस्तकः ।

ननर्त परमानन्दो वाचयन् नाम शार्ङ्गिणः ॥ ६३

‘चरणं चटुलं कल्यन् कल्यन् कमलारसिकं सरसं रमयन् ।

नटनं घटयन् सुपदं सुवदन् हरिनाम मुनिः शुभदायि शुक्रः ॥ ६४

अरुणारुणपङ्कजसोदरदृक् करुणापरिणामिकटाक्षचणम् ।

स्थनेमिलसत्करनीररुहं रमयन्नतसीकुसुमाङ्गरुचिम् ॥ ६५

सरसं विचरन् पुरतः परितो विलसन्नसकृत् मुरवैरिविनोः ।

करपङ्कजताडनताल्लसद्गमनं निगमान्तविलसभुवः ॥ ६६

भुजचन्द्रजटः करयुग्मभृताञ्जलिको मृगयूथपट्टसवपुः ।

मृगयन्निव यूथपतिं परितः पुनरप्यसकृत् विकृतः सुकृतः ॥ ६७

अतिकुण्डलिताङ्गभुजङ्गसमो नटनस्फुटकुट्टितकुट्टिमभूः ।

रजनीमुखताण्डवकुण्डलितत्रिपुरान्तकरीतिपुरश्चरणः ॥ ” ६८

इति दृढकृतभक्तिः वासुदेवे परस्मिन्

अकल्लसकलमिश्रश्रेयसि श्रीनिवासे ।

विगतकलिलक्त्रयोऽपायशून्यात्मभूतिः

विमलधिषणभूतः संयमी व्याससूनुः ॥ ६९

हृदयकमलमध्याध्यासितं पङ्कजाक्षं

परिजनपरिचर्हाभूषणास्त्रादिसेव्यम् ।

बहिरिव पुरतस्तं वीक्ष्य चक्षुःपदस्थं

नियमितनिगमान्तः पूर्णकामो बभूव ॥ ७०

श्रीनिवामकृपया शुक्रव्रतर्षेर्मुक्तिः

ईदृशं तादृशमृषिं भक्तिविह्वलचेतसम् ।

भक्तार्तिभञ्जनकरो भगवांस्ताक्षर्यवाहनः ॥ ७१

|                                              |    |
|----------------------------------------------|----|
| दयामिताम्भोधितुङ्गलोलकलोलकेलिना ।            |    |
| समीक्ष्य कमलाभोगभागधेयेन चक्षुषा ॥           | ७२ |
| शब्दब्रह्मव्यूहगर्भं संस्कर्तुञ्च समुद्यतः । |    |
| स्नेहगर्भेण वचसा वभाषे हृदयन् हरिः ॥         | ७३ |

श्रीभगवान्—

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| ‘मुने ! तापसशार्दूल ! तपस्तप्तं सुदुश्चरम् ।      |    |
| आनन्दकन्दसद्गर्भनिःश्रेयसकरं परम् ॥               | ७४ |
| मुक्तिर्दत्ता मुदाकारा सशरीराऽविनश्वरी ।          |    |
| कल्पक्षये च सायुज्यमस्मन्मन्त्राङ्गसम्भवम् ॥ ’    | ७५ |
| इत्युक्त्वा भगवान् विष्णुः कृष्णद्वैपायनात्मजम् । |    |
| भक्तप्रतारितो भक्तैः तत्त्वैवान्तर्दधे स्वतः ॥    | ७६ |
| मुक्तः शुको मुनिरपि मुकुन्दगतचेतनः ।              |    |
| अप्राकृताङ्गः प्रथयन् प्रकृत्या प्रकृतिप्रभाम् ॥  | ७७ |
| प्रणम्य दण्डवद्भूमौ साष्टाङ्गं तत्र सत्वरः ।      |    |
| अवाप्ताभीष्टकामः सन् तत्राऽऽस्ते सुखमाश्रमे ॥     | ७८ |

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे

श्रीनिवासमुद्दिश्य रम्भाद्यप्सरस्तद्विभीतशुकस्तुत्यादिवर्णनं

नाम षड्विंशोऽध्यायः ।



अथ सप्तविंशोऽध्यायः

### शुकः । निकृतशुकपुगाष्टोत्तरशतविग्रहनि । नि

देवदर्शनः —

|                                                  |   |
|--------------------------------------------------|---|
| तत्र श्रीपद्मतीर्थस्य तीरेऽस्मिन् निवसन् शुकः ।  |   |
| ध्यानयोगपरोऽध्यात्मब्रह्मविद्याविशुद्धधीः ॥      | १ |
| एकान्तभावमातिष्ठन् एकाग्रनिविदां वरः ।           |   |
| साङ्ख्ययोगपरो नित्यं सद्ग्यानाध्ययनान्वितः ॥     | २ |
| द्वादशाक्षरशिक्षाक्षः प्रत्यक्षरनिर्क्षकः ।      |   |
| पराशरात्मजसुतः सुतरां परमो मुनिः ॥               | ३ |
| उवास सुचिरं कालं श्रीनिवासपरायणः ।               |   |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थमुपगन्तुमनास्ततः ॥           | ४ |
| चक्रे स्वनाम्नाऽग्रहारमष्टोत्तरशतं द्विजान् ।    |   |
| नित्यतृयीकान् त्र्यन्तमुखान् मत्स्यमुखक्रियान् ॥ | ५ |
| सुवृत्तान् शुभ्रमनसो निवृत्तावेदिकक्रियान् ।     |   |
| नानागोत्रानब्जदलैः निर्ममे ननु सादरान् ॥         | ६ |

### शुकपुरे बलभद्रसहकृतकृष्णप्रतिष्ठा

|                                          |   |
|------------------------------------------|---|
| बलभद्रेण बलिना मायया सह मायिनम् ।        |   |
| देवक्या वसुदेवस्य यशोदानन्दगोपयोः ॥      | ७ |
| आनन्दवर्धकं कृष्णं भद्रं भुवनहर्षकम् ।   |   |
| भूभारं हर्तुं कामञ्च चामरूपिणमव्ययम् ॥   | ८ |
| कुहनागोपवपुषं मेघश्याम पुरातनम् ।        |   |
| पाराशरिः परमर्षिः प्रतिष्ठाप्येह भूतले ॥ | ९ |

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| व्यजिज्ञप्त् सन्निधानं अत्र ब्रह्ममुनिः शुक्रः ।   |    |
| ‘ वैकुण्ठे तु यथा वासः क्षीराम्बोधौ यथा विभो ! ॥ ’ | १० |
| वासो यथाऽन्तरादित्ये योगिनां हृदये यथा ।           |    |
| तथा सदा कुरुष्वान्न सन्निधिं कमलेक्षण ! ॥ ’        | ११ |
| इति विज्ञाप्य देवेशं दण्डवत्प्रणिपत्य च ।          |    |
| स्निह्यता मनसा ध्यायन् वीक्षमाणः स्वचक्षुषा ॥      | १२ |

### शुक्रस्य स्वपुराच्छेपाचलगमनम्

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| आजगाम प्रसन्नात्मा स्वामिपुष्करिणीं प्रति ।        |    |
| उपान्ते चोक्षशैलस्योपेत्य निर्मलनिर्झरम् ॥         | १३ |
| तत्र त्रिषवणस्नानं कृत्वा व्यासैरसौ मुनिः ।        |    |
| उपत्यकायामासीनं उदयादित्यवर्चसम् ॥                 | १४ |
| उपांशुमानसजपं उदारं दारसंयुतम् ।                   |    |
| महोत्पलनिभं व्यक्षं महोपनिषदङ्गकम् ॥               | १५ |
| अग्निज्वालाजटाजललसद्गङ्गेन्दुभोगिनम् ।             |    |
| व्याघ्राजिनोत्तरासङ्गवाससं कृत्तिवाससम् ॥          | १६ |
| कालकूटस्फुरत्कण्ठनालं नलिनवक्त्रकम् ।              |    |
| समीक्ष्य हृष्टमनसा नमस्कृत्य च तं हरम् ॥           | १७ |
| उषित्वा त्रिदिनं तत्रोपासकः पूर्णमानसः ।           |    |
| द्रष्टुकामोऽखिलाश्चर्यं पुनरप्यञ्जनाचले ॥          | १८ |
| सिद्धैर्विद्याधरैः सार्द्धं योगिभिः कन्दरस्थितैः । |    |
| शनैःशनैः सञ्चरंश्च निर्झरेषु कृताप्लवः ॥           | १९ |
| ध्यायन् ब्रह्मसभावृत्तं वृत्तान्तं तस्य वै गिरेः । |    |
| स्वामिपुष्करिणीतीरमाससाद शुभास्पदम् ॥              | २० |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे सप्तविंशोऽध्यायः २२९

**स्वामिपुष्करिणीतीरवर्णनम्**

|                                                                                            |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| सुगन्धपुष्पवल्लीभिः वेष्टितैः वकुलैर्युतम् ।<br>खर्जूरैः नारिकेलैश्च केतकैः स्वर्णकेतकैः ॥ | २१ |
| पटीरपाटलाशोकिंशुकासनचम्पकैः ।<br>नक्तमालैश्च पनसैः मधूकैः सरलैः धवैः ॥                     | २२ |
| पुन्नागसुरपुन्नागशिशुपुन्नागपूगकैः ।<br>कदलीकृष्णकदलीमहाकदलिकागणैः ॥                       | २३ |
| हरिद्राभिः शृङ्गवेरैः कस्तूरीरजनीकुलैः ।<br>मल्लिकामालतीभिश्च माधवीभिः मधूकटैः ॥           | २४ |
| यूथिभिः शतपत्नीभिः जातिभिः वनजातिभिः ।<br>नन्दावर्तादिसुमनःकक्षैः कुक्षिपथङ्गतैः ॥         | २५ |
| समन्ततः समाकीर्णं सान्द्रच्छायासमञ्जसैः ।<br>सौगन्धिकैः सुगन्धाढ्यैः तुलसीभिः सुमोदितम् ॥  | २६ |
| दयनीभिः पुष्पगन्धगर्भपुष्पलताशतैः ।<br>अतिमृष्टामोदपुष्पामोदिताशावकाशकम् ॥                 | २७ |
| तापसैः तरुणादित्यवर्चोभिः अभितो वृतम् ।<br>वराहसिंहशार्दूलमातङ्गकुलसङ्कुलम् ॥              | २८ |
| सितासितैः सारमेयगणैः दुर्वारगर्वकैः ।<br>सेवितो नातिभीमेन क्षेत्रपालेन पालितम् ॥           | २९ |
| विचरन्नत्र विपिने मुनिः विगततृट् शुचिः ।<br>परमां मुदमापन्नो मुकुन्दानन्दकन्दधीः ॥         | ३० |

**स्वामिपुष्करिणीवर्णनम्**

|                                                                                       |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------|----|
| स्वामिपुष्करिणीं पुण्यां ददर्श विमलोदकाम् ।<br>काञ्चनाम्बुजकल्हारकमलैः श्वेतपङ्कजैः ॥ | ३१ |
|---------------------------------------------------------------------------------------|----|

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| नीलेत्पलैः उत्पलैश्च फुल्लैः कुवल्यैरपि ।           |    |
| कैरवरपि कीर्णान्तामुद्गिरत् पुण्यगन्धकैः ॥          | ३२ |
| तरङ्गान्तरसञ्चारैः मत्तैः कण्डवैरपि ।               |    |
| तारानिश्च तरन्तीभिः अन्यैः जलपत्रिभिः ॥             | ३३ |
| कलहंसकलालपैः वाचालितदिगन्तराम् ।                    |    |
| तस्यातीरसमुद्रासिसमग्राभीष्टसन्ततेः ॥               | ३४ |
| तीर्थं तोयमुपस्पृश्य लक्ष्म्या सञ्चिन्तयन् विभुम् । |    |
| प्रसन्नमानसोल्लासः चक्रे तत्राघमर्षणम् ॥            | ३५ |
| बद्धपद्मासनासीनोऽभितटं योगमेयिव न् ।                |    |
| परमैकान्तिभिः सार्धं ब्रह्मवित् ब्रह्मदर्शनः ॥      | ३६ |
| तत्रैव सुचिरं कालं उवास परमर्षिभिः ।                |    |
| रहस्यन्योन्यसंज्ञापस्वान्तान्तेवासिसन्ततैः ॥        | ३७ |

## श्रीनिवासाविर्भावः

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| कदाचित् भगवान् विष्णुः कारुण्यागण्यपुण्यधीः । |    |
| दशयन् सकलाँडोकान् साक्षादक्षिपथं गतः ॥        | ३८ |
| दिव्यानन्दमयाकरैः गरुत्मच्छेषसैनिकैः ।        |    |
| पञ्चायुधैः परिकरैः गणैस्तु कुमुदादिभिः ॥      | ३९ |
| परिवर्हाभूषणान्यजिनवस्त्रांशुकानि च ।         |    |
| आयुधान्यप्रमेयानि दधानैः ब्रह्मशक्तिभिः ॥     | ४० |
| शक्तिभिः शाङ्करींश्च सेव्यमानो मुदान्वितः ।   |    |
| श्रीभूमिनीलपूर्वाभिः अपूर्वाकल्पभूतिभिः ॥     | ४१ |
| महिषीभिः मुदानन्दं आवहन्तीभिरीशितुः ।         |    |
| मुमोद सह सर्वात्मा क्रीडाडम्बरडाम्भिकः ॥      | ४२ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे सप्तविंशोऽध्यायः २३१

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| लीलाविभूतिविहितविविधानन्दवेषभाक् ।            |    |
| कालकादम्बिनीकान्ताकुञ्चितालकबन्धनः ॥          | ४३ |
| उद्यद्द्रुमणिविम्बश्रीः शिखामणिमहामहः ।       |    |
| अष्टमीन्दुकलाकारललाटस्थोर्ध्वपुण्ड्रकः ॥      | ४४ |
| सौवर्णपद्मकल्हारपुष्पकर्णवितंसकः ।            |    |
| सेवान्तररसाशशिशार्ङ्गभ्रूमण्डलद्वयः ॥         | ४५ |
| अतिसूक्ष्मस्फुरत्ताराकर्णपूर्णारुणक्षणः ।     |    |
| करुणाब्धिसमुद्भूतलोलपद्मविलोचनः ॥             | ४६ |
| तिलपुष्पसमाकारनासाकाण्डपुटद्वयः ।             |    |
| पद्मविम्बफलकाररमणीयोष्ठयुग्मकः ॥              | ४७ |
| प्रभाविसारिशिखरिदशनावलिवक्रकः ।               |    |
| खाकारकर्णपाशात्तमुक्तामाणिक्यकर्णिकः ॥        | ४८ |
| शरन्निर्मलपूर्णन्दुमण्डलाननमण्डलः ।           |    |
| कम्बुकण्ठो वृषस्कन्धो भोगिभोगोल्लसद्भुजः ॥    | ४९ |
| शार्ङ्गज्याहतिकर्कश्यरमणीयप्रकोष्ठकः ।        |    |
| विशालवक्षोविलसच्छ्रीवत्सः क्रौस्तुभोज्ज्वलः ॥ | ५० |
| शङ्खचक्रगदापद्मपरिकृतचतुर्भुजः ।              |    |
| निम्ननाभिसमुल्लासिमाणिक्योदरबन्धनः ॥          | ५१ |
| मेखलालङ्कृतकटीतटीच्छुरिकयोद्धटः ।             |    |
| हस्तिहस्तसदृक्षोरुजानुमण्डलमण्डितः ॥          | ५२ |
| क्रमवृत्तायताभोगजङ्घकाण्डसुपार्श्विकः ।       |    |
| कूर्मपृष्ठप्रपदकः किङ्किणीहंसकाङ्घ्रिकः ॥     | ५३ |
| शिञ्जन्माणिक्यमञ्जीरप्रभासितपदाम्बुजः ।       |    |
| नानासेवारसोद्भासिचन्द्रविम्बनखावलिः ॥         | ५४ |

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| सुधासूतिगृहोद्दामस्फुरदङ्गुष्ठसौष्ठवः ।     |    |
| पङ्कजश्रीपरिचितान्योन्यतुल्याङ्घ्रिपङ्कजः ॥ | ५५ |
| अतसीकुसुमज्योतिःप्रख्यविख्यातविग्रहः ।      |    |
| संवीतविविधाश्चर्यतप्तचामीकराम्बरः ॥         | ५६ |
| आंसादापपदालम्बवनमालानिराजितः ।              |    |
| विचित्ररत्नखचिततपनीयकिरीटकः ॥               | ५७ |
| हारकेयूरकटककङ्कणाङ्गदभूषितः ।               |    |
| मणिकुण्डलताटङ्कवीरपट्टाङ्गुलीयकः ॥          | ५८ |
| अंसलम्बसमायुक्तसौवर्णब्रह्मसूत्रकः ।        |    |
| त्रिपञ्चसप्तसरिभिः मुक्तादामनिरञ्जितः ॥     | ५९ |
| सर्वाभरणसंयुक्तः सर्वगन्धानुलेपनः ।         |    |
| सर्वर्तुमालोत्थपुष्पदामोद्दाममुजान्तरः ॥ ”  | ६० |
| भक्तानुकम्पासहितः श्रीनिवासः परः पुमान् ।   |    |
| आविर्बभूव भगवान् स्वामिपुष्करिणीतटे ॥       | ६१ |

### शुकब्रह्मर्षिकृतश्रीनिवासस्तुतिः

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| व्यासात्मजो मुनिर्मुक्तः तं दृष्ट्वा दृष्टमानसः । |    |
| प्रणम्य दण्डवद्भूमौ अवाञ्जनसगोचरम् ।              |    |
| तुष्टाव च हृषीकेशं केशवं क्लेशनाशनम् ॥            | ६२ |
| “ जिह ते पुण्डरीकाक्ष वासुदेवामित्युते ।          |    |
| रागादिदोषनिर्मुक्तसमप्रगुणमूर्तये ॥               | ६३ |
| नाथ ! ज्ञानबलोत्कृष्ट नमस्ते विश्वभावन ! ।        |    |
| सङ्कर्षण ! विशालाक्ष ! सर्वज्ञ ! परमेश्वर ! ॥     | ६४ |



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे सप्तविंशोऽध्यायः २३३

|                                                       |    |
|-------------------------------------------------------|----|
| नमस्तेऽस्तु हृषीकेश ! सर्वेश्वर ! जगन्मय ! ।          |    |
| देव ! ऐश्वर्यवीर्यात्मन् ! प्रद्युम्न ! जगतां पते ! ॥ | ६५ |
| स्थित्युत्पत्तिलयत्राणहेतवे शक्तितेजसे ।              |    |
| जयानिरुद्ध भगवन् ! महापुरुषपूर्वज ! ॥                 | ६६ |
| जितं ते पुण्डरीकाक्ष ! नमस्ते विश्वभावन ! ।           |    |
| नमस्तेऽस्तु हृषीकेश ! महापुरुषपूर्वज ! ॥              | ६७ |
| श्रीनिवास ! जगन्नाथ ! नारायण ! दयानिधे ! ।            |    |
| कृतार्थोऽहं कृतार्थोऽहं कृतार्थाः सर्वजन्तवः ॥        | ६८ |
| प्रसीद भगवन् विष्णो ! प्रसीद पुरुषोत्तम ! ।           |    |
| प्रसीद पुण्डरीकाक्ष ! प्रसादादात्मसात्कुरु ॥ ”        | ६९ |
| इति स्तुवन्तमागत्य महर्षिं फुल्ललोचनम् ।              |    |
| आनन्दनिर्भरापूर्णमानसं श्रीशुकं मुनिम् ॥              | ७० |
| समीक्ष्य सुप्रसन्नं तं प्रसादप्रणयान्वितः ।           |    |
| दिव्यैः परिजनैः सार्धं श्रीनिवासः तिरोदधे ॥           | ७१ |
| मुनिः पुनः प्रणम्यात्र दण्डवच्च मुहुर्मुहुः ।         |    |
| परमैकान्तिभिः योगिवर्यैः आर्यैः सहापरैः ॥             | ७२ |
| आर्चावतारविभवपरव्यूहान्तरादिकान् ।                    |    |
| आविर्भावान् स्मरन् विष्णोः ययौ मेरुगिरिं प्रति ॥      | ७३ |

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
शुकमुनिकृतशुकपुराष्टोत्तरशतविप्रगृहनिर्माणादिवर्णनं  
नाम सप्तविंशोऽध्यायः ।



## श्रीवराहाविर्भाववृत्तान्तः

देवलः—

सिंहसानुमतः कुक्षौ स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
श्वेतस्य पोत्रिपोतस्य प्रादुर्भावः कथं विभो ! ॥ १

देवदर्शनः—

चराचरगुरोरस्य चारित्रं चारुपोत्रिणः ।  
शृणु विद्वन् ! विशेषेण व्याचक्षेऽहं विचक्षण ! ॥ २

## असुरोपद्रवमसहमानाया धरायाः पातालगमनम्

पुरा धर्मच्छिदो दृष्टा दैत्याः स्वेच्छाविहारिणः ।  
छायां स्वकीयामपि च हन्तुकामा मदोद्धताः ॥ ३  
मुनिभिः गौतमाद्यैः ये शप्ता भूमिं गता इति ।  
तेऽभिजाते कुले जाता राज्ञामाज्ञाविलङ्घिनः ॥ ४  
पापिष्ठा ह्यसुरश्रेष्ठा नृपश्रेष्ठवपुर्धराः ।  
नक्तन्दिवं हि बाधन्ते त्रिलोकीधूमकेतवः ॥ ५  
क्षोभं महीक्षितामेवं दुर्दर्पबलशालिनाम् ।  
सर्वसहाऽसहमाना निममज्ज रसातले ॥ ६

## पातालगतभृगुद्वरणोद्युक्तवराहवर्णनम्

भूतधात्र्यां निमग्नायां अधोभुवनसञ्जनि ।  
संरक्षकः सर्वसाक्षी करुणावान् अधोक्षजः ॥ ७

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे अष्टाविंशोऽध्यायः २३५

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| समुद्धर्तुमनास्तूर्णं पातलनिलयां भुवम् ।      |    |
| महावराहो भगवान् बभूव परमः पुमान् ॥            | ८  |
| यत्किरीटस्थरत्नानि सत्यलोकनिवासिनः ।          |    |
| अक्वण्डोदितमार्तण्डप्रचण्डामलमण्डलम् ॥        | ९  |
| पञ्चोपनिषदात्मनः सिद्धा मुक्ताश्च मेनिरे ।    |    |
| यस्य श्रोत्रैकदेशस्थं स्वपदं शब्दमात्रकम् ॥   | १० |
| तेजांसि निममज्जुश्च नेत्रयोः विवरान्तरे ।     |    |
| नासाग्रे च समायुक्तो मातरिश्वा बभूव ह ॥       | ११ |
| बभूव पारावारोदो पादपङ्कजपङ्कदः ।              |    |
| खुरोदरे कणकणाः सुराद्रिश्च कुलद्रयः ॥         | १२ |
| दशोत्तरैरावरणैः लोकलोकचलः स्थितः ।            |    |
| बभूव बाह्यावयवभावनाशेषवेषभाक् ॥               | १३ |
| पोत्रिपादैकरोमान्तर्विवरस्थां वसुन्धराम् ।    |    |
| सपत्नीं पद्मवासिन्याः सर्वभूतनिवासिनीम् ॥     | १४ |
| मुस्ताभिः पूर्णपङ्काङ्कां मार्गमाणो बभूव ह ।  |    |
| तां दृष्ट्वा वेपमानाङ्गीं लज्जालोलविलोचनाम् ॥ | १५ |
| पोत्रिरोमान्तरासीनां पावनीं परमेश्वरीम् ।     |    |
| वैकुण्ठोऽकुण्ठितोदन्तः कण्ठमूलमधोक्षजः ॥      | १६ |
| रहस्यस्याः समाधाय वराहवपुरात्मभूः ।           |    |

पातलगतधरणीवराहयोर्नर्मव्यापागादिः

|                                       |    |
|---------------------------------------|----|
| गाढाङ्गपालीकबलीभूतगूढाङ्गपालिकाम् ॥   | १७ |
| सत्यसन्धो हि मुमुदे नवोढां च वधूमिव । |    |
| शरत्प्रत्यग्रपङ्केजाभिनवाभोगलीलया ॥   | १८ |

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| स्नेहकामनया दृष्ट्या अभिवीक्ष्य विगतज्वरः ।       |    |
| तां बभाषे सुरसया सुधाक्लोललीलया ॥                 | १९ |
| नर्मभावनया वाचा श्रीमान्नलिनलोचनः ।               |    |
| ‘वसुधे देवि ! भद्रं ते भद्रे भद्राणि पश्यसि ॥     | २० |
| स्थापयाखिलभूतानि स्वस्था स्वस्थानमास्थिता !’      |    |
| एवं वराहवपुषा पुंसा भूमिः सुभाषिता ॥              | २१ |
| स्नेहसागरपूर्णेन व्रीडालोलविलोकिना ।              |    |
| नेत्राञ्चलेन स्वपतिं वीक्ष्य कोलाननं विभुम् ॥     | २२ |
| स्नेहसन्दर्भगर्भेण माधुरीमहितात्मना ।             |    |
| त्रिस्थानस्थेन वचसा धर्मश्रवणतत्परा ॥             | २३ |
| बभाषे पुरुषश्रेष्ठं पोत्रिवक्तं पुरातनम् ।        |    |
| वराहं प्रति धरण्युक्तिः                           |    |
| “भगवन् ! देवदेवेश ! दैत्यामित्र ! दयानिधे ! ॥     | २४ |
| दैत्यदानवदुर्धर्ष ! भारात् मग्नां रसातले ।        |    |
| रक्ष मां पश्चिराद्वाह ! सर्वभारक्षमाक्षमाम् ॥     | २५ |
| आधारशक्तये तुभ्यं अनन्तशिरसे नमः ।                |    |
| अव्याजसुहृदे भूयो नमोऽनन्तविभूतये ॥”              | २६ |
| एवं वसुधया देव्या वेपमानाखिलाङ्गया ।              |    |
| विज्ञापितो विश्वरक्षादीक्षितः प्रत्युवाच ताम् ॥   | २७ |
| “साधु देवि त्वया पृष्ठं शृणु वक्ष्ये वसुन्धरे ! । |    |
| सर्वसहा विश्रुता त्वं तथ्यनामा भव प्रिये ! ॥”     | २८ |
| धरण्या साकं पातालाद्वराहस्य शेषाचलागमनम्          |    |
| वराहरूपी भगवान् एवमुक्त्वा वसुन्धराम् ।           |    |
| देवीमशिक्षयद्धर्मं स्वभारभरणक्षमम् ॥              | २९ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे अष्टाविंशोऽध्यायः २३७

शिक्षिता वसुधा देवी तेन शुद्धमना धरा ।  
बभूव महिता तेन स्वभारभरणक्षमा ॥ ३०  
तदामभृति देवेशो बराहवपु अर्जितः ।  
पाताललोकात् लोकेऽस्मिन् कौतूहलसमाकुलः ॥ ३१  
स्वामिपुष्करणीकूले पश्चिमेऽस्मिन् धरातले ।  
वल्मीकविलम्बासाद्य तद्द्वारा विजिहीर्षया ॥ ३२  
गमनागमनं कुर्यन् तदधो भुवनं प्रति ।  
भूत्वा श्वेतः पोलिपोतः सञ्चरन् आत्मनायकः ॥ ३३  
दिव्यैर्गणैः सेव्यमानः कदाचित् अनपायिभिः ।  
भूषणैः पारिवर्हैः स्वैः आयुधैः चेतनात्मभिः ॥ ३४  
अव्याजमितोऽन्न पोली वर्तते दिव्यगात्रभृत् ।  
हृदयन् आत्मनः सर्वान् ज्ञानानन्दमयान् सुरान् ॥ ३५  
परावराणां भूतानां अन्तर्यामिणि शार्ङ्गिणि ।  
एवं हि वर्तमानेऽन्न पवित्रे चित्रपोत्रिणि ॥ ३६  
कदाचित् स्वाश्रमे पुण्ये दुर्वासाः कोपनो मुनिः ।  
क्रीडन्तौ काममोहेन दृष्ट्वा किन्नरदम्पती ॥ ३७  
शाशप निर्झरे पुण्ये सिंहनाम्नि महीधरे ।  
'कैरातं मिथुनं स्यात् वन्याहारौ युवामिति ॥' ३८

दुर्वाससः शापात् किन्नरदम्पत्योः कैरातरूपप्राप्तिः

ततः किन्नरदम्पत्योः निर्विण्णमनसोः सतोः ।  
शापमोचनमाचख्यौ कृपया स च तापसः ॥ ३९  
“तत्र स्वामिसरस्तीरे सञ्चरन् श्वेतसूकरः ।  
शापान्मदीर्घ्याविहितान् मोचयिष्यति तौ युवाम् ॥” ४०

तथेति दीनमनसौ उक्त्वा किन्नरदम्पती ।

तूर्णं तं देशमागत्य जज्ञाते व्याधदम्पती ॥

४१

**कैरातदम्पत्योः शेषाचले पुत्रप्राप्तिप्रियङ्गुकृषीकरणादीनि**

शाकमूलफलाहारैः दुष्टसत्त्वनिवर्हणौ ।

आसते सुचिरं कालं अस्मिन् सिंहशिलोच्चये ॥

४२

ऋक्षशार्दूलशरभसिंहेभ्याल्लुगमे ।

अरण्येऽगण्यपुण्यौघे भीषणे रोमहर्षणे ॥

४३

वसत् किरातमिथुनं पुष्पासवमदोद्धतम् ।

असूत पुत्रं चित्राङ्गं चिरकालसमीप्सितम् ॥

४४

प्रसूतं तं समीक्ष्याथ सुकुमारं सुतं तदा ।

शबरः शबरी चैतौ आस्तां सम्पूर्णमानसौ ॥

४५

स्तन्यैः वन्यरसैरन्यैः तमापञ्चवर्षकम् ।

ताववर्धयतां पुत्रं चित्तावयवमर्भकम् ॥

४६

सिंहहस्तनखत्रोटीनिशातशतधारतः ।

विभिन्नमत्तमातङ्गकुम्भोद्भिन्नोस्मैक्तिकैः ॥

४७

दण्डशेखरवासोभिः बर्हिः बर्हिपतलिणाम् ।

त्रिमदोद्विक्तमातङ्गमदपङ्कद्रवैरपि ॥

४८

श्रेयसः सरसां स्वामिसरसः श्वेतमृत्स्नया ।

अलञ्चक्रतुरन्योन्यं पितरौ सुतरां सुतम् ॥

४९

कदाचित् पर्यटंस्तत्र विपिने स वनेचरः ।

कस्यचिद्वटवृक्षस्य समीक्ष्य स्कन्धकोटरे ॥

५०

पक्वं कार्तस्वरनिभं प्रियङ्गु प्रियदर्शनम् ।

गृहीत्वा शबरः सर्वं गृहिण्यै तत् समर्पयत् ॥

५१

श्रीपद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः २३९

साऽपि प्रैयङ्गवं धान्यं उच्छोष्य च समाचिनोत् ।  
ततः सस्यं चक्रतुश्च प्रैयङ्गवमतन्द्रितौ ॥ ५२  
वृत्तिभिः गोपयन्तौ तौ शुश्रूषाभिः समन्ततः ।  
आपक्कफलमाकाङ्क्षन् मिथुनं तद्वभूव ह ॥ ५३  
गोपनार्थं हि तस्यैव पुत्रं प्रेषितवान् स्वयम् ।  
तुष्टो बभूव च क्षेत्रं वीक्ष्य पक्कफलोद्धतम् ॥ ५४

इति श्रीपद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
श्रीवराहाविर्भाववृत्तान्तवर्णनं नाम अष्टाविंशोऽध्यायः ।

अथ एकोनत्रिंशोऽध्यायः

प्रियङ्गुगोप्तकिरातसमीपं प्रति वराहागमनम्

देवदर्शनः —

प्रियङ्गावभितो गुप्ते वाध्राभिः वृत्तिभिस्ततः ।  
तप्तचामीकराभोरुपक्कधान्यभरानते ॥ १  
शबरस्तं समीक्ष्याथ मध्ये कृत्वा तु मञ्चिकाम् ।  
तद्रक्षणार्थं तलैव अतिष्ठन्नक्तन्दिवं स्वयम् ॥ २  
कदाचित् भगवान् श्वेतः पोत्रिपोतो बुभुक्षया ।  
वल्मीकरन्ध्रात् निर्गत्य क्षेत्रमध्यं विवेश ह ॥ ३  
तं दृष्ट्वा बहुशः सोऽपि शबरो विस्मयं ययौ ।  
ततस्तन्मण्डलेशाय राज्ञे विज्ञापितुं द्रुतम् ॥ ४  
राजधानीं प्रविश्यास्याऽऽवेदयच्चक्रवर्तिनः ।  
तच्छ्रुत्वा सार्वभौमस्तु राजा कौतूहलान्वितः ॥ ५

## श्रीवाराहदर्शनार्थं शेषाचलं प्रति नृपागमनम्

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| मृगयावेषभृन् भूत्वा पदातिः उपनिष्क्रमन् ।        |    |
| एकाकी तेन सार्द्धं हि जगाम जगतां हितः ॥          | ६  |
| स्वामिपुष्करिणीं पुण्यां विगाह्य विगतक्लमः ।     |    |
| दण्डवत्तां प्रणम्याथ व्याधवाक्यविचित्रताम् ॥     | ७  |
| मनसाऽऽलोचयन् सम्यक् सन्त्यक्तान्यपराक्रमः ।      |    |
| प्रियङ्गोः क्षेत्रमासाद्य प्रियङ्गुप्रियदर्शनः ॥ | ८  |
| चतुस्तम्भसमायुक्तां चतुरश्रां समुच्छ्रिताम् ।    |    |
| मृदुपल्लवसंस्तीर्णां उपास्तीर्णमृदुत्वचम् ॥      | ९  |
| आदाय सशरं चापं तुङ्गशृङ्गविनिर्मिताम् ।          |    |
| मञ्चिकामारुरोहैतां तेन सार्धं नराधिपः ॥          | १० |
| शबरः सार्वभौमश्च जाग्रतौ निश्चयिष्ठताम् ।        |    |
| बल्मीकविवराच्चित्रसूकरो निर्जगाम ह ॥             | ११ |

## नृपस्य बल्मीकविवरागतवाराहदर्शनम्

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| वृत्तिं विलङ्घ्य वाघ्राभिः पाशैरप्यतिदुर्गमाम् । |    |
| क्षेत्रमध्यञ्च धावन्तं सूकरं सुभगाङ्गकम् ॥       | १२ |
| आत्ताभिलाषमाहारे दंष्ट्रादीधितिसञ्चयैः ।         |    |
| ध्वान्तं शकलयन्तञ्च भास्वद्विव्याङ्गसङ्गतैः ॥    | १३ |
| राजा तं वीक्ष्य सहसा विस्मयं परमं गतः ।          |    |
| सज्ये धनुषि सन्धाय सायकं साधुविक्रमः ॥           | १४ |
| तूर्णमाकर्णमाकृष्य चल्लक्ष्यप्रवेधिनम् ।         |    |
| ग्रहीतुकामो नृपतिः तेन सार्धं तमन्वगात् ॥        | १५ |



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे एकोनविंशोऽध्यायः २४१

|                                                                                                              |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| सूकरो वीक्ष्य धावन्तं चापहस्तं महीपतिम् ।<br>झटिति क्षणमात्रेण वल्मीकविवरं ययौ ॥                             | १६ |
| व्यर्थप्रतिज्ञो नृपतिः प्राज्ञः प्रख्यातविक्रमः ।<br>वल्मीकमूलमागत्य द्रष्टुं सूकरमत्वरः ॥                   | १७ |
| शिश्ये च दर्भशय्यायां स्वप्नं काङ्क्षन् क्षितीश्वरः ।<br>प्रबुद्धः प्राकृतः प्रातः अदृष्ट्वा स्वप्नदर्शनम् ॥ | १८ |
| किंकर्तव्यत्वशून्यात्मा चिन्तयन् कायशोधनम् ।<br>महदाश्चर्यमाहर्तुं स्नात्वा स्वामिसरोजले ॥                   | १९ |
| तपोवेषं समास्थाय ध्यायन् सूकरमीश्वरम् ।<br>कर्तुं प्रवृत्ते वीरः ततः प्रायोपवेशनम् ॥                         | २० |
| निर्द्वन्द्वोऽवन्ध्यनिष्ठश्च निष्ठावान् अस्य दर्शने ।<br>एवं हि वर्तमानेऽस्मिन् नृपतौ नियतात्मनि ॥           | २१ |
| शबरेण शबर्या च परिष्कृतसपर्यके ।<br>वृत्तं विष्णुपदे वाक्यं विशुद्धममृतोपमम् ॥                               | २२ |

### नृपं प्रत्यशरीर्युक्तिः

|                                                                                             |    |
|---------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| ‘द्रष्टुकामो यदि भवान् साधुवृत्तं ! महीपते ! ।<br>तपसाऽलं सगर्वेण सूकरार्भकदर्शने ॥         | २३ |
| यतस्व वृत्तं तच्चर्तुं यद्वक्ष्यामि च सुव्रत ।<br>सवत्साऽसितगोक्षीरधाराभिः अभिषेचय ॥        | २४ |
| अच्छिन्नसन्तताभिश्च वल्मीकस्थं वराहकम् ।<br>एवं सिक्तः स भगवान् पोलिवक्त्रः पुरातनः ॥       | २५ |
| प्रादुर्भविष्यति ततो वल्मीकविवरात् विभुः ।’<br>एवमुक्त्वा तु वाक्यं तत् पुनर्नोवाच किञ्चन ॥ | २६ |

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| नृपतिः तं निशम्याऽऽशु विस्मयो विस्मयं गतः ।      |    |
| तं प्रयत्नं प्रवृत्ते प्रयतोऽप्राकृतात्मनः ॥     | २७ |
| अस्य नारायणगिरेः लक्ष्मीनारायणेशितुः ।           |    |
| वसतेर्दक्षिणे भागे द्वियोजननियोजिते ॥            | २८ |
| तीरे स्वर्णमुख्याश्च दक्षिणे दक्षिणक्रमे ।       |    |
| प्राग्भागे गण्डशैलस्य सर्वोपकरणान्विते ॥         | २९ |
| ग्रामे सङ्ग्रामविजयी समाहितमनास्ततः ।            |    |
| संचिन्त्य सर्वान् संभारान् तस्मादाहृत्य सत्वरः ॥ | ३० |
| तं वराहञ्च वल्मीकमभिषेक्तुमना मनाक् ।            |    |
| विशुद्धवासा निष्णातो वैष्णवः पूर्णमानसः ॥        | ३१ |
| निष्णातः तत्सपर्यायां बभूव वसुधाधिपः ।           |    |
| सावधानः सहामात्यः सापत्यः शबरान्वितः ॥           | ३२ |
| अतन्द्रितः साधु सान्द्रं अशरीरिवचः स्मरन् ।      |    |
| गोक्षीरैः हेमकुम्भस्थैः वल्मीकविवरोदरम् ॥        | ३३ |
| अनुस्यूताच्छिन्नधारैः अभिषेक्तुं प्रचक्रमे ।     |    |

### क्षीराभिषेकाद्वराहस्य वल्मीकादाविर्भावः

|                                          |    |
|------------------------------------------|----|
| क्रियमाणेऽभिषेके तु वल्मीकविवरान्तरात् ॥ | ३४ |
| आविर्बभूव भगवान् वराहवपुरीश्वरः ।        |    |
| कोटीरकोटिविलसन्मणिमण्डलमण्डितः ॥         | ३५ |
| अमृतांशुकल्यक्ल्पदंष्ट्रादन्तुरपोत्रकः । |    |
| ललाटपट्टघटितवेणुपत्रोर्ध्वपुण्ड्रकः ॥    | ३६ |
| कम्बुविम्बसदृक्कण्ठो मांसलस्कन्धमण्डलः । |    |
| सुपारिजातविटपविडम्बितचतुर्भुजः ॥         | ३७ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः २४३

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| शङ्खचक्रधरो वाम ऊरुपीठे स्थितां महीम् ।        |    |
| देवीं त्रपागोपिताङ्गीं लोलविल्विलोचनाम् ॥      | ३८ |
| सर्वात्मसम्भृतदयाकायिनीं हर्षदायिनीम् ।        |    |
| गाढगाढं समालिङ्गान् अस्या अङ्गं पदद्वयम् ॥     | ३९ |
| गृह्णानः सान्द्रहर्षेणा लोक्यन् वक्तुपङ्कजम् । |    |
| विशालवक्षाः श्रीवत्सकौस्तुभाभ्याञ्च लङ्घितः ॥  | ४० |
| यज्ञोपवीतोत्तरीयदृढबन्धनबन्धुरः ।              |    |
| हारकेयूरकटकम्यहीराङ्गुलीयभृत् ॥                | ४१ |
| समभ्युत्थितवामाङ्घ्रिशिञ्जन्मञ्जीरहंसकः ।      |    |
| नवरत्नान्तरप्रोतमुक्ताहारभुजान्तरः ॥           | ४२ |
| अप्रमेयैरभिनवैः आकल्पैः आत्महारिभिः ।          |    |
| तपनीयैश्चित्रवस्त्रैः चित्रैश्चीनांशुकैरपि ॥   | ४३ |
| मालाभिरमलमोदमालाभिः मधुसूतिभिः ।               |    |
| अष्टात्मगर्भसन्दर्भैः अपौरैश्च परिष्कृतः ॥     | ४४ |
| आजानु चाविर्भवति पुरुषे सूकरात्मनि ।           |    |
| विच्छिन्ना क्षीरधाराऽभूत् धाराला तु प्रमादतः ॥ | ४५ |
| तावान् प्रत्यक्षदृष्टः स तदधो न ब्रह्मस्यत ।   |    |
| पश्चादनेकविधया राजाऽपि द्रष्टुमक्षमः ॥         | ४६ |
| प्रयत्नादप्रतीकारोऽतिष्ठत् तूष्णीं सतृष्णधीः । |    |
| शुष्कजिह्वाकण्ठसृक्पिण्डोऽसोऽपि विनिश्चसन् ॥   | ४७ |
| विदीर्णमानसो मानी विकिर्णाङ्गो विघूर्णितः ।    |    |
| एवं वृत्ते राज्ञि तदा भगवान् भूतभावनः ॥        | ४८ |
| वराहरूपविभवः पुराणपुरुषोत्तमः ।                |    |
| उवाच वचनं श्रीमान् करुणापरिणामभूः ॥            | ४९ |

## राजानं प्रति भगवदुक्तिः

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| राजन् ! अलमलं व्यर्थप्रयत्नेनातिभूयसा ।              |    |
| ‘ एतावांस्तव दृश्योऽहं तदधो न नृपाधिप ! ॥            | ५० |
| एतद्रूपं प्रतिष्ठाप्य शुद्धया शिलया नृप ! ।          |    |
| तस्मै देह्यखिलान् भोगान् पूर्णो भूत्वा सुपुष्कलान् ॥ | ५१ |
| अप्राकृताङ्गो विरजाः सात्त्विकोऽयमिति स्मरन् ।       |    |
| वैखानसैर्महर्षिभिः अर्चय त्वं नराधिप ! ॥             | ५२ |
| पश्चान्मामाप्नुयाः गच्छ साधु शाधि वसुन्धराम् । ’     |    |
| एवमुक्त्वा कोलवपुः राज्ञोऽमूं कलयापनाम् ॥            | ५३ |

## श्रीवराहकृतकिन्नरमिथुनस्य किरातत्वनिर्मुक्तिः

|                                              |    |
|----------------------------------------------|----|
| किरातवपुषौ वीक्ष्य विष्णुः किन्नरदम्पती ।    |    |
| मुनिशापान्मोचयित्वा ददौ ताभ्यां स्वकं पदम् ॥ | ५४ |

## नृपस्य श्रीवराहप्रतिष्ठापूर्वकं स्वपुरगमनम्

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| ततश्चान्तर्दधे देवो वराहवपुरत्र वै ।           |    |
| ततः पूर्णमना राजा दिव्यं त्वष्टारमाह्वयत् ॥    | ५५ |
| देवं निर्मापयामास मनसा विश्वकर्मणा ।           |    |
| भूवराहशिशुं पूर्णं राजानं नाक्वासिनाम् ॥       | ५६ |
| वाराहवपुषं शौरिं दण्डवत्प्रणिपत्य च ।          |    |
| शिरस्यञ्जलिमाबधन् स्मरन्नाश्चर्यमीदृशम् ॥      | ५७ |
| जितेन्द्रियो जितक्रोधो जितप्रकृतिसंस्तरः ।     |    |
| जितामित्रो जिताशेषो राजर्षिः स्वां पुरीं ययौ ॥ | ५८ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः २४५

तदा प्रभृति देवेशो वराहवपुरात्मभूः ।  
अनन्ताचलशृङ्गेऽन्तर्निक्षिप्ताङ्घ्रिसरोरुहः ॥ ५९  
देव्या वसुधया सार्धं स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
सुखमास्ते सुरेशानः सुखी रहसि सुन्दरः ॥ ६०

### श्रीनिवासस्य स्वामितीर्थदक्षिणतीरवासवर्णनम्

श्रीनिवासोऽपि शेषाद्रौ ततः स्वामिसरस्तटे ।  
निवसन्नात्मनः कुर्वन् अर्वाचीनान् सुखात्मनः ॥ ६१  
सच्चिदानन्दसन्दोहो वृद्धिक्षयविवर्जितः ।  
कारुण्यपुण्यपदवीकमलकामुकः कविः ॥ ६२  
अभूमिरापदां भूमिः सम्पदां संविदुद्गमः ।  
समस्तसामसङ्गीतसच्चरित्रः पवित्रहृत् ॥ ६३  
पुराणपुरुषो धाता पुरुषः तमसः परः ।  
वैकुण्ठपूर्ववसतिं त्यक्त्वेदानीं हि तिष्ठति ॥ ६४

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
प्रियङ्गुगोप्तृविज्जातसमीपं प्रति वराहागमन - श्रीवराहाविर्भावादिवर्णनं  
नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ।



## श्रीनृसिंहाचलस्थनीलकण्ठनपःक्षेत्रवर्णनम्

देवलः —

‘सञ्चस्करे सपर्या क नीलकण्ठो महेश्वरः ।  
वैकुण्ठस्यामुत्र गोत्रे नरकण्ठीरवाकृतेः ? ॥’ १

देवदर्शनः —

‘शृणु विप्र ! समाचक्षे पुरारातेः पुराविदः ।  
चरितं चरितार्थानां योगिनां भोगसाधनम् ॥ २  
अभीष्टफलदं रम्यं चतुर्वर्गफलप्रदम् ।  
नरकेसरिणो विष्णोः परब्रह्मस्वरूपिणः ॥ ३  
प्रसादप्रसवप्राप्तिहेतुबन्धनिबन्धने ।  
इत उत्तरभागे तु त्रिंशद्योजनसम्मिते ॥ ४  
प्रदेशे भीषणे रोमहर्षणे भूतभीषणे ।  
कश्चित् क्षितिधरः कुक्षिकक्षक्षितिरुहोऽक्षयः ॥ ५  
व्यक्षाश्रमः पक्षियूथवासप्लक्षाक्षकोटरः ।  
विशङ्कटतटारूढवृक्षगुल्मगुहा तमाः ॥ ६  
शृङ्गकोडगुहावासवैखानसवनेचरः ।  
तुङ्गशृङ्गदरीनिर्यदोघनिर्मलनिर्झरः ॥ ७  
निर्झरापातपर्यन्तस्निग्धानोकहवाटिकः ।  
तप्तहाटकसङ्काशगौरिकाकीर्णकन्दरः ॥ ८  
भानूपल्लुखोत्कीर्णचित्रभानुशिखाशतः ।  
चन्द्रप्रभाभिन्नमुखचन्द्रकान्तसुधाद्रवः ॥ ९

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रिंशोऽध्यायः २४७

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| कण्ठीरवनखलुत्थतकुञ्जरीकुम्भमौक्तिकः ।           |    |
| गलितैः मौक्तिकैः विष्वक् आकीर्णप्रस्थदुःस्थलः ॥ | १० |
| माणिक्यधामन्यभूतरविमण्डलचण्डरुक् ।              |    |
| नानाविधमणित्रातमयूखोद्योतखस्थलः ॥               | ११ |
| विद्रुमव्रततिव्रातसंवृतान्तरकंदरः ।             |    |
| विकीर्णपद्मपाषाणपाटलस्थलकुट्टिमः ॥              | १२ |
| शृङ्गकोटीरसङ्गीतसंविवाद्यप्सरोगणः ।             |    |
| लताकुसुमसंकुप्तलीलालयनिवासिभिः ॥                | १३ |
| मिथुनैः किन्नराणां हि तालश्रुतिविकल्पनैः ।      |    |
| दिव्याविर्भावचरितं सङ्गायद्विरितस्ततः ॥         | १४ |
| अधिष्ठितभृगुप्रान्तः प्रस्थगुञ्जाभिरञ्जितः ।    |    |
| गन्धर्वैः गर्वविभवैः गीतवाद्यविशारदैः ॥         | १५ |
| मन्दमध्योच्चमहितैः महितानेककन्दरः ।             |    |
| मार्तण्डमण्डलक्षिप्तस्फुरन्नयनमण्डलैः ॥         | १६ |
| पुण्डरीकसुहृच्चण्डमयूखीमण्डलादिभिः ।            |    |
| तापसैः चण्डतेजोभिः मण्डितोच्छृङ्खलकन्दरः ॥      | १७ |
| कचिड्ढुमरुकोद्धूर्णतृकरैरुग्रोर्ध्वकेशकैः ।     |    |
| विघूर्णमाननयनैः मदस्वलितकायकैः ॥                | १८ |
| भैरवैः भैरवीभिश्च निविडाडम्बरैर्युतः ।          |    |
| देवानां पूर्वदेवानां सिद्धानां योगिनामपि ॥      | १९ |
| भूतानां योगिनीनाञ्च मातृणां यक्षरक्षसाम् ।      |    |
| अन्येषां देवयोनीनां आवासोपत्यकाश्रयः ॥          | २० |
| ध्यायद्भिश्च परं ब्रह्म क्वचित् योगासनस्थितैः । |    |
| योगिवर्यैः आर्यभावैः योगाभ्यासविचक्षणैः ॥       | २१ |

|                                                            |    |
|------------------------------------------------------------|----|
| एकान्नैः एकभौवैः आलक्षितगुहाक्षयः ।                        |    |
| कृष्णसारपुरोयायिहरिणीकुलसङ्कलः ॥                           | २२ |
| परस्परपरित्यक्तवैरैः भीमैः मृगैः वृतः ।                    |    |
| अप्रमेयप्रभावो यः प्रसिद्धः पर्वतोत्तमः ॥                  | २३ |
| तस्य पर्वतवर्यस्य पुण्यारण्यसमीपतः ।                       |    |
| प्रत्यग्रपल्लवैः कीर्णसुबिल्ववनवाटिकैः ॥                   | २४ |
| प्लक्षैः रुद्राक्षवृक्षैश्च श्लक्ष्णैः सुश्लक्ष्णपर्णकैः । |    |
| अभ्रंलिहोर्ध्वशाखाग्रैः अज्ञातज्ञातसंज्ञिकैः ॥             | २५ |
| यज्ञशाखिभिराकीर्णं सङ्कीर्णं यज्ञवाटकैः ।                  |    |
| अनोकहैः अविरलैः सरलैः सर्वतो वृतम् ॥                       | २६ |
| समाश्रितार्तिहरणसानुच्छायां समन्ततः ।                      |    |
| अहिर्बुध्न्यतपक्षेत्रं क्षेत्रक्षेत्रज्ञबन्धहृत् ॥         | २७ |
| नरकण्ठीरवस्थानं कण्ठीरवरवोद्धतम् ।                         |    |
| भैरवाभैरवाश्चर्यं भूरिभीषणभीषणम् ॥                         | २८ |

### नीलकण्ठाश्रमस्थपुण्यपुण्यकरिणीवर्णनम्

|                                        |    |
|----------------------------------------|----|
| पवित्रमत्र विपिने वैडूर्यविमलोदका ।    |    |
| काञ्चनाम्बुजकल्हारकमलेन्दीवरोत्कटा ॥   | २९ |
| प्लवमानप्लवा मीनमकरग्राहमण्डिता ।      |    |
| मरालमल्लमहिता कारण्डवकुलाकुला ॥        | ३० |
| तारातरलकल्लोलमालालोलान्तरालका ।        |    |
| उत्फुल्लकैरवा फुल्लपुण्डरीकपुरस्कृता ॥ | ३१ |
| मकरन्दरसास्वादमाद्यद्वनवयोगणा ।        |    |
| त्रिमदोन्मत्तमातङ्गमदवार्याविलाऽमला ॥  | ३२ |



|                                                                                                       |     |
|-------------------------------------------------------------------------------------------------------|-----|
| श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रिंशोऽध्यायः                                                          | २४९ |
| देवर्षिभिः तपस्यद्भिः राजर्ष्योद्यैः महात्मभिः ।<br>उपान्तपर्यन्तभुवि निवसद्भिः समन्ततः ॥             | ३३  |
| तपोविमलविश्वाङ्गैः विशङ्कटतटोत्कटा ।<br>मन्त्रं षण्णवतीभेदं जपद्भिर्नारसिंहकम् ॥                      | ३४  |
| निष्कलं सकलं मिश्रमाश्रितावनविश्रुतम् ।<br>श्रीवत्साङ्कं नारसिंहगर्भागर्भकमद्भुतम् ॥                  | ३५  |
| ज्ञानानन्दमयं ज्ञानगम्यं वैराग्यभोग्यकम् ।<br>ध्यायद्भिस्तत् परं ब्रह्म अतीन्द्रियं विजितेन्द्रियैः ॥ | ३६  |
| ब्रह्मर्षिभिः सेव्यमाना ब्रह्मभूयंगतैः सदा ।<br>पुरुजिच्चरणस्पर्शपूता पुरुषपावनी ॥                    | ३७  |
| पुराणपुण्यभवनं पुरुषोत्तमपूर्तिदा ।<br>पूर्वसेवापुरस्कारिपुंमण्डलपुरस्कृता ॥                          | ३८  |
| पुण्यपुष्करिणी स्वामिपुष्करिण्यात्मभूमिका ।<br>दर्शनात् स्पर्शनात् पानात् सर्वेषां सर्वकामदा ॥        | ३९  |

#### अश्मन्यग्रोधमूलस्थनीलकण्ठाश्रमवर्णनम्

|                                                                                      |    |
|--------------------------------------------------------------------------------------|----|
| तस्यास्तीरे महान् अश्मन्यग्रोधो गिरिकन्दरे ।<br>शाखाशतैः परिच्छन्नदशाशाचक्रवालकैः ॥  | ४० |
| संवर्धितान्धतमसा स्वान्तध्वान्तमलापहः ।<br>तापत्रयार्तमनसां जन्तूनां आर्तिहारकः ॥    | ४१ |
| कल्पवृक्षप्रतिनिधिः निधिः निगमवर्चसाम् ।<br>नराणामाश्रितवतां महापातकनाशनः ॥          | ४२ |
| तस्योपलब्धत्वास्त्यस्य मूले शूलिन आश्रमम् ।<br>हरिणैः हरिणीभिश्च नारसिंहविवर्धितैः ॥ | ४३ |

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| समाध्यासितपर्यन्तभूतलं वृषमूर्तिभिः ।             |    |
| चण्डकर्मैः पुण्डरीकैः मण्डिताशान्तमण्डलैः ॥       | ४४ |
| वैश्वामित्रैः कुशैः मुञ्जैः काशैश्चापि समावृतम् । |    |
| मन्दारकुन्दमाकन्दहरिचन्दनचन्दनैः ॥                | ४५ |
| पाटलाशोकतिलककृतमालतमालकैः ।                       |    |
| नक्तमालैः नालिकेरैः पनसैरसनैः ध्रुवैः ॥           | ४६ |
| पुन्नागपूगरुद्राक्षवकुलाक्षहरीतकैः ।              |    |
| समन्ततः समच्छायं वन्यैः अन्यैः अनोकहेः ॥          | ४७ |
| नन्द्यावर्तैः जातियूथीकरवीरातिवीरकैः ।            |    |
| शतपत्रैः दमनकमाधवीमालतीन्दुभिः ॥                  | ४८ |
| तुलसीभिः गन्धलताजातिभिः परितो वृतम् ।             |    |
| पञ्चभिः पारिजातादिपादपैश्च परिष्कृतम् ॥           | ४९ |
| पवित्रेऽस्मिन् हरिक्षेत्रे हरिं नरहरिं हरः ।      |    |
| अभ्यर्चितुमनाः स्थाणुः आजगाम जगन्मयः ॥            | ५० |

### नीलकण्ठकृतनृसिंहाराधनसङ्कल्पः

|                                                        |    |
|--------------------------------------------------------|----|
| स्नात्वाऽस्यां पुण्यपूर्वायां पुष्करिण्यां पुरान्तकः । |    |
| हरो दिव्याम्बरधरो हरिचन्दनचर्चितः ॥                    | ५१ |
| सर्वर्तुकालोत्थफलमालाशतपरिष्कृतः ।                     |    |
| दिव्यैराभरणैः मुक्ताफलरत्नप्रवालकैः ॥                  | ५२ |
| समलङ्कृतसर्वाङ्गः तुङ्गमङ्गलसंयुतः ।                   |    |
| कल्याणवेषकलितैः नन्दिप्रमुखकैर्गणैः ॥                  | ५३ |
| सेवितो भूतततिभिः सेवारसविशारदैः ।                      |    |
| सितासितैः सारमेयैः दुर्वारैः प्रमथैः सह ॥              | ५४ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रिंशोऽध्यायः २५१

|                                              |    |
|----------------------------------------------|----|
| नरसिंहसपर्यायाः प्रत्यूहप्रतिघातिना ।        |    |
| सेवितः क्षेत्रपालेन सुप्रसन्नो महेश्वरम् ॥   | ५५ |
| परावराणां भूतानां स्रष्टारं परमेश्वरम् ।     |    |
| संहर्तारञ्च पापानां निग्रहीतारमच्युतम् ॥     | ५६ |
| अनुग्रहीतारमीशं ईशानस्य तपःफलम् ।            |    |
| सकलं निष्कलं मिश्रं परस्मात् परमव्ययम् ॥     | ५७ |
| लक्ष्मीनृसिंहं संहारनृसिंहं दिव्यसिंहकम् ।   |    |
| अखिलार्तिहरं वीरं उग्रं प्रत्यग्रविग्रहम् ॥  | ५८ |
| शब्दब्रह्ममयं शब्दातीतं शब्दविजृम्भणम् ।     |    |
| अर्धब्रह्मवपुः पूतं पुराणं पुण्यपूरणम् ॥     | ५९ |
| अव्याजमितं शत्रुघ्नं शरण्यं शरणात्मकम् ।     |    |
| भक्तार्तिभञ्जनपरं आत्मनामभयप्रदम् ॥          | ६० |
| सच्चिदानन्दसन्दोहं वृद्धिक्षयविवर्जितम् ।    |    |
| पूर्णषाड्गुण्यविभवं त्रैगुण्यविभास्पदम् ॥    | ६१ |
| श्रीवत्सलक्षणं सर्वं सर्वलक्षणलक्षितम् ।     |    |
| अप्रपञ्चं प्रपञ्चात्मप्रपञ्चितपराक्रमम् ॥    | ६२ |
| विश्वेशं तत्परं ब्रह्म ध्यायन्नेकाग्रमानसः । |    |
| वसानः कृत्तिवसनं पौण्डरीकोत्तरच्छदः ॥        | ६३ |
| पाञ्चरात्रविधानेन पञ्चकालपरायणः ।            |    |
| तस्योपलवटस्याधो नरकेसरिणः स्वयम् ॥           | ६४ |
| सर्वलोकहितार्थाय सर्वावासस्य शार्ङ्गिणः ।    |    |
| सपर्यां सुकृती कर्तुं अग्निरेताः प्रचक्रमे ॥ | ६५ |

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
श्रीनृसिंहाचलस्थनीलकण्ठतपः क्षेत्रादिवर्णनं नाम त्रिंशोऽध्यायः

## नीलकण्ठकृतनृसिंहारोधनविधिः

देवदर्शनः—

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| श्रीकण्ठः शङ्करः शान्तो नरकण्ठीरवं महः ।             |    |
| वैकुण्ठं वैजयन्त्याढ्यमकुण्ठितमनाः स्मरन् ॥          | १  |
| सर्वलोकहिताकाङ्क्षी स्थाणुः स्वस्थात्ममानसः ।        |    |
| अस्मिन् न्यग्रोधमूलस्य मूले वैयाघ्रचर्मणि ॥          | २  |
| अगर्भसाग्रदर्भाग्र्यसन्दर्भाक्षतनिर्मिते ।           |    |
| पद्मासने समासीनः संयमी समदर्शनः ॥                    | ३  |
| कारुण्याणवक्त्रोल्लोललीलाकुलेक्षया ।                 |    |
| वीक्षया वीक्षयन् विष्वक् त्रिलोकीं त्रिपदाङ्किताम् ॥ | ४  |
| तरुणादित्यकिरणसहोदरजटासटः ।                          |    |
| नीलकण्ठः पशुपतिः श्रीकण्ठः परमेश्वरः ॥               | ५  |
| कपर्दजूटकलितकमलारिकलालयः ।                           |    |
| विलयोदन्तवीरश्रीः इन्द्रकोष्णित्रिलोचनः ॥            | ६  |
| जटाटवीलसद्गङ्गाशिरोमालाभिमण्डनः ।                    |    |
| अष्टमूर्तिरनन्तात्मा विशिष्टविभवेष्टभूः ॥            | ७  |
| शरनिर्मलपूर्णेन्दुमण्डलाननमण्डलः ।                   |    |
| उद्यत्संवर्तमार्ताण्डचण्डरुच्यङ्गमण्डनः ॥            | ८  |
| पवित्रिताङ्गोऽहिर्बुध्न्यः चिकीर्षन् विश्वरक्षणम् ।  |    |
| दक्षिणामूर्तिरव्यग्रः समग्रद्रव्यसाधनः ॥             | ९  |
| शत्रुविध्वंसकं ब्रह्म नृकेसरकिशोरकम् ।               |    |
| निष्कलं सकलीकृत्य नित्याभ्यर्चनकामुकः ॥              | १० |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे एकविंशोऽध्यायः २५३

कारुण्यपुण्यपदवीमृड कात्यायनीसखः ।  
चराचराणां सर्वेषां अमीषां मित्रमात्मनाम् ॥ ११  
आनन्दकन्दमहिमा बभूव भुवनेश्वरः ।

नीलकण्ठप्रतिष्ठित श्रीनृसिंहवर्णनम्

नृसिंहगर्भं सकलं शत्रुसादकरं परम् ॥ १२  
त्रीक्षणीकोणसन्निर्यतकृष्णवर्त्मशिखाजटम् ।  
दंष्ट्राकोटिविटङ्काग्रनिस्सरद्वहिकीलकम् ॥ १३  
ऊरूपरि समुत्ताननिपातितहिरण्यकम् ।  
नखलुटितदैत्येन्द्रवक्षोविवरगह्वरम् ॥ १४  
असुरासृक्कण्ठशिरोलुण्ठकानेकबाहुकम् ।  
अनेकशस्त्रास्त्रधरानेकबाहुसहस्रकम् ॥ १५  
घोरादृहासनिनदविपाटितवियत्तटम् ।  
भवद्भ्रव्यात्मकं ब्रह्म भासकं भक्तवत्सलम् ॥ १६  
अतिभूतिप्रदं देवं विभवानन्ददायकम् ।  
देवानां पूर्वदेवानां सामान्यमधिदैवतम् ॥ १७  
रत्नप्रतानप्रत्युसकिरीटमकुटोज्ज्वलम् ।  
द्युमणिप्रतिकाशाभ्यां कुण्डलाभ्यां विराजितम् ॥ १८  
नवरत्नान्तरप्रोतमौक्तिकत्रिसरान्वितम् ।  
पञ्चसप्तसरीभिश्च मण्डितोरुभुजान्तरम् ॥ १९  
स्फुरत्कटककेयूरकङ्काङ्गुलिभूषणम् ।  
उत्तरीयब्रह्मसूत्रोदरबन्धनबन्धुरम् ॥ २०  
घण्टानिनादलुण्टाकघण्टिकादामनादकम् ।  
प्रपदप्रस्फुरद्रोचिर्मणिमञ्जीरहंसकम् ॥ २१

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| छिन्नवीरुत्समायुक्तकिङ्किणीपादशोभितम् ।           |    |
| प्रत्यग्रोत्फुल्लरक्ताब्जप्रतिमाङ्घ्रिकरस्थलम् ॥  | २२ |
| विचित्ररत्नखचितपीतकौशेयवाससम् ।                   |    |
| सर्वर्तुकामोदयुक्तप्रसूनस्रगलङ्कृतम् ॥            | २३ |
| दिव्यसद्गन्धसन्दर्भगर्भारुणविलेपनम् ।             |    |
| अनेकचीनांशुकस्रगालेपालङ्कृताङ्गकम् ॥              | २४ |
| सेव्यमानं सुरश्रेष्ठपुरुहूतपुरोगमैः ।             |    |
| वृन्दारकैश्च मन्दारपुष्पाञ्जलिलसत्करैः ॥          | २५ |
| समन्ततः सेव्यमानं सनन्दसनकादिभिः ।                |    |
| सप्ततन्त्रीनादगर्भाथर्वश्रुतिविलासिना ॥           | २६ |
| उपवीणयताऽनन्तापदानं भक्तितो मया ।                 |    |
| संस्तूयमानं गन्धर्वैः तुम्बुरुप्रमुखैः मुदा ॥     | २७ |
| पक्षीन्द्रविष्वक्सेनाभ्यां गणैस्तु कुमुदादिभिः ।  |    |
| रहस्यदात्मपर्यन्ते संवृतं परिचारकैः ॥             | २८ |
| परिबर्हाभूषणानि हेतिमिङ्गितवेदिनीम् ।             |    |
| दधतीभिः वैष्णवीभिः शक्तिभिः वृतमन्तिके ॥          | २९ |
| रौद्रीभिः शक्तिभिश्चैव ब्राह्मीभिः परितो वृतम् ।  |    |
| परमात्मानमालीयमात्मनामभयप्रदम् ॥                  | ३० |
| सेव्यमानं सिद्धसङ्घैः सप्तलोकनिवासिभिः ।          |    |
| नरसिंहात्मकं ब्रह्म प्रतिष्ठाप्येह भूतले ॥        | ३१ |
| सन्निधिं प्रार्थ्य सर्वेषां दृष्टादृष्टफलप्रदम् । |    |
| उपचारैः समभ्यर्च्य संस्कारैः संस्कृतो भवान् ॥     | ३२ |
| परावराणां भूतानामीश्वरः स महेश्वरः ।              |    |
| समतिष्ठत सर्वात्मा कुर्वन् नयनमात्मनि ॥           | ३३ |

श्रीषाण्णपुराणे श्वेतकाण्डे एकविंशोऽध्यायः २५५

धर्मं भागवतं तत्र चरन् भगवतीसखः ।  
पुराणे सुखमास्तेऽस्मिन् पुरारिः पुरुषः सदा ॥ २४  
तस्मादयं नीलकण्ठः प्रसिद्धः सर्वतो महान् ।  
जन्तूनामपि जीवातुः जङ्गमाजङ्गमात्मनाम् ॥ ३५

श्रीनृसिंहमन्त्रिध्येन नीलकण्ठाश्रमस्याधिक्यवर्णनम्

पुण्यपुष्करिणी सेयं पुण्यापुण्यफलप्रदा ।  
पुरुषार्थप्रदा पुंसां पुरारिप्रीतिपूरणी ॥ ३६  
नवमेतदहिर्बुध्यतपःक्षेत्रं पवित्रम् ।  
पुण्यारण्यं यत्र तप्तं तपः कोटिविधं भवेत् ॥ ३७  
असावत्रोपलब्धः पटुः पापविनाशने ।  
सकृद्दर्शनमात्रेण सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥ ३८  
नरकण्ठीरवतनोः मन्दिरं त्वन्दिरापतेः ।  
श्रीकण्ठार्चनतृप्तस्य वैकुण्ठस्य महात्मनः ॥ ३९  
सिंहाहार्यो हरः पापात् कृतशौचस्त्वहोविले ।  
नीलकण्ठाश्रम इति स्थानानि नृहरेः हरेः ॥ ४०  
एतेषामपि पञ्चानां स्थानानां स्थानसोचितम् ।  
स्थानमेतत् समुद्दिष्टं प्रथितं सुप्रतिष्ठितम् ॥ ४१  
नीलकण्ठाश्रमे सिंहमहीधरमहाह्वयम् ।  
महिताश्चर्यमाहात्म्यभूमिः भूमिः निरागसाम् ॥ ४२

पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम्

किञ्च वक्ष्यामि विप्रर्षे ! समाहितमनाः शृणु ।  
प्राचीनबर्हिः हरिति श्रीनिवासगिरेः सरित् ॥ ४३

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| प्रसृता प्रस्थतः स्वामिपुष्करिण्यविदूरतः ।      |    |
| विद्राविणी चावद्यानां निरवद्याऽतिभूमिदा ॥       | ४४ |
| मायाविनो महाविण्णोः महामायासमाश्रयाः ।          |    |
| पुरा ज्ञातिवधं कृत्वा पाण्डवाः चण्डविक्रमाः ॥   | ४५ |
| समेत्य यत्र तत्पापनुत्तये दीनमानसाः ।           |    |
| कालीयव्यालकालेन वासुदेवेन चोदिताः ॥             | ४६ |
| सम्पूर्णमानसाश्चक्रुः आप्लवं निरुपप्लवाः ।      |    |
| मलप्रध्वंसिनीं मायां महिषासुरमर्दिनीम् ॥        | ४७ |
| सम्पूज्य संस्तूयतेऽपि श्रीनिवासमधोक्षजम् ।      |    |
| अतीन्द्रियं समभ्यर्च्य स्वामिपुष्करिणीतटे ॥     | ४८ |
| निरेनसः शुद्धधियो ययुः तस्मात् यथागतम् ।        |    |
| विधिज्ञा विमलप्रज्ञा नानाज्ञानविलसिनः ॥         | ४९ |
| अमूमुशन्ति सरितं तीर्थं पाण्डवमित्यतः ।         |    |
| पाश्चात् तस्याः पुष्करिण्या नारायणगिरिः महान् ॥ | ५० |

### नागयणगिरिप्रभाववर्णनम्

|                                            |    |
|--------------------------------------------|----|
| यस्य दर्शनमात्रेण मुच्यन्ते जन्तवः स्वतः । |    |
| संवर्तोदितदुर्दर्शसहस्रकिरणप्रभः ॥         | ५१ |
| तेजः पुञ्जैरञ्जिताशः कञ्जकिञ्जल्कपिञ्जरः । |    |
| पर्वताधिपतिस्तत्र सुखमास्ते सुरोत्तमः ॥    | ५२ |

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
नीलकण्ठाश्रमवर्णने नीलकण्ठकृतनृसिंहाराधनविध्यादिकवर्णनं  
नामैकत्रिंशोऽध्यायः



अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः

नारायणाद्रिस्थभैरवाख्यक्षेत्रपालकोदन्तः

बलः —

कुक्षावुक्षक्षितिभृतो दिव्यदेशस्य वैभवम् ।  
देवदर्शन ! माऽऽचक्ष्व वैष्णवं वैदिकर्षभ ! ॥ १

वदार्शनः —

शृणु देवल ! मेधाविन् समाहितमना मुने !  
कण्ठीरवगिरेर्वृत्तं वैकुण्ठवसतेरिदम् ॥ २  
वैकुण्ठादीन् दिव्यलोकान् सन्त्यज्य भगवान् स्वयम् ।  
मायावी तत्र रसिकः श्रीनिवासः परः पुमान् ॥ ३  
सर्वाऽऽवासः सहस्राक्षः परमात्मा सनातनः ।  
इच्छावृत्तप्रपञ्चोऽसौ हृषीकेशश्च केशवः ॥ ४  
तं देशं रक्षति सदा भैरवः परिचारकः ।  
असितैः सारमेयैश्च प्रमथैः मथितालुरैः ॥ ५  
काकोदरालङ्कृताङ्गस्फुरत्सङ्गकपालभृत् ।  
रवस्फूर्जडुमरुकत्रिशूलः शूलिभृत्यकः ॥ ६  
प्राचीने तस्य देशस्य स्थितोऽञ्जनगिरेस्तटे ।  
तरुणादित्यसङ्काशाऽखिल्यभीष्टफलप्रदा ॥ ७

गौर्या ॥ नारायणाद्रितपःकरणेन दुर्गात्वं - शिवार्धशरीरत्वप्राप्तिः

परिभूता पुरा गौरी दक्षयागे पुरारिणा ।  
अन्तर्हिताऽभूत् उद्वेगात् कपर्दी च तिरोदधे ॥ ८

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| आहर्तुकामा वामार्धं तनोस्तस्य हरस्य सा ।        |    |
| तपस्तप्तुमनास्तूर्णं आजगाम तटीमिमाम् ॥          | ९  |
| समाहितमनास्तस्यां सा तेपे दुर्गमं तपः ।         |    |
| घोरेण तपसा तां तु “दुर्गे” त्यूचुर्महर्षयः ॥    | १० |
| प्रीतः कपर्दी दत्त्वाऽस्यै शरीरार्धं प्रसादतः । |    |
| अर्धनारीवपू रुद्रो ययौ सोऽपि यथागतम् ॥          | ११ |
| पुरारिदयिता पुण्यपुरुषार्थफलप्रदा ।             |    |
| समीपे श्रीनिवासस्य सैषाऽञ्जनगिरेस्तटे ॥         | १२ |

### अत्र्यादिपञ्चाशन्महर्षिप्रशंसितस्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम्

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| स्वामिपुष्करिणी तत्र पुराणी पुण्यपूरणी ।           |    |
| स्वर्भूपातालवासिन्याः त्रिस्रोतसः प्रसूतिभूः ॥     | १३ |
| त्रिविक्रमकृतो विष्णोः सपर्यायै यदात्मजा ।         |    |
| सुरज्येष्ठेन नियमात् कमण्डलुसमुद्भूता ॥            | १४ |
| यस्यास्तीरे च विन्दन्ति चतुर्वर्गान् अभीप्सितान् । |    |
| सुरा नराश्च तिर्यञ्चः प्रपञ्चीकृतकारणाः ॥          | १५ |
| माहात्म्यमूचिरे तस्याः परस्परमतीन्द्रियम् ।        |    |
| आप्तुता विमलप्रज्ञा मुनयो ब्रह्मवादिनः ॥           | १६ |

अत्रिः —

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| जपं कुर्वन् अपां मध्ये ‘तद्विष्णोरि’ ति यः सकृत् । |    |
| स्वामिपुष्करिणीस्नातो मुच्यते पातकात्स तु ॥        | १७ |

व्यासः —

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| अवगाह्य जले स्वामिपुष्करिण्याः समाहितः ।    |    |
| व्यापोह्य भ्रूणहत्याघमश्नुतेऽभीष्टसम्पदम् ॥ | १८ |

वसिष्ठः—

यः स्नायाद्धारिणि स्वामिपुष्करिण्याः स्मरन् हरिम् !  
ससजन्मकृतं पापं सहसा स व्यपोहति ॥ १९

पराशरः—

यः करोत्याह्वं स्वामिसरसीजलमध्यतः ।  
सोऽतीत्य निरयं सर्वं ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ २०

गौतमः—

कीर्तयित्वा जलेऽन्यत्र 'स्वामिपुष्करिणी' ति यः ।  
स्नायाद्वाचायन् श्रीनिवासं मुच्यते सोऽतिपातकात् ॥ २१

भरद्वाजः—

प्रातरुत्थाय ये प्राज्ञाः 'स्वामिपुष्करिणी' ति वै ।  
कीर्तयन्त्याहितात्मानः ते यान्ति परमं पदम् ॥ २२

मनुः—

स्वामिपुष्करिणीतीर्थजलं प्रीताः पिबन्ति ये ।  
तेऽपि निर्धूतपाप्मानो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ॥ २३

यमः—

स्वामिपुष्करिणीकूले नरा नक्तदिवच्च ये ।  
वसन्त्यभोजनास्तेऽपि लभेरन् परमं पदम् ॥ २४

पाण्डवल्क्यः—

विगाह्य स्वामिसरसो जलं वीतक्लमा जनाः ।  
प्रार्थितं प्राप्नुयुः प्राज्ञाः प्रजापतिरुवाच ह ॥ २५

हारीतः—

हरिं स्मरन्तः कुर्वन्ति स्नानं स्वामिसरोजले ।  
वीतांहसो वीतनिद्रा विशन्ति विमलं पदम् ॥ २६

अङ्गिराः—

येऽनुतिष्ठन्त्यनुष्ठानं स्वामिपुष्करिणीजले ।  
अनेकजन्मजनितमेषामेनो विनश्यति ॥ २७

उशना :—

उदीरयन्ति ये नित्यं ' स्वामिपुष्करिणी ' ति च ।  
दुष्कर्मपङ्कं निर्धूयाऽऽनुवते तेऽपि सत्फलम् ॥ २८

संवर्तः —

ये कीर्तयन्ति सर्वत्र सदा स्वामिसरोवरम् ।  
तेऽप्यवद्यं विनिर्धूय निरवद्या भवन्ति वै ॥ २९

अपस्तम्बः —

स्वामिपुष्करिणीतोये स्नानपानादिकर्म ये ।  
कुर्वन्ति पापस्तम्भं ते परित्यज्याऽऽमुवन्ति सत् ॥ ३०

मरीचिः —

नारायणगिरेः प्रान्ते स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
यः किल्बिषी वसत्येकं दिनं निष्किल्बिषी भवेत् ॥ ३१

मृकण्डुः —

कण्ठीरवगिरेः कुक्षौ पक्षिराडाहहर्षके ।  
यः सेवते स्वामिसरः स नरः सुरसङ्गतः ॥ ३२

पुलस्त्यः —

क्रोडे वेङ्कटशैलस्य सरः क्रोडाभिनन्दकम् ।  
गायते यस्त्रिषणं स नरः सर्वसम्मतः ॥ ३३

कात्यायनः —

वैकुण्ठस्य प्रीतिकरे कण्ठीरवगिरेस्तटे ।  
स्वामिपुष्करिणीं योऽसौ सेवते स महान् भवेत् ॥ ३४

बृहस्पतिः —

कुञ्जेऽञ्जनगिरेः स्वामिपुष्करिण्यप्यु यो नरः ।  
कृताह्वः सकृत् सत्यं कृतकृत्यो भवेन्नरः ॥ ३५

भृगुः —

प्रातरुत्थायानुदिनं स्वामिपुष्करिणीं स्मरन् ।  
गोघ्नो यो मासमासीत् गोप्रदानात् स शुद्ध्यति ॥ ३६

बाल्मीकिः —

स्वामिपुष्करिणीतीरे यो वसत्युपपातकी ।  
मासं गोदानतः शुद्धो भवेत् नर इति श्रुतिः ॥ ३७

वाङ्मल्लिखितौ —

पारे स्वामिसरो विद्वान् स्मार्तं श्रौतं करोति यः ।  
सहस्रधा कृतं तेनेत्युशन्ति ब्रह्मवादिनः ॥ ३८

शातातपः —

हव्यकल्यात्मकं कर्म स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
वार्धुषिः नास्तिको वाऽपि यः करोति स सत्फलः ॥ ३९

बोधायनः —

स्वामिपुष्करिणीतीरनिवासी हरिमेधसः ।  
अश्वमेधादिकं यज्ञं यः करोति महेश्वरः ॥ ४०

मार्कण्डेयः —

मृगराडद्रिकुहरे हरेरानन्ददायिनि ।  
कीर्तयन् स्वामिसरसीं नावसीदति मानवः ॥ ४१

माण्डूक्यः —

गोविन्दमन्दिरे स्वामिपुष्करिण्यास्तटे वसन् ।  
वासुदेवपरो मर्त्यो भवेद्वासवपूजितः ॥ ४२

शाण्डिल्यः —

स्वामिपुष्करिणीतीरे पञ्चकालपरो वसन् ।  
अपञ्चत्वो भवेन्मुक्तः पञ्चोपनिषदात्मकः ॥ ४३

कश्यपः —

यो नर स्वामिसरसि स्मरन् शौरिं कृताह्वः ।  
कर्मनिर्मूलको धीरः कृतकृत्यो भवेत् स हि ॥ ४४

कण्वः —

स्वामिपुष्करिणीतीर्थं यः पिबेत् चुलुकत्रयम् ।  
अहोरात्रकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥ ४५

अगस्त्यः —

इन्द्रियैः कर्मभिः ज्ञानैः मनसा सह यत्कृतम् ।  
आप्तवात् स्वामिसरसि तदेनः शुद्ध्यति क्षणात् ॥

४६

दुर्वासाः —

कीर्तयेत् स्वामिसरसीं सह सर्वेन्द्रियैर्हं यः ।  
पूज्यते सिद्धसङ्घैः स सनन्दसनकादिभिः ॥

विश्वामित्रः --

पवित्रं स्वामिसरसि स्पृष्ट्वा तोयं निरेनसः ।  
विज्ञानसम्पदो विष्णुं द्रष्टुकामा भवन्ति हि ॥

४८

शक्तिः —

पवित्रवन्तः परमाः पञ्चसन्मन्त्रविग्रहाः ।  
भवन्ति तेऽवगाहन्ते ये स्वामिसरसीजलम् ॥

४९

शुकः —

स्वामिपुष्करिणीं सैषा पुराणी पुण्यपूरणी ।  
सुरणाञ्च नराणाञ्च तिरश्चाञ्चात्मशोधिनी ॥

५०

यस्यां कोलवपुर्भूत्वा श्रीनिवासः परः पुमान् ।  
देवीभिः शक्तिभिश्चैव क्रीडानुगुणभूतिभिः ॥

५१

विचित्रविविधानेकशृङ्गयन्तधृतिक्रमैः ।  
जलक्रीडां वितनुते विश्वाप्यायकरीं सदा ॥

५२

शौनकः—

सैषा हि स्वामिसरसी समञ्जसजगद्धिता ।  
कीर्तनस्नानपानैश्च तापत्रयनिवारिणी ॥

५३

नारदः —

माधवानन्दजननी मदनज्वरमाथिनी ।  
मदयत्यात्मजातानि स्वामिपुष्करिणी ह्यसौ ॥

५४

कतुः—

स्वामिपुष्करिणी सौम्या सोमपीथी सुरर्षभः ।  
यस्यामवभृथस्नानं कुरुतेऽद्यापि विश्वसूः ॥ ५५  
कुञ्जरारिगिरेः कुञ्जे व्यञ्जिताखिलभावनाः ।  
साधवः स्वामिसरसि स्नानात् संसारतारिताः ॥ ५६  
वेदप्रधाना विबुधा यस्यां स्नात्वा निरहंसः ।  
विष्णुं साक्षात्कर्तुकामाः स्वामिपुष्करिणी हि सा ॥ ५७

मत्स्याषाढः—

आषाढानामाश्रमश्रीः आश्रमाचारशालिनाम् ।  
अन्येषां भूतिभूमिश्च सैषा स्वामिसरोऽभिधा ॥ ५८

कुण्डिनः—

कुहरे सिंहशैलस्य सरसी स्वामिपूर्विका ।  
शीलाचारवतां नृणां अशीलनामपीष्टदा ॥ ५९

हारीतः—

जयन्ती चापदां भूमिः सम्पदां सर्वकामदा ।  
सरसी स्वाम्युपपदा सैषा विष्णुपदीजनिः ॥ ६०

जैमिनिः—

शिरस्यञ्जलिमाबधन् स्वामिपुष्करिणीं स्तुवन् ।  
स्मरन् हरिं स्वानुष्ठानं यः करोति स पुण्यभाक् ॥ ६१  
स्नानं सकृत् कुर्वते ये स्वामिपुष्करिणीजले ।  
हव्यकल्येषु ते योज्या नरा नारायणप्रियाः ॥ ६२

जाबालिः—

स्नानादन्येषु तोयेषु स्वामिपुष्करिणीं स्मरन् ।  
कृतकृत्यः कृतात्मा स मर्त्यः तत्फलमाप्नुयात् ॥ ६३

पितामहः—

स्वामिपुष्करिणीतीर्थपरिचर्यापरो हि यः ।  
समर्त्यो वैष्णवीं भूतिं मर्त्यत्वे समवाप्नुयात् ॥ ६४

सनकः—

यस्यास्तीरे निवसति श्रीनिवासः परात् परः ।  
सा धन्या स्वामिसरसी सेवते तां य आत्मवान् ॥ ६५

सनन्दनः—

विष्णुपादोद्भवं ब्रह्मकरस्पर्शपवित्तम् ।  
पवित्रितेशानजटाजूटं स्वामिसरोजलम् ॥ ६६

सनत्कुमारः—

या पुनात्याह्वात् सम्यग् भुवनानि चतुर्दश ।  
स्वामिपुष्करिणी धन्या सा सर्वफलदायिनी ॥ ६७

वामदेवः—

सरांसि यानि दिव्यानि सन्ति त्रिजगतीतले ।  
तेषामेषा स्वामिनी हि 'स्वामिपुष्करिणी' त्यतः ॥ ६८

सनातनः—

ये नराः प्रातरुत्थाय तामिमां कीर्तयन्ति ते ।  
स्वामिपुष्करिणीं भक्ता विशन्ति विमलं पदम् ॥ ६९

देवदर्शनः—

इत्यूचिवांसो विद्वांसः कृतकृत्या ह्यमर्षणाः ।  
तस्यास्तीरे पुण्यभूमौ आसते मुनिपुङ्गवाः ॥ ७०  
कचित् कदाचित् क्रीडार्थं दिव्यैः परिजनैः सह ।  
शेषसेनेशगरुडप्रधानैः सेवितं शुभम् ॥ ७१  
सेवमानाः श्रीनिवासं साक्षात् अक्षिपथं गतम् ।  
चतुर्भुजमुदाराङ्गं अतसीगुच्छसच्छविम् ॥ ७२

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे

अव्यादिपञ्चाशन्महर्षिकृतस्वामिपुष्करिणीप्रशंसनं

नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः



अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

### दैत्योपद्रवज्ञापनार्थं ब्रह्मादीनां क्षीरसागरगमनम्

देवलः—

स्वामिपुष्करिणीकूले नारायणगिरिर्भृगौ ।  
आविर्भावः कथं विष्णोः श्रीनिवासस्य शार्ङ्गिणः ? ॥ १

देवदर्शनः—

शृणु ब्रह्मन् समाचक्षे समाहितमना मुने ! ।  
प्रश्नं सर्वाण्डगर्भस्य प्रादुर्भावात्मकं विभोः ॥ २  
पुरा दुर्मेधसा दैत्यप्रवरेणामराणि ।  
पीडिता रुद्रभक्तेन भृशं ब्रह्मादयः सुराः ॥ ३  
शान्ताग्निसदृशाः शुष्कवदनाः शोकविह्वलाः ।  
पराजिता जडात्मानः किंकर्तव्याविवेकिनः ॥ ४  
दैत्यारिं शरणं प्राप्तुं प्रयता यतमानसाः ।  
क्षीराब्धिं प्रापुरप्राप्तस्वावासाः तस्य शान्तये ॥ ५  
तुष्टुवुस्तत्त दैतैयविध्वंसनविचक्षणम् ।  
लक्ष्म्योपलक्षितं विष्णुं विश्वरक्षणदीक्षितम् ॥ ६

### ब्रह्मादिकृतक्षीराब्धिशायिस्तुतिः

देवाः—

ॐ नमो देवदेवाय पूर्वदेवाय खड्गिने ।  
श्रीवत्साङ्गाय च नमः परस्मै परमात्मने ॥ ७  
नमः परस्मै व्यूहोपव्यूहान्तरविभूतये ।  
विभवाय नमस्तस्मै विश्रान्तर्यामिणेऽणवे ॥ ८

|                                                         |    |
|---------------------------------------------------------|----|
| अर्चावताराय नमोऽजन्मने जन्मभाजिने ।                     |    |
| मायाविने जगत्स्रष्टे लक्ष्मीनारायणात्मने ॥              | ९  |
| जगत्प्रत्यवरोहाय जगदानन्दिने नमः ।                      |    |
| जगन्मङ्गलभूताय जाह्नवीजनकाङ्क्षये ॥                     | १० |
| जङ्गमाजङ्गमजगद्धातुः जननकारिणे ।                        |    |
| जनार्दनाय जम्भारेः अनुजाय नमो नमः ॥                     | ११ |
| श्रियःपते ! नमस्तुभ्यं सभ्यसन्दोहसङ्गिने ।              |    |
| सदाविष्णो ! महाविष्णो ! विष्णोऽपारादिरूपिणे ॥           | १२ |
| नमो नलिननेत्राय नेत्रभूताय नाकिनाम् ।                   |    |
| नारायणाय नाथाय नागभोगशाय ते ॥                           | १३ |
| विश्वेश्वराय विश्वाय विश्वातीताय ते नमः ।               |    |
| विश्वाध्यक्षाय वीशानवाहनायादिवेधसे ॥                    | १४ |
| नित्याय निरवद्याय निराकाराय नीतये ।                     |    |
| निस्सीमकल्याणगुणगणातीताय ते नमः ॥                       | १५ |
| सच्चिदानन्दसन्दोह ! देहवृद्धिक्षयाक्षम ! ।              |    |
| अच्युतानन्त ! गोविन्द ! नमस्तुभ्यं महात्मने ॥           | १६ |
| अपारकरुणाम्बोधे ! निस्तरङ्गात्मनिश्चल ! ।               |    |
| लक्ष्मीविलक्षण ! विभो ! विचक्षण ! नमोऽस्तु ते ॥         | १७ |
| ऋत ! सत्य ! परब्रह्म ! कृष्ण ! पिङ्गलपूरुष ! ।          |    |
| ऊर्ध्वरेताः ! विरूपाक्ष ! विश्वरूप ! नमोऽस्तु ते ॥      | १८ |
| नमो नमः कारणकारणाय नमो नमोऽनन्तमहाविभूतये ।             |    |
| नमो नमः शङ्करचापहारिणे नमो नमः शाश्वतशार्ङ्गधन्वने ॥    | १९ |
| नमोऽन्तरादित्यहिरण्यरूप ! नीरूप ! तुभ्यं पुरुषोत्तमाय । |    |
| नमो नमोभिः निगमान्तभूतैः कृतस्तुतप्रस्तुतभावनाय ॥       | २० |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः २६७

प्रसीद पुण्डरीकाक्ष ! प्रसीद पुरुषोत्तम ! ।  
प्रसीद परमानन्द ! प्रसीद परमेश्वर ! ॥ २१  
प्रसीद कमलाकान्त ! प्रसीद करुणाकर ! ।  
प्रसीद भक्तार्तिहर ! प्रसीद विबुधर्षभ ! ॥ २२

**ब्रह्मादीनां पुरतः श्रीगर्णवाल्लक्ष्मीसखीप्रादुर्भावः**

देवदर्शनः—

देवमेवं स्तुतवतां देवानां महितात्मनाम् ।  
हिरण्यगर्भपूर्वाणां भविष्यद्भूतभाविनाम् ॥ २३  
प्रादुर्बभूव पुरतः क्षीराब्धेर्दुहितुः सखी ।  
पुण्डरीकनिभा सापि पुण्डरीकायतेक्षणा ॥ २४  
पुण्डरीकानना पुण्या पुण्डरीकाक्षशासनात् ।  
अखिलक्लेशहारिण्या व्याहारिण्यर्थसम्पदाम् ॥ २५  
सुधां स्रवन्त्या वाचा च बभाषे तान् दिवौकसः ।

**लक्ष्मीसखीकथितभगवदावासज्ञापनपूर्वकाऽभयोक्तिः**

‘स्वागतं भवतामस्तु कार्यसिद्धिश्च देवताः! ॥ २६  
बाधा कचिदिदानीं किं ? सुरा दैत्यासुरैरपि ।  
तेषां तु निधनं कर्तुं ध्रुवमव्याजरक्षकः ॥ २७  
श्रीवत्सलक्षणः शार्ङ्गो दक्षिणो वश्र रक्षणे ।  
मा भैषीष्ट सुरा यूयं मा प्रत्यूहो भविष्यति ॥ २८  
अचिराद्भगवान् विष्णुः श्रीनिवासः स्वराड्भिः ।  
प्रत्यक्षो भविता वश्र सर्वं सिद्धं समीहितम् ॥ २९  
आमोदादीन् दिव्यलोकान् सन्त्यज्य भगवान् हरिः ।  
इदानीं रमते लक्ष्म्या नारायणगिरेस्तटे ॥ ३०

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| स्वामिपुष्करिणीतीरे सर्वान्तर्याम्यधोजक्षः ।        |    |
| सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥           | ३१ |
| तदितो दक्षिणं भागं भूमेर्गच्छत सत्त्वराः ।          |    |
| अविघ्नमस्तु वः कार्यं ब्रह्मेन्द्रत्रिदिवौकसः ! ॥ ' | ३२ |
| इत्युक्त्वा तु सखी लक्ष्म्याः सहसाऽन्तर्दधेऽपि च ।  |    |
| तस्याः श्रुत्वा वचो विष्णुपत्नीसख्याः समाहिताः ॥    | ३३ |
| प्रणम्य दण्डवद्देशं तं परीयुः प्रदक्षिणम् ।         |    |
| सम्प्रीतमानसा देवा सावधानाः ससम्भ्रमाः ।            |    |
| तस्मादक्षिणतो भूमिभागं गन्तुं प्रचक्रमुः ॥          | ३४ |

### ब्रह्मादीनां क्षीरार्णवाच्छीनारायणाचलागमनम्

|                                             |    |
|---------------------------------------------|----|
| ततस्ते विबुधाः सर्वे परमेष्ठिपुरोगमाः ।     |    |
| भूयो नारायणगिरेः पादानाशिश्चिर्युमुदा ॥     | ३५ |
| पुण्यातिपुण्यतोयानि सरांसि सरितश्च हि ।     |    |
| सेवमानाः कृतातिथ्याः सिद्धसङ्घैश्च तापसैः ॥ | ३६ |
| मिथुनैः किन्नराणां हि लतागृहनिवासिभिः ।     |    |
| गीयमानानि गीतानि प्रादुर्भावात्मकानि च ॥    | ३७ |
| मन्द्रमध्योच्चमहिममाधुरीधूर्वहाणि च ।       |    |
| शिलातलेषु शृण्वन्तः सर्पा येषु समाश्रिताः ॥ | ३८ |
| सप्ततन्त्रीनादगर्भसप्तस्वरविभावनम् ।        |    |
| वेणुवीणामृदङ्गादयं नवनाट्यरसान्वितम् ॥      | ३९ |
| आविर्भावात्मकं कालश्रुतिकल्पितमूर्च्छनम् ।  |    |
| अप्सरोगणसङ्गीतं लोकयन्तोऽथ ते शनैः ।        |    |
| वीतक्लेशा वीतमोहाः विमलानन्दभावनाः ॥        | ४० |

श्रीस्वामिपुष्करिणीतीरवर्णनम्

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| नारायणाद्रौ प्रापुश्च स्वामिपुष्करिणीतटम् ।     |    |
| क्रौञ्चैः कारण्डवैर्हंसैः सारसैः सरसस्वरैः ॥    | ४१ |
| ताराभिश्च बलाकाभिः अन्यैर्वनवयोगणैः ।           |    |
| निविडान्तरकल्लोलकोलाहलसमाकुलम् ॥                | ४२ |
| तमालैस्तिलकैः पूगैः नारिकेलैश्च पाटलैः ।        |    |
| केतकैः सुरपुत्रागैः पुत्रागैः पुत्रदीपकैः ॥     | ४३ |
| जम्बीरैश्चम्पकैश्चूतैः लिङ्गुचैः कुटजैर्वटैः ।  |    |
| मन्दारैः केसरैः श्वेतमन्दारैः हरिचन्दनैः ॥      | ४४ |
| किंशुकशोकसन्तानसालनीपहरीतकैः ।                  |    |
| श्रीवृक्षैश्चन्दनैर्विल्वैः कदलीभिश्च दाडिमैः ॥ | ४५ |
| मातुलुङ्गैः कुरवकैः कुन्दैः आमलजम्बुभिः ।       |    |
| समन्ततः समाकीर्णं सान्द्रच्छायैश्च भूरुहैः ॥    | ४६ |
| वीरुद्धिर्दमनीभिश्च माधवीमालतीधवैः ।            |    |
| फलपुष्पद्रुमैः फुल्लैः मल्लिकावनजातिभिः ॥       | ४७ |
| जातीभिः शतपत्नीभिः वराभिः विष्णुपर्णकैः ।       |    |
| तुलसी कृष्णतुलसी वलर्क्षतुलसीशतैः ॥             | ४८ |
| नन्दावर्तैस्त्रिसन्दीभिः जपाभिः करवीरकैः ।      |    |
| शृङ्गबेरैर्हरिद्राभिः कर्पूरैः रजनीकुलैः ॥      | ४९ |
| पनसैराद्रिपनसैः अनेकैः कन्दजातिभिः ।            |    |
| पुष्पगन्धं विरन्तीभिः लताततिभिरावृतम् ॥         | ५० |
| कल्हारकमलानीकमधुमत्तमधुव्रतैः ।                 |    |
| कूजद्भिः कोकिलैश्चापि मदान्यैः महितान्तरम् ॥    | ५१ |

समाश्रितार्तिहरणसान्द्रच्छायं समन्ततः ।  
तत्र स्थित्वा मुहूर्तं ते ब्रह्माद्या देवतागणाः ॥ ५२

### कमलान्युत्तया ब्रह्मादिकृतश्रीनिवाससाक्षात्कारोद्योगः

क्षीराब्धिकन्यासस्त्यास्तु संस्मरन्तो वचः शुभम् ।  
श्रियःश्रियं श्रीनिवासं श्रीवत्सकृतलक्षणम् ॥ ५३  
श्रीकण्ठकृतकैङ्कर्यं श्रीमहीमहितं हितम् ।  
एकमेकायनविदामेकान्तहृदयालयम् ॥ ५४  
द्वितीयाम्नायनिष्ठानामात्मनामात्मभूतिदम् ।  
त्रिमूर्तिमन्त्रिगुणकं त्रिविधात्मककालकम् ॥ ५५  
चतुर्भूतिधरं शान्तं चतुर्विंशतिमूर्तिकम् ।  
चतुर्धाऽवस्थातिभूमिं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ ५६  
पञ्चोपनिषदात्मानं पञ्चरात्रप्रवर्तकम् ।  
पञ्चाथर्वशिरोरत्नं पञ्चमूर्तिधरं परम् ॥ ५७  
षडध्वमयचक्रस्थषट्कोटिगृहमेधिनम् ।  
सप्तार्चिःपञ्चरावासहसं परमहंसकम् ॥ ५८  
अष्टाङ्गयोगवित्सिद्धसंघहृत्पद्मवासकम् ।  
दशावतारचतुरं दशाननशिरच्छिदम् ॥ ५९  
चरमोपायसुगमं चराचरगुरुं हरिम् ।  
गङ्गाजन्मगृहाङ्गुष्ठपादपङ्कजवैभवम् ॥ ६०  
प्रणतार्तिहरं प्राज्ञं प्रणवार्णप्रभावकम् ।  
प्रसादमात्रप्रभवप्रमामात्रप्रमाणकम् ॥ ६१  
अव्याजमितं शत्रुघ्नं शरण्यं शरणार्थिनाम् ।  
ज्ञानशक्तिबलैश्वर्यवीर्यतेजोविजृम्भितम् ॥ ६२

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः २७१

रजस्तमस्सत्त्वसङ्घविमोहितजगत्तूयम् ।  
संसृष्टिस्थितिसंहारनिग्रहानुग्रहात्मकम् ॥ ६३  
भक्तानामप्यभक्तानां चिन्तनान्मोक्षकारणम् ।  
नादान्तगगनावासं शुद्धं सूक्ष्मं निरञ्जनम् ॥ ६४  
निरवद्यं निराकारं निराबाधं निरामयम् ।  
निराश्रयं निस्तरङ्गनीरराशिनिभं विभुम् ॥ ६५  
अतीन्द्रियं परं ब्रह्म चेन्द्रियैः स्पृण्डुमिच्छवः ।  
व्यूहात्मकमिदं सूक्तं सुपर्वाणः समुत्सुकाः ।  
उदात्तमुच्चैरुच्चैरुः सम्प्लुतं निरुपप्लवाः ॥ ६६

शेषाद्रौ श्रीनिवासमाक्षात्काराय ब्रह्मादिकृतस्तुतिः

“ जितं ते पुण्डरीकाक्ष ! नमस्ते विश्वभावन ! ।  
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ! ॥ ६७  
नमः श्रीधामनिलय ! नमः श्रीवत्सलक्षण ! ।  
नमस्त्रिधात्मने तुभ्यं नमः श्रीघनमोहन ! ॥ ६८  
नाकौकः प्रत्यनीकारे नारायण नमोऽस्तु ते ।  
नागपर्यङ्कशयन अनाथनाथ नमो नमः ॥ ६९  
विश्वस्रष्ट्रे विश्वभर्त्रे विश्वत्रात्रे विचक्षण ।  
विश्वान्तर्यामिणे तुभ्यं विश्वोत्तीर्ण विभो नमः ॥ ” ७०

स्वामिपुष्करिणीतीरे स्तुतिप्रसन्नभगवद्विमानाविर्भावः

एवमुच्चरतां तेषां हर्षोत्फुल्लास्यचक्षुषाम् ।  
अग्रे सुधान्धसां व्यग्रमनसां सम्पदर्थिनाम् ॥ ७१

|                                                                                                                                              |    |
|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| न्यक्कृताखिलतेजस्कं चक्षुर्हारि समीक्षितम्<br>पश्चिमे स्वामिसरसस्तीरे प्रत्यग्रविग्रहम् ॥                                                    | ७२ |
| विमानमाविर्बभूव विमलानन्दकारकम् ।<br>दिव्यदुन्दुभिनिर्घोषजयशब्दसमन्वितम् ॥                                                                   | ७३ |
| द्योतयच्च दिशः सर्वाः पुष्पवृष्टिपुरःसरम् ।<br>तद्वीक्ष्यानिमिषाः सर्वे विमानं विस्मयान्विताः ।<br>अभितुष्टुवुरात्मेशं श्रीनिवासं समञ्जसम् ॥ | ७४ |

#### ब्रह्मादिकृतविमानमध्यगतश्रीनिवासस्तुतिः

|                                                                                 |    |
|---------------------------------------------------------------------------------|----|
| जय श्रियःपते विष्णो जय सत्याच्युतानिशम् ।<br>जयाऽनिरुद्ध भगवन् जय पूरुषपूर्वज ॥ | ७५ |
| जयेश सर्वजगतां जय श्रीकण्ठपूजित ।<br>जयाऽऽत्मेध्वर जीवातो जय त्वमपराजित ॥       | ७६ |

#### श्री श्रीनिवासाविर्भावः

|                                                                                              |    |
|----------------------------------------------------------------------------------------------|----|
| स्तुत्याऽनया प्रसन्नोऽस्मिन् विमाने परमः स्वराट् ।<br>सहस्रादित्यसङ्काशः सहस्रेन्दुसमप्रभः ॥ | ७७ |
| सहस्रहुतभुक्प्रख्यो विख्यातविभवोदयः ।<br>चतुर्भुजः शङ्खचक्रवरावन्तहस्तकः ॥                   | ७८ |
| श्रीवत्सकौस्तुभोरस्को वैजयन्त्या विराजितः ।<br>उद्यत्प्रचण्डमार्ताण्डप्रतीकाशकिरीटकः ॥       | ७९ |
| माणिक्यकण्ठहारश्रीवीरपट्टविराजितः ।<br>कर्णपालीसमालम्बिकराननकुण्डलः ॥                        | ८० |
| हारकेयूरकटककङ्कणाङ्गदसुन्दरः ।<br>अङ्गुलीयच्छन्नकरोदरबन्धनशोभितः ॥                           | ८१ |



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः २७३

प्रवालमुक्ताप्रत्युत्पन्नवरत्नसुदामकः ।  
शृङ्खलाबद्धकौक्षेयकिङ्किणीककटिस्थलः ॥ ८२  
पीतकौशेयवसनो दीप्तमञ्जीरहंसकः ।  
किङ्किणीदामाङ्गुलीयविराजितपदाम्बुजः ॥ ८३  
सर्वाभरणसंयुक्तः सर्वाययवसुन्दरः ।  
पुण्डरीकविशालाक्षः पुष्पदामविराजितः ॥ ८४  
अष्टाङ्गैर्धूपकैर्दिव्याऽलेपनैः पुण्यगन्धिभिः ।  
सम्यक्स्थानाङ्कितङ्गश्रीः पूर्णचन्द्रनिभाननः ॥ ८५  
अप्राकृताङ्गमहिमा प्राकृताङ्गविडम्बनः ।  
प्रादुर्बभूव भगवान् भक्तभावाऽत्मकः पुमान् ॥ ८६

ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृतकुशलप्रश्नः

ईषदुत्सयमानस्तु गीर्वाणान् वीक्ष्य विस्मितान् ।  
बभाषे च सुरश्रेष्ठः पूर्वान् पूर्वविदात्मभूः ॥ ८७

श्रीभगवान्—

कच्चिद्देवाः स्वागतं वः सहस्राक्षपुरोगमाः ।  
पितामहं पुरस्कृत्य किमर्थं यूयमगाताः ॥ ८८  
कच्चित्प्रायेण बाध्यध्वे ध्रुवमव्याजशत्रुभिः ।  
एवमुक्ते हृषीकेशे केशवे केशिमर्दने ॥ ८९

भगवते ब्रह्मकृतलोकोपद्रवकार्यसुरोदन्तविज्ञापनम्

प्रत्यूचे विबुधश्रेष्ठः प्रणिपत्य पितामहः ।  
जागरूकेऽत्र भवति भगवन्! भक्तवत्सले ॥ ९०  
सर्वत्रारिष्टमापन्नं त्वदधीना वयं हि तत् ।  
किं वाऽकुशलमस्माकं जीवितं कञ्जलोचन! ॥ ९१

|                                                   |     |
|---------------------------------------------------|-----|
| इन्द्रादयो लोकपाला विवर्णवदना इमे ।               |     |
| स्वपदप्रच्युता दुःस्थाः स्वस्था न प्रचकाशिरे ॥    | ९२  |
| दैवतानाममीषां तु भीतिविह्वलचेतसाम् ।              |     |
| नक्तं दिवं न चेरुश्च विमानानि वियत्तले ॥          | ९३  |
| एते हि द्वादशादित्याः तमोविध्वस्तदीप्तयः ।        |     |
| ग्रस्ता इव तमोभिस्तु न बभुः विगतप्रभाः ॥          | ९४  |
| अष्टौ वसुगणाः प्रायो नासत्यौ द्वौ च नाकिनौ ।      |     |
| बभ्रासिरे न वीताभाः प्रणष्टवसुका इव ॥             | ९५  |
| मम लोके निवासश्च दुःस्थितोऽस्वस्थचेतसः ।          |     |
| कैलासवासो रुद्रस्य महाक्लेशकरोऽभवत् ॥             | ९६  |
| स्वकृतिव्रीडया सोऽपि तत्रैव व्यवतिष्ठते ।         |     |
| कश्चिन्निदानमेतेषां तृणीकृतजगत्रयः ॥              | ९७  |
| अमरारिरिति ख्यातो दैतेयेन्द्रो महेन्द्रजित् ।     |     |
| शिपिविष्टं समुद्दिश्य दुर्विनीतगणाधिपम् ॥         | ९८  |
| घोराकारो घोरतरं चकारातिचिरं तपः ।                 |     |
| तपसा तेन सन्तुष्टः पिनाकी स च तामसः ॥             | ९९  |
| अजयत्वमवध्यत्वममरैरमराधिपैः ।                     |     |
| अन्यैरतिबलैश्चैव तस्मै दुर्मेधसे ददौ ॥            | १०० |
| अमरारिर्दिविषदां अन्येषाञ्च सतामरिः ।             |     |
| दुष्टात्मा दुष्टचेताः स त्रिषु लोकेषु चेष्टते ॥   | १०१ |
| विशेषतो देववर्गान् दरिद्रान् दीनमानसान् ।         |     |
| दिवानिशं सदा क्रूरः तदाप्रभृति बाधते ॥            | १०२ |
| दैत्यारिर्देवतामित्रं शार्ङ्गं खड्गी च चक्रभृत् । |     |
| देवः प्रमाणं सर्वेषामन्तर्यामी भवान् स्वतः ॥      | १०३ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः २७५

नमस्ते कमलकान्त नमः कमललोचन ! ।  
नमः कारुण्यपुण्यश्रीः नमः कालात्मक ! प्रभो ! ॥ १०४  
अर्दितानसुरेन्द्रेण दुर्हृदा चामरारिणा ।  
अस्माननेकविधया भवान् रक्षतु रक्षतु ।  
इति ब्रुवाणे गीर्वाणगणे श्रेयोभिर्शसिनि ॥ १०५

**ब्रह्मादिप्रार्थनया भगवदुक्ताभयोक्तिः**

शरत्प्रत्यग्रफुल्लाब्जवक्त्राभे परमेष्ठिनि ।  
कारुण्यामृतवाराशिकलोलामृतलीलया ॥ १०६  
वीक्षया वीक्ष्य विश्वात्मा विध्वस्तजरयाऽऽदरात् ।  
उवाच भगवान् विष्णुः स्मयमानमुखाम्बुजः ॥ १०७  
दन्तपङ्क्तिद्युतिज्योत्स्नास्त्रपिताऽशान्तरालकः ।  
मा विभ्यतु भवन्तोऽहं करिष्ये तत्प्रतिक्रियाम् ॥ १०८  
स्वस्मिन् स्वस्मिन् पदे यूयं स्थातारोऽनार्तमेव च ।  
वध्य एव त्ववध्यत्वं प्राप्तवानपि शूलिनः ॥ १०९

**रक्षोगणसंहाराय भगवत्कृतकुमुदाक्षनियोजनम्**

अमरारिरमुष्यास्तु त्रिलोक्या दुष्टकण्टकः ।  
इत्युक्त्वा तान् सुरगणान् सुप्रसन्नः सुरर्षभः ॥ ११०  
इङ्गिताकारचेष्टाङ्गमिन्दिरारमणः प्रभुः ।  
कुमुदाक्षं गणाध्यक्षं गदापाणिमुदैक्षत ॥ १११  
श्रीवत्सकौस्तुभाभ्याञ्च ऋते सारूप्यसम्पदम् ।  
विष्वक्सेनाभिधानञ्च सेनापत्यं प्रदाय च ॥ ११२  
नियुज्य तं तस्य वधेऽमरारातेः गणाधिपम् ।  
देवान् सम्भाष्य सहसा सर्वान् स्वपदकाङ्क्षिणः ॥ ११३

भगवनो ब्रह्मादिप्रेषणपूर्वकमन्तर्धानम्

कृत्वाऽभयप्रदानञ्च दत्त्वाऽऽशिषमनेकशः ।  
 समयमानमुखः श्रीमान् अच्युतस्तु तिरोदधे ॥ ११४  
 ततो देवा देवदेवाभिहितं वचनं हितम् ।  
 श्रुत्वा प्रीत्या प्रणम्यैतं देशमुद्दिश्य चोर्जितम् ॥ ११५  
 शिरस्यञ्जलिपुञ्जानप्याबध्नन्तः सुधान्वसः ।  
 प्रदक्षिणं परिक्रम्य ययुः संहृष्टमानसाः ॥ ११६

श्रीनिवासावासस्थलस्य सर्वफलप्रदत्ववर्णनम्

इति देवार्थमित्रस्य सर्वान्तर्यामिणो विभोः ।  
 आविर्भावो मयाऽऽख्यातः श्रीनिवासस्य देवल ! ॥ ११७  
 शृण्वतां पठताञ्चैव चतुर्वर्गफलप्रदः ।  
 एतद्वै वैष्णवं क्षेत्रं पवित्रं चित्रवैभवम् ॥ ११८  
 अनायासेन जगतामभीष्टफलदायकम् ।  
 मुक्तिभाजां मुमुक्षूणां लक्ष्मीवैभवकाङ्क्षिणाम् ॥ ११९  
 किन्नराणां नराणाञ्च सुराणां सुखशालिनाम् ।  
 भूतानां भूतयोनीनां भैरवाभैरवात्मनाम् ॥ १२०  
 परमैकान्तिनां पञ्चकालाकलुषितात्मनाम् ।  
 पञ्चशाखाथर्वविदां पञ्चोपनिषदात्मनाम् ॥ १२१  
 नित्यानां नियमस्थानां निवासो योगिनामपि ।  
 माहात्म्यमस्य देशस्य वक्तुं वर्षशतैरपि ।  
 अशक्यं देवल ! भवान् कृतकृत्यः शुचिश्रवाः ॥ १२२

श्री श्रीनिवासावतारदेशकालनिर्णयः

इत्थमात्मभुवः कल्पे हार्दाम्भोजभुवो हरेः ।  
 आदौ कृतयुगे जम्बूद्वीपे भारतवर्षके ॥ १२३

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः २७७

गङ्गाया दक्षिणे भागे योजनानां शतद्वये ।  
पञ्चयोजनमात्रे तु पूर्वाम्भोधेस्तु पश्चिमे ॥ १२४  
मासे भाद्रपदे विष्णुतिथौ विष्णुसमन्विते ।  
सिद्धयोगे सोमवारे गिरौ नारायणाऽह्वये ॥ १२५  
स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्चिमे भूत्यपश्चिमे ।  
वृन्दारकाणां वृन्दैस्तु प्रार्थितो लोकरक्षकः ॥ १२६  
आविर्बभूव भगवान् श्रीनिवासः परः पुमान् ।  
श्रीनिवासाय महते निष्कलानिष्कलात्मने ।  
नमोऽस्तु पद्मनेत्राय पवित्रायादिवेधसे ॥ १२७

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीश्रीनिवासाविर्भाववर्णनं  
नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ।

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

पद्मसरोवरमाहात्म्यम्

देवलः

देवदर्शन ! भूयोऽपि श्रोतुं कौतूहलं हि मे ।  
पद्माख्यसरसो ब्रह्मन् ! माहात्म्यं जन्म मे वद ॥ १  
यस्मिंस्तपस्यतो वैयासकेः सिद्धिरुपागता ।  
शुक्स्तु मुक्त इति वै प्रसिद्धिः जगतीतले ॥ २  
ब्रह्मलोकादागतो यः शुकोऽन्यो वा वदस्व मे ।  
कृपां मयि कुरुष्वच्च वद सर्वज्ञ मे गुरो ! ॥ ३

देवदर्शनः—

भृगुपादाहतिकुपिताया लक्ष्म्याः कपिलालयगमनम्

|                                                      |   |
|------------------------------------------------------|---|
| शृणु पद्मास्त्र्यसरस उत्पत्तिं देवलाद्य भोः ! ।      |   |
| भृगोः ख्यात्यां समुत्पन्ना श्रीः पूर्वं धर्मनायक ! ॥ | ४ |
| भृगुपादाहतस्यास्य विष्णोः वैकुण्ठवासिनः ।            |   |
| विप्रपादरजःस्पृष्टा कुपिता कपिलाऽल्यम् ॥             | ५ |
| गत्वा पातालमूलं सा मुनिना तेन पूजिता ।               |   |
| श्रीमता सा हि तेनैव कपिलेन कृताऽल्यम् ॥              | ६ |
| पूजिता च चिरं कालं तत्र वासं तदाऽकरोत् ।             |   |
| धरणी सहितो विष्णुः लीलया धृतचामरः ॥                  | ७ |

लक्ष्म्यन्वेषणार्थं धरातलं प्रति भगवदागमनम्

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| तं मुनिं पूजयित्वाऽथ भृगुं ब्रह्मर्षिसत्तमम् ।   |    |
| नीलां निःक्षिप्य वैकुण्ठे भूदेव्या भूमिमागतः ॥   | ८  |
| शङ्खचक्रगदाकुन्तपाणिः पद्मदलेक्षणः ।             |    |
| श्रीदेव्यन्वेषणं कुर्वन् नानारूपी जनार्दनः ॥     | ९  |
| षट्पञ्चाशत्सु देशेषु विचिन्वन् पुरुषोत्तमः ।     |    |
| कोल्हापुरं समागम्य श्रियोऽधिष्ठानमुत्तमम् ॥      | १० |
| तत्पश्यन्महालक्ष्मीं अर्चिरूपेण राजतीम् ।        |    |
| अगस्त्याराधितां पूर्वं प्रतिष्ठाप्याऽल्योत्तमे ॥ | ११ |
| तां दृष्ट्वा तत्र देवेशो महितां मुनिसत्तमैः ।    |    |
| अर्चयंश्च स्वयं विष्णुः उवास दशवत्सरान् ॥        | १२ |

श्रीकोल्हापुरवासिलक्ष्मीमर्चयन्तं भगवन्तं प्रत्यशरीरोक्तिः

|                                            |    |
|--------------------------------------------|----|
| अथाब्रवीत्तदा विष्णुं अशरीरा सरस्वती ।     |    |
| विष्णो ! प्रसीद भगवन् ! लक्ष्मीदर्शनलालस ॥ | १३ |

श्रीपाद्मपुराणे श्वेतकाण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः २७९

इतो दक्षिणतो गच्छ कृष्णावेण्योश्च दक्षिणे ।  
द्वाविंशद्योजने विष्णो ! सुवर्णमुखरी नदी ॥ १४  
तीरमासाद्य तस्यास्त्वं उत्तरं मुनिसेवितम् ।  
कुन्तेनाऽहत्य तर्त्तीरे सरः कृत्वा तपः कुरु ॥ १५  
आहत्य देवलोकात्त्वं सुवर्णकमलानि च ।  
संस्थाप्य तस्मिन् सरसि सर्वाणि कमलानि च ॥ १६  
तर्त्तीरे पुष्पजातीश्च पुष्पवृक्षशतानि च ।  
पद्मारामे च सरसि पद्मायाः पद्मवल्लभा ! ॥ १७  
जपन्नेकाक्षरमनुं सहस्राक्षरमेव वा ।  
अर्चयन् कमलैः पद्मां द्वादशाब्दं वस प्रभो ! ॥ १८  
ततः प्रसन्ना सा देवी स्वयमाविर्भविष्यति ।  
सुवर्णकमले देव ! सुवर्णकमलकृतिः ॥ १९  
ऊनषोडशवर्षा सा श्रीः पद्मनयना तव ।  
गच्छ शीघ्रमितो विष्णो ! सुवर्णमुखरीतटम् ॥ २०

शेषाचलाध्वना गजरूपस्य भगवतः सुवर्णमुखरीतीरागमनम्

इति सौम्यं वचः श्रुत्वा विष्णुराकाशसम्भवम् ।  
जगाम गरुडाऽरूढः सुवर्णमुखरीतटम् ॥ २१  
पश्यंश्च विविधान् देशान् पर्वतांश्च वनानि च ।  
वराहाधिष्ठितं पुण्यं अञ्जनाद्रिं सुरारिहा ॥ २२  
स्वामिपुष्करिणीं दृष्ट्वा भूवराहस्य सन्निधौ ।  
गरुडादवतीर्यासौ स्नात्वा स्वामिसरोजले ॥ २३  
वैखानसैश्च मुनिभिः आतिथ्येन सुपूजितः ।  
न ज्ञातो राजरूपेण मुनिभिः पुरुषोत्तमः ॥ २४

ययौ प्रातः समुत्थाय मुनीनामन्त्यू तान् विभुः ।  
 अश्वरूपन्तु गरुडमारुह्य पुरुषोत्तमः ॥ २५  
 गदाकुन्तधरो देवो गिरेर्दक्षिणतो व्रजन् ।  
 सुवर्णपङ्कजाकीर्णं सुवर्णमुखरीं हरिः ॥ २६  
 हृष्टा सविस्मयो भूत्वा गरुडादवरुह्य च ।  
 तत्र पुण्ये समे देशे कुन्तेनाऽहत्य भूतलम् ॥ २७

**भगवत्कृतपद्मसरोवरनिर्माणप्रकारः**

गोकर्णमात्रविस्तारं चकार रुचिरं सरः ।  
 स्मृत्वा वायुं समाहूय तमुवाच महामनाः ॥ २८  
 इन्द्रस्यानुमते वायो रुक्मपद्मानि चाहर ।  
 स्थापयिष्यामि सरसि लक्ष्मीपूजाविधौ मरुत् ! ॥ २९  
 तच्छ्रुत्वा वायुराहैनं अस्यां नद्यां हि सन्ति वै ।  
 काञ्चनानि च पद्मानि किमर्थं सुरलोकतः ॥ ३०

श्रीभगवान् —

कोल्हापुरे महावाणीं ह्यशरीराऽब्रवीत्पुरा ।  
 देवल्लोकात्समानीय काञ्चनाब्जानि चार्चय ॥ ३१  
 इति मामब्रवीद्वायो ! तस्मादानय मेऽम्बुजम् ।  
 गत्वा लोकं ततो वायुरिन्द्रलोकादुदारधीः ॥ ३२  
 देवेन्द्रानुमतेः शीघ्रमानयामास तानि वै ।  
 काञ्चनाब्जानि निःक्षिप्य तस्मिन् सरसि माधवः ॥ ३३

**पद्मविकासनैरन्तर्यायं भगवत्कृतसूर्यनागायणप्रतिष्ठा**

विष्णुः सूर्यं प्रतिष्ठाप्य प्राञ्चुखं सरसस्तटे ।  
 अर्चयन् पङ्कजाधीशं कमलाऽऽवाप्तये विभुः ॥ ३४



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः २८१

शक्तिपूर्वं श्रियो बीजं कामबीजमतः परम् ।  
आद्यन्तप्रणवोपेतमक्षरत्रयसम्पुटम् ॥ ३५

ऽक्ष्मीमन्त्रोपासनपूर्वकभगवत्कृततपोविधिः

त्रिसहस्रं जपन्नित्यं दशांशं तर्पयन् विभुः ।  
अर्चयन् पद्मसाहस्रैः दिव्यैः काञ्चनसम्भवैः ॥ ३६  
तर्पयन् पद्मसरसो रसेनोषसि माधवः ।  
क्षीराहारो यताहारो लक्ष्म्याराधनतत्परः ॥ ३७  
तद्भानुसन्निधौ तीरे पश्चिमाभिमुखो विभुः ।  
दीक्षां विवेश देवेशो द्वादशाब्दमनन्यधीः ॥ ३८

नृपशङ्कया भगवत्तपोभङ्गायेन्द्रादिकृतरम्भादिप्रेषणम्

एवं स्थिते महाविष्णौ श्रीकांक्षिणि समाहिते ।  
इन्द्रादिदेवाः संक्षुब्धा मायामोहसमन्विताः ॥ ३९  
भूपतेः पार्थिवेन्द्रस्य विष्णोर्मानुषरूपिणः ।  
विघ्नञ्च तपसः कर्तुं उद्यमं चक्रुर्द्विताः ॥ ४०  
आहूयाप्सरसः सर्वाः प्रोचुः सेन्द्रा दिवौकसः ।  
यूयं गच्छत भूलोकं अञ्जनाद्रेः समीपतः ॥ ४१  
सुवर्णमुखरी नाम नदी मुनिनिषेविता ।  
तस्या एवोत्तरे तीरे कुम्भयोनेः महाऽऽश्रमः ॥ ४२  
तदाश्रमात्पूर्वभागे कश्चिद्राजा तपस्यति ।  
कनकाब्जसरस्तीरे पुरस्ताद्भास्करस्य च ॥ ४३  
तैलोक्यलक्ष्मीमाकाङ्क्षन् मायावी स चतुर्भुजः ।  
क्षोभयध्वं नृत्यगीतैः अन्यैः शृङ्गारचेष्टितैः ॥ ४४

## राजवेषभृद्भगवत्तपोवनं प्रति इन्द्रप्रेषितरम्भाद्यागमनम्

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| इति देवैः समादिष्टाः सर्वा ह्यप्सरसां वराः ।    |    |
| वसन्तकामसहिता जम्मुः पद्मसरोवरम् ॥              | ४५ |
| अवतीर्णो वसन्तस्तु जजृम्भे तद्वने भृशम् ।       |    |
| चूतकिंशुकमन्दारकर्णिकारासनोज्ज्वलैः ॥           | ४६ |
| कोविल्लैर्भृङ्गराजैश्च शोभितैः विविधैः खगैः ।   |    |
| रम्ये वने तपस्यन्तं पुरुषं सुभगाकृतिम् ॥        | ४७ |
| दृष्ट्वा चतुर्भुजं चित्रं मोहिताश्चाप्सरोगणाः । |    |
| जगुः कलञ्च ननृतुः तदग्रे ता वराङ्गनाः ॥         | ४८ |
| कल्हारशीतलो वायुः चालयन् पुष्पवाटिकाम् ।        |    |
| ववौ मल्लयसम्भूतो मलयन् वनवासिनः ॥               | ४९ |

## स्वाश्रमागताप्सरोवञ्चनार्थं भगवत्कृतमायानिर्माणम्

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| एतस्मिन्नन्तरे विष्णुः किञ्चिदुन्मील्य चक्षुषी ।  |    |
| मायामन्यां विसृज्य तासां सम्मोहनाय वै ॥           | ५० |
| तां विष्णुमायां वीक्ष्यैव विवशा विनताननाः ।       |    |
| स तु पद्मानि सञ्चिन्वन् चचार सरसीजले ॥            | ५१ |
| यथापूर्वं पूजयंश्च निर्विकारो निरञ्जनः ।          |    |
| तं दृष्ट्वा निर्विकारं ता विकर्तुं पुरुषोत्तमम् ॥ | ५२ |
| अशक्ता जम्पुराकाशं विष्णुमायाविमोहिताः ।          |    |
| तां मायां भगवानाह 'लोकपूज्या भविष्यसि ॥           | ५३ |
| इक्षुचापासिचक्राब्जपुष्पबाणधरा सती ।              |    |
| चतुर्वर्गप्रदा पुंसां पर्णक्षीरादिपूजिता ' ॥      | ५४ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः २८३

इत्यादिश्य च तां देवीं अर्चयामास पद्मिनीम् ।  
एवं तपस्यतस्तस्य द्वादशाब्दा गता द्विज ॥ ५५

पद्मसरोवरात् लक्ष्मीप्रादुर्भावः

ततस्त्रयोदशे वर्षे कार्तिके शुक्लपक्षके ।  
पञ्चम्यां शुक्रवारे च सुहर्ते मन्त्रसंज्ञके ॥ ५६  
ववुः पुण्याः सुखा वाता उत्तराषाढतारके ।  
प्रसन्नं सलिलं सर्वं त्रैलोक्यान्तर्गतं द्विज ॥ ५७  
सुप्रभो भानुमानासीत् प्रसन्नानि मनांसि च ।  
ततःपद्मसरोमध्ये तेजोराशिः महानभूत् ॥ ५८  
बालभानुसहस्राभः सुवर्णसदृशच्छविः ।  
तन्मध्ये काञ्चनैः पद्मैः निर्मितो रथ उत्तमः ॥ ५९  
पद्मिभिर्धृतपार्श्वश्च चतुर्भिर्मदगन्धिभिः ।  
तन्मध्ये काञ्चने पद्मे सहस्रदलशोभिते ॥ ६०  
तत्पद्मकर्णिकामध्ये पद्माऽसनसमन्विता ।  
पद्महस्ता पद्मनेत्री रक्तपद्मपदद्वया ॥ ६१  
सुवर्णपद्ममुकुलद्वयशोभिर्कुचानता ।  
स्मेरपद्मरजोगन्धिसमुच्छ्वासमुखाम्बुजा ॥ ६२  
बिम्बाधरसुसंवृद्धस्मितशोभिसुधारसा ।  
सम्पल्लुक्ष्मीसमावासविशालनयनद्वया ॥ ६३  
सर्वरत्नसमुत्क्षिप्तजाम्बूनदविभूषणा ।  
कर्णिकोत्पलताटङ्कमौक्तिकालकबन्धना ॥ ६४  
आमुक्तमुक्तामकुटकटकाङ्गदकङ्कणा ।  
विद्युत्पुञ्जप्रतीकाशविचित्राम्बरचितिता ॥ ६५

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| मन्दस्मिता मनोज्ञाङ्गी माधवं वीक्ष्य सादरम् । |    |
| कल्हारमालामादाय यक्षकर्मलेपनाम् ॥             | ६६ |
| सुगन्धितुलसीदूर्वामधूककमलोत्पलाम् ।           |    |
| स्थिता पद्मरथे देवी देवं वीक्ष्य चतुर्भुजम् ॥ | ६७ |
| ततो देवगणाः सर्वे वादयन् देवदुन्दुभीः ।       |    |
| शङ्खानापूरयामासुः वीणाश्च मुमुचुः स्वरान् ॥   | ६८ |
| षड्जदीन् समतालेन गन्धर्वा ललितं जगुः ।        |    |
| ननृतुर्दिव्याप्सरसः सुस्वरं गीतलालसाः ॥       | ६९ |
| तूर्यघोषेण महता कृत्स्नमापूरितं जगत् ।        |    |
| तेन घोषेण विज्ञाय श्रियः प्रत्यक्षतां विधिः ॥ | ७० |

### लक्ष्म्यवतारदर्शनार्थं पद्मसरस्तीरं प्रति ब्रह्माद्यागमनम्

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| हंसारूढः सहस्रुनिः ब्रह्मा तत्र समाययौ ।           |    |
| कैलासात् शङ्करश्चापि गौरीगणसमन्वितः ॥              | ७१ |
| इन्द्रः शच्या लोकपालैः श्रुत्वा शङ्खध्वनिं ययौ ।   |    |
| वसिष्ठाद्याश्च मुनयः सनकाद्याश्च योगिनः ॥          | ७२ |
| काञ्चनाब्जसरस्तीरं पद्मनाभाश्रमं ययुः ।            |    |
| सर्वलोकेश्वरीं तत्र श्रियं पद्मरथस्थिताम् ॥        | ७३ |
| दृष्ट्वा विद्याधराः सर्वे पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ।   |    |
| विस्मिताः सस्मिताः सर्वे देवास्तस्थुश्च सस्पृहाः ॥ | ७४ |
| दैतेया दानवाश्चापि नागाः पातालवासिनः ।             |    |
| साभिलाषा रमां वीक्ष्य स्थिता मदनमोहिताः ॥          | ७५ |
| मामाश्रयेन्मामाश्रयेत् प्रत्येकं मेनिरे हृदि ।     |    |
| इति तेषु स्मरत्स्वेव देवदानवभोगिषु ॥               | ७६ |

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः २८५

### लक्ष्मीकृतमालार्पणपूर्वकभगवद्वरणम्

उत्थाय सस्मिता लक्ष्मीः आगत्य हरिमञ्जसा ।  
कल्हारमालामुन्मुच्य विष्णोः कण्ठे समर्प्य च ॥ ७७  
आलिङ्ग्य तं चतुर्बाहुं सर्वलोकान् व्यलोकयत् ।  
हरिवक्षःप्रतिष्ठायाः श्रियो दृष्ट्यञ्चलेक्षिताः ॥ ७८  
स्वस्वाधिकारान् सम्प्रापुः देवदानवयोगिनः ।  
श्रिया समेतो भगवान् कृतार्थः कमलापतिः ॥ ७९

### भगवतः पद्मसरोवरवरदानपूर्वकं शेषाचलगमनम्

पाद्मं सरः समीक्ष्याथ वरं तस्मै ददौ हरिः ।  
'हे सरस्तव ! तीरेऽस्मिन् पद्मकान्तस्य भास्वतः ॥ ८०  
तपः कुर्वन्नहं पद्मामासवानस्मि शाश्वतीम् ।  
तस्मात्त्वमद्यप्रभृति 'पद्मवार्पा' ति नामतः ॥ ८१  
'पाद्मं', 'पद्मसर' श्रुति पद्माप्रीतिकरं भुवि ।  
त्रिलोकीप्रथितं भूया हृद्देशकमलाल्यः " ॥ ८२  
इत्युक्त्वा गरुडेशानमधिरुद्ध रमासखः ।  
भोगिराजगिरिं गत्वा स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ ८३

### नारदाद्यष्टमहर्षिप्रशंसितपद्मसरोवरमाहात्म्यम्

रमते रमयैकान्ते रमणीये श्रियः पतिः ।  
तं दृष्ट्वा मुनयः सर्वे प्रशंसन्तुः सरोवरम् ॥ ८४

नारदः—

यः पद्मसरसि स्नातः सप्तजन्माघनाशने ।  
श्रियमाप्नोति विमलं श्रियःपतिरिवामलः ॥ ८५

दक्षिणः—

रुक्माब्जसरसि स्नातो रुक्मनद्यास्तटोद्भवे ।  
कोटिजन्मकृतैः पापैः मुच्यते श्रियमानुयात् ॥ ८६

मरीचिः—

सुवर्णमुखरीकूले स्नातः पद्मसरोवरे ।  
महापातकयुक्तो यः स मुच्येतांहसः क्षणात् ॥ ८७

अत्रिः—

अत्र पद्मसरः स्नातो यो रुक्मतटिनीतटे ।  
स सर्वपापनिर्मुक्तः श्रियमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ८८

अङ्गिराः—

अष्टराज्यस्तु यो राजा स्नात्यस्मिन् मण्डलं यमी ।  
पद्माकरास्थे सरसि स राज्यं प्राप्नुयाच्छ्रियम् ॥ ८९

पुलस्त्यः—

विप्रो यः पद्मसरसि त्रात्यो मन्त्रविवर्जितः ।  
सोऽपि पूतस्त्रिषवणात् दिनेनैकेन शुध्यति ॥ ९०

पुलः—

वैश्यो यो वञ्चनाजीवी व्यवहारविशारदः ।  
स पद्मसरसि स्नात्वा राजा भवति धार्मिकः ॥ ९१

कतुः—

शूद्रस्त्वाचारविभ्रष्टो देवब्राह्मणदूषकः ।  
स पद्मसरसि स्नात्वा पूतो वैश्यो भविष्यति ॥ ९२

देवदर्शनः—

इति प्रस्तूय मुनयो ययुस्ते स्वाश्रमान्मुने ।  
उत्पत्तिः पद्मसरसस्तवोक्ता देवलामल्य ॥ ९३

### शुकचरित्रवर्णनम्

|                                                        |     |
|--------------------------------------------------------|-----|
| इतः परं शुकोत्पत्तिं वदामि शृणु देवल ! ।               |     |
| पुरा शुको ब्रह्मचारी साक्षाद्वैयासकिः महान् ॥          | ९४  |
| लब्ध्वा ब्रह्मोपदेशन्तु रुद्रात् ज्ञानी बभूव ह ।       |     |
| तपःसिद्धो जगामैव पश्यन् ब्रह्मात्मकं जगत् ॥            | ९५  |
| एवं जगौ च सततं ज्ञानोन्मत्तः स बालवत् ।                |     |
| ऊनषोडशवर्षोऽसौ साक्षात्कृष्ण इवोज्ज्वलः ॥              | ९६  |
| माता च कमला देवी पिता देवो जनार्दनः ।                  |     |
| बान्धवा विष्णुभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम् ॥            | ९७  |
| इत्युक्त्वा व्यासमुन्मुच्य भानुं प्राति जगाम ह ।       |     |
| गच्छन्तं शुकमालोक्य तीव्रांशेश्च समीपतः ॥              | ९८  |
| व्यासः पुत्रेति चुक्रोश पुत्रेति च पुनः पुनः ।         |     |
| आलोक्याथ शुकं भानुः उवाच प्रणयात् वदुम् ॥              | ९९  |
| हे वटो ! गच्छ भूलोकमपुत्रस्त्वमवाकिष्ठराः ।            |     |
| मुक्तः पितृकृष्णात्पुत्रं उत्पाद्याऽगच्छ शीघ्रतः ॥     | १०० |
| अपुत्रस्य गतिर्नास्ति तपः कृत्वाऽपि भूतले ।            |     |
| यज्ञं कृत्वाऽपि लोकार्थी स्वर्गं नैवाऽप्नुयात्पुमान् ॥ | १०१ |

### छायाशुकोत्पत्तिः

|                                                 |     |
|-------------------------------------------------|-----|
| इति भानुवचः श्रुत्वा शुको ध्यात्वा जनार्दनम् ।  |     |
| आत्मच्छायामधःशीर्षामसृजत्त्वात्मपूरुषम् ॥       | १०२ |
| छायाशुकश्च तं कृत्वा स्वात्मपुत्रमिवाऽत्मवान् । |     |
| पितुर्मे शोकनाशं त्वं कुरु पुत्रत्वमागतः' ॥     | १०३ |

|                                                   |     |
|---------------------------------------------------|-----|
| इत्युक्त्वा भानुमालोक्य विवृतं तत्पथं गतः ।       |     |
| छायाशुकः समागत्य व्यासं क्रोशन्तमात्मजम् ॥        | १०४ |
| नमस्कृत्य पितुः पादौ श्रुत्वा भागवतं सुधीः ।      |     |
| कृत्वा वैवाहिकं कर्म पुत्रानुत्पाद्य पुण्यधीः ॥   | १०५ |
| पुराणं श्रीभागवतं प्रतिष्ठाप्यावनौ सुधीः ।        |     |
| कृष्णप्रसादात्स शुक ऋषित्वञ्च प्रपद्य च ॥         | १०६ |
| सशरीरो ब्रह्मलोकं गत्वा प्रीतो वसन् सुधीः ।       |     |
| श्रीवेङ्कटाद्रिमाहात्म्यं श्रुत्वा पद्मसरोवरम् ॥  | १०७ |
| प्राप्य कृत्वा तपस्तीव्रं सरोऽम्बुजदलैः सृजन् ।   |     |
| ससभ्यान्मानसान् पुत्रानष्टोत्तरशतं द्विजान् ॥     | १०८ |
| तानध्याप्य ब्रह्मविद्यां तैः सहाद्रिं गतो मुनिः । |     |
| मासि भाद्रपदे पुण्ये ब्रह्मणा निर्मितोत्सवे ॥     | १०९ |
| वर्तमाने श्रीनिवाससेवार्थं व्यासपुत्रकः ।         |     |
| उत्सवे वाहनान् कृत्वा शतमष्टोत्तरान् द्विजान् ॥   | ११० |
| उत्सवान्ते चावभृथे श्रवणक्षौ प्रसन्नधीः ।         |     |
| स्नात्वा च स्वामिसरसि तैर्द्विजैः कमलोद्भवैः ॥    | १११ |
| सभायां वेङ्कटेशस्य वाहकार्थं व्यजिज्ञपत् ।        |     |
| स्वनाम्ना यत्पुरं देव ! मया क्लृप्तं सुरेश्वर ॥   | ११२ |
| तत्क्षेत्रसम्भवं सस्यं जीवितं श्रीपते ! कुरु ।    |     |
| सेवां कुर्वन्वाप्रलयं वाहका उत्सवेषु ते ॥         | ११३ |
| श्रुत्वा मुनिवचो देवः श्रीनिवासस्तथाऽस्त्विति ।   |     |
| छायाशुकस्यात्मजानां सभ्यानां जीवमब्रवीत् ॥        | ११४ |
| ब्रह्मलोकं जिगमिषुः पुनः छायाशुको मुनिः ।         |     |
| कृष्णञ्च बलभद्रञ्च भानुं पद्मसरोवरम् ॥            | ११५ |



श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः २८९

प्रदक्षिणीकृत्य शुकः स्थीयतामिति चात्मजान् ।  
भरद्वाजादिषड्गोत्रान् शतमष्टोत्तरं सुधीः ।  
सभ्यान् सभासदः पाद्मान् उक्त्वाऽऽकाशं जगाम ह ॥ ११६

देवदर्शनः—

उक्तं पद्मसरोजन्म छायाशुक्लमुनेरपि ।  
सभार्हाणां द्विजातीनां शुक्लमानसजन्मनाम् ॥ ११७

देवलः—

देवदर्शन! सर्वज्ञ! कृतार्थोऽस्मि नतोऽस्मि ते ।  
नास्ति श्रोतव्यमेतस्मात् संशयो विगतो मम ॥ ११८

हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
देवलदेवदर्शनसंवादे पद्मसरोवरमाहात्म्यादिवर्णनं  
नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥

इति श्रीपाद्मपुराणान्तर्गत वेङ्कटाचलमाहात्म्यं  
सम्पूर्णम् ॥



श्रीरस्तु

श्रीश्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः

श्रियै श्रीपद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

~~~~~❁~~~~~

(श्रीगारुडपुराणान्तर्गतम्)

— : * : —

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।

श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

श्रीवेङ्कटाद्रिनिलयः कमलाकामुकः पुमान् ।

अभङ्गुरविभूतिर्नः तरङ्गयतु मङ्गलम् ॥

हरिः ॐ

त्रिषष्टितमोऽध्यायः

वसिष्ठं प्रति श्रीवेङ्कटाद्रिमाहात्म्यश्रवणेच्छरुन्धतीप्रश्नः

श्रीगारुडः—

अरुन्धती समस्तानामङ्गनानां पतिव्रता ।

पतिं स्वं परिपप्रच्छ लोकानां हितकाम्यया ॥

१

अरुन्धती :—

‘ ब्रह्मात्मज ! नमस्तुभ्यमिदं विज्ञापनं शृणु ।

“ पतिशुश्रूषणादन्यः स्त्रीणां धर्मो न विद्यते ॥

२

न यागयोगौ न तपो न तीर्थं न सुरार्चनम् ;

सर्वधर्माधिकं स्त्रीणां पत्युरेव प्रहर्षणम् ” ॥

३

| | |
|--|---|
| इति श्रुतं मया त्वत्तः ऋषिभ्योऽन्येभ्य एव च । | |
| तथाऽपि जायते प्रीतिः मम काचित् गरीयसी ॥ | ४ |
| विष्णुक्षेत्रे कचित् पुण्ये तीर्थे सर्वातिशायिनि । | |
| कञ्चित्कालं तपः कृत्वा विष्णुमुद्दिश्य यत्नतः ॥ | ५ |
| विष्णोर्मुखेन सद्धर्मं वाचयित्वा जगत्कृते । | |
| सर्वधर्मोत्तमं नृणां दर्शयामीति मे मतिः ॥ | ६ |
| अनुज्ञया स्त्रियो भर्तुः धर्माचरणमुत्तमम् । | |
| विष्णुक्षेत्रं तादृशं मे वद तीर्थोत्तमं तथा ' ॥ | ७ |

गरुडः—

| | |
|--|----|
| अरुन्धत्या पृष्ठ इत्थं वसिष्ठो वाक्यमब्रवीत् । | |
| 'सम्यक् पृष्ठमिदं देवि ! सर्वलोकहितेच्छया ॥ | ८ |
| तथा वदामि शृणु मे यथा हृत् संप्रहृष्यति । | |
| श्रोतर्यप्रतिपत्तौ तु वक्तुर्वाक्यं तथा भवेत् ॥ | ९ |
| यथाऽन्ये भर्तारि स्त्रीणां सौन्दर्यं सकलं वृथा । | |
| सावधानमना भूत्वा शृणु तस्माद्वचो मम ॥ | १० |

वसिष्ठार्णिन श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

| | |
|---|----|
| सुवर्णमुखरीतीरे कश्चिदस्ति महीधरः । | |
| वेङ्कटाचलनामाऽसौ सर्वभूतकुलोत्तमः ॥ | ११ |
| अतिप्रीतिर्महाविष्णोः तत्र वेङ्कटभूधरे । | |
| श्वेतद्वीपाच्च वैकुण्ठात् भानुमण्डलमध्यतः ॥ | १२ |
| यन्नाम कीर्तयित्वाऽपि सर्वपापक्षयो भवेत् । | |
| समस्तश्रेयसां सिद्धिः तादृशो वेङ्कटाचलः ॥ | १३ |

| | |
|--|----|
| यस्मै वेङ्कटशैलाय नमस्कृत्यापि दूरतः । | |
| सर्वपापैः प्रमुच्येत तत्पुण्यं क्षेत्रमुत्तमम् ॥ | १४ |
| तत्र स्वामिसरो नाम तीर्थमेकं विराजते । | |
| तत्पश्चिमे भूमिकोलः तटे राजति देवराट् ॥ | १५ |
| श्रीमद्वराहदेवस्य वेङ्कटाचलवासिनः । | |
| न मया शक्यते वक्तुं महिमा बहुहायनैः ॥ | १६ |
| दक्षिणे स्वामितीर्थस्य तीरे नीरजलोचनः । | |
| श्रीवेङ्कटेशो भक्तानां वरदः श्रीनिकेतनः ॥ | १७ |
| निवसत्यच्युतो नित्यं सुलभः सर्वदेहिनाम् । | |
| तस्य सेवामपेक्षन्ते ब्रह्मरुद्रादिदेवताः ॥ | १८ |
| तस्य वेङ्कटशैलस्य सन्ति नामान्यनेकशः । | |
| कीर्तनात्पापहारीणि श्रेयोदानि शृणुष्व मे ॥ | १९ |
| “ अञ्जनाद्रिः शेषगिरिः वृषाद्रिः वृषभाचलः । | |
| नारायणाद्रिः सिंहाद्रिः श्रीशैलः सिंहभूधरः ” ॥ | २० |
| एवमादीनि नामानि यः कीर्तयति मानवः । | |
| प्रातःकाले प्रतिदिनं तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ | २१ |
| तस्मिन् श्रीवेङ्कटाधीशे भक्तिमन्तः कलौ युगे । | |
| मनोरथान् प्राप्नुवन्ति मनुष्या भाग्यशालिनः ॥ | २२ |

श्रीवेङ्कटाचलस्थ - आकाशगङ्गा - पापनाशन - तुम्बुतीर्थप्रशंसा

| | |
|--|----|
| उत्तरे स्वामितीर्थस्य वियद्गङ्गा विराजते । | |
| तस्या माहात्म्यमतुलं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ | २३ |
| ततः पापविनाशाख्य उत्तरे तीर्थनायकः । | |
| स्नानेन तत्र नश्यन्ति पापानि विविधान्यपि ॥ | २४ |

श्रीगारुडपुराणे त्रिषष्टितमोऽध्यायः २९३

तत उत्तर ऐशाने भागे गिरिवनान्तरे ।
तुम्बुतीर्थमिति ख्यातः कश्चिदस्ति वरानने ॥ २५
अनेकवृक्षविततिसिंहशार्दूलसंयुतः ।
निम्नोन्नतस्थले तत्र प्रकृष्टः तीर्थनायकः ॥ २६
देवगन्धर्वमुनयः तुम्बुतीर्थे कृतप्लवाः ।
कृतार्था अभवन् पूर्वमिति मे ब्रह्मणः श्रुतम् ॥ २७
स्वामिपुष्करिणीं गत्वा स्नात्वा तत्र यथाविधि ।
आदिपोत्रिणमालोक्य वेङ्कटेशे कृताऽऽनतिः ॥ २८
आकाशगङ्गातीर्थे च पापनाशे कृताऽऽप्लवा ।
तत्र गत्वा तुम्बुतीर्थे स्नात्वा निर्मलमानसा ॥ २९
प्राङ्मुखी त्वं स्थिता भूत्वा तपः कुर्वित्यचोदयत् ।
वसिष्ठेनाभ्यनुज्ञाताऽरुन्धती तं प्रणम्य च ॥ ३०

वसिष्ठोक्त्या अरुन्धत्यास्तुम्बुतीर्थे तपःकरणाय शेषाचलागमनम्

आगत्य वेङ्कटाधस्तात् कपिलाख्ये सरोवरे ।
कृत्वा स्नानं तदाऽऽरुह्य वेङ्कटाद्रितटे शुभे ॥ ३१
कृतस्नाना स्वामितीर्थे भूवराहं प्रणम्य च ।
श्रीनिवासं वेङ्कटेशं नमस्कृत्यास्य सन्निधौ ॥ ३२
प्रार्थयामास ' भगवन् ! परिपालय मां हरे ! ।
तपः करोम्यहं तुम्बुतीर्थं गत्वा कृपानिधे ॥ ३३
तत्र त्वं रमया सार्धं सन्निधेः चचिरेण मे ' ।
इति विज्ञाप्य गगनगङ्गां पापविनाशिनीम् ॥ ३४
गत्वा तत्र निमज्ज्याशु तुम्बुतीर्थमुपागमत् ।
स्मरन्ती भर्तृवचनं तत्र स्नात्वा विधानतः ॥ ३५

| | |
|---|----|
| पतिप्रोक्तं विष्णुमन्त्रं जपन्ती तपसि स्थिता । | |
| वयस्या सुमतिर्नाम शुश्रूषामकरोत्सदा ॥ | ३६ |
| द्वादशाब्दं तपश्चक्रे निराहारा यतव्रता । | |
| देवगन्धर्वमुनयः तां दृष्ट्वा तपसि स्थिताम् ॥ | ३७ |
| आश्चर्यमाश्चर्यमिति ब्रुवाणा मुदमाययुः । | |
| तस्यास्तपस्सुप्रसन्नः प्रादुरासीत् परः पुमान् ॥ | ३८ |

अरुन्धतीसमीपे भगवदाविर्भावः

| | |
|--|----|
| फाल्गुने मासि पौर्णिम्यां मीने भास्वति भास्वति । | |
| तदा ब्रह्मादयो देवा ऋषयो व्यासपूर्वकाः ॥ | ३९ |
| सनन्दसनकाद्याश्च योगिनः सर्व एव हि । | |
| मुनिपत्न्यो देवपत्न्यः समीयुः सङ्घशो मुने ॥ | ४० |
| अरुन्धती महाभागा लक्ष्म्याऽऽलिङ्गितवक्षसम् । | |
| दृष्ट्वा हरिं वेङ्कटेशं प्रणनाम मुदाऽन्विता ॥ | ४१ |
| तां दृष्ट्वा प्रणतां विष्णुः इदमाह दयानिधिः । | |
| ‘ उत्तिष्ठारुन्धतीदेवि ! तपसा क्लेशवत्यसि ॥ | ४२ |
| तवेप्सितमहं दास्ये वरं वरय सुव्रते ’ । | |
| सुप्रीतं तं विदित्वा सा तुष्टावाञ्जनशैलपम् ॥ | ४३ |

अरुन्धतीकृतभगवत्स्तुतिः

अरुन्धती :—

| | |
|--|----|
| ‘ नमस्तुभ्यं महादेव ! नारायण ! कृपानिधे ! । | |
| पाहि मां फणिशैलेश ! भक्तबन्धो ! दयानिधे ! ॥ | ४४ |
| न जाने वेङ्कटाधीश लक्ष्मीनायक केशव ! । | |
| त्वां विना सर्वलोकानां दृष्टादृष्टफलप्रदम् ॥ | ४५ |

यस्योरस्यनिशं विभाति जगती सौभाग्यधात्री रमा
 धत्ते यस्य पदावनेजनजलं मूर्ध्ना पुरारिः सदा ।
 श्रीमद्वेङ्कटशैलनित्यनिलयं देवोत्तमं त्वां विना
 दृष्टादृष्टफलप्रदं किमपरं दृष्टं क्षितौ दैवतम् ' ॥ ४६
 इति स्तुत्वा पुनः प्राह शेषशैलस्वामिणम् ।
 'यदि प्रीतिः मत्तपसा तव शेषाद्विवैभवम् ॥ ४७
 तुम्बुतीर्थस्य माहात्म्यं वद लोकोपकारकम् ।'
 वसिष्ठपत्न्येति पृष्टः प्राह वेङ्कटवैभवम् ।
 शृण्वत्सु सर्वलोकेषु ब्रह्मादिषु सुरेषु च ॥ ४८

भगवद्वर्णितवेङ्कटाचलतुम्बुतीर्थमाहात्म्यानि

निर्वाहः -

'शृण्वरुन्धति ! मद्वाक्यं सर्वलोकोपकारकम् ।
 वेङ्कटाद्रौ स्वामितीर्थे वेङ्कटेशे च ये मयि ॥ ४९
 भक्तिमन्तः प्रजैश्वर्याऽऽयुष्मन्तश्च भवन्ति ते ।
 वेङ्कटाद्रिस्वामितीर्थमन्त्रामानि च कुर्वते ॥ ५०
 पुत्राणां ते पुनः सर्वसम्पदामेकभाजनम् ।
 'श्रीवेङ्कटेशे'ति सदा वाचि पञ्चाक्षरं यदि ॥ ५१
 ब्रह्मादीनाञ्च सर्वेषां वन्द्या एव न संशयः ।
 ये तुम्बुतीर्थाभिषेकमाचरन्ति यदा तदा ॥ ५२
 ते निष्पापा मत्कृपया लक्ष्म्याः पालं न संशयः ।
 फाल्गुन्यां पौर्णमास्यान्तु प्रत्यक्षदिवसे मम ॥ ५३
 स्नास्यन्ति भक्तिमन्तो ये तेषां शृणु फलोन्नतिम् ।
 यत्सर्वतीर्थस्नानेन तत्फलं भवति ध्रुवम् ॥ ५४

| | |
|---|----|
| ‘ फल्गुनीतीर्थ ’ मित्यस्य नाम लोके भविष्यति ।
ब्रह्मविदक्षत्रशूद्राणामपि स्त्रीणामरुन्धति ! ॥ | ५५ |
| अत्र स्नानेन दुरितं नश्यति श्रेय एति च ।
मनोवाक्कायविहितं पापं नश्यति सर्वथा ॥ | ५६ |
| यत्किञ्चिदर्थमुद्दिश्य पुरुषा वा स्त्रियोऽपि वा ।
स्नास्यन्त्यत्राऽऽप्नुवन्त्येवं तं तमर्थं न संशयः ॥ | ५७ |
| पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति धनार्थी लभते धनम् ।
आरोग्यकाम आरोग्यं अपत्यं पुत्रकामवान् ॥ | ५८ |
| नश्यन्त्यापद आश्वस्य सिद्धयो हस्तसङ्गताः ।
अत्र स्नात्वा तु दानानि कुर्वतां बहुलं फलम् ॥ | ५९ |
| ये चन्दनञ्च ताम्बूलं प्रयच्छन्त्यपि चोदकम् ।
ते मत्प्रियास्तु विज्ञेयाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ | ६० |
| अयं सर्वोत्तरो धर्म उक्तस्तव वरानने ! ।
पतिव्रतानां मुख्या च भव त्वञ्च सुपुत्रिणी ’ ॥ | ६१ |
| इति सर्वं वरं दत्त्वाऽन्तर्दधे वेङ्कटेश्वरः ।
य इदं पठति ध्यायन् शृणुयाच्च समाहितः ।
घोणतीर्थस्नानफलं प्राप्नोति हि न संशयः ॥ | ६२ |

हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीगारुडपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यवर्णनं

नाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ।

इति श्री गारुडपुराणान्तर्गत श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यं

सम्पूर्णम् ॥

श्रीरस्तु
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः
श्रियै श्रीपद्मावत्यै नमः

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

—: * :—

(श्रीहरिवंशान्तर्गत—श्रीशेषधर्मघटकम्)

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

हरिः ॐ

अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः

नारदादीनां भगवत्सेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

वृषिगिरिः—

‘देवव्रत ! महाभाग ! सुरसिन्धुसुत ! प्रभो ! ।
श्रीनिवासस्य माहात्म्यं वद नो वदतां वर ! ॥
वैकुण्ठवासी देवेशो विष्णुः सर्वगतः प्रभुः ।
कथं प्राप्तो वृषगिरिं तन्मे त्वं कृपया वद ’ ॥

१

२

श्रीभीष्मः—

‘पुरा वै नारदः श्रीमान् ब्रह्मपुत्रो महाद्युतिः ।
हरिं द्रष्टुमनास्तात ! वैकुण्ठं समुपागतः ॥
तत्रादृष्ट्वा हरिं पार्थ ! क्षीरोदधुपकण्ठतः ।
आयान्तमृषयो दृष्ट्वा मुदमापुश्च नारदम् ॥

३

४

- अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे पाराशर्यपदानुगाः ।
 अनुज्ञातो मुनिगणैः पाराशर्यो महाद्युतिः ॥ ५
- व्यासो वचनमङ्गीवं नारदं प्रत्युवाच ह ।
 'कृतकृत्यो मुने ! ब्रह्मन् ! त्वमेको जगतीतले ॥ ६
- विष्णुभक्तोऽसि नान्योऽस्ति सदा कीर्तयसे यतः ।
 अहो खलु मनुष्याणां मोक्षदो विष्णुरव्ययः ॥ ७
- स त्वया सेव्यते नित्यं कृतकृत्यो भवानतः ।
 स्रष्टा पालयिता हन्ता ह्येक एव जनार्दनः ॥ ८
- स त्वया पूजितो नित्यं तस्मात् खलु कृती भवान् ।
 योऽनन्तः सर्वभूतानां सेतुभूतो जगन्मयः ॥ ९
- संसारपाशविच्छेदी स त्वया पूजितो हरिः ।
 एते वयं मुनिश्रेष्ठ ! द्रष्टुकामा जनार्दनम् ॥ १०
- तन्निवेशितचित्ता हि प्राप्ता परमधार्मिक ' ।
 ईदृशं वचनं श्रुत्वा व्यासस्य जगतीपते ।
 प्रोवाच नारदो धीमान् ऋषीन् वेदविदां वरः ॥ ११
- 'कृतकृत्योऽस्मि भद्रं वो यूयं भूतहिते रताः ।
 शस्त्रैर्धर्मैः सदा लोकान् भक्त्या रक्षितुमिच्छत ॥ १२
- वैकुण्ठलोके सम्भूता वार्ता परमपावनी ।
 अश्रावि सा मया सन्तो वक्ष्ये शृण्वन्तु तां कथाम् ॥ १३
- "मायावी परमानन्दः त्यक्त्वा वैकुण्ठमुत्तमम् ।
 स्वामिपुष्करिणीतीरे रमया सह मोदते " ॥ १४
- इत्यद्भुततमं वाक्यं श्रुत्वा सेन्द्रा मरुद्गणाः ।
 तत्र सेवितुमुद्युक्ताः तदाऽहञ्च जगद्गुरुम् ॥ १५

श्रीहरिवंशे श्रीशेषधर्मे अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः २९९

किं करिष्यथ विप्रेन्द्रा ह्यत्र दुर्लभदर्शनम् ।
तस्मात्तत्र गमिष्याम ' इत्युक्त्वा खं समारूढम् ॥ १६
अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे ऋषयश्च तपोधनाः ।
जम्मुस्ते व्योममार्गेण यत्र धर्मगिरौ हरिः ॥ १७

श्रीवेङ्कटाचलवांशि महाजनचरित्रवर्णनम्

स्वामिपुष्करिणीतीरं गत्वा तमृषयः सुराः ।
स्नात्वा पीत्वा शुभं तोयं हरिं द्रष्टुं तदाऽऽचरन् ॥ १८
पश्चिमं भागमासाद्य मुनयो विष्णुतत्पराः ।
तत्रापश्यन्महद्भूतं मेरुमन्दरसन्निभम् ॥ १९
सहस्रादित्यसङ्काशं विद्युच्चञ्चललोचनम् ।
सर्वायुधधरं देवं दृष्ट्वा विस्मयमागताः ॥ २०
दक्षिणां दिशमाजम्मुः स्वामिपुष्करिणीतटात् ।
तत्रासुरान् दानवादीन् राक्षसान् पिशिताशनान् ॥ २१
नमस्यतो ध्यायतश्च जपतश्चापि तान् बहून् ।
दृष्ट्वा विस्मयमापन्नाः पूर्वा दिशमुपाययुः ॥ २२
तत्राऽसीनं देवपतिं त्रिदशैरुपसेवितम् ।
यक्षकिन्नरगन्धर्वचारणाद्यैरभिष्टुतम् ॥ २३
सिद्धकिम्पुरुषाद्यैश्च ऋषिभिश्चाप्सरोगणैः ।
स्तूयमानं हरिं साक्षात् श्रीनिवासं जगत्पतिम् ॥ २४
“ कदा द्रक्ष्यामि तद्रूपं योगिनामपि दुर्लभम् ।
कदा मे जन्मसाफल्यं भविष्यति सुरार्चित ! ॥ २५
देहि मे दर्शनं देव ! प्रणतार्तिप्रणाशन ! ।
त्वं गतिः सर्वभूतानां देवानामपि मोक्षदः ॥ २६

पाहि पाहि जगन्नाथ ! भूयो भूयो नमोऽस्तु ते ” ।
 इति स्तुवन्तं देवेशं देवराजं पुरन्दरम् ॥ २७
 वेङ्कटाद्रेः पुरोभागे स्वामिपुष्करिणीतटे ।
 देवताभिः समासीनं ध्यायन्तं पुरुषोत्तमम् ॥ २८
 तं दृष्ट्वा विस्मिताः सर्वे ह्यगस्त्यप्रमुखा द्विजाः ।
 कौबेरीं दिशमाजग्मुः द्रष्टुकामा जनार्दनम् ॥ २९
 तत्रापश्यन् द्विजवरान् सप्तद्वीपनिवासिनः ।
 राज्ञो मुनिगणांश्चैव भूसुरान् वेदवादिनः ॥ ३०
 भूलोकवासिनश्चैव मनुजान् मनुजेश्वर ।
 मुदमापुर्महात्मानो मुनयः शुद्धबुद्धयः ॥ ३१

स्तुवन्ति नृत्यन्ति नमन्ति केचित् आनन्दजाश्रूणि सृजन्ति केचित् ।
 आप्लुत्य चाप्लुत्य नदन्ति केचित् गायन्ति गीतं परितो महान्तः ॥ ३२

‘ रात्र्यां शशी देहभृताश्च चक्षुः दीनार्तिहा नो दिनकृदिवा च ।
 एकोऽपि विष्णुः बहुधा विभिन्नो धाता जनानां दिवि देवतानाम् ।
 कृपानिधिस्तत्र बभूव लक्ष्यः सर्वस्य लोकस्य हिताय नूनम् ’ ॥ ३३

वन्यैः पुष्पफलैः केचित् स्तोत्रैश्च विविधैर्जपैः ।
 वेदपारायणैः केचित् पूजयन्ति जनार्दनम् ॥ ३४
 धूपदीपैः गन्धमाल्यैः अन्यैः सामादिकीर्तनैः ।
 दीप्तहाटककुम्भैश्च तोरणैः ध्वजराशिभिः ॥ ३५
 विचित्रकुसुमैः केचित् पूजयन्ति जनार्दनम् ।
 तुलसीमञ्जरीभिश्च करवीरैश्च जातिभिः ॥ ३६
 मल्लिकाकेतकीपुष्पैः चम्पकैः पूजयन्ति ते ।
 भूसुरा ऋषयश्चैव कलशैः परिपूरितैः ॥ ३७

श्रीहरिवंशे श्रीशेषधर्मे अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ३०१

पुष्पोदकैः मन्त्रपूतैः कम्पण्डलुगतैः शुभैः ।
पत्रकुम्भाहृतैः केचित् पूजयन्ति जनार्दनम् ॥ ३८
पत्रशाकैर्मूलफलैः नैवेद्यं कल्पयन्ति च ।
शुद्धोदकैर्मन्त्रपुष्पैः ध्यानैः स्तोत्रजपैः परे ॥ ३९
एवं तेषां तु पूजाभिः पूजितो मधुसूदनः ।
आस्ते तत्र जगन्नाथः स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ ४०

‘हरे ! मुरारे ! पुरुषोत्तमे ’ ति वदन्ति केचित्परिरम्भयन्ति ।

तूष्णीं तु तिष्ठन्ति हसन्ति केचित् ध्यायन्ति केचित् कलशं वहन्ति ॥ ४१

पूर्णं मुरारेरभिषेकहेतोः पुष्पाणि सौरभ्ययुतानि गन्धैः ।

कर्पूरकस्तूरिसुगन्धवासितानादाय सर्वे वृषभाद्रिनाथम् ।

ते मार्गमाणा विचरन्ति तत्र देवा मनुष्या अपि योगिनश्च ॥ ४२

अध्यायः -

‘एवं कृत्येषु देवेषु ऋषिगन्धर्वकोटिषु ।
पुष्पवृष्टिः पपाताऽऽशु पर्वतोपरि सर्वतः ॥ ४३
भेरीमृदङ्गपटहैः निःसाणाद्यैश्च डिण्डिमैः ।
शङ्खकाहलसन्नादैः सङ्कुलं समजायत ॥ ४४
तस्मिन्नवसरे विष्णुः प्रादुरासीत्सरस्तटे ।
मेरुमन्दरसङ्काशैः जाम्बूनदपरिष्कृतैः ॥ ४५
नानारत्नचितैर्दिव्यैः विमानैरुपशोभितः ।
कोटिसूर्यप्रतीकाशः चन्द्रकोटिसुशीतलः ॥ ४६
स्वर्लोकात् भूमिपर्यन्तं प्रादुरासीच्छ्रूयःपतिः ।
स्वामिपुष्करिणीतीरे रविमण्डलसन्निभे ।
विमाने सेवितो देवैः श्रीनिवासोऽवसत्प्रभुः ॥ ४७

“ ब्रह्मा शिवश्चन्द्रदिवाकरौ स सेन्द्रौ यमाग्नी धनराट् च पाशी ।
 रक्षोऽनिलोऽसौ बसवश्च दसौ विरिञ्चिकोट्यो गणदेवताश्च ॥ ४८
 पिता पितृणां जनकः सुराणां माता शिशूनां महतां महात्मा ।
 पतिः प्रियाणां तरणिर्जनानां निधिः कृशानामिव निर्धनानाम् ” ॥ ४९
 आविर्बभूवात्र महोज्ज्वलाङ्गः प्रियायुतः श्रीवृषभाद्रिनाथः ।
 प्रसन्नमूर्तिर्जगदेकबन्धुः प्रसन्नधामाऽथ जगन्निवासः ॥ ५०

श्रीनिवाससेवार्थं श्रीभीष्मकृतयुधिष्ठिरप्रेरणम्

तस्मात्पूजयितुं राजन् ! श्रीनिवासं जगद्गुरुम् ।
 गच्छ सौम्य सदानन्दं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ५१
 महापातकयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः ।
 यस्य स्मरणमात्रेण नरः पापैः प्रमुच्यते ॥ ५२
 श्रीनिवासस्य सेवार्थं यो वा को वा व्रजेद्यदि ।
 तस्यैव वंशजाः सर्वे मुक्ता एव न संशयः ॥ ५३
 यानि क्षेत्राणि पुण्यानि तीर्थान्यायतनानि च ।
 तानि सर्वाणि सेवन्ते श्रीनिवासं जगन्मयम् ॥ ५४
 इदं ये पुण्यमाख्यानं शृण्वन्ति श्रद्धया नराः ।
 तेषां मुक्तिः कस्त्वैव गतानां किमु वैभवम् ॥ ५५

हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीहरिवंशे श्रीशेषधर्मे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यवर्णनं

नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ।

इति श्रीहरिवंशे शेषधर्मे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यं
 सम्पूर्णम् ॥

श्रीरस्तु
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः
श्रियै पद्मावत्यै नमः

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

— : ❀ : —

(ब्रह्माण्डपुराणान्तर्गतम्)

— ❀ —

श्रियः कान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

हरिः ॐ

प्रथमोऽध्यायः

भृगुनारदसंवादात्मकसूतोक्त श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

ऋषयः—

| | |
|--|---|
| कथितानि महाभाग ! पुण्यक्षेत्राण्यनेकशः । | |
| प्रशस्तानि च तीर्थानि तानि तानि महीतले ॥ | १ |
| तेभ्योऽधिकतमं क्षेत्रं तीर्थं पापविनाशनम् । | |
| यच्चास्ति तादृशं तीर्थं तन्नो ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥ | २ |
| यस्मिन् वसति सर्वात्मा माधवो भक्तवत्सलः । | |
| विहरन् मुदितो नित्यं श्रिया भूम्या च नील्या ॥ | ३ |
| यस्मिंश्च वसति प्राप्तो दुस्तरं भवसागरम् । | |
| सुखेन जन्तुस्तरति प्राप्तवित्तः शुचं यथा ॥ | ४ |
| तस्य क्षेत्रस्य माहात्म्यं विस्तराद्वक्तुमर्हसि । | |
| न च तेऽविदितं किञ्चित् पश्यामो भुवनत्रये ॥ | ५ |

श्रीसूतः—

स्मारितोऽस्मि महाभागाः साम्प्रतं वचनेन वः ।
 कथयिष्यामि मुनयः ! शृणुतैकाग्रमानसाः । ६
 अमुमेवाधिकृत्यार्थं पुरा नारायणात्मकम् ।
 अपृच्छं मुनिशार्दूलं व्यासं सत्यवतीसुतम् ॥ ७
 अथ पृष्ठो मया प्राह व्यासः सत्यवतीसुतः ।

श्रीवेदव्यासः—

‘शृणु सूत ! पुरावृत्तमाख्यानं कथयामि ते ॥ ८
 कदाचित् पर्यटन् भूमिं नारदो मुनिसत्तमः ।
 आजगामाऽश्रमं पुण्यं भृगोः मुदितमानसः ॥ ९
 शारदाभ्रनिभः श्रीमान् वीणाञ्च महतीं दधत् ।
 उदतिष्ठद्भृगुः शिष्यैः दृष्ट्वा देवर्षिमागतम् ॥ १०
 पूजयित्वा च तं हृष्टः पाद्यार्घ्यासनवन्दनैः ।
 पृष्ट्वा च कुशलं भूयः पप्रच्छ मुनिपुङ्गवम् ॥ ११

भृगुः—

‘जगत्पर्यटितं सर्वं भगवन् ! नारद ! त्वया ।
 तेन जानासि जगतां वृत्तान्तमखिलं मुने ! ॥ १२
 क्षेत्राणामधिकं क्षेत्रं तीर्थानां तीर्थमुत्तमम् ।
 यद्यस्ति भुवि विप्रेन्द्र ! तन्मे ब्रूहि तपोनिधे ! ॥ १३
 आस्ते विष्णुरचिन्त्यात्मा विहरन् रमया सह ।
 यत्र साक्षात्कृतो देवो वरदः सर्वदेहिनाम् ॥ १४
 तपांसि यत्र सिद्ध्यन्ति न चिरेण तपस्विनाम् ।
 यस्मिंश्च निवसन् जन्तुः अञ्जसा मोक्षमाप्नुयात् ॥ १५
 एतदाचक्ष्व भगवन् विस्तरेण तपोनिधे ! ।
 ज्ञातुमर्थमिमं ब्रह्मन् ! न त्वदन्योऽस्ति भूतले ॥ १६

वेङ्कटाचलस्यानेकनामानुवर्णनपूर्वकं माहात्म्यवर्णनम्

श्रीनारदः ---

| | |
|---|----|
| ‘शृणुष्वैकमना ब्रह्मन् ! मत्तः कथ्यतो मुने ! । | |
| क्षेत्राणां क्षेत्रमुत्कृष्टं तीर्थानां तीर्थमुत्तमम् ॥ | १७ |
| श्रीवेङ्कटगिरिर्नाम क्षेत्रं पुण्यं महीतले । | |
| सर्वपापप्रशमनं सर्वपुण्यविवर्धनम् ॥ | १८ |
| वक्तुं न तस्य माहात्म्यं ब्रह्मणाऽपि सुरैरपि । | |
| शक्यते वा तथा स्मर्तुं मनसाऽपि महामुने ! ॥ | १९ |
| आराध्यः सर्वदेवानां माधवो भक्तवत्सलः । | |
| विहाय स्वं परं धाम रमते रमया सह ॥ | २० |
| “भञ्जनाद्रिः वृषाद्रिश्च शेषाद्रिः गरुडाचलः । | |
| तीर्थाद्रिः श्रीनिवासाद्रिः चिन्तामणिगिरिस्तथा ॥ | २१ |
| वृषभाद्रिः वराहाद्रिः ज्ञानाद्रिः कनकाचलः । | |
| आनन्दाद्रिश्च नीलाद्रिः सुमेरुशिखराचलः ॥ | २२ |
| वैकुण्ठाद्रिः पुष्कराद्रिः ” इति नामानि विंशतिः । | |
| ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चेतरजातयः । | |
| तन्नामानि पठेयुर्ये मुच्यन्ते तेऽघबन्धनात् ॥ | २३ |
| “ वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन । | |
| वेङ्कटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ ” | २४ |
| तस्मिन् बहूनि तीर्थानि सुरसिद्धनिषेविते । | |
| रम्याणि सन्ति शतशः सर्वाधौघहराण्यपि ॥ | २५ |
| सर्वतीर्थातिशायीनि सर्वाश्चर्यकराणि च । | |
| सर्वसिद्धयनुकारीणि सर्वमङ्गलदान्यपि ॥ | २६ |

स्वामिपुष्करिणी नाम सरसी राजते शुभा ।
यस्यास्तीरेऽरविन्दाक्षो वसति प्रीतमानसः ' ॥ २७

भृगुः —

‘तस्मिन् गिरौ श्रिया सार्धं हित्वा वैकुण्ठमुत्तमम् ।
किमर्थं वसति ब्रह्मन् ! साक्षान्नारायणः स्वयम् ?’ ॥ २८

नारदकृतक्षीराब्धिवासिभगवद्वर्णनम्

श्रीनारदः —

‘कथयिष्यामि ते सर्वं वैकुण्ठो येन हेतुना ।
तस्मिन् गिरिवरे रम्ये चिरमास्ते श्रिया सह ॥ २९
नारायणमहं द्रष्टुं कदाचित् क्षीरसागरम् ।
गतवांस्तत्र चाद्राक्षं श्वेतद्वीपं महोद्धृतम् ॥ ३०
तत्र कल्पद्रुमवने शातकुम्भमयं गृहम् ।
नानारत्नसमाकीर्णं अनेकस्तम्भशोभितम् ॥ ३१
सहस्रार्कप्रतीकाशं दीप्यमानमिव श्रिया ।
दुष्प्रापममरेन्द्रैश्च सुप्रापं कृतभक्तिभिः ॥ ३२
तत्रापश्यं सभां दिव्यां देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।
अनन्तविहगाधीशसेनान्याद्यैरधिष्ठिताम् ॥ ३३
तत्रापश्यं हृषीकेशं सर्वलोकैककारणम् ।
सर्वार्थर्यमयं देवं शयानं शेषतल्पके ॥ ३४
द्विलक्ष्ययोजनोपेतविग्रहं कामरूपिणम् ।
रजताचलसंलीनतालजीमूतसन्निभम् ॥ ३५
पुण्डरीकविशालक्षं पुराणपुरुषं शुभम् ।
तथा सर्वाविनीतानां शासितारं सुरोत्तमम् ॥ ३६

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे प्रथमोऽध्यायः ३०७

| | |
|--|----|
| संवाह्यमानचरणं श्रिया भूम्या च सादरम् । | |
| श्रीवत्साङ्गमुद्राराङ्गं शतपत्रनिभाननम् ॥ | ३७ |
| युगपन्निर्गतादित्यसहस्रसदृशद्युतिम् । | |
| शङ्खचक्रधरं देवं ज्वलच्चञ्चलकुण्डलम् ॥ | ३८ |
| वैजयन्त्या च विपुले विभूषितमुर स्थले । | |
| सौदामिनीशताधिक्यज्वलत्पीताम्बरोज्ज्वलम् ॥ | ३९ |
| लवण्यमृतसन्दोहं भवसन्तापनाशकम् । | |
| युगान्तार्कसहस्राभमुकुटोज्ज्वलमस्तकम् ॥ | ४० |
| अचलं मेघसङ्काशमतीव प्रियदर्शनम् । | |
| कर्णभूषोज्ज्वलं दीप्तं कण्ठकोद्योतिकौस्तुभम् ॥ | ४१ |
| अर्काभमणिरत्नाद्यैः ज्वलच्चञ्चलकुण्डलम् । | |
| प्रत्युज्ज्वलितहारश्च वनमालाविभूषितम् ॥ | ४२ |
| स्फुरता ब्रह्मसूत्रेण प्रोद्धासितभुजान्तरम् । | |
| अनेकसूर्यसङ्काशकेयूरमणिकान्तिकम् ॥ | ४३ |
| मणिकाञ्चनमुक्ताढ्यैः कटकैरुपशोभितम् । | |
| अङ्गुल्याभरणैः सर्वैः नवरत्नैरलङ्कृतम् ॥ | ४४ |
| कर्पूरगन्धितास्याब्जं सुरक्ताधरपल्लवम् । | |
| तडिच्छतसहस्राभपीतनिर्मलवाससम् ॥ | ४५ |
| नूपुरैः कटिसूत्रेण तडिन्मालाम्बुदोपमम् । | |
| बालसूर्यसहस्राभनामिपङ्कजं अद्भुतम् ॥ | ४६ |
| मार्कण्डेयभरद्वाजपुण्डरीकशुकादिभिः । | |
| याज्ञवल्क्याम्बरीषाद्यैरन्यैश्च मुनिपुङ्गवैः ॥ | ४७ |
| चतुर्भुजैः स्वसदृशैः शङ्खचक्रगदाधरैः । | |
| प्रह्लादप्रमुखैः भक्तैः स्तुयमानमनेकशः ॥ | ४८ |

| | |
|---|----|
| सनन्दसनकाद्यैश्च योगिमुख्यैरभिष्टुतम् । | |
| भुक्तिमुक्तिपदं नृणां सर्वाभीष्टप्रदायिनम् ॥ | ४९ |
| सेवितं विभिरुद्राद्यैः दिक्पालैश्च भयान्वितैः । | |
| प्रणम्य शिरसा देवं स्तुत्वा स्तुतिभिरीश्वरम् ॥ | ५० |
| भक्त्या चावनतो भूत्वा कृताञ्जलिरहं स्थितः । | |
| स्वागतञ्चैव पृष्ट्वा मां बहुमेने गदाधरः ॥ | ५१ |
| देवदेवोऽथ मां वीक्ष्य पौत्रस्नेहातिशीतलैः । | |
| वीक्षणैः हृदयन्नित्यं बभाषे मधुसूदनः ॥ | ५२ |

नारदं प्रति धरातलविजिहीर्षुर्भगवदुक्तिः

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| ‘नारद ! श्रूयतां वत्स ! त्वया दृष्टं जगत्त्रयम् ! | |
| ब्राह्मण्डे कुत्र वा वासो मम देशे भवेदिह ॥ | ५३ |
| विहारयोग्यश्च तथा विश्रामस्थानमुत्तमम् । | |
| कथय त्वं महाभाग ! यद्यस्ति भुवि तादृशम् ’ ॥ | ५४ |

नारदकृतभगवत्कीडाहर्देशप्रकाशनम्

नारदः—

| | |
|---|----|
| न त्वयोपविदितं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते । | |
| तथाऽप्ययं तव प्रश्नो मयि स्नेहवशात् प्रभो ! ॥ | ५५ |
| त्वद्विहारोचितं स्थानं रमणीयं विलोक्यते । | |
| आश्चर्यप्रभवं स्थानं तत्समं नास्ति भूतले ॥ | ५६ |
| तव पादप्रभृताया गङ्गायाश्चैव दक्षिणे । | |
| दिग्भागे दण्डकारण्ये द्विशतैः योजनैः मिते ॥ | ५७ |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३०९

दक्षिणाम्बुनिधेश्चापि दक्षिणेतरभागके ।
पूर्वाब्धेः पश्चिमे भागे पञ्चभिर्योजनैः मिते ॥ ५८
रमणीयमिदं स्थानं क्रीडायोग्यं विभो ! तव ।
तत्तत्याश्च जनाः सर्वे तपःस्वाध्यायवर्जिताः ॥ ५९
आधिव्याधिहताश्चैव पश्यन्ति शरणं न च ।
अनुग्रहाय वै तेषां स्थातव्यं भवता हरे ! ॥ ६०

श्रीभगवान्—

‘चोलराजसुतः कश्चित् कलौ खलु भविष्यति ।
“चक्रवर्ती” ति मद्भक्तस्तत्र मामर्चयिष्यति ।
अनुग्रहाय तस्यापि तत्र स्थास्याम्यहं मुने ! ॥ ६१

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवन्नारदसंवादे
श्रीवेङ्कटाचलमहिमानुवर्णनं
नाम प्रथमोऽध्यायः ।

अथ द्वितीयोऽध्यायः

अनन्तस्य भगवत्क्रीडाद्वित्वप्राप्तिः

अथाऽऽह भगवान् शेषमाहूय पुरतः स्थितम् ।
मेघगम्भीरया वाचा हर्षोत्फुल्लविलोचनः ॥ १

श्रीभगवान्—

‘अनन्त ! मत्प्रियो लोके न त्वदन्योऽस्ति कश्चन ।
तस्मान्मम प्रियं किञ्चित् कर्तव्यं भवताऽनघ ! ॥ २
श्रुतं हि भवता सर्वं नारदोदीरितं वचः ।
क्रीडासमुचिते देशे वस्तव्यमिति मे मतिः ॥ ३

तत्र भूत्वा गिरिवरो भवान् वसतु भूतले ।
त्वत्फणामण्डलभुवि स्थातव्यं रमया सह ' ॥ ४

शेषः—

‘अनन्तोऽहं महादेव ! स्थास्यामि गिरिरूपधृक् ।
भवता रमया सार्धं मम सानुषु रम्यताम् ॥ ५
गङ्गाद्याः सरितः पुण्याः तीर्थानि च सरांसि च ।
वसन्तु सर्वदा तत्र ममोपरि तवाऽऽज्ञया ॥ ६
ममोपरि प्रभूतानां जङ्गमस्थावरात्मनाम् ।
यद्यदिष्टं हि तत्सर्वं तवानुग्रहेहेतुना ।
अस्ति ’ ति प्रार्थयामास शेषः सर्वहिताय वै ॥ ७

श्रीभगवान्—

‘सिद्धयत्वेवं फणीन्द्राऽद्य भवता यो वरो वृतः ।
तपांसि तत्र सिद्धयन्तु निर्विघ्नानि तपस्विनाम् ॥ ८
अहं हि सर्वजन्तूनां दृष्टिगोचरतां गतः ।
वसिष्यामि श्रिया सार्धं दददिष्टानि देहिनाम् ’ ॥ ९

भगवतो लक्ष्म्यादिमहिषीपरिजनैः सह क्रीडाचलगमनम्

इत्युक्त्वाऽथ श्रियं प्राह भगवान् पार्श्ववर्तिनीम् ।
भूमिं नीलां तथा देवीं प्रसन्नवदनाम्बुजाम् ॥ १०

श्रीभगवान्—

‘सखीभिः सहिता यूयं समागच्छत तत्र वै ।
विहारयोग्यो देशोऽयं निर्दिष्टो मुनिनाऽमुना ’ ॥ ११
इत्युक्त्वा भगवान् प्राह सेनापतिमरिन्दमम् ।
‘त्वदीयानुचरैः सार्धं सर्वैः पारिषदैर्युतः ॥ १२

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३११

ब्रह्माद्यैः त्रिदशैः सार्धं यक्षरक्षोगणान्वितैः ।
सिद्धविद्याधरैश्चापि किन्नरैश्च महोरगैः ॥ १३
ऋषिसङ्घैर्युतः शीघ्रं याहि शेषाचलं प्रति ।
वस्तव्यं तत्र हि मया रमया सहितेन वै ।
अनुग्रहाय साधूनां नित्यञ्च प्रयतात्मनाम् ' ॥ १४
इत्युक्त्वा भगवान् देवः श्रिया भूम्या च नीलया ।
विनतासुतमारूढो यया वहिमहीधरम् ॥ १५

अथाद्रिरूपधार्यनन्तस्य शिरःपुच्छप्रदेशवर्णनम्

भृगुः—

‘शेषः कथं गिरिवरो बभूव स महावपुः ।
कुत पुच्छप्रदेशोऽस्य शिरःपक्ष्मुवौ तथा ’ ॥ १६

नारदः—

‘तस्य दक्षिणकैलासनामकं स्थानमुत्तमम् ।
“कालहस्ती ” ति विख्यातं शिरोदेशः प्रकीर्तितः ॥ १७
शिवस्य शिवदः पुण्यः शिरोदेशो विलोक्यते ।
पुच्छस्तूत्तरतः प्रोक्तो महतोऽस्य महीभृतः ॥ १८
प्रसिद्धः पुच्छदेशोऽयं “श्रीशैल ” इति विश्रुतः ।
श्रीशैलस्य प्रदेशोऽस्मिन् नीलकण्ठाश्रमे शुभे ॥ १९

व्याघ्रपादवृत्तान्तः

व्याघ्रपादाभिधः कश्चित् तपस्वी नियतेन्द्रियः ।
चिरकालं तपस्तप्त्वा नीलकण्ठमुमापतिम् ॥ २०
तोषयामास नियमैः समग्रस्तं तपोनिधिः ।
अथ केनापि कालेन नीलकण्ठो महाह्युतिः ॥ २१

| | |
|---|----|
| परितुष्टः प्रादुरभूत् दास्यन् वरमभीष्टितम् । | |
| आलिङ्गितो गिरिजया गाढमाश्रितपार्श्वया ॥ | २२ |
| कैलसगौरमारुह्य वृषं गगनचारिणम् । | |
| प्रमथाद्यैः परिवृतो गणैः सम्प्रीतमानसैः ॥ | २३ |
| कर्पदविलसात्सद्भसिन्धुवीचिमिराकुलैः । | |
| सिद्धगन्धर्वयक्षाद्यैः पन्नगैः परिवारितः । | |
| भक्तानुकम्पां परमां भृशमावेदयन्निव ॥ | २४ |
| व्याघ्रपादः प्रणम्यैनं भक्त्या परमयाऽन्वितः । | |
| स्तुतिभिः परितुष्टाव पुष्कलाभिः पुनः पुनः ॥ | २५ |

व्याघ्रपादः—

| | |
|---|----|
| “ भगवन् करुणासार ! सर्वलोकैकवक्त्रण ! । | |
| प्रसीद त्वं प्रसन्नाक्ष ! विश्वाकार ! वृषध्वज ! ॥ | २६ |
| रथ्या वेदः त्रिपुरदहने वेदवक्ता च वेधाः | |
| सूतो यस्य स्वयमुपगतौ पुष्पवन्तौ रथाङ्गे । | |
| चापो मेरुः त्रिदशवसतिः वासुकिः चापमौर्वी | |
| बाणो विष्णुः त्रिदशवपुषे कुर्महे ते नमस्याम् ” ॥ | २७ |
| स्तुत्वैवं परया भक्त्या व्याघ्रपादः तपोनिधिः । | |
| तूष्णीं बभूव पुरतो मस्तके विहिताञ्जलिः ॥ | २८ |
| व्याघ्रपादं तपोनिष्ठं शान्तं धर्मपरायणम् । | |
| नीलकण्ठः समाहूय प्रहसन्निदमब्रवीत् ॥ | २९ |

नीलकण्ठः—

| | |
|--|----|
| ‘ तपसा परितुष्टोऽस्मि कृतेनानेन सुव्रत ! । | |
| वरं वरय भद्रं ते वरदोऽहमिहागतः ’ ॥ | ३० |

व्याघ्रपादः—

‘आश्रमेऽस्मिन् महादेव ! वस्तव्यं भवता सदा ।
भवन्नाम्ना सरश्चेदं प्रसिद्धिमधिगच्छतु ॥ ३१
अत्र स्नास्यति यो मर्त्यः तीरेऽस्मिन् सकृदाप्लुतः ।
स सिद्धिं यातु शुद्धात्मा पुमर्थानामभीप्सया ’ ॥ ३२

नीलकण्ठः—

‘तथैवास्त्वि’ति तं प्रोक्त्वा तत्रास्ते चन्द्रशेखरः ।
चिरं गिरिजया सार्धं वरदः सर्वदेहिनाम् ॥ ३३

अथाद्रिरूपधार्यनन्तस्य पक्षप्रदशवर्णनम्

अथ पक्षप्रदेशोऽस्य ब्रह्मबिलमिति स्मृतः ।
परं स्थानं नृसिंहस्य सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ ३४
हिरण्यकशिपुं हन्तुं ब्रह्मरुद्रपुरस्कृतः ।
प्रह्लादानुग्रहार्थाय ब्रह्मतीर्णोऽत्र वर्तते ॥ ३५
न तत्समं भुवि स्थानं अस्ति लोकत्रयेऽपि वा ।
अमृतत्वमवाप्नोति जन्तुदर्शनमात्रतः ॥ ३६
तस्मिन्नेकदिनं वाऽपि यो वा समधिगच्छति ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ ३७

क्रीडाद्रित्वापन्नानन्तस्य फणामणिवर्णनम्

फणामणिप्रदेशोऽयं “वेङ्कटाद्रि” रिति स्मृतः ।
“शेषाद्रिः, वृषभाद्रिश्च, नापायणगिरि” स्तथा ॥ ३८
न चास्य महिमा शक्यो वक्तुं वर्षशतैरपि ।
ब्रह्मरुद्रपुरोगैश्च सनकाद्यैश्च योगिभिः ॥ ३९

| | |
|--|----|
| अगस्त्याद्या मुनिवराः तपसः सिद्धयपेक्षया । | |
| तपांसि सुचिरं तेषु तन्निर्झरसमाप्लुताः ॥ | ४० |
| विष्णोरपरदेहत्वात् आक्रमन् न पदैर्गिरिम् । | |
| नारायणांशसम्भूतः शेषोऽहिः गिरिरूपधृक् ॥ | ४१ |
| तस्योपरि प्रभूता ये तृणगुल्मलतादयः । | |
| ते हि स्थावररूपेण वसन्तो योगिपूरुषाः ॥ | ४२ |
| ब्रह्मरुद्रादिदेवेभ्यो योगिनोऽमिततेजसः । | |
| सर्वदा यक्षगन्धर्वसिद्धकिन्नरचारणैः ॥ | ४३ |
| विद्याधरगणैश्चापि महोरगगणैस्तथा । | |
| ऋषिभिर्देववृन्दैश्च सेवावसरकाङ्क्षिभिः । | |
| सेव्यतेऽहर्निशं प्रीत्या महागिरिवरो ह्ययम् ' ॥ | ४४ |

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भृगुनारदसंवादे
श्रीवेङ्कटाचलविस्तारवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ।

अथ तृतीयोऽध्यायः

भगवत्क्रीडाचलवर्णनम्

भृगुः—

| | |
|---|---|
| ‘श्रीवेङ्कटगिरिं प्राप्य भगवान् पुरुषोत्तमः । | |
| आवासमकरोत्तत्र ततः किमकरोत् स्वयम् ? ॥ | १ |
| उदन्तमिममाचक्ष्व विस्तरेणैव नारद ! । | |
| न त्वदन्योऽस्ति विप्रेन्द्र ! रहस्यानां हि वेदिता ’ ॥ | २ |

नारदः—

| | |
|---|----|
| ‘इदं रहस्यं वक्ष्येऽद्य विस्तरेणैव ते भृगो ! । | |
| न त्वदन्योऽस्ति विप्रेन्द्र कथायाः श्रवणे रतः ॥ | ३ |
| यदैव रमया सार्धं अनादिः पुरुषोत्तमः । | |
| अवतीर्णो गिरिवरं नानाधातुविभूषितम् ॥ | ४ |
| गिरिनिर्झरसंयुक्तं नदीप्रस्रवणैर्युतम् । | |
| विचित्रैः वृक्षखण्डैश्च पुष्पितैरुपशोभितम् ॥ | ५ |
| मालतीकुन्दकुटजैः सिन्धुवारैः कुरण्टकैः । | |
| कदम्बार्जुनवंशैश्च चन्दनैः पनसैस्तथा ॥ | ६ |
| अशोकवकुलैर्गुडैस्तमालैः समलङ्कृतम् । | |
| नानाविहगसङ्घुष्टं मयूरावावनादितम् ॥ | ७ |
| तुष्टपुष्टमृगाकीर्णं सिंहशार्दूलशोभितम् । | |
| विगल्ममदधरैश्च गजसङ्घैः सुशोभितम् ॥ | ८ |
| गोल्बङ्गूलगणैश्चापि वानरैः मदगर्जितैः । | |
| क्रीडाचिखसनिरतैः मृगपक्षिमिरावृतम् ॥ | ९ |
| नानारत्नसमाकीर्णं सानुभिर्भूषितं गिरिम् । | |
| ब्रह्मणा च समादिष्टो नारायणदिदृक्षया ॥ | १० |

नारायणाख्यविप्रवृत्तान्तः

| | |
|--|----|
| नारायणाख्यो विप्रेन्द्रो गिरावस्मिन् शुभोत्तरे । | |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे सुरसिद्धनिषेविते ॥ | ११ |
| इन्द्रियाणि नियम्यान्तरास्थितो योगभावनाम् । | |
| नारायणं त्रिजगतामधीशं भक्तवत्सलम् ॥ | १२ |
| श्रीभूमिनीलासहितं ध्यायन् हृदि शुभास्पदम् । | |
| नासाग्रन्यस्तनयनो विशुद्धात्मा चिरं द्विजः ॥ | १३ |

तपश्चचार धर्मात्मा दुश्चरं दुष्टमानसैः ।
 विशुद्धात्मनि विप्रेन्द्रे तपस्यति चिरं तदा ॥ १४
 फलन्ति विविधा वृक्षाः तत्रत्याः समयं विना ।
 सत्त्वेषु बलवत्सत्त्वं वबाधे नैव दुर्बलम् ।
 तपस्यति द्विजे शान्ते शान्तं सर्वमभूद्वनम् ॥ १५

नारायणाख्यविप्रतपस्तुष्टस्य भगवत आविर्भावः

अथास्मिन्नन्तरे तस्य तपसा परितोषितः ।
 वासुदेवः प्रादुरभूत् वरदः सर्वदेहिनाम् ॥ १६
 विनतासुतमारूढः सुमेरुशिखरोपमम् ।
 दयितामङ्कमारोप्य ज्वलत्कञ्चनमालिनीम् ॥ १७
 युगपत्स्फुरितानेकतडित्सदृशवर्चसम् ।
 सहधर्मचरीं विष्णोरवतारानुकारिणीम् ॥ १८
 भक्तानुकम्पाभरितैरपाङ्गैः शीतलैः सदा ।
 आह्लादयन्तीमसकृत् जगत् स्थावरजङ्गमम् ॥ १९
 पद्मप्रियां पद्महस्तां पद्माल्यनिवासिनीम् ।
 उन्निद्रपद्मनयनां पद्मनाभमनःप्रियाम् ॥ २०
 नीलजीमूतसङ्काशः स्फुरत्पीताम्बरोज्ज्वलः ।
 तुलसीदामहृद्येन स्फुरच्छ्रीवत्सलक्ष्मणा ॥ २१
 कौस्तुभद्युतिदीप्तेन वपुषा सुविराजितः ।
 निबद्धोदरबन्धेन तनुमध्येन शोभितः ॥ २२
 विधातृगृहनालीकमुकुलोद्भवहेतुना ।
 नाभिहृदेन निम्नेन गम्भीरावर्तशोभिना ॥ २३
 रम्भेभहस्तशोभाभ्यां ऊरुभ्यामुपशोभितः ।
 जङ्घाभ्यां चारुतूणीरसदृशीभ्यां विराजितः ॥ २४

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थस्वण्डे तृतीयोऽध्यायः ३१७

प्रसन्नवदनाम्भोजः पद्मपत्रनिभेक्षणः ।
ज्योतिर्मयेन वपुषा दीप्यमानोऽग्रतः स्थितः ॥ २५
अथ नारायणं विप्रो हर्षपर्याकुलेक्षणः ।
सर्वदाऽऽनन्दसन्दोहनयनाश्रुसमाप्लुतः ॥ २६
आनन्दामृतसाराब्धौ मग्नः किञ्चिन्न बुध्यते ।
प्रदक्षिणं तदा कृत्वा भगवन्तं दयानिधिम् ॥ २७
भक्त्या परमयाऽऽविष्टो विवेदानन्तरं न सः ।
किं कर्तव्यमजानानो मुहूर्तं स्मावतिष्ठते ।
अथैनं परितुष्टाव वाग्भिरग्न्याभिराकुलः ॥ २८

नारायणारूपविप्रकृतभगवत्स्तुतिः

विप्रः—

“देवदेव ! जगन्नाथ ! प्रसीद पुरुषोत्तम ! ।
परिपाल्य मां भक्तं शरणागतवत्सल ! ॥ २९
काल्यम ! करुणासार ! करीन्द्रवरद ! प्रभो ! ।
अवलोक्य मां नाथ ! शीतलैः नयनाञ्चलैः ॥ ३०
त्वमेव धाता सर्वस्य जगतोऽस्य जगन्मय ! ।
रक्षिता च त्वमेवास्य संहर्ता च सुरेश्वर ! ॥ ३१
प्रकृतिः पुरुषश्चैव सर्गकाले सुसङ्गतौ ।
तवेक्षणवशेनैव सृजतो जगदव्ययम् ॥ ३२
न त्वत्समोऽस्ति लोकेऽस्मिन् नाथ ! लोकत्रयेऽपि वा ।
कुतस्त्वदधिकस्तस्मात् निःसमाभ्याधिको भवान् ॥ ३३
वेत्ता त्वमसि वेद्यश्च वेदनोपाय एव च ।
वेदनश्च फलं तस्य त्वदृते नास्ति किञ्चन ॥ ३४

| | |
|--|----|
| पिता त्वमसि लोकस्य सर्वस्य जगतः पते ! । | |
| माता स्वयं विशालाक्षी लक्ष्मीरेवानपायिनी ॥ | ३५ |
| विधातृप्रमुखा देवाः सनकाद्याश्च योगिनः । | |
| महता तपसा वाऽपि न त्वां जानन्ति तत्त्वतः ॥ | ३६ |
| न वेदाध्ययनेन त्वां न यज्ञैः नियमैरपि । | |
| न दानैश्च तपोयोगैः विना भक्त्या न दृश्यसे ॥ | ३७ |
| मद्भाम्योपचयेन त्वं दृग्गोचरमुपागतः । | |
| निजरूपञ्च देवेश ! प्रदर्शय दयानिधे ! ॥ | ३८ |
| धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि दर्शनेन तव प्रभो ! । | |
| चक्षुषोः सफलं जन्म जातमद्य सुरेश्वर ! ॥ | ३९ |
| न त्वां पश्यति यो मर्त्यो व्यर्थजन्मा स मे मतः । | |
| दर्शनेनैव मच्चित्तमाप्नोत्युन्मत्ततुल्यताम् ” ॥ | ४० |
| एवं स्तुवति विप्रेन्द्रे भगवान् प्रीतमानसः । | |
| तमुवाच प्रसन्नाक्षो मेघगम्भीरया गिरा ॥ | ४१ |

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| ‘तपश्चरसि विप्रेन्द्र ! कस्त्वमत्र जितेन्द्रियः । | |
| किमर्थञ्च वदाद्य त्वं दास्याम्यहमभीप्सितम् ’ ॥ | ४२ |

भगवन्तमुद्दिश्य विप्रकृतसर्वजनदृश्यत्वादिप्रार्थना

नारायणः—

| | |
|--|----|
| ‘वरदो यदि देवेश श्रीनिधे ! करुणानिधे ! । | |
| वृणोमि वरमिष्टं मे शृणुष्व प्रीतमानसः ॥ | ४३ |
| अहं नारायणो नाम भवदर्शनकाङ्क्षया । | |
| भुवं सर्वं परिक्रम्य नापश्यं त्वामहं प्रभो ! ॥ | ४४ |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे तृतीयोऽध्यायः ३१९

| | |
|--|----|
| ब्रह्माणं तपसाऽऽराध्य तन्निर्दिष्टोऽहमागतः । | |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे तपसाऽऽराधितो भवान् ॥ | ४५ |
| तपश्चरन् वसाम्यद्य चिरेण नियतेन्द्रियः । | |
| एवं क्लृप्तपश्चर्तुमशक्यं भुवि मानवैः ॥ | ४६ |
| तेषामनुग्रहार्थाय सर्वप्रत्यक्षगोचरः । | |
| सर्वाभीष्टं ददन्नित्यं स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ | ४७ |
| अनन्तविहगेशानसेनापतिमुखैः सदा । | |
| सेव्यमानः श्रिया सार्धं विहरन् वस माधव ! । | |
| गिरिश्चायं हि मन्नाम्ना प्रसिद्धिमधिगच्छतु ' ॥ | ४८ |

भगवत्कृतनागरायणाख्यविप्रप्रार्थनाभ्युपगमप्रकारः

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| ‘तथा भवतु विप्रेन्द्र! वचनं तव सुव्रत । | |
| ब्राह्मणो यदि वा वैश्यः क्षत्रियः शूद्र एव वा ॥ | ४९ |
| सपापो यदि वाऽपापः स्वामिपुष्करिणीजले । | |
| स्नात्वा चात्र वसन्तं मां ये नमस्यन्ति मानवाः ॥ | ५० |
| ददाम्याकल्पमेवाहं तेषां वासं त्रिविष्टपे । | |
| यः करोत्याप्लवं स्वामिसरसीजलमध्यतः ॥ | ५१ |
| सोऽतीत्य निरयं सर्वं ब्रह्मभूयाय कल्पते । | |
| भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां सर्वसिद्धिप्रदायकम् । | |
| इदं स्थानं सरश्चेदं नात्र कार्यो विचारणा ॥ | ५२ |
| अद्यप्रभृति चैवायं गिरिस्त्वन्नामतः सदा । | |
| “नारायणाचल” इति प्रसिद्धो भवतु द्विज ’ ॥ | ५३ |

| | |
|--|----|
| इति तस्मै वरं दत्त्वा स्वसायुज्यं ददौ हरिः । | |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे स्वसङ्कल्पागते ततः ॥ | ५४ |
| दिव्ये विमाने सर्वेषां विलोचनपथं गतः । | |
| श्रीभूमिनीलसहितः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ | ५५ |
| कोटिकन्दर्पलावण्यो नीलजीमूतसन्निभः । | |
| दयापरवशो नित्यं वसति प्रीतमानसः ॥ | ५६ |

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये
भगवदाविर्भाववर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः

अथ चतुर्थोऽध्यायः

भगवतः क्रीडाद्रौ लीलार्थं मृगयाविहारः

भृगुः —

‘तत्र वासमुपेत्याथ देवः किमकरोत्ततः ? ।
विस्तरेण समाख्याहि पृच्छतो मम सर्वशः ॥’ १

नारदः —

ततः कदाचिन्मृगयाविहाराकाङ्क्षिमानसः ।
सेनापतिमुवाचेदं प्रहसन्निव माधवः ॥ २

श्रीभगवान् —

‘सेनेश ! विपिनोद्देशे विहर्तुं मतिरस्ति मे ।
सिंहव्यालसमाकीर्णे मत्तद्विपनिषेविते ॥ ३
सज्जीभवन्तु सैन्यानि निदेशाद्भवतोऽधुना ।
चतुरङ्गसमेतानि समरेष्वजितानि वै ॥’ ४

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ३२१

इत्युक्त्वा भगवांस्तूर्णं निर्ययौ मृगयामतिः ।
सेनापतिमुखाश्चापि तमेवानुययुस्तदा ॥ ५
अथोत्तरगिरौ रम्ये विचचार स दैत्यहा ।
सिंहव्यालगणान् विद्धयन् शरैराशीविषोपमैः ॥ ६
तत्रत्यः शबराधीशाः सोपहाराः समागताः ।
प्रणम्य देवदेवेशं अतिष्ठन् नम्रमौलयः ॥ ७
निर्दिश्यमानमार्गस्तु तैस्तैः शबरपालकैः ।
विचचार बहून् देशान् मृगयाऽऽकृष्टमानसः ॥ ८

वृषभाख्यासुरवृत्तान्तः

तस्मिन् काले शिवे भक्तो वृषभाख्यो महासुरः ।
श्रीशैलदक्षिणे देशे विचचार महामनाः ॥ ९
ततो गिरिवरं दृष्ट्वा प्रादुर्भूतं सुविस्तृतम् ।
विस्मयाविष्टचेतास्तु चिन्तयामास कारणम् ॥ १०
'अहो कोऽप्यस्य मायावी सद्यऽद्वेष्टरुपरि ध्रुवम् ।
तमन्वेष्टुं यतिष्येऽहं मायिनं गतभीरहम् ।
अन्विष्य सहसाऽनेन योत्स्यामि गतभीरहम् ' ॥ ११
इति सञ्चिन्त्य तत्रायं मृगयन्नपकारिणम् ।
बलार्वासमाविष्टः तत्र तत्र चचार ह ॥ १२

वृषभासुरशबरवेपथारिभगवतोः युद्धप्रकारः

अथापश्यत् स देवेशं विहरन्तमभीतवत् ।
शार्ङ्गपाणिं हयारूढं शबराकृतिधारिणम् ॥ १३
तं दृष्ट्वा दैत्यराट् क्रुद्धः सोऽयमेवेति निश्चितः ।
अभ्यधावत् तं तूर्णं 'तिष्ठ तिष्ठे' ति चाब्रवीत् ॥ १४

| | |
|--|----|
| ततः समभवद्युद्धं घोररूपं भयानकम् । | |
| शबराधिपतिं दैत्यः समाहूयाशपत्तदा ॥ | १५ |
| ततः स शबरः क्रुद्धः सर्वसन्नाहसंयुतः । | |
| श्वगणैः स्वगणैश्चैव बाणैश्च निशितैस्तथा ॥ | १६ |
| प्रासैः खड्गैः गदाभिश्च शक्तिशूलपरश्वधैः । | |
| कुन्तैः मुसलसङ्घैश्च वृक्षैः पाषाणराशिभिः ॥ | १७ |
| अयुद्धयत तदा तेन घोरं युद्धमभूद्धने । | |
| ततस्तान् शबरान् सर्वान् विनिर्जित्याग्रतः परम् ॥ | १८ |
| आयान्तमसुरं दृष्ट्वा विष्वक्सेनं दिदेश सः । | |
| सोऽपि गन्धर्वसङ्घैश्च सहितः प्रत्ययुध्यत ॥ | १९ |
| ततः सुतुमुलं युद्धं बभूव भयदायकम् । | |
| अस्त्रैः शस्त्रैः जघानाऽऽशु विष्वक्सेनः प्रतापवान् ॥ | २० |
| दैत्यस्तं दुर्जयं ज्ञात्वा मायावी च मदोद्धतः । | |
| ततः स्वमायामास्थाय दैत्यः परपुरञ्जयः ॥ | २१ |
| असृजद्राक्षसान् घोरान् शतशोऽथ सहस्रशः । | |
| अस्त्राण्यपि च दिव्यानि शस्त्राणि त्रिविधानि च ॥ | २२ |
| प्रायुङ्क्त दैत्यराट् क्रुद्धो नारायणजिघांसया । | |
| यदनेन प्रयुक्तं वै शस्त्रमस्त्रमथापि वा ॥ | २३ |
| भस्मीकृतं च तत्सर्वं हरिणा निजमायया । | |
| ततस्तमसुरो मत्वा दुर्जयं हरिमाहवे ॥ | २४ |
| मायां प्रयुज्य मायावी स्वयमन्तर्दधे ततः । | |
| तां मायामायतीं दृष्ट्वा ततः सर्वेश्वरो हरिः ॥ | २५ |
| प्रेषयामास नाशाय ततश्चक्रं जनार्दनः । | |
| नाशकं सर्वदुष्टानां सर्वदेवनमस्कृतम् ॥ | २६ |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ३२३

चक्रराजात्ततो ज्वालाः प्रादुर्भूताः सहस्रशः ।
तामिस्तत्सैन्यमत्युग्रं ज्वलितं काननं यथा ॥ २७
ज्वलत्कञ्चुकिनो वीरा दग्धश्मश्रुशिरोरुहाः ।
आयुधानि विचित्राणि दग्धान्यासम् हविर्भुजा ॥ २८
तेन चक्रप्रभावेण ह्यसुरं बलमद्भुतम् ।
न किञ्चित् दृश्यते तत्र पर्वते परमाद्भुते ॥ २९
ततः समीक्ष्य दैत्यो वै मायां स्वीयां विनाशिताम् ।
चिन्तयामास च मुने ! विस्मयाकुलमानसः ॥ ३०

भगवन्तं प्रतिसंहाराभ्युपगंतुं वृषभासुरप्रार्थना

निहनिष्यति माञ्चापि चक्रं नूनं तदीरितम् ।
समयो मरणस्यापि संवृत्तो नैव संशयः ॥ ३१
अमानुषमिमं मन्ये परब्रह्मस्वरूपिणम् ।
स्रष्टारं सर्वलोकानां सर्वदेवनमस्कृतम् ॥ ३२
अनेन निहतो नूनं विमुक्तः सर्वकिल्बिषात् ।
संसारार्णवमुत्तीर्य गमिष्ये मुक्तिसम्पदम् ॥ ३३
इति सञ्चिन्तयन् देवं वधात् संहृष्टमानसः ।
प्रार्थयामास चाभीष्टं किञ्चिद्भृदयसंश्रितम् ॥ ३४

अथभः —

“ देवदेव ! जगन्नाथ ! सर्वलोकैककारणम् ।
शरणं त्वामनुप्राप्तः प्रणतार्तिहर ! प्रभो ! ॥ ३५
त्वया ततमिदं सर्वं जगत् स्थावरजङ्गमम् ।
त्वया विहीनं नो किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ ३६

| | |
|--|----|
| ब्रह्माद्याः सकला देवाः त्वन्निदेशकरा मताः । | |
| निदेशात् वाति ते वातः सूर्यश्चोदेति चान्वहम् ॥ | ३७ |
| वह्निर्ज्वलति ते भीतः शक्रः शासति शासनात् । | |
| यमो धावति भीतस्ते इति वेदानुशासनम् ॥ | ३८ |
| त्राहि त्राहि महादेव ! न जाने शरणं परम् । | |
| योगिनो यं विचिन्वन्ति नियताः त्वां विमुक्तये ॥ | ३९ |
| स त्वमद्य महाबाहो ! दृग्गोचरगतोऽसि मे । | |
| क्षमस्व मत्कृतं सर्वमपकारं सुदुःसहम् ॥ | ४० |
| कृतागसां त्वादृशेषु प्रणामः खलु निष्कृतिः । | |
| जीवितन्तु न याचेऽहं क्षुद्रं पापस्य कारणम् ॥ | ४१ |
| अतो यास्यामि निहतः चक्रेण परमां गतिम् । | |
| तस्मात् क्षमस्व भगवन् श्रीनिधे ! करुणानिधे ! । | |
| त्रातारं नैव पश्यामि त्वां विना मधुसूदन ! ॥ | ४२ |

असुरप्रार्थनया क्रीडाद्रेः भगवदत्तवृषभनामधेयप्राप्तिः

| | |
|---|----|
| “ अद्यप्रभृति चायं वै गिरिरुद्धितशेखरः । | |
| मदाख्यया प्रथां यातु ‘ वृषभाचल ’ इत्यपि ” ॥ | ४३ |
| इत्येवं शोकसन्तप्तमश्रुपूर्णकुलेक्षणम् । | |
| वृषभं तमुवाचेदं प्रहसन् गरुडध्वजः ॥ | ४४ |

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| ‘ वृषभासुर ! मद्भक्त्या विमुक्तिं यास्यसि ध्रुवम् । | |
| गिरिश्चायं भवन्नाम्ना प्रसिद्धिमधिगच्छतु ’ ॥ | ४५ |
| इत्युक्तवति गोविन्दे दैत्येन्द्रः प्रीतमानसः । | |
| चिन्तयामास निधनमनुग्रहमथो मुने ! ॥ | ४६ |

वृषभासुरवधप्रकारः

| | |
|--|----|
| ततः सुदर्शनश्चापि ज्वालाजटिलविग्रहः । | |
| जहार सुरशत्रोर्हि कण्ठनालात् शिरोऽम्बुजम् ॥ | ४७ |
| ततो निपातिते भूमावसुरे युद्धदुर्मदे । | |
| ववृषुः पुष्पवर्षाणि देवाः सम्प्रीतमानसाः ॥ | ४८ |
| देवदुन्दुभथो नेदुः ननृतुश्चाप्सरोगणाः । | |
| दिशः प्रसेदुर्विमला वाताश्चैव सुखं ववुः ॥ | ४९ |
| गोविन्दोऽपि दयासारो वरं दत्त्वाऽसुराय वै । | |
| पुनरभ्येत्य शेषाद्रौ यथास्थानं स्थितो मुने ॥ | ५० |

अञ्जनादेव्युत्पत्तिक्रमः

भृगुः—

| | |
|--|----|
| ‘भूयः कथय देवस्य चरितानि महात्मनः । | |
| शृण्वतो नास्ति मे तृप्तिः अद्भुतानि महामुने !’ ॥ | ५१ |

नारदः—

| | |
|--|----|
| शृणुष्वैकमना ब्रह्मन् ! मत्तः कथयतो मुने ! । | |
| माहात्म्यं देवदेवस्य चित्रं हि मुनिकीर्तितम् ॥ | ५२ |
| त्रेतायुगेऽसुरः कश्चित् ‘केसरी’ त्येव विश्रुतः । | |
| पुत्रार्थी देवमुद्दिश्य तपस्तेपे महामनाः ॥ | ५३ |
| नियतात्मा शुचिर्नित्यं निराहारो जितेन्द्रियः । | |
| पञ्चाक्षरेण जप्येन तोषयामास शङ्करम् ॥ | ५४ |
| प्रीतः प्रादुरभूदग्रे शङ्करो लोकशङ्करः । | |
| भक्त्या तमानतं भूमावुवाच च हसन्निव ॥ | ५५ |

शङ्करः—

‘परितुष्टोऽस्मि भद्रं ते तपसाऽनेन सुव्रत ! ।
वरं वृणीष्व दास्यामि मनसा यदिहेच्छसि ’ ॥ ५६

केसरी —

‘देवदेव ! महाप्राज्ञ ! परितुष्टोऽसि चेन्मम ।
वरदो भव मेऽमीष्टं वरयामि सुनिश्चितम् ॥ ५७
पुत्रमिच्छामि बलिनं समरेष्वनिवर्तिनम् ।
महाधैर्यं महाप्राज्ञ त्वत्तः सन्तुष्टमानसात् ’ ॥ ५८

शङ्करः—

‘न पुत्रं दातुमिच्छामि परितुष्टोऽप्यहं तव ।
यस्माच्च विधिना पूर्वं विहिता पुत्रहीनता ॥ ५९
तथाऽपि दास्ये कन्यां वै रूपयौवनशालिनीम् ।
तस्यामुत्पत्स्यते पुत्रः त्वदभीष्टोऽचिरात् ध्रुवम् ’ ॥ ६०
इति सन्दिश्य भर्गोऽपि तलैवान्तरधीयत ।
असुरेन्द्रोऽपि लब्ध्वाऽयं वरमिष्टं मुदं ययौ ॥ ६१
ततस्तस्याभवत्कन्या लोकविस्मयकारिणी ।
चकार नाम तस्या वै ‘ह्यञ्जने’ति स दैत्यराट् ॥ ६२
क्रमेण ववृधे सेयमञ्जना मञ्जुभाषिणी ।
कलेव शशिनः पक्षे सिते नयननन्दिनी ॥ ६३
पितुस्तस्याञ्च ववृधे प्रमोदस्तु दिनेदिने ।
पुत्रप्रीतिरभूत् तस्य तस्यामिति च नः श्रुतम् ॥ ६४
प्रकान्तकन्दुकक्रीडामालिभिः सह कन्यकाम् ।
वीक्ष्य वीक्ष्य ययौ तृप्तिं प्रहर्षोत्फुल्लोचनः ॥ ६५

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे पञ्चमोऽध्यायः ३२७

ततः कपिवरः कश्चित् ' केसरी ' ति भुवि श्रुतः ।
अभिगम्य ययाचे तां कन्यां यौवनशालिनीम् ॥ ६६
तस्मै तामञ्जनां प्रादात् दैत्यः सम्प्रीतमानसः ।
स चिक्रीड कपिश्रायं कन्यया कर्मरूपया ॥ ६७

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये
वृषभाचलोत्पत्ति - अञ्जनादेव्युत्पत्तिवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ पञ्चमोऽध्यायः

अञ्जनायाः श्रीवेङ्कटाद्रौ तपःकरणेनाञ्जनेयाख्यसुतोत्पत्तिः

नारदः—

विहरन्ती चिरं तेन कपिना साधु कन्यका ।
न लेभे सदृशं पुत्रं चिन्ताशोकपरायणा ॥ १
'अहो मम पिता मां वै पुत्रस्नेहसमाकुलः ।
पोषयामास तस्याहमानृष्यं केन चाप्नुयाम् ॥ २
तस्या मे मन्दभाग्यायाः सन्ततिश्च विनाकृता ।
नारीणां पुत्रहीनानां न सुखं पारलौकिकम् ॥ ३
पुत्रेण मे विहीनायाः किन्न विश्रम्यते कुलम् ।
धन्याः खलु स्त्रियस्ता वै याः पश्यन्ति शुचिस्मितम् ॥ ४
मुखमङ्गे शयानानां पुत्राणां पुत्रवत्सलाः ' ।
इति सञ्चिन्त्य बहुधा पुत्रार्थं सा सुलोचना ॥ ५
द्विजानभ्यर्च्य विधिवदाशिषो वाचयन्त्यहो ।
ददावभीप्सितं तेभ्यः सर्वदैव यशस्विनी ॥ ६

| | |
|---|----|
| निमित्तज्ञांश्च पृच्छन्ती तानुवाच तदाऽञ्जना । | |
| व्रतेषु चाप्यनेकेषु नियता चावसत् स्वयम् ॥ | ७ |
| आस्तीर्य मुसलांश्चापि गोष्ठेषु नियतेन्द्रिया । | |
| उपवासपरा भूत्वा तुष्टाव जगदीश्वरम् ॥ | ८ |
| एवंविधान्यनेकानि कृत्वा नियतमानसा । | |
| चरन्ती नैव लेभे सा पुत्रजन्मकृतं सुखम् ॥ | ९ |
| कस्य चित्त्वथ कालस्य दयया धर्मदेवता । | |
| विभ्रती पुलकसीरूपं धृत्वा वेत्रञ्च पुत्रिकाम् ॥ | १० |
| ‘पृच्छध्वं चे’ त्यनुपदं भाषमाणा गतश्रमा । | |
| पश्यन्ती बालिशान् पाणौ वदन्ती लक्षणान्यथ ॥ | ११ |
| अञ्जनायाः समीपं वै प्रयाता धर्मदेवता । | |
| अञ्जना तां समाहूय विनिवेश्य वरासने ॥ | १२ |
| शूर्पे स्वर्णमये मुक्तातण्डुलान् प्रणिधाय वै । | |
| तर्पयित्वा निमित्तज्ञां पर्यपृच्छदनाकुला ॥ | १३ |

अञ्जना ---

| | |
|--|----|
| ‘निमित्तज्ञे ! कथं ब्रूहि मम पुत्रोऽस्ति वा न वा ? । | |
| सत्येन वद धर्मज्ञे ! पृच्छन्त्या मम सर्वशः ॥ | १४ |
| यद्यहं प्राप्नुयां पुत्रमिष्टं बालिनमञ्जसा । | |
| दास्यामि तव तत्सर्वं यद्यदिच्छसि चेतसा ’ ॥ | १५ |

पुलकसी ---

| | |
|---|----|
| ‘अभीष्टस्तव पुत्रो वै भविष्यति न संशयः । | |
| मा शोकं कुरु कल्याणि ! धर्मेण मम ते शपे ॥ | १६ |
| श्रीवेङ्कटागिरौ सप्तसाहस्रं वत्सरान् पुनः । | |
| तपः कुरु ततः पुत्रमवाप्स्यसि सुशोभनम् ’ ॥ | १७ |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे पञ्चमोऽध्यायः ३२९

| | |
|---|----|
| इत्युक्त्वा सा निमित्तज्ञा यथागतमथो ययौ । | |
| अञ्जना चिन्तयन्ती तद्वाक्यं तस्या मनोरमम् ॥ | १८ |
| प्रचक्रमे तपश्चतुं श्रीवेङ्कटगिरेस्तटे । | |
| आकाशगङ्गानिकटे सिद्धसङ्घनिषेविते ॥ | १९ |
| वाग्वाहारा च वायुं वै समुद्दिश्य सुदारुणम् । | |
| तपश्चचार दान्तेयं प्रीणयन्ती व्रतैरिमम् ॥ | २० |
| ततः प्रीतमना वायुः फलमेकं दिनेदिने । | |
| भक्षणार्थं ददौ तस्यै दृगोचरमुपागतः ॥ | २१ |
| अतीते सप्तसाहस्रे वत्सराणामनन्तरम् । | |
| पार्वतीसहितः शम्भुः तदाश्रममुपागमत् ॥ | २२ |
| विजहार च तत्रायं तत्रतत्र वनान्तरे । | |
| तस्मिन्नवसरे तत्र विलासार्थमुपागतम् ॥ | २३ |
| चिक्रीड वानरद्वन्द्वं तदद्भुतमिवाभवत् । | |
| पार्वत्यै दर्शयामास ' पश्य पश्ये ' ति धूर्जटिः ॥ | २४ |
| सा च दृष्ट्वा कपिद्वन्द्वं क्रीडितं व्रीडिता शनैः । | |
| अथ तस्या मनश्चासी ' दावां कपितनूधरौ ॥ | २५ |
| विहारिष्याव ' इति हि लोकस्य रुचिरीदृशी । | |
| ततः कपियुगं भूत्वा पार्वतीपरमेश्वरौ ॥ | २६ |
| चिक्रीडतुः वनान्तेऽस्मिन् उभौ मुदितमानसौ । | |
| तयोर्वीर्यं तदा वायुरथ पत्रपुटान्तरे ॥ | २७ |
| आहत्य प्रददौ तस्या अञ्जनायाः करान्तरे । | |
| मन्वाना भक्ष्यमित्येव तद्भक्षितवती ह्यसौ ॥ | २८ |
| दधौ दोहदचिह्नानि क्रमेण नियतेन्द्रिया । | |
| अञ्जना कञ्जनयना प्रफुल्लनलिनानना ॥ | २९ |

| | |
|---|----|
| चिन्तयन्ती किमेतन्मे निर्दोषायाः समागतम् ।
अथवा विधिवैरूप्यमहो मे मन्दभाग्यता ॥ | ३० |
| केन दोषेण चाहं वा ईदृशं रूपमागता ।
चिन्तयन्ती चिरं सा वै व्रीडिता दुःखिता स्थिता ॥ | ३१ |
| आश्वासयन्ती तां प्राह दिवि वागशरीरिणी ।
'मा विषादं गमः पुत्रि ! भवितव्यमिदं तव ॥ | ३२ |
| दुष्टात्मा रावणो नाम राक्षसो लोककण्टकः ।
स तु देवस्त्रियः सर्वा बन्दिग्राहं ग्रहीष्यति ॥ | ३३ |
| त्रिलोकीमपि यस्माद्वै रावयिष्यति कर्मणा ।
तस्मा 'द्रावण' इत्येव प्रसिद्धिमधियास्यति ॥ | ३४ |
| ततस्तन्निग्रहार्थाय हरिः प्रत्यर्थितः सुरैः ।
आगमिष्यति भूलोके रघूणामन्वये शुभे ॥ | ३५ |
| ततस्तस्य सहायार्थमसह्यबलविक्रमः ।
शौर्यधैर्यगुणोपेतो बलीयान् विजितेन्द्रियः ॥ | ३६ |
| अप्रमेयगुणोपेतः पुत्रस्तव भविष्यति ।
इमामाकाशगां वाचं श्रुत्वा सम्प्रीतमानसा ॥ | ३७ |
| पित्रे न्यवेदयत्सर्वं चरितञ्च नभस्वनः ।
तच्छ्रुत्वा च पिता तस्याः प्रययौ परमां मुदम् ॥ | ३८ |
| सुतोत्पत्तिमथाकाङ्क्षन् तस्या निभृतमुन्मनाः ।
आपाण्डरीकृता तस्या रराज तनुवल्लरी ॥ | ३९ |
| कलङ्कहीना चन्द्रस्य लेखेवासितपक्षके ।
विनीलचूचुकं रेजे कुचमण्डलमुन्नतम् ॥ | ४० |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे पञ्चमोऽध्यायः ३३१

पद्मकोशस्य संलीनभ्रमरस्य श्रियं दधत् ।
न शशाक भुवं गन्तुं गर्भस्यातिभरात्ततः ।
इत्थं प्रववृधे तस्या गर्भः प्रीतिविवर्धनः ॥ ४१

आञ्जनेयोत्पत्तिमामदिवसनक्षत्रनिर्णयः

ततो वै दशमे मासि सम्प्राप्ते नलिनेक्षणा ।
असूत पुत्रं बलिनमुदयत्यहिमत्विषि ॥ ४२
श्रावणे मासि नक्षत्रे श्रवणे हरिवासरे ।
कुण्डलोद्भासिगण्डान्तमुपवीतिनमुज्ज्वलम् ॥ ४३
कौपीनोद्भासितञ्चैव दीप्यमानमिव श्रिया ।
बिभ्राणं वानराणां वै रूपमत्यद्भुतं महत् ॥ ४४
रक्तास्यपुच्छमूलन्तु सुवर्णसदृशद्युतिम् ।
अतोऽयं जातमात्रोऽपि नितरां तु बुभुक्षितः ॥ ४५

आञ्जनेयस्य फलबुद्ध्या रविमण्डलं प्रत्युत्पत्तनम्

उदयाचलसंरूढं ददर्श रविमण्डलम् ।
नितान्तरक्तवर्णेन फलबुद्धिरभूत्तदा ॥ ४६
फलमित्येव मन्वानो रविं भक्षितुमुद्यतः ।
ग्रहिष्यामीति निश्चित्य श्रीवेङ्कटगिरेस्तटात् ॥ ४७
उदतिष्ठन्महावेगादुदयाचलशेखरम् ।
ग्रहीतुमुद्यते तस्मिन् बिम्बं सूर्यस्य वै बलात् ॥ ४८
हाहाकृतमभूत्सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।
ततश्चतुर्मुखो ब्रह्मा स्वयमागत्य वेगतः ॥ ४९
ब्राह्ममन्त्रं युयोजासौ कुपितः तज्जिघांसया ।
तदाऽस्त्रमागतं दृष्ट्वा बालः क्रीडन्निव क्षणात् ॥ ५०

| | |
|---|----|
| निरस्य पुच्छप्रान्तेन बभूव विगतज्वरः । | |
| प्रत्याख्यातं ततो दृष्ट्वा तदस्त्रं ब्रह्मणेरितम् ॥ | ५१ |
| विसिष्मिन्ने सुराणां वै गणः किमिदमित्यपि । | |
| कथ्यमाकाशयानं वै कथं सूर्याभिधावनम् ॥ | ५२ |
| प्रत्याख्यानं कथञ्चासीदित्युचुर्विस्मितास्तदा । | |
| ससुरासुरगन्धर्व सयक्षोरगराक्षसम् ॥ | ५३ |
| भुवनं विस्रयं प्राप कर्म दृष्ट्वाऽद्भुतं कपेः । | |
| हनूमानपि तं दृष्ट्वा सूर्यं निर्विण्णमानसः ॥ | ५४ |
| भूमौ पपात तेजस्वी ब्राह्मेणास्त्रेण ताडितः । | |
| अथाञ्जना समागत्य शोकपर्याकुल स्वयम् । | |
| अश्रुपूर्णाक्षिपक्ष्माग्रा बभाषे सुरसत्तमान् ॥ | ५५ |

अञ्जनः —

| | |
|---|----|
| ‘भवन्तो निर्धृणा देवा जातमात्रे शिशौ कथम् । | |
| ब्राह्ममस्त्रं प्रयुज्याशु कृतार्था इव सम्प्रति ॥ | ५६ |
| ईदृशा भवतां पुत्रा न सन्ति किमु देवताः । | |
| प्रारब्धमीदृशं कर्म कथं घोरतरं महत्’ ॥ | ५७ |

आञ्जनेयस्य ब्रह्मादिदत्तसर्वावध्यत्ववराप्राप्तिः

| | |
|---|----|
| वदन्तीं परुषं वाक्यमञ्जनामित्थमञ्जसा । | |
| सान्त्वयन्तः सुराः सर्वे वीर्यजातमुमापतेः । | |
| देवकार्यञ्च संवीक्ष्य वाचमूचुरिमां तदा ॥ | ५८ |

देवाः —

| | |
|---|----|
| ‘अञ्जने ! मा विषीद त्वं तव पुत्रस्य धीमतः । | |
| दास्यामो दुर्लभानस्य वरान् वयममानुषान् ॥ | ५९ |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे पञ्चमोऽध्यायः ३३३

ससुरासुरगन्धर्वैः यक्षरक्षोगणैस्तथा ।
पिशाचैः गुह्यकैः सोऽयमवध्यो भवतु ध्रुवम् ॥ ६०
तथा च शस्त्रसङ्घैश्च बाणैश्च विविधैरपि ।
अवध्यत्वमवाप्नोति शासनान्नः तवाऽऽत्मजः ॥ ६१
बलेन प्रज्ञया चापि यातु सर्वातिशायिताम् ।
शत्रूणामपि दुर्धर्षः पुत्रस्तव भविष्यति ' ॥ ६२
इति दत्त्वा वरं देवगणेषु विरतेष्वथ ।
चतुर्मुखः समाहूय चाञ्जनामिदमब्रवीत् ॥ ६३

क्रीडाद्रेरञ्जनाचलनामधेयप्राप्तिः

ब्रह्मा —

“ अञ्जने ! त्वं हि शेषाद्रौ तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ।
पुत्रं सूतवती यस्मात् लोकत्रयहिताय वै ॥ ६४
प्रसिद्धिं यातु शैलोऽयमञ्जने ! नामतस्तव ।
' अञ्जनाचल ' इत्येव नात्र कार्या विचारणा ” ॥ ६५
इति तस्यै वरं दत्त्वा देवा ब्रह्मपुरोगमाः ।
स्वं स्वं स्थानं समुद्दिश्य यथागतमथो ययुः ॥ ६६
अञ्जना पुत्रमादाय श्रीवेङ्कटगिरेस्तटम् ।
पुनरागम्य सामोदमलञ्चके निजाश्रमम् ॥ ६७

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे भृगुनारदसंवादे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये
अञ्जनाचलमिधानहेतुवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ।



अथ षष्ठोऽध्यायः

— : * : —

क्रीडाद्रेः श्रीवेङ्कटाभिधानो गेह्यातः

भृशुः —

‘अयं शिलोच्चयः केन ‘वेङ्कटाचल’ इत्यपि ।
मुनीन्द्र भुवि विख्यातः ? तद्वदस्व सहेतुकम्’ ॥ १

नारदः—

अत्रापि कारणं वक्ष्ये शैलोऽयं येन हेतुना ।
वेङ्कटादिरिति ख्यातः शृणुष्वैकमना मुने ! ॥ २
श्रीगिरिः पश्चिमे भागे पुरं नन्दनसंज्ञकम् ।
हस्त्यश्वरथसम्बाधं बभूव भुवि विश्रुतम् ॥ ३
पुरन्दराभिधः कश्चित् सोमयाजी द्विजोत्तमः ।
उवास तस्मिन् नगरे याजको वेदपारगः ॥ ४
तस्य जज्ञेऽतिमतिमान् पुत्रो माधवसंज्ञकः ।
कालक्रमेण ववृधे वेदाध्ययनतत्परः ॥ ५
यो गुणैः पितरं सर्वैः अत्यक्रामदिवाञ्जसा ।
क्रमेण मांसलौ बाहू बभार द्विजपुत्रकः ॥ ६
यौवने समनुप्राप्ते वक्षस्यतिविशालताम् ।
तस्यासीच्चन्द्रलेखाख्या पत्नी कमललोचना ॥ ७
सर्वलक्षणसम्पन्ना दिव्यनारीव भामिनी ।
स तस्यामनुरक्तोऽभूद् भृशं द्विजकुमारकः ॥ ८
तन्व्या हतो यौवनेन रूपेणाप्रतिमेन च ।
विहरन् मुदितो नित्यमास्तेस्म सह भार्यया ॥ ९

| | |
|---|----|
| विहारयोग्ये देशे च वनोद्देशे मनोहरे । | |
| अथास्मिन्नन्तरे काले वसन्तः प्रादुरास ह ॥ | १० |
| उपदेष्टुमिव क्रीडाविशेषांस्तु द्विजन्मनः । | |
| पुंस्कोविल्लाः चुकूजुर्वै चूतवृक्षसमाश्रिताः ॥ | ११ |
| वियोगिमानसेष्वन्तः जनयन्तः परां रुजम् । | |
| अशोककुसुमं लोकान् मदनस्य दिधक्षतः ॥ | १२ |
| प्रतप्तमिव नाराचं व्यरोचत मनोहरम् । | |
| प्रसूनापचयं कर्तुं निर्गतः चन्द्रलेखया ॥ | १३ |
| विलासविपिनोद्देशे सर्वपुष्पमनोरमे । | |
| आरामे विहरंस्तस्मिन् तत्र तत्र स भार्यया ॥ | १४ |
| सरसीं सत्त्वसम्पन्नां ददर्श विमलोदकाम् । | |
| पद्मखण्डैश्च सम्पूर्णमिन्दीवरवनाकुलम् ॥ | १५ |
| सुगन्धिभिः प्रसूतैश्च पूरितां तटभूरुहाम् । | |
| तन्व्या च सञ्चरंस्तीरे स्निग्धच्छायासमावृते ॥ | १६ |
| चण्डालकन्यकां तन्वीं ददर्श सुमनोहराम् । | |
| इन्दीवरदलक्ष्यामां प्रफुल्लकमलेक्षणाम् ॥ | १७ |
| पीनोन्नतकुचां तन्वीं पूर्णचन्द्रनिभाननाम् । | |
| मूर्तामिवाऽज्ञां मारस्य सुस्निग्धकुटिलालकम् ॥ | १८ |
| तनुमध्यां वरारोहां 'मालिनीं' नाम नामतः । | |
| तां दृष्ट्वा विस्मयाऽऽविष्टश्चिन्तयामास वै द्विजः ॥ | १९ |
| जातेरननुरूपां तां मत्वा द्विजकुमारकः । | |
| 'अत्यद्भुतमिदं रूपं विधिना केन निर्मितम् ॥ | २० |
| मन्ये द्रष्टुमशक्यं वै विधेर्वा रूपमीदृशम् । | |
| अन्धः खलु जगत्स्रष्टा विधाता रूपमीदृशम् ॥ | २१ |

| | |
|---|----|
| यतश्चकार वै व्यर्थमभोग्यमपि मादृशम् । | |
| अथ वा किमु रत्नस्य व्यर्थया जातिचिन्तया ॥ | २२ |
| केनेदमद्भुतं रूपं लभ्यते सुकृतं विना । | |
| अथैनामुपसर्पामि सोऽहं स्पृश्येतरामपि ॥ | २३ |
| चण्डालवाटिकादृष्टं किं रत्नं दुष्यतेऽथ वा ' । | |
| इति सञ्चित्य वै तस्याः समीपमुपजग्मिवान् ॥ | २४ |
| अनुरागवती चास्मिन् विप्रे चण्डालकन्यका । | |
| तयोर्विद्वमभूच्चैतः शितैः मदनसायकैः ॥ | २५ |
| प्रापयित्वा गृहं भार्या चन्द्ररेखां द्विजोत्तमः । | |
| शनैः शनैः समीपं वै तस्याः स्वयमुपागमत् ॥ | २६ |
| अथैनां वरयामास हृष्टो द्विजकुमारकः । | |
| अविचार्य महत्पापं तत्सङ्गमसमुद्भवम् ॥ | २७ |
| ' मा भैषीस्त्वं वरारोहे द्विजोऽयमिति भामिनि ! । | |
| स्त्रीरत्नं दुष्कुलाच्चापि ग्राह्यमित्यनुशासनम् ॥ | २८ |
| अतोऽहं भवतीं याचे वाचा मधुरपूरया । | |
| मम चानुमतिं दातुं त्वया रन्तुमिहार्हसि ' ॥ | २९ |
| इत्युक्त्वा पाणिमस्या वै स्विन्नं जग्राह पाणिना । | |
| सङ्गतः सोऽथ मालिन्या तया द्विजकुमारः ॥ | ३० |
| तदीयमेव मांसादिमाहारं रोचयन् सदा । | |
| सुरामपि पिबिन्नित्यं चिक्रीड चिरमुन्मनाः ॥ | ३१ |
| चिरकाले व्यतीते तु दरिद्रश्चाभवद् द्विजः । | |
| विधाय चौर्यहत्यादिपापानि धनमर्जयन् ॥ | ३२ |
| तच्च तस्यै ददद्वित्तं किञ्चित्कालं निनाय सः । | |
| ततस्तत्राप्यशक्तोऽयं तदीयैश्च निराकृतः ॥ | ३३ |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे षष्ठोऽध्यायः ३३७

| | |
|--|----|
| चचार भुवने भ्रान्तो न वासं प्राप्य कुत्रचित् । | |
| आजगाम चरन् सोऽयं समीपं शेषभूतः ॥ | ३४ |
| आरुरोह गिरिं चापि कथञ्चिद्दीनचेतसा । | |
| तस्मिन्नेव क्षणे तस्य शरीरमभितस्तदा ॥ | ३५ |
| आपादचूडं जज्वाल तदद्भुतमिवाभवत् । | |
| तत्तस्य पापजातञ्च भस्मीभूय क्षणान्तरात् ॥ | ३६ |
| कृत्वा चटचटारावं पतितं धरणीतले । | |
| जाज्वल्यमानो विप्रोऽपि ब्रह्मतेजोभिरञ्जसा ॥ | ३७ |
| राराज विगतैनस्कः शरदीव दिवाकरः । | |
| तं दृष्ट्वा विस्मिताः सर्वे मुनयस्तत्र सङ्गताः ॥ | ३८ |
| पप्रच्छुस्तं महाभागा द्विजपुत्रं महर्षयः । | |
| ‘किमिदं वद विप्रेन्द्र ! न परो विस्मयो महान् ॥ | ३९ |
| आचक्ष्वास्माकमामूलात् वृत्तान्तमिह सर्वतः ’ । | |
| इति तेषां वचः श्रुत्वा माधवो विस्मतो द्विजः ॥ | ४० |
| आदितः प्रभृति प्राह वृत्तान्तं निजमञ्जसा । | |
| तच्छ्रुत्वा मुनयः सर्वे विस्मयं परमं गताः । | |
| ऊचुर्वचनमकिलं वृषशैलाश्रितं महत् ॥ | ४१ |

ऋषयः -

| | |
|---|----|
| अनेन पापजातं वै यस्माद्दग्धं द्विजन्मनः । | |
| ‘वेङ्कटाचरु’ इत्यस्य प्रसिद्धिर्भुवि वर्तताम् ॥ | ४२ |
| “सर्वपापानि वै प्राहुः कटस्तद्वाह उच्यते । | |
| सर्वपापदहो यस्मात् वेङ्कटाचल इत्यभूत्” ॥ | ४३ |

इत्युक्तुं मुनयः सर्वे यथागतमथो ययुः ।
 द्विजोऽपि शान्तचित्तोऽस्मिन् अचले संयतेन्द्रियः ।
 दुश्चरं वै तपः कृत्वा तेन कैवल्यमाप्तवात् ॥ ४४

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये
 भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलनामधेयहेतुवर्णनं
 नाम षष्ठोऽध्यायः ॥

— —
 अथ सप्तमोऽध्यायः

श्रीवेङ्कटेशाराधकचोलराजसुतोत्पत्तिक्रमः

भृगुः —

“ चोलराजसुतः कश्चित्कलौ खलु भविष्यति ।
 ‘चक्रवर्ती’ स शेषाद्रौ वैकुण्ठं हर्षयिष्यति ” ॥ १
 इत्येवं कथितं पूर्वं त्वया मे मुनिसत्तम ! ।
 तन्मपाचक्ष्व विप्रेन्द्र विस्तरेणैव नारद ॥ २
 चोलराजसुतः कोऽयं कुत्र देशे वसिष्यति ? ।
 कथं वा शेषशैलेन्द्रमर्चयिष्यति भक्तिः ? ॥ ३
 तस्य वा कीदृशी भक्तिः भविष्यति रमापतौ ? ।
 न त्वदन्योऽस्ति भूलोके वेदिता भाविनां कश्चित् ।
 मय्यनुग्रहबुद्ध्या त्वं कथयस्व कथामिमाम् ’ ॥ ४

श्रीनारदः —

कलौ चोलनृपः कश्चित् बभूव भुवि विश्रुतः ।
 धार्मिको नीतिशास्त्रज्ञः शशास पृथिवीमिमाम् ॥ ५

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे सप्तमोऽध्यायः ३३९

स कदाचिद्वने रन्तुमाखेटेन महीपतिः ।
किङ्करान् वनपालंश्च व्यादिदेश महामनाः ॥ ६
स्वयं विनिर्ययौ तूर्णं हयमारुह्य रंहसा ।
शेषाचलवनोद्देशे विचचार मृगान्तकः ॥ ७
अश्वानाञ्च गजानाञ्च श्रुत्वा घोरं महारवम् ।
गुहाभ्यः प्रतिनिर्याताः सिंहव्याघ्रमुखा मृगाः ॥ ८
'इतः सिंहा इतो व्याघ्रा इतश्च वनवारणाः' ।
इति निर्दिश्यमानान् वै जघान मृगयूथपान् ॥ ९
सङ्घशश्च वराहाणां यूथानि निशितैः शरैः ।
खड्गान् खड्गेन नृपतिः विव्याध विपिनान्तरे ।
मृगयाऽऽकृष्टचित्तोऽयं विचरन् कानने मुहुः ॥ १०

चोलराजस्य मृगयाविहारकाले नागकन्यकादर्शनादिः

न लेभे विश्रमं राजा यथेन्द्रियवशं गतः ।
ततस्तेन नरेन्द्रेण कन्या काञ्चनरूपिणी ॥ ११
नलिनोत्फुल्लनयना चन्द्रबिम्बनिभानना ।
विश्वविस्मयलावण्या श्यामा पीनपयोधरा ॥ १२
राजहंसी चरन्तीव दृष्ट्वा यौवनशालिनी ।
ततः प्रसूनापचयं कुर्वन्ती सा मनोरमम् ॥ १३
जहार चेतः तस्येयं नदीव पुलिनं जलैः ।
प्रसूनान्यपचिन्वन्त्याः सन्नमथ्यवलित्रयम् ॥ १४
उन्नमत्कुचमालोक्य वपुस्तस्या भृशोत्सुकः ।
न शशाक वनोद्देशात् पदात्पदमपि स्वयम् ॥ १५
चलितुं नृपतिस्तत्र व्याधविद्धो मृगो यथा ।
निर्जितः स्मरबाणेन सोऽयं मर्मसु भेदिता ॥ १६

| | |
|---|----|
| विसृज्य सर्वसैन्यानि तत्समीपं ययौ नृपः । | |
| ततः सा च वरारोहा विलोक्य नृपतिं तदा ॥ | १७ |
| मनोज्ञवेधं सम्प्राप्तं न्यस्तचापमिव स्मरम् । | |
| विद्धा मन्मथबाणेन बभूवाऽऽयतलोचना ॥ | १८ |
| अपचेतुं न पुष्पाणि शक्ता तद्गतमानसा । | |
| मुहुर्विलोकयन्त्येनं राजानं सा मनस्विनी ॥ | १९ |
| करेण पुष्पापचयं दृग्भ्यां राजावलोकनम् । | |
| कुर्वती तन्मनास्तन्वी तथा च स्मरविभ्रमान् ॥ | २० |
| दर्शयन्ती तथा तन्वी नातिक्रान्ता च दृक्पथम् । | |
| ततो राजा समागम्य पृष्ठवान् मञ्जुभाषिणीम् । | |
| कुलं वृत्तञ्च शीलञ्च तस्याः स्वयमनिन्दितम् ॥ | २१ |

राजा ---

| | |
|--|----|
| ‘का त्वं चरसि कल्याणि ! वने विगतभीः कथम् । | |
| पिता को जननी का वा कुत्र वा वसतिस्तव ॥ | २२ |
| परिग्रहोऽसि कस्य त्वं न वा पाणिग्रहस्तव ? । | |
| पाणिग्रहणकालोऽयं वर्तते तव शोभने ॥ | २३ |
| न चेत्परिग्रहोऽन्यस्य वराङ्गि वरये तदा ! | |
| स्वायत्तीकर्तुमात्मानं जीवितञ्च त्वमर्हसि’ ॥ | २४ |

कन्यका ---

| | |
|---|----|
| ‘धनञ्जयाभिधानस्य सर्पराजस्य धीमतः । | |
| पुत्री वसामि पाताले लालिता पितुरन्तिके ॥ | २५ |
| भोगानमानुषांश्चापि भुञ्जाना तत्पसादतः । | |
| क्रीडन्ती च वयस्याभिः पाताले न्यवसं चिरम् ॥ | २६ |

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे सप्तमोऽध्यायः ३४१

पाणिग्रहणकाले वै सम्प्राप्तेऽपि पिता मम ।
चिन्तयामास को वास्या भविता सदृशो वरः ? ॥ २७
पित्रा नानुमता चाहमभिलाषं तव प्रभो ! ।
बन्धुभिश्च ततोऽभीष्टैः नानुमन्तुमिहोत्सहे ॥ २८
पितरं मम पृच्छस्व गत्वा पातालमञ्जसा ।
दास्यत्यनुमतिं नूनं गुणतः शीलतस्तव ॥ २९
विनयं रक्ष कल्याण ! कथञ्चिदपि चानघ ।
चन्द्रोदयविवृद्धोऽब्धिः किं वेलामतिलङ्घ्यते ? ' ॥ ३०

राजा—

‘नायं व्यतिक्रमः सुभूः ! नाधर्मश्चात्र विद्यते ।
गान्धर्वोऽयं विवाहोऽपि मुनिभिः परिकीर्तितः ॥ ३१
परस्परानुरागेण सङ्गता राजकन्यकाः ।
श्रूयन्ते बहवश्चापि न विहातुमिहार्हसि ॥ ३२
अयं विवाहो धर्म्यश्च स्वर्ग्यश्च नलिनेक्षणे ।
अस्मिन्नर्थे विशालाक्षि प्रत्यवायो न विद्यते ॥ ३३
अतस्त्वय्यनुरक्तं मां कृतार्थयितुमर्हसि ।
जीवितं वा सुखं वपि त्वां विहाय न रोचते ’ ॥ ३४
इति ब्रुवति भूपाले कन्या कामवशंवदा ।
लज्जानतमुखी भूमिं लिखन्ती नखरेण सा ॥ ३५
वक्तुकामेव संरब्धा संहता लज्जया मुहुः ।
अङ्गीचकार चोद्वाहं राज्ञा नागस्य कन्यका ॥ ३६
जोषमास्थाय विपुलं मुहूर्तं स्मावतिष्ठते ।
अथानया समागत्य लतामण्डपसंश्रितः ॥ ३७

| | |
|---|----|
| अन्वभूत्सुरतं तस्या भूयो रागविवर्धनम् । | |
| यामवशेषेऽथ दिने गन्तुकामा कृतत्वरा ॥ | ३८ |
| आमन्त्रयामास नृपं कथञ्चिद्विरहाकुला । | |
| नृपश्च दुःखितोऽत्यर्थमाश्लिष्याश्लिष्य भामिनीम् ॥ | ३९ |
| कथञ्चिदनुमन्तुं वै शशाक गमनं तदा । | |
| नृपेणानुमता साऽथ सङ्गमश्रमविह्वला ॥ | ४० |
| निमीलितार्धनयनानिर्गता वरवर्णिनी । | |
| ततः पातालमाविश्य गत्वा च पितुरन्तिकम् ॥ | ४१ |
| चोलराजस्य चरितं कथयामास सर्वतः । | |
| नागराजोऽपि तां श्रुत्वा कथितां कन्यया कथाम् ॥ | ४२ |
| प्रहर्षमतुलं लेभे सदृशोऽयमिति ब्रुवन् । | |
| निर्गत्य नृपतिश्चापि लतामण्डपसंश्रयात् ॥ | ४३ |
| भावयन् विभ्रमांस्तस्या जगाम मृगयंश्चमूम् । | |
| पश्चिमाचलशृङ्गाग्रे लम्बमाने दिवाकरे ॥ | ४४ |
| व्यलोकत महाराजः सेनामनुगतां तदा । | |
| अपरां दिशमासाद्य ह्यन्वरज्यत भास्करः ॥ | ४५ |
| विभ्रती कुङ्कुमारक्तं पयोधरभरं तदा । | |
| बभौ सन्ध्यारुणं व्योम स्फुरत्तारकमण्डलम् ॥ | ४६ |
| प्रवालरक्तो मुक्ताभी रञ्जितो वारिधिर्यथा । | |
| जगाहे जगदण्डान्तस्तिमिरञ्च शनैःशनैः ॥ | ४७ |
| हृदयं विषयासक्तमविद्यातिमिरं तथा । | |
| स च सैन्यान्वितस्तावत् प्रययौ निजमास्पदम् । | |
| स्मारंस्मारं विशालक्षीं सुरतश्रमविह्वलाम् ॥ | ४८ |

चोलराजस्य नागकन्यायां सार्वभौमलक्षणोपेतसुतोत्पत्तिः

| | |
|--|----|
| आपन्नसत्त्वा ददृशे नागराजस्य कन्यका । | |
| सर्वलक्षणसम्पन्ना पितुर्विदधती मुदम् ॥ | ४९ |
| तामथालोक्य दैवज्ञा इदमूचुर्वचस्तदा । | |
| ‘अस्यामुत्पत्त्यते पुत्रः चक्रवर्ती महाद्युतिः ॥ | ५० |
| पृथिवीं सागरोपेतां सशैलवनकाननाम् । | |
| पालयिष्यति धर्मेण महेन्द्रसदृशः प्रभुः ’ ॥ | ५१ |
| अथ सा दशमे मासि पुत्रं प्राप्तुं सुन्दरम् । | |
| सर्वलक्षणसम्पन्नं सार्वभौमपदोचितम् ॥ | ५२ |

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये
चोलराजसुतोत्पत्तिवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः

अथ अष्टमोऽध्यायः

~~~~~

चोलराजसुतस्य पातालात् स्वपितृन्तिके आगमनम्

नारदः --

पुत्रस्य मुखलावण्ये पुत्रिकाया धनञ्जयः ।	
वृषिं न विन्दति स्मायं ग्रीत्युफुलेन चक्षुषा ॥	१
ववृधे नागराजस्य परितोषेण वै शिशुः ।	
चन्द्रमा इव कृष्णान्यपक्षे सति दिने दिने ॥	२
कस्य चित्त्वथ कालस्य पोषितो मातुरन्तिके ।	
पप्रच्छ मातरं बालः ‘पितरं दर्शयेति’ हा ॥	३

तच्छ्रुत्वा पूर्ववृत्तान्तं सा माताऽस्मै न्यवेदयत् ।	
तदाकर्ण्य च बालोऽयं पुनः प्रपच्छ मातरम् ॥	४
‘पितरं वीक्षितुं शीघ्रं क्षोणीतलनिवासिनम् ।	
वर्तते ह्यभिलषो मे महान् मनसि संप्रति ॥	५
भूलोकगमने योग्यं मार्गमावेदयस्व मे ।	
येनाहं पितुरुत्सङ्गं गमिष्यामि मुदाऽन्वितः ’ ॥	६
इति तस्य वचः श्रुत्वा प्रहृष्टा नागकन्यका ।	
भूलोकगमने योग्यं बिलञ्चादर्शयत्तदा ॥	७
सोऽपि तेनैव मार्गेण प्राप्याऽऽशु धरणीतलम् ।	
चोलराजमुपागम्य ववन्दे पादयोस्तदा ॥	८
प्रपच्छ प्रणतं भूमौ ‘कस्त्वम् ?’ इत्यवनीपतिः ।	
पृष्ठः प्राह स बालोऽयं वृत्तान्तमखिलं मुने ! ॥	९
वृत्तान्तमखिलं राजा श्रुत्वा तु तदुदीरितम् ।	
ग्रहणे बालकस्यास्य संशयं परमं ययौ ॥	१०
संशयाविष्टचित्तोऽयं जोषमास्थाय भूपतिः ।	
मुहूर्तमिव भूयोऽपि तमेवालोकयन् स्थितः ॥	११

### चोलराजसुतस्याशीर्युक्त्या पितृकृतगज्याभिषेकक्रमः

ततश्चाकाशगा वाणी नृपं संशयितं मुहुः ।	
आश्वासयन्ती वचनैः उच्चचार न वीक्षिता ॥	१२
‘मा विचारय राजेन्द्र ! पुत्रोऽयं ते न संशयः ।	
चक्रवर्ती महाराजो भविष्यत्यसमो भुवि ॥	१३
अतीव विष्णुभक्तश्च भविष्यति महामतिः ।	
शेषाद्रौ च स्वयं व्यक्तं विष्णुमभ्यर्चयिष्यति ॥	१४



श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे अष्टमोऽध्यायः ३४५

प्रीतश्चापि महादेवो ह्यर्च्यभावमतिक्रमन् ।  
सल्लापं तेन सुचिरं करिष्यति दिने दिने ॥ १५  
अभिषेचय राजेन्द्र ! पुत्रं राज्येऽविचारतः ।  
इति राजा समाकर्ण्य नानृतं सुरभाषितम् ॥ १६  
श्रद्धे पुत्रमित्येनं जयन्तं वासवो यथा ।  
ततो राजा समागम्य संवृत्तो यत्न सङ्गमः ॥ १७  
आत्मनस्तस्य मानुश्च तं देशं सुमनोरमम् ।  
तत्र निर्माय विपुलं पुरं पुत्रस्य नामतः ॥ १८  
तत्राभ्यषेचयच्चैनमाधिराज्ये समागतः ।  
ततः स 'चक्रवर्ती' ति प्रथितो भुवि पार्थिवः ।  
शशास पृथिवीं कृत्स्नां समुद्रवसनान्विताम् ॥ १९

चक्रवर्तिनं प्रति गोपालनिवेदितवेङ्कटाचलवल्मीकोदन्तः

ततः कदाचित् गोपालाः तदाज्ञापरिपालकाः ।  
समागम्य महीपालमिदं वचनमब्रुवन् ॥ २०

गोपालाः —

'शेषाचले वयं राजन् ! विहरामो गवां व्रजात् ।  
क्षीरं निदेशाद्देवस्य भाण्डेषु निहितं सदा ॥ २१  
तदानयनकाले वै दृश्यते महद्भुतम् ।  
विवृद्धं तत्र वल्मीकमेकं वसति भूधरे ॥ २२  
आगच्छामो हि मार्गेण वयं तेन महीपते ! ।  
आदाय भाण्डं क्षीराणां सर्वं तत्र हि भज्यते ॥ २३  
सावधाना अपि वयं न पश्यामोऽत्र कारणम् ।  
विचारय महीपाल ! किमेतदिति सम्प्रति ' ॥ २४

राजा दैविकमेवेति स निश्चित्य सुविस्मितः । सायं ध्यायन् हृषीकेशं तद्गतेनान्तरात्मना ॥	२५
शुचिर्भूतश्च सुष्वाप यतवाकायमानसः । ददर्श स्वप्नमेकञ्च नृपस्तस्मिन्निशान्तरे ॥	२६
चक्रवर्तिनो भगवत्प्रकाशितस्वप्नदर्शनम् प्रातरुत्थाय विधिवत् संध्यामन्वास्य भूपतिः । आहूय मन्त्रिप्रवरानिदं वचनमब्रवीत् ॥	२७

राजा—

‘मन्त्रिणः शृणुतास्यां वै निशायां स्वप्नमद्भुतम् । अदृष्टपूर्वञ्चान्येन गुह्याद्गुह्यतरं महत् ॥	२८
कालमेघनिभः कश्चिदतिसुन्दरमूर्तिमान् । अद्भुतः पुरुषो दृष्टः पुण्डरीकयतेक्षणः ॥	२९
अपृच्छं पुरुषं चाहं ‘कुत्रत्यः को भवा’ निति । किमर्थं चागतोऽस्यद्य तव किं करवाण्यहम्? ॥’	३०
इति पृष्टो मया प्राह “देवेन गिरिवासिना । प्रेषितोऽहं नरव्याघ्र ! श्रीनिवासेन धीमता ॥	३१
अहं वसामि शेषाद्रेः सदा तस्यान्तिके मुदा । ‘श्रीवेङ्कटगिरिरस्य प्रभावं तु महाद्भुतम् ॥	३२
निवेदये’ति देवेन प्रेषितोऽस्मि तवान्तिकम् । शिलोच्चयेऽत्र वै शङ्खचक्रावनतहस्तकः ॥	३३
श्रीभूमिसहितो नित्यं विहरन् राजतेतराम् । अद्रेर्दक्षिणतस्तस्य राजधानी विराजते ॥	३४
गजवाजिरथोपेता सर्वादभुतमयी सदा । तस्मिन् गिरौ त्रयस्त्रिंशत्कोटिसङ्ख्याश्च देवताः ॥	३५

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे अष्टमोऽध्यायः ३४७

सर्वे महर्षयश्चापि सिद्धा योगिवरास्तथा । वसन्ति सर्वतीर्थानि तस्मिन् गिरिवरे शुभे ॥	३६
अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा । प्राप्तिः प्राक्काम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्टभूतयः ॥	३७
तस्याद्रेः पूर्वभागे वै चरन्ति विपुलं तपः । पूर्वस्यां दिशि तस्याद्रेः ' काल्हस्ती ' ति विश्रुतम् ॥	३८
पुरे तस्मिन् महादेवो वसति स्वयमादरात् । काल्हस्त्युत्तरे भागे सुवर्णमुखरी नदी ॥	३९
सर्वपापप्रशमनी दृश्यते मुनिसेविता । शुकादयो मुनिवरा तस्यास्तीरे यतेन्द्रियाः ॥	४०
शेषशैलेशमुद्दिश्य तपस्तप्यन्ति दारुणम् । तस्याद्रेः परितः सप्तयोजनान्तःस्थिता जनाः ॥	४१
सर्वपापविनिर्मुक्ता विष्णुलोकं प्रयान्ति वै । अष्टाणं मनुराजं तं जप्त्वा तु विमुक्त प्रभो ! ॥	४२
तं द्रष्टुं देवदेवेशं द्रष्टुं सन्न च शोभनम् । एहि शेषाचलं शीघ्रम् ' इत्यमाहूतवान् स माम् ॥	४३
अथ तेनैव पुंसाऽहं शेषाचलमुपागमम् । व्योमान्तर्विततोदारशृङ्गान्तः स्तम्भितद्रुमम् ॥	४४
तत्र गत्वा स पुरुषो ज्वलत्काञ्चनशोभितम् । दिव्यं प्रदर्शयामास विमानं रत्नशोभितम् ॥	४५
स्वयमन्तर्दधे सोऽयं पश्यतो मम पूरुषः । अन्तर्दधे विमानञ्च तस्मिन्नेव क्षणान्तरे ॥ ' ४६	
इति स्वप्नो मया दृष्टो ह्यद्भुतो रोमहर्षणः । अदृष्टपूर्वश्चान्येन किमेतदिति चिन्त्यताम् ॥	४७

मन्त्रिणः—

‘देवेन त्वयि कारुण्यात् दर्शितं राजसत्तम ! ।  
 स वल्मीकस्थान एव देवस्तिष्ठत्यसंशयम् ॥ ४८  
 क्षीरमाण्डञ्च गोपाला भग्नमावेदयंस्तव ।  
 गोपालैः यत्समादिष्टं वल्मीकस्थानमुत्तमम् ।  
 तत्र क्षीराभिषेकेण देवो व्यक्तिं गमिष्यति ’ ॥ ४९

**नृपनिकटं प्रति शेषाचलोदन्तज्ञापनाय शबरगगनम्**

इति सञ्चिन्त्यमाने वै शबरः कश्चिदाययौ ।  
 कालमेघनिभो धन्वी खङ्गतूणीरभूषितः ॥ ५०  
 बर्हिपिच्छान्वितशिरा लतापल्लवभूषितः ।  
 तूर्णमागत्य राजानं प्रणम्य शिरसा ततः ॥ ५१  
 व्यजिज्ञपच्च राजानं प्रणतः प्राञ्जलिः स्थितः ।  
 ‘स्वामिन्! वसामि शेषाद्रौ प्रियङ्गुकृषिमाचरन् ॥ ५२  
 तेन जीवामि सततं सपुत्रः सहबान्धवः ।  
 कश्चिच्छ्रेतो वराहो वै तत्राऽऽगत्य दिने दिने ॥ ५३  
 प्रियङ्गुं भक्षयत्येव निःशेषं मिषताञ्च नः ।  
 तदर्थं रक्षणे तस्य नियुज्य मम पुत्रकम् ॥ ५४  
 प्रियं प्रियङ्गुं देवाय निवेदयितुमुद्यतः ।  
 मध्वर्थमगमं सोऽहं सुदूरं तत्र पर्वते ॥ ५५  
 तस्मिन्नवसरे पुत्रः प्रियङ्गुं लोलुपः करे ।  
 सम्मर्द्य भक्षयित्वाऽऽस्ते तदपश्यं समागतः ॥ ५६  
 देवानिवेदिते प्रीतिर्मम नासीत् कदाचन ।  
 ततः क्रुद्धो रुदन्तं वै पुत्रं हन्तुं समुद्यतः ॥ ५७

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे नवमोऽध्यायः ३४९

तदा ह्याकाशगा वाणी मामवोचत् सुदारुणम् ।  
'मा वधीः पुत्रमेनं वै प्रियङ्गुमनिवेदितम् ॥ ५८  
देवः स्वीकृतवानेव त्वद्रूतेनैव तोषितः ।  
चक्रवर्तिसमीपञ्च गत्वा स्वप्नञ्च दर्शितम् ॥ ५९  
अभिज्ञानतया चोक्त्वा तमागच्छेति वै वद' ।  
इति तेन समाख्यातं वाचा व्योमगया तदा ॥ ६०  
वचः श्रुत्वा विचार्याथ 'किमेत' दिति मन्त्रिभिः ।  
राजाऽथ गोपवाक्यञ्च स्वप्नं शबरभाषितम् ॥ ६१  
एकीकृत्य सहानेन निर्ययौ शबरेण सः ।  
आदिश्य मन्त्रिणश्चैव गोसहस्रभवं भुवि ।  
क्षीरमानयतेत्येतत् शेषाचलतटं ययौ ॥ ६२

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
चोलराजस्वप्नवृत्तान्तवर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः

अथ नवमोऽध्यायः

चक्रवर्तिनः शबरेण सह वराहदर्शनार्थं शेषाचलगमनम्

नारदः—

निर्गत्य राजा शबरेण सार्धं प्रियं प्रियङ्गुं प्रति भक्षयन्तम् ।  
श्वेतं वराहं शबरोपदिष्टं दिव्यं विमानञ्च दिदृक्षुरत्न ॥ १  
विलोक्यन् श्वेतवराहमेकं प्रियङ्गुसस्यं किल भक्षयन्तम् ।  
गर्जन्तमायान्तमितस्ततोऽपि घोणारवं भीमपराक्रमञ्च ॥ २

दिव्यं विमानञ्च ददर्श तत्र नृपस्तदा रत्नविभूषितं तत् ।  
 अनेकसाहस्ररविप्रकाशं स्वप्नेऽद्भुतं दृष्टमदृष्टपूर्वम् ॥ ३  
 ततो वराहः सहसा प्रियङ्गुं व्याधस्य दृष्टः तमथोपभुज्य ।  
 दृग्गोचरं तस्य समीपजातं वल्मीकमेष प्रविवेश भूयः ॥ ४  
 न तद्विमानञ्च ददर्श भूयः तस्मिन् क्षणे विस्मितचित्त एषः ।  
 पप्रच्छ तं शाबरमेव 'तस्य हेतुं वद' स्वेति स राजपुत्रः ॥ ५

चक्रवर्तिकृतक्षीराभिषेकेण वल्मीकात् श्रीनिवासाविर्भावः

स शाबरस्तस्य च तेन हेतुं तत्त्वेन पृष्टः स जगाद तस्मै ।  
 'अयं वराहो न वराहमालं देवः स्वयं यो धरणीं बभार ॥ ६  
 इदं विमानञ्च तदीयमेव दिव्यं त्वया दृष्टमदृष्टपूर्वम् ।  
 वासोऽस्य वल्मीकमिदं महात्मन्! महत्तरं नूनमितस्तु हेतोः ॥ ७  
 वल्मीकतोऽस्माच्च विनिर्गतोऽसौ भूयोऽपि तत्रैव विलीन आस्ते ।  
 अतोऽत्र राजन्! निशितैः खनित्रैः वल्मीकमेतत् प्रविदार्य सद्यः ॥ ८  
 विलोक्यतां नूनमिहैव देवो वसिष्यतीति प्रतिभाति मेऽद्य ।  
 श्रुत्वा च तत् शबरवाक्यमेष वल्मीकमेतत् न बिभेद भीतः ॥ ९  
 अथाभ्यषिञ्चत् स तमेव भक्त्या गोपाहतैः क्षीरघटैरनेकैः ।  
 स तत्र वाचां मनसामभूमिं ददर्श रत्नोज्ज्वलमद्भुतञ्च ।  
 दिव्यं विमानोत्तममाशु दृष्ट्वा हृष्टश्च मूर्ध्ना प्रणनाम भूयः ॥ १०  
 तन्मध्येऽसौ "नीलजीमूतकल्पं पाद्मवासं संश्रितत्राणहेतुम् ।  
 श्रीवत्साङ्गं पुण्डरीकायताक्षं शङ्खं चक्रं धारयन्तं कराभ्याम् ॥ ११  
 दातारं तं पाणिना वै वराणामन्येनाङ्गं विभ्रतं आजमानम् ।  
 पीतं वस्त्रं बिभ्रतं राजमानं कोटिरान्तप्रोतरत्नोपशोभम् ।  
 शान्ताकारं शाश्वतं श्रीनिवासं सेव्यं देवैः " वासुदेवं ददर्श ॥ १२

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे नवमोऽध्यायः

३५१

स राजपुत्रो दृष्ट्वाऽथ देवेशं भक्तवत्सलम् ।

प्रादुर्भूतं प्रणम्यैव तुष्टाव स्तुतिभिः स्वयम् ॥

१३

चक्रवर्तिकृत् श्रीनिवासस्तुतिः

राजपुत्रः—

“ब्रह्मा रुद्रो वासवो ये च साध्या विश्वेदेवा मरुतः सप्त पूर्वे ।

एते चान्ये देवमुख्या नियोगं पश्यन्तस्ते विष्टपान् वर्तयन्ते ॥ १४

नाकारं वा रूपमत्यद्भुतं ते पश्यन्त्येते योगिमुख्याः पुराणाः ।

इत्थं भूते मादृशाऽनुग्रहार्थं प्रत्यक्षं ते रूपमेतद्बभूव ॥ १५

होतव्यं त्वं पावकान्तस्तु होत्रं होता च त्वं पावकोऽपि त्वमेव ।

उद्देशस्त्वं सिद्धिरस्य त्वमेव त्वत्तः किञ्चिन्नान्यदत्रास्ति देव ! ॥ १६

सदैवैकस्त्वं परं ब्रह्म पूर्वं यस्मान्नान्यं प्रादुरेतत्प्रपञ्चम् ।

यत्सङ्कल्पात् प्राकृतः सर्व आदौ यच्चान्तःस्थं शासि सर्वात्मनेमम् ॥ १७

न ब्रह्माऽसीत् पूर्वमीशो न चाऽसीत् नेमे व्यासे रोदसी वाऽप्यभूताम् ।

एकस्त्वं वै जागरूकस्तु शेषे शेषे तल्पे चारु सृष्ट्वा तदाऽऽपः ॥ १८

नो लोकस्त्वां वेद वेत्थ त्वमेनं नाऽदिर्मध्यं विद्यते तेऽथवान्तः ।

सत्यं रूपं ते श्रुतिः कीर्तयन्ती ज्ञानाकारं यत्तदेतन्नमामि ॥ १९

कालोऽसि त्वं लोकसंहारहेतुः सृष्ट्वा चादौ रक्षकश्च त्वमेव ।

संहार्यस्त्वं सृज्यवस्तु त्वमेव प्रायो रक्ष्यं त्वं हि कर्ता च कर्म ॥ २०

त्वं यज्ञो दीक्षितस्त्वच्च स्वाहाऽसौ त्वं हुताशनः ।

त्वया व्यासमिमं लोकमनुव्यासा रमा तव ॥

२१

सोऽहं त्वां शरणं प्राप्तः पद्मासखमजं विभुम् ।

शेषिणं सर्वजगतां प्रणतार्तिहरं शुभम् ॥ ”

२२

श्रीनिवासस्य चक्रवर्तिप्रार्थनया सर्वजनदृश्यत्वाभ्युपगमः

स्तुत्वेति भूपः प्रणतः पृथिव्यां तुष्टाव भूयः प्रणनाम भूयः ।

अथास्य भक्तिं स विलोक्य देवो नृपात्मजं प्रीतमना जगाद ।

गुहासु बद्धैः प्रतिशब्दजातैः मुहुस्तिरस्कृत्य पयोधिघोषम् ॥ २३

श्रीभगवान्—

‘प्रीतोऽस्मि राजेन्द्र ! परं तवाहं भक्त्याऽनया चान्यसुदुर्लभञ्च ।

वरं वृणीष्वद्य यदिच्छसि त्वं दास्यामि सर्वं तव मा विषादः’ ॥ २४

राजपुत्रः—

‘यत्तद्रूपं दुर्लभं योगिवर्यैः रम्यं भूयादीदृशं सर्वदृश्यम् ।

अत्रैव त्वं सर्वदा वासमीयाः सर्वेषां वै मानवानां हिताय’ ॥ २५

‘ओ’ मित्युक्त्वाऽथापरं प्राह वाक्यं ‘मद्भक्तस्त्वं नास्ति तुल्यस्त्वयाऽन्यः ।

संतुष्टोऽहं मत्सखित्वं प्रदास्ये वेत्थ त्वं मां सुहृदं भक्तवश्यम्’ ॥ २६

इत्युचिवान् माधवो राजपुत्रं भूयः प्राहास्मै स्मेरवक्त्रारविन्दः ।

‘सेवां राजन् अन्वहं मे त्विसन्ध्यं कर्तुं भूयः शासनान्मेऽर्हसि त्वम्’ ॥ २७

एतच्छ्रुत्वा राजपुत्रः स धीमान् सेवां नित्यं नो जहौ प्रीतचित्तः ।

सेवां कुर्वन् वेङ्कटेशस्य राजा तस्मिन् वासं पत्तने स्म प्रयाति ॥ २८

सेवाकालेषु तस्यायं राज्ञो वै भक्तवत्सलः ।

अर्चामावमतिक्रम्य हितार्थानप्युपादिशत् ॥ २९

श्री श्रीनिवासमहोत्सवसेवार्थं ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्

स कदाचित् ध्वजारोहमहोत्सवमतन्द्रितः ।

अकारयच्च धर्मेण कन्यां याति दिवाकरे ॥ ३०

ध्वजं निर्माय विधिवत् गरुडाधिष्ठितं शुभम् ।

आरोपयत् समभ्यर्च्य ध्वजस्तम्भमनुत्तमम् ॥ ३१



श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे नवमोऽध्यायः ३५३

ब्रह्माणमीशं सगणं शतक्रतुं ये चैवान्ये सन्ति दिक्पालमुख्याः ।  
तानञ्जसा मन्त्रवर्यैः द्विजाश्च सेवार्थं वै स्वैरमाहूतवन्तः ॥ ३२  
ततो हंसं समारुह्य प्राञ्जलिः कमलासनः ।  
आगतो मुनिभिः सार्धं काङ्क्षन् सेवां रमापतेः ॥ ३३  
शङ्करोऽपि वृषारूढः सेवार्थं गिरिजान्वितः ।  
प्रमथाद्यैः पारिषदैरन्वितः प्रययौ मुदा ॥ ३४  
इन्द्रोऽपि सान्द्रसिन्दूरप्रस्फुरत्कुम्भमण्डलम् ।  
आरुह्यैरावतं नागं द्रष्टुं यात्रोत्सवं ययौ ॥ ३५  
अन्ये चापि दिशापालाः स्वं स्वं वाहनमास्थिताः ।  
शेषाचलतटीदेशमगमन् आहतोत्सवाः ॥ ३६  
नारदोऽपि हरिनामसहस्रं कलयन् विमृशन्महतीञ्च मुहुः ।  
आययौ हृदि च भास्वरभूतं कलयन् विवृणन्निगमादिमपि ॥ ३७  
अथाययुर्द्रष्टुकामा महान्तं क्षोणीपालाः प्राणिनः सर्वे एव ।  
पुत्रं नेतुं प्रार्थयानाश्च भूयो नानादिग्भ्यो नम्रशीर्षाः तदानीम् ॥ ३८  
तस्य चोत्सवयात्रायां शेषाचलपतेस्तदा ।  
वेङ्कटेशं प्रार्थयन्तो नानादिग्भ्यः समागताः ॥ ३९  
किङ्कराश्चैव गायन्ति कीर्तिं तस्य महात्मनः ।  
इत्थं प्रववृधे तस्य दिव्यः शौरिर्महोत्सवः ॥ ४०  
अदृष्टपूर्वः सर्वेषां विस्मयं व्यतनोत् भृशम् ।  
पङ्क्तवो जवना आसन्, काणा वै दूरदर्शनाः ।  
बभूवुः बाष्मिनो मूका जनास्तस्मिन् महोत्सवे ॥ ४१  
तदाप्रभृति यस्मिन् वै वर्षे वर्षे महोत्सवे ।  
नमस्यति हरिं तत्र स वृद्धिं यास्यति ध्रुवम् ॥ ४२

तस्य चोत्सवयात्रायां शेषाचलपतेस्तदा ।  
पयोदा विरजीचक्रुः प्रतोलीर्वासवाऽऽज्ञया ॥ ४३

### श्री श्रीनिवासस्य रथोत्सवावभृथोत्सवप्रकारः

सौवर्णं कल्पयामास रथं रत्नपरिष्कृतम् ।  
तस्मिन् रथवरे रम्ये दीव्यति स्माष्टमे दिने ॥ ४४  
अथाष्टसु व्यतीतेषु दिवसेषु महोत्सवे ।  
श्रवणे विष्णुनक्षत्रे मुहूर्ते तु शुभे तदा ॥ ४५  
चक्रं भगवताऽऽज्ञप्तं स्वामिपुष्करिणीजले ।  
चकारावभृथस्नानं मखेऽस्मिंश्च समापिते ॥ ४६  
अथास्यां विधिवद्रात्रौ ध्वजस्याप्यवरोहणम् ।  
चक्रुर्विप्रवरास्तत्र महानैवेद्यमेव च ॥ ४७  
अथान्यस्मिन् दिने देवमानर्चं विधिवत्तदा ।  
प्रसूनैर्विदिधैश्चापि सुगन्धैः सुमनोहरैः ॥ ४८  
हरिर्विसर्जयामास देवान् सेवार्थमागतान् ।  
ब्रह्मरुद्रपुरोगांश्च प्रणम्रशिरसस्तदा ॥ ४९  
इत्थं स राजा वृषशैलभर्तुः महोत्सवं दिव्यमिमं समाप्य ।  
हृष्टः कृतार्थं बहुमन्यमानो ह्यात्मानमावासमियाय भूयः ॥ ५०

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
श्री श्रीनिवासाविर्भावादिवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ।

अथ दशमोऽध्यायः

— : \* : —

चक्रवर्तिसमीपागतकृष्णशर्माख्यविप्रोदन्तः

नारदः—

उत्सवान्ते द्विजः कश्चित् आजगाम तदन्तिकम् ।

भार्यया सहितश्चैव तदैवाचिरसूतया ॥

१

द्विजं तमागतं राजा पाद्यार्ध्यासनवन्दनैः ।

अभिपूज्य यथान्यायं दृष्ट्वा कुशलमब्रवीत् ॥

२

राजाः—

‘कस्ते देशो द्विजश्रेष्ठ ! किमर्थमित आगतः ।

वदस्व किमहं वा ते करवाणि निदेशकृत् ? ’ ॥

३

विप्रः—

‘दक्षिणाम्बोनिधेस्तीरे श्रुता चन्द्रपुरी शुभा ।

तस्यां वसति धर्मज्ञः कूर्मो नाम द्विजोत्तमः ॥

४

तस्याहं वै सुतो राजन् कृष्णशर्मति विश्रुतः ।

भार्या सुधर्मिणी नाम्ना ममेयं पुत्त्रिणी शुभा ॥

५

काशीक्षेत्रमहं द्रष्टुं प्रयास्ये मुक्तिसाधनम् ।

अस्याः शिशुस्त्रिमासोऽयं दुर्बला चैव भामिनी ॥

६

प्रवासायोग्यतामस्या दुर्बलायाश्च मन्त्रयन् ।

त्वत्सक्त्रमहं राजन् ! सम्प्राप्तस्त्वं हि रक्षिता ॥

७

विलोक्य काशीमायास्ये सेयं तावन्मनस्विनी ।

समीपे तव राजेन्द्र ! वासं यात्विति मे मतिः ’ ॥

८

‘ओ’ मित्युक्तोऽथ भूपेन त्यक्त्वा भार्या सुतान्विताम् ।

आमन्त्र्य च महीपालं ययौ काशीं प्रति द्विजः ॥

९

राजा च तस्या वासार्थं गृहमेकं प्रकल्प्य सः । धान्यं षण्मासपर्याप्तं दापयामास च स्वयम् ॥	१०
‘ न निर्गच्छ गृहा ’ चेति शशास द्विजभामिनीम् । स्वव्यापारे स्थितो राजा नैव सस्मार तां ततः ॥	११
कृष्णशर्मा ततो विप्रो गत्वा प्रस्थानमुत्तमम् । पुनरागत्य भूपालमिदं वचनमब्रवीत् ॥	१२

कृष्णशर्मा :—

‘ आगतः कृष्णशर्माऽहं गङ्गां दृष्ट्वा सुशोभनाम् । न्यस्ता तवान्तिके भार्या दीयतां विरहातुरा ’ ॥	१३
इत्युक्तो भूपतिस्तेन चिन्तयामास दुःखितः । ‘ अहो ! मया प्रमत्तेन विषयाऽऽसक्तचेतसा ॥	१४
न चिन्तिता महाभागा भामिनी तु द्विजन्मनः । धान्यं षण्मासपर्याप्तं दत्तमस्यै पुरा मया ॥	१५
स कालस्तु व्यतीतोऽद्य किं करोतु द्विजन्मजा । गृहान्निर्गमनं चास्याः प्रतिषिद्धं मया तदा ॥ ’	१६
इत्थं सञ्चिन्त्य राजाऽसौ प्रेषयामास पूरुषम् । द्रष्टुं स्वनिर्मिते गेहे सपुत्रां द्विजभामिनीम् ॥	१७
स विलोक्यागतस्तूर्णं राजानं तं व्यजिज्ञपत् । ‘ शिशुना सह भार्याऽस्य कालधर्ममुपागता ॥	१८
शरीरे चानयोः शुष्के वर्तेते चिरकालतः ।’ इति तस्य वचः श्रुत्वा स राजा भृशदुःखितः ॥	१९
द्विजमाहूय सम्भ्रान्तमिदं वचनमब्रवीत् ।	

राजा :—

‘ तव भार्या द्विजश्रेष्ठ ! मामनुज्ञाप्य भामिनी ॥	२०
--------------------------------------------------	----

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे दशमोऽध्यायः ३५७

देवदेवस्य सेवार्थमिदानीमेव निर्गता ।  
 श्व आनेष्यामि भद्रं ते गतां सेवार्थमञ्जसा ॥ २१  
 दिनमेकं च विश्रम्य ततो यास्यसि भार्यया ।'  
 इत्युक्त्वाऽथ द्विजश्रेष्ठ नृपः शङ्कितमानसः ॥ २२  
 गृहान्निर्गत्य शेषाद्रिमारुरोह क्षणान्तरात् ।  
 देवस्यावसरं वीक्ष्य प्राञ्जलिः प्रयतः स्थितः ॥ २३  
 स मुहूर्तं विनिश्चस्य सखेदं च व्यजिज्ञपत् ।  
 " स्वामिन्! विज्ञापनामद्य शृणुष्वैकमना मम ॥ २४  
 सोऽहं हि भवता रक्ष्यः शरणं गत इत्यपि ।  
 अप्रबुद्धेन मत्तेन मया वै दुष्कृतं कृतम् ॥ २५  
 न्यासीकृतां महाभागां द्विजवर्येण धीमता ।  
 न व्यचारयमासक्तो विषयेषु यशस्विनीम् ॥ २६  
 इदानीमागते विप्रे पूर्ववृत्तमनुस्मरन् ।  
 किमेतदिति भीतोऽहं तदुदन्तं विचारयन् ॥ २७  
 श्रुत्वा मृतां निराहारां सपुत्रां शुष्कदेहिनीम् ।  
 परं निर्विण्णचित्तोऽहमवदं द्विजमग्रतः ॥ २८  
 गता सा देवसेवार्थं श्व आनेष्यामि तां प्रियाम् ।  
 सपुत्रां तव भार्या वै मा भैषीद्विजसत्तम ! ॥ २९  
 भविष्यति कथं चेति भृशं चिन्तामुपागतः ।  
 त्वामेव शरणं देव ! प्रणतार्तिहरं गतः ॥ ३०  
 यथा पापं न विन्देयं चरितार्थो यथा द्विजः ।  
 देवदेव ! तथा कर्तुं शक्तो नान्यस्त्वया विना ॥ ३१  
 त्वाहि मां शरणं प्राप्तमितस्त्वं दुःखसागरात् ।  
 गतिस्त्वमेव चास्माकं नान्योऽस्ति जगतीपते ॥" ३२

इति प्रणम्य देवेशं स्थितस्तूर्ण्णीं नृपोत्तमः ।  
सान्त्वयन् मधुरैर्वाक्यैः उवाच मधुसूदनः ॥ ३३

श्रीभगवान् -

‘ मा ते व्यथा भूद्राजर्षे ! मा भैषीस्त्वं कदाचन ।  
तवोपायमहं वक्ष्ये द्विजभार्याप्रजीवने ॥ ३४  
विप्रः कार्शीं प्रयास्यन्मां दृष्ट्वाऽनुज्ञाप्य वै गतः ।  
सुधर्मिणी च मद्भक्ता साध्वी मद्गतमानसा ॥ ३५  
ततस्तदीया प्राणा वै यमाय किल नार्पिताः ।  
शरीरे मम राजेन्द्र ! स्थापितास्तु प्रियासवः ’ ॥ ३६  
इत्युक्त्वाऽऽश्वास्य भूपालं विष्वक्सेनमभाषत ।  
प्राञ्जलिं विनयानम्रं वेत्तपाणिं पुरःस्थितम् ।  
“ विष्वक्सेन ! महाभाग मदीयाज्ञामिमां शृणु ॥ ३७

### अस्थिकूटाभिधसरोवरमाहात्म्यम्

इत ईशानदिग्भागे त्वस्थिकूटाभिधं शुभम् ।  
तीर्थमस्ति ततस्तोयं समाहृत्य सुपावनम् ॥ ३८  
सुधर्मिण्याः सुतस्यापि शरीरमभिषेचय ।  
सपुत्रा सा प्रसुप्तेव तत उत्थास्यति ध्रुवम् ॥ ” ३९  
विष्वक्सेनस्तथेत्युक्त्वा तोयमाहृत्य तीर्थतः ।  
सुधर्मिण्याः शरीरं तदभ्यषिञ्चत्सुतस्य च ॥ ४०  
उत्थिता ससुता साध्वी द्विजभार्या सुधर्मिणी ।  
अथ राजानमाहूय प्रोवाच मधुसूदनः ॥ ४१  
‘ दृष्टो गिरिवरस्यायं महिमा भवतानघ ! ।  
प्रभावमचलस्यास्य सनकाद्याश्च योगिनः ॥ ४२

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे दशमोऽध्यायः ३५९

ब्रह्माद्याः सकला देवा न जानन्ति यथा मम ।  
यद्यदिच्छति वै जन्तुर्मनसाऽभीप्सितं नृप ! ॥ ४३  
तथा सिद्धयति तत्सर्वं गिरिरस्य प्रभावतः ।  
अथ विप्रं समाहूय भार्या चास्य सुधर्मिणीम् ॥ ४४  
द्विजभार्यामथापृच्छत् 'वद ते किमभीप्सितम् ?' ।  
सा तथोक्ता तु देवेन वरयामास माधवम् ॥ ४५  
'त्वद्वक्तिश्च दृढा चास्तु मम देवेश ! नित्यशः' ।  
एवं संप्रार्थितो देवो ददौ तस्या अभीप्सितम् ॥ ४६  
ततो विधिशिवाद्याश्च सनकाद्याश्च योगिनः ।  
वृषाद्रिमगमन् सर्वे द्रष्टुकामास्तद्भुतम् ॥ ४७  
कृष्णशर्मा च सन्तुष्टो विस्मितश्च महामुने ।  
प्रणम्य स्तोत्रयामास देवदेवं रमापतिम् ॥ ४८  
देवदेवो नृपं प्राह न चास्य सदृशो भुवि ।  
विप्रस्य मयि भक्तस्य तथैव नियतात्मनः ॥ ४९  
असौ जन्मान्तरे राजंस्त्रयन्तार्थप्रवर्तकः ।  
भविष्यति तदन्ते च मत्सायुज्यमवाप्स्यति ॥ ५०  
राजा च विप्रमाहूय सभार्यं पुरुषर्षभम् ।  
स्वाऽऽवासं प्रेषयामास प्रहृष्टेनान्तरात्मना ॥ ५१  
तदनु च नृपतिर्वृषाचलं तं स्वयमधिगम्य दिने दिने महात्मा ।  
विरचितदृढभक्तिरस्य कुर्वन् विविधमनोरथकिङ्करत्वमासीत् ॥ ५२  
कथितं भाविवृत्तान्तं देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।  
अर्चितश्च कलौ भक्तैरद्भुतानि प्रदर्शयन् ॥ ५३  
विहरन् रमया चैव साकं तत्र महीधरे ।  
वसिष्यति च हृष्टात्मा सुरसिद्धनिषेवितः ॥ ५४

इत्येवं भृगवे तस्मै कथयामास नारदः ।

वेङ्कटाचलमाहात्म्यं परं व्यासेन कीर्तितम् ॥ ५५

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
अस्थिकूटतीर्थमाहात्म्यवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ।

अथ एकादशोऽध्यायः

सिंहादाख्यासुरवृत्तान्तः

भृगुः—

‘नमो नमस्ते देवर्षे ! सर्वज्ञ करुणानिधे ।  
वेङ्कटाचलमाहात्म्यं भूतं भावि च मे श्रुतम् ॥ १  
केनाकारेण भगवान् आकल्पं निवसिष्यति ।  
किं करिष्यति वा देवः श्रीमान्वेङ्कटनायकः ? ॥ २  
एतत्सर्वं सङ्गृहेण ब्रूहि मे मुनिसत्तम ! ।  
यस्य श्रवणमात्रेण श्रोतव्यं नावशिष्यते ’ ॥ ३

नारदः—

श्रूयतामिदमाख्यास्ये चरितं वेङ्कटेशितुः ।  
सम्भाषितमगस्त्येन भाविवृत्ते प्रसङ्गतः ॥ ४  
चक्रवर्ती च भूपालः शासिष्यति वसुन्धराम् ।  
भविष्यति तदा दैत्यः सिंहादो नाम वीर्यवान् ॥ ५  
स दुरात्मा तपस्तेपे निध्यायन् परमेष्ठिनम् ।  
उत्तरे पापनाशस्य सार्धयोजनदूरतः ॥ ६  
सरस्यघविनाशाख्ये कुर्वन् स्त्रिषवणप्लवम् ।  
“ प्रजापते ! त्वदन्यो न विश्वोपरि बभूव ह ॥ ७



श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे एकादशोऽध्यायः ३६१

वयं श्रेयस्विनः स्याम सोऽस्तु यो नो मनोरथः ” ।  
इति मन्त्रं जपन्नित्यं आरराध चतुर्मुखम् ॥ ८  
वर्षे पूर्णे स भगवान् हंसारूढः सरोजभूः ।  
आविर्बभूव पुरतः सिंहादस्य तपस्विनः ॥ ९

ब्रह्मा :—

‘उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते सिंहाद ! कुशली भव ।  
तपसा तव तुष्टोऽस्मि वरं वरय सुव्रत ! ’ ॥ १०

सिंहादः—

“ नमो नमस्ते विश्वेश ! सर्वकारणकारण ।  
यदि प्रीतोऽसि भगवन् ! देहि मे वरमुत्तमम् ॥ ११  
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः ।  
वशे तु मम वर्तन्तां तेभ्यो न च भयं मम ” ॥ १२  
सिंहादवचनं श्रुत्वा “ तथाऽस्त्वि ” ति विरिञ्चनः ।  
आभाष्यन्तर्दधे साकं योगीशैरस्य पश्यतः ॥ १३  
तदाप्रभृति दुष्टात्मा बबाधे देवतागणान् ।  
क्षत्रियैः सह देवांशैर्मुनीनन्यांश्च मानवान् ॥ १४

सिंहादभीतदेवानां श्रीनिवाससमीपागमनम्

एवं तेनादिता देवा मुनयश्च तपोधनाः ।  
शरण्यं शरणं जम्बुवैङ्कटेशं यथा निधिम् ॥ १५

देवाः—

‘दैत्यारे ! देवदेवेश ! शरणागतवत्सल ! ।  
त्वाहि नः पुण्डरीकाक्ष ! सिंहादादसुराधमात् ॥ १६

त्रिलोकीं बाधते नित्यमनुमुङ्क्ते च रूपिणीम् ।	
सिंहादः क्रूरचारित्रः पापः प्राप्तवरो विधेः ।	१७
इति तेषां वचः श्रुत्वा भगवान् भूतभावनः ।	
मेघध्वनिगभीरेण वचसाऽन्वग्रहीत् सुरान् ॥	१८

### अभयागतदेवानां चक्रवर्तिनिकटगमनाय भगवदाज्ञा

श्रीभगवान् —

‘अभयं ब्रह्मणा दत्तं देवेभ्यः सुरसत्तमाः ।	
न दानवाश्च तं घ्नन्ति नासुरा न च पन्नगाः ॥	१९
नैव शक्तिर्मनुष्याणां संहारेऽस्य दुरात्मनः ।	
सहायास्तस्य बहवः सन्ति दैत्यांशसंभवाः ॥	२०
खरः कडारः पिङ्गाक्षः कनकः कद्रुकः कपिः ।	
एते हिरण्डाकुलजाः षड् बाणस्यात्र सन्ति हि ॥	२१
प्रह्लादाय वरो दत्तः पुरा प्रीतिजुषा मया ।	
तद्वंश्या नैव हन्तव्याः सत्यपि त्रिजगत्क्षये ॥	२२
ततोपायं प्रवक्ष्यामि सिंहादक्षपणाय वः ।	
चक्रवर्ती वसत्यत्र कालहस्तिः समीपतः ॥	२३
सुवर्णमुखरीतीरे पश्चिमे पुण्यधामनि ।	
समाप्याययत स्वांशैर्मद्वक्तं चक्रवर्तिनम् ॥	२४
सिंहादं सुमहाबाहुं महाबलपराक्रमम् ।	
स संहरिष्यति बली राक्षसानिव राघवः ॥	२५
स्वस्था भवत देवेशाः ! सर्वं भद्रं भविष्यति ।	
इत्युक्त्वा भगवान् विष्णुः सर्वभूतात्मभावनः ।	
विसर्जयामास सुरान् विमानं चाविशत् प्रभुः ॥	२६

**भगवदाज्ञया देवानां द्विजवेपेण चक्रवर्तिनिकटगमनम्**

ततो देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ।	
अनुग्रहीतुकामास्तमाजम्मुश्चक्रवर्तिनम् ॥	२७
ब्राह्मणाक्नरमालम्ब्य देवगन्धर्वतापसाः ।	
शुभाशिषं प्रयुञ्जाना राजानमुपतस्थिरे ॥	२८
आगतांस्तान् महाभागः पूजयित्वा यथाविधि ।	
पप्रच्छ कुशलं सर्वान् अभिवादनपूर्वकम् ॥	२९
पूजितास्तेन भूपेन देवा ब्राह्मणविग्रहाः ।	
अब्रुवन्नेककंठास्ते राजानं प्रश्रयाननम् ॥	३०

**सिंहादवधाय चक्रवर्तिनं प्रति देवकृतचोदना**

ब्राह्मणाः —

‘ राजन्! कुशलमस्माकं त्वयि शासति मेदिनीम् ।	
न हि सूर्ये प्रतपति लोके सम्पद्यते तमः ॥	३१
सिंहादो नाम दैत्येन्द्रो बाधते ब्राह्मणानिह ।	
न यज्ञाः सम्प्रवर्तन्ते न होमा न च सक्तियाः ॥	३२
उत्तरे पापनाशस्य सार्धयोजनदूरतः ।	
स वसत्यसदाचारः खलो ब्राह्मणहिंसकः ॥	३३
तं संहर दुरात्मानं सर्वलोकैककण्टकम् ।	
कृतस्तेऽनुग्रहोऽस्माभिः सर्वदेवात्मभिर्नृप ! ॥	३४

चक्रवर्ती : —

‘ अनुग्रहेण युष्माकं संहरामि न संशयः ।	
सिंहादः कीदृशस्तस्य ब्रूत किं वा बलं वुधाः ॥ ’	३५

ब्राह्मणाः—

‘विरिञ्चिना दत्तवरः सिंहादः क्रूरविक्रमः ।  
 अवध्यः सर्वदेवानां देवस्य च रथाङ्गिणः ॥ ३६  
 त्वमेव तस्य राजेन्द्र! संहर्ता न च संशयः ।  
 देवाः कुर्वन्तु सर्वेऽपि सन्निधानं त्वयि प्रभो ! ॥’ ३७  
 इत्युक्त्वा ब्राह्मणाः सर्वे सम्प्रयुज्य जयाऽऽशिषः ।  
 अन्तर्धानं गतास्तत्र तद्द्रुतमिवाभवत् ॥ ३८

सिंहादवधोपायवेदनाय भगवत्संनिधिं प्रति चक्रवर्तिगमनम्

अथ राजा महातेजाश्चक्रवर्ती स धार्मिकः ।  
 मन्त्रिभिर्मन्त्रयामास वधोपायं दुरात्मनः ॥ ३९  
 निश्चित्य कृत्यवित् कृत्यं मन्त्रिभिः सह मन्त्रवित् ।  
 जगाम वेङ्कटेशस्य सन्निधिं परया मुदा ॥ ४०  
 स्वर्णपत्रैः स्वर्णपुष्पैः तुलसीदलसंयुतैः ।  
 अर्चयित्वा यथापूर्वं वेङ्कटेशं नृपोऽवदत् ॥ ४१  
 ‘ब्राह्मणप्रवराः स्वामिन् सिंहादेन निपीडिताः ।  
 तत्संहारनियोगं मे प्रददुः किं करोम्यहम् ? ॥’ ४२

चक्रवर्तिकृतासुरवधार्थकभगवद्त्तपश्चायुधधारणम्

श्रीभगवान्—

‘शङ्खचक्रे प्रदास्यामि भाविषायुज्यसूचके ।  
 तथा कौमोदकीं शार्ङ्गं नन्दकञ्च महामते ! ॥ ४३  
 पञ्चायुधधरो भूत्वा दुरात्मानं सुरद्रुहम् ।  
 सबन्धुवर्गं सामात्यं जहि सङ्ग्राममण्डले’ ॥ ४४

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे एकादशोऽध्यायः ३६५

इत्युक्त्वा प्रददौ तस्मै शुचये चक्रवर्तिने ।

शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गानि मधुसूदनः ॥ ४५

**सिंहादेन सह युद्धाय किरातरूपेण चक्रवर्तिगमनम्**

ततः स राजतनयः पुनश्च स्वपुरं गतः ।

सेनां संयोजयामास देवतेजस्समेधिताम् ॥ ४६

सर्वदैवततेजोभिरुपवृंहितविग्रहः ।

कैरातं वपुरास्थाय प्रतस्थे सहसैनिकः ॥ ४७

किरातवपुषः सर्वे सहिता विश्वकद्रुभिः ।

समेतं मृगयासक्तं चक्रवर्तिनमन्वयुः ॥ ४८

घ्नन्तो व्याघ्रान् वृकान् सिंहान् तरक्षून् शल्यकान् किटीन् ।

प्रतीरं पापनाशस्य प्रापू राजेन्द्रसद्गताः ॥ ४९

चोलराजकुमारस्य वाहिनी बलगर्विता ।

मन्दं मन्दं प्रतीयाय घोरसिंहादकाननम् ॥ ५०

वनदुर्गा द्वेनिष्क्रम्य सिंहादो दैत्यभूपतिः ।

अवैक्षत किरातांस्तान् निर्विषादः स्मिताननः ॥ ५१

‘न देवा न च दैतेया न गन्धर्वा न दानवाः ।

न चक्रवर्तिनः सैन्यं किमर्थं नो भयाढ्यता?’ ॥ ५२

इति निश्चित्य धीरात्मा निर्गतः सैनिकैः सह ।

सिंहादः सिंहमारुह्य प्रतीयाय प्रभोर्वल्म् ॥ ५३

कोट्या शतसहस्रेण खरसैन्येन निर्ययौ ।

सर्वतः सहितः सैन्यैः कडारः षष्टिकोटिभिः ॥ ५४

पिङ्गाक्षः सप्तकोटीभिः कनको दशकोटिभिः ।

कद्रुकोऽन्योऽर्बुदानीकः कपिः पद्मासुरावृतः ॥ ५५

अन्ये च दैत्यपतयः स्वस्वसैन्यसमावृताः ।

आगताः सर्व एवैते मिलित्वाऽक्षौहिणीशतम् ॥

५६

**पापनाशनतीर्थमभीपप्रवृत्तचक्रवर्त्तिमिहादयुद्धक्रमः**

त्रिदशाक्षौहिणीनाथः चक्रवर्त्ती महाबलः ।

सिंहादेन समं युद्धं चकार भगवत्प्रियः ॥

५७

सेनयोरुभयोश्चाथ सिंहादहरिभक्तयोः ।

समरः सुमहानासीत् गङ्गायमुनयोर्यथा ॥

५८

विमानरत्नान्यारुह्य प्रवीरवरणोत्सुकम् ।

आगतं देवगाणिक्यं मध्येगगनमण्डलम् ॥

५९

आगता देवताः सर्वाः परमेष्ठिपुरोगमाः ।

द्रष्टुकामा महायुद्धं दैत्यराजाधिराजयोः ॥

६०

ततो युद्धं समभवत् सिंहादनृपसेनयोः ।

वरार्थं कलहं चक्रुः देव्यश्चाप्सरसो मिथः ॥

६१

सेनासु क्षीयमाणसु चक्रवर्त्ती धृताग्रहः ।

शाङ्गं धनुरुपादाय सन्दधे निशितान् शरान् ॥

६२

बाणेनैकेन राजेन्द्रो जघान दशविंशतिम् ।

शतं सहस्रमयुतं नियुतं प्रयुतं तथा ॥

६३

तस्य विक्रममालोक्य सिंहादः सिंहवाहनः ।

गदया राजराजाश्वं निजघानातिरंहसा ॥

६४

निहते तुरगे राजा गजमैरावतोपमम् ।

आरुह्य मघवेवान्यो गदां कौमोदकीं दधौ ॥

६५

सा विसृष्टा नृपेन्द्रेण हत्वा सिंहादवाहनम् ।

ममर्दाक्षौहिणीषष्टिं पुनः राजानमाश्रिता ॥

६६

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे एकादशोऽध्यायः ३६७

मायामास्थाय सिंहादः प्रभृताश्च क्षणान्तरे ।  
पुनरुज्जीवयामास सेनां कौमोदकीहताम् ॥ ६७  
सैनिकोज्जीवनं दृष्ट्वा सिंहादस्य महौजसः ।  
विस्मिताः सस्मिताश्चासान् दिवि देवाश्च तापसाः ॥ ६८  
अर्धचन्द्रेण बाणेन शार्ङ्गमादाय वीर्यवान् ।  
शतवारं च चिच्छेद सिंहादस्य शिरो नृपः ॥ ६९  
कृतं कृतं पुनः कृतं पुनर्जातं पुनःपुनः ।  
वीक्षमाणाः शिरो देवा विषादं प्रतिपेदिरे ॥ ७०  
अस्त्रं सन्धाय गान्धर्वं शार्ङ्गं श्रीपतिवल्लभः ।  
प्रायुङ्क्त वैरिसेनायां रामो मूलबले यथा ॥ ७१  
खादन्तः प्रहरन्तश्च दैतेयास्ते परस्परम् ।  
उन्मत्ता इव भूतेन ग्रस्ता इव च बभ्रसुः ॥ ७२

समरसमये चक्रवर्तिने वायुकृतसुदर्शनमन्त्रोपदेशः

विरिञ्चेनाभ्यनुज्ञातो वायुः ब्राह्मणरूपधृत् ।  
जजाप नृपतेः कर्णे सौदर्शनषडक्षरम् ॥ ७३  
'गोब्राह्मणहितार्थाय चक्रेण नृपनन्दन ! ।  
हर दैत्यशिरः शीघ्र ' मित्युक्त्वाऽन्तर्दधे च सः ॥ ७४

चक्रायुधेन चक्रवर्तिकृतसिंहादवधप्रकारः

ब्राह्मणस्य वचः श्रुत्वा चक्रवर्ती महामनाः ।  
सुदर्शनं सहस्रारमादधे भगवानिव ॥ ७५  
चक्रपाणिं नृपं वीक्ष्य मत्वा चक्रधरं हरिम् ।  
भयविभ्रान्तचित्तस्य सिंहादस्य शिरस्तदा ।  
सुदर्शनेन चिच्छेद चक्रवर्त्यपुनर्भवम् ॥ ७६

अन्ये तु तस्यानुचरा दैत्यवीराः ससैनिकाः ।	
गान्धर्वमोहितास्तस्थुः तत्रैव रणमण्डले ॥	७७
तस्योपरि नरेन्द्रस्य पुष्पवर्षाणि जज्ञिरे ।	
अथ चामरवाद्यानि वाद्यन्ते स्म समन्ततः ॥	७८
अशरीरिगिरं श्रुत्वा चोलराजस्य नन्दनः ।	
अस्त्रस्य मोहनस्यास्य न चक्रे प्रतिसंहतिम् ॥	७९

नारदः—

एवमुक्तमगस्त्येन यथोक्तं भवतो मया ।	
अन्यच्च विश्विद्वत्कव्यमुच्यते चरितं मया ॥	८०
कलौ युगे नराः सर्वे तत्राऽऽयोधनमण्डले ।	
श्रोष्यन्ति दैत्यवीराणां रात्रौ कोलाहलं सदा ॥	८१
क्षेत्रपालज्ञया सर्वे सिंहादासुरसैनिकाः ।	
नयनागोचरा नृणां भ्रमिष्यन्ति ततस्ततः ॥	८२
ततः सिंहादसंहारी चक्रवर्ती महीपतिः ।	
व्यजिज्ञप्तं स्ववृत्तान्तं वेङ्कटेशाय सर्वतः ॥	८३
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गनन्दकान् नृपनन्दनः ।	
अर्पयामास हरये वेङ्कटाद्रिनिवासिने ॥	८४

## भगवत्कृतपञ्चायुधकृत्यनिर्णयः

राजानञ्च तथा पञ्चायुधान्यपि च माधवः ।	
उवाच मेघनिर्घोषगम्भीरिमभृता गिरा ॥	८५
‘राजन्! यदेच्छसि जयमजय्ये साम्परायके ।	
तदेमान्यायुधान्युच्चैः साहाय्यं कुर्वतां तव ॥	८६



श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे एकादशोऽध्यायः ३६९

हे शङ्ख ! चक्र ! शार्ङ्ग ! असे ! कौमोदकि ! महागदे ! ।	
राज्ञोऽस्य कामदाः काले स्वस्वतीर्थेषु तिष्ठत ॥	८७
स्नातानां स्वस्वतीर्थेषु मम सायुज्यभोगदाः ।	
विहरध्वं यथाक्रमं मयि ध्यानपरायणाः ॥	८८
दत्तैर्युष्माभिरेतस्य सायुज्यं यदिहादिशम् ।	
तन्न व्याहन्यतां सद्यः पुनरागमनेन वः ॥	८९
मानसा मे स्त सद्योऽहं प्रत्यक्षविगतायुधः ।	
कञ्चिन् कालं वसिष्यामि ततः केनापि हेतुना ॥	९०
कलौ कश्चिन्महाभागः शङ्खचक्रे तु कृत्विमे ।	
कारयित्वा स्थापयिता विमानदींश्च मे पुनः ॥	९१
ततस्तद्भक्तिवशगः सर्वप्रत्यक्षगोचरः ।	
आकल्पं निवसिष्यामि वरामयदहस्तकः ॥	९२
ऊर्वाभ्यामपि चान्याभ्यां हस्ताभ्यामतिसुन्दरे ।	
दधानः शंखचक्रे च कल्पिते लोकतुष्टये ॥	९३
दत्तं हि मम सायुज्यं मया ते राजनन्दन ! ।	
गच्छ प्रशाधि राज्यञ्च मां सेवस्व दिवानिशम् ' ॥	९४
इत्याज्ञप्ता भगवता शङ्खचक्रगदासयः ।	
शार्ङ्गञ्च स्वस्वतीर्थानि पुण्यानि प्रतिपेदिरे ॥	९५
पुत्रोऽपि चोलराजस्य देवताशास्यवैभवः ।	
जगाम नगरीं स्वीयां मध्वेवामरावतीम् ॥	९६
इत्थं नारदवाक्यानि श्रुत्वा भृगुरुदारधीः ।	
वेङ्कटेशे परां प्रीतिमविन्दत महामनाः ॥	९७

भृगुरपि वृषभाचलप्रभावं  
 मुनिवरसङ्कथितं निशम्य भूयः ।  
 तदनु स च विलोकितुं रमेशं  
 स्थिरमतिना मनसा ययौ गिरीन्द्रम् ॥ ९८

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 चक्रवर्तिपराक्रमवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ।

॥ हरिः ॐ । ॐ तत्सत् ॥



श्रीवेङ्कटेश्वरचरणारविन्दार्पणमस्तु ।

इत्थं श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे आदित एकादशपर्यन्तस्य  
 एकादशाध्यायात्मकस्य श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यस्य विषयो भागः  
 समाप्तिमगमत् ॥



श्रीरस्तु  
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः  
श्रिये पद्मावत्यै नमः  
श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

( श्रीमार्कण्डेयपुराणान्तर्गतम् )

—: ❁ :—

श्रियःकान्ताय कन्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

प्रथमोऽध्यायः

तीर्थयात्रेच्छया पितृनिकटे मार्कण्डेयविज्ञप्तिः

ऋषयः—

‘सूत ! सर्वार्थतत्त्वज्ञ ! वेदवेदान्तपारग ! ।  
वेङ्कटाचलमाहात्म्यं वदस्व मुनिपुङ्गव ! ॥’

१

श्रीसूतः—

पुरा मृकण्डुतनयः पुरुषोत्तमसेवया ।

दीर्घमायुरवाप्याथ मुदा परमया मुनिः ॥

२

स्वमाश्रमपदं गत्वा तपस्विजनसन्निधौ ।

मातुः पितुः स मतिमान् प्रणाममकरोद्भुवि ॥

३

अतस्ताभ्यां यथावृत्तमाख्याय मुनिपुङ्गवः ।	
श्रेयस्करं विद्मिदिच्छन् कर्तुं वै वाक्यमब्रवीत् ॥	४
‘मातः पितर्ममेष्टं यत् शृणुतं ब्रुवतो मम ।	
देवतानुग्रहादायुः परिपूर्णमभूत् किल ॥	५
पुण्यस्थलेषु तीर्थेषु चरितुं विद्यते मतिः ।	
‘सुखं गच्छे’ ति कृपया मां प्रस्थापयतं युवाम् ॥	६
लौकिके वैदिके कार्ये पित्रनुज्ञा विशिष्यते ।’	
अथाब्रवीन्मृकण्डुस्तु स्वपुत्रं पुत्रवत्सलः ॥	७
‘पालितोऽहं त्वया पुत्र कुलञ्च मम पालितम् ।	
पुण्यस्थले पुण्यतीर्थे चलनेच्छा यतस्तव ॥	८
तस्मात्तव मतिः सौम्य! सम्यगेवेति मे मतिः ।	
त्वां प्रस्थापयितुं पुत्र कथं भवति मानसम् ॥	९
पुत्रमात्रस्य पित्रोस्तु विरहो दुःसहो भवेत् ।	
लोके सर्वत्र विदितं सत्पुत्रस्य तु किं पुनः ? ॥	१०
उत्तमोत्तमपुत्रस्त्वं वियोगस्तेऽतिदुःसहः ।	
सत्पुत्रलक्षणं सद्भिरुच्यते तत्तथैव हि ॥	११
यः प्रीणयेत् स्वचरितैः पितरं स पुत्रो,	
यद्भर्तुरेव हितमिच्छति तत्कलत्रम् ।	
तन्मित्रमापदि सुखे च समक्रियं यत्,	
एतत्तूयं जगति पुण्यकृतो लभन्ते ॥	१२
आवयोः प्रियकृत्त्वं तु मतिमानास्तिकोऽप्यसि ।	
कथं त्वद्विरहः सख्यो भविष्यति सुतावयोः ? ॥	१३
आनन्देषु च सर्वेषु स एकानन्द उत्तमः ।	
मातापित्रोः समीपे तु वर्तते तनयो यतः ॥	१४

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे प्रथमोऽध्यायः ३७३

तनयस्य स चानन्दस्तदेव सुकृतं महत् ।  
पित्रोः शुश्रूषमाणस्तु सञ्चरेत समीपतः ॥ १५  
अत आवां विहाय त्वं कथं गच्छसि तद्वद । '

श्रीसूतः —

मार्कण्डेयः स इत्युक्तः पितरौ वाक्यमब्रवीत् ॥ १६  
'मातः ! पितः ! मा च शोको युवयोर्मत्कृते कचित् ।  
प्रत्यब्दं सर्वथाऽऽगत्य युवां पश्यामि सर्वदा ॥ १७  
पुण्यक्षेत्राऽभिगमने पुण्यतीर्थाऽवगाहने ।  
यत्पुण्यं तत्कुलं सर्वं पावयेदिति हि श्रुतम् ॥ १८  
कृत्वाऽऽशीर्वचनं भूयः प्रस्थापयतमंजसा ' ।  
इत्युक्तवाक्ये तनये नयशालिनि तावुभौ ॥ १९  
आलिङ्ग्य तनयं गाढमाशीर्वादपरौ तदा ।  
चिरं जीव सुपुत्र त्वं चिरमानन्दवान् भव ॥ २०  
चिरं धर्मपरश्च त्वमावयोर्हर्षमावहन् ।  
इत्युक्तस्तनयः कृत्वा प्रदक्षिणमुदारधीः ॥ २१

पित्रनुज्ञया मार्कण्डेयकृतपुण्यदेशतीर्थयात्राक्रमः

तीर्थयात्रां जिगमिषुः खंचरेण जगाम ह ।  
काशीस्थलेऽवरुह्यासौ स्नात्वा गङ्गाजले शुचिः ॥ २२  
तीरमारुह्य विश्वेशं नत्वा कचिदवस्थितः ।  
तत्राऽऽकाशे चरन्तं तं ददर्श खगपुङ्गवम् ।  
वैष्णवाग्नेसरं श्रीमद्गरुडं पृष्ठवानसौ ॥ २३

मार्कण्डेयः—

'विष्णुवाह ! नमस्तुभ्यं क गच्छसि महामते ! ।  
पुण्यस्थलं पुण्यतीर्थमिच्छन्नहमिहागतः ॥ २४

अतीव पुण्यं किं किं यत् तन्मे वद खगेश्वर ! । '

मार्कण्डेयं प्रति गरुडोपदिष्टश्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

श्रीसूतः —

इत्युक्तो गरुडस्तस्मै रहस्यमुपदिष्टवान् ॥ २५

गरुडः —

‘मार्कण्डेय ! मुनिश्रेष्ठ ! शृणु तत्त्वं वदामि ते ।

तीर्थानामधिकं तीर्थं स्थलानामपि चोत्तमम् ॥ २६

सर्वेष्वपि च तीर्थेषु शृणुष्व गदतो मम ।

इतो दक्षिणदिग्भागे सुवर्णमुखरीतटे ॥ २७

अस्ति श्रीमान् वेङ्कटाख्यो नगेन्द्रः स्वस्ति प्राप्तुं शक्यते तत्र सर्वैः ।

वस्तु द्रष्टुं परमं योगिवर्याः स्तोतुं वासं सर्वदा कुर्वतेऽत्र ॥ २८

नामानि सन्ति सुबहूनि हि तस्य लोके तानि ब्रवीमि शृणु पुण्यतमानि तत्र ।

श्रीवेङ्कटाद्रिरिति शेषमहीधरेति नारायणाद्रिरिति चाञ्जनभूधरेति ।

स्वर्णाचलेत्यपि च रत्नमहीधरेति भूयांसि सन्ति भुवनोत्तमपावनानि ॥ २९

तत्कीर्तनं सकलपापहरं मुनीन्द्र ! तद्वन्दनं सकलसौख्यदमेव लोके ।

यात्राऽपि तं प्रति सुरैरपि पूजनीया तादृज्जहान् भवति वेङ्कटशैलमुख्यः ॥ ३०

तस्यानुभावं प्रवदामि भूयः समस्ततीर्थानि भवन्ति तत्र ।

एवं समस्तेषु च मुख्यतीर्थं श्रीस्वामिनाम्नाऽस्ति सरोवरं तत् ॥ ३१

माहात्म्यमेतस्य मयोच्यते कथं यत्पश्चिमे रोधसि भूवराहः ।

आलिङ्ग्य कान्तामतिशैवमूर्तिः विराजते विश्वजनोपकारी ॥ ३२

तद्वक्षिणतटे रम्ये वैकुण्ठपुरवल्लभः ।

आलिङ्गितवर्षुर्लक्ष्म्या वरदो वर्तते चिरम् ॥ ३३

कुर्वन्त एव तत्सेवां वर्तन्ते सर्वनिर्जराः ।

त्वं वेङ्कटाचलं गत्वा स्नात्वा स्वामिसरोजले ॥ ३४

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३७५

विलोक्य वेङ्कटाधीशमानन्दात्मा भविष्यसि ।  
अहञ्च तत्र गच्छामि सेवितुं वेङ्कटेश्वरम् ॥ ३५  
विष्वक्सेनश्च शेषश्च सेवेते तं दिवानिशम् ।  
पुण्यदेशो वेङ्कटाद्रेः तुल्यो नैव महीतले ।  
स्वामिपुष्करिणीतीर्थतुल्यं भुवि न विद्यते ॥ ' ३६

श्रीसूतः —

इत्युक्त्वा गरुडस्तत्र वेङ्कटाचलमागतः ।  
स मुनिर्गारुडगिरा विस्मयाऽऽविष्टमानसः ॥ ३७  
अहो ! श्रुतं महापुण्यस्थलं तीर्थं गरुत्मता ।  
इति मत्वाऽद्विसेवायामभवच्चाभिलाषवान् ॥ ३८

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये गरुडमार्कण्डेयसंवादो  
नाम प्रथमोऽध्यायः

अथ द्वितीयोऽध्यायः

मार्कण्डेयस्य शुद्धाख्यागस्त्यशिष्येण सह श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

श्रीसूतः —

मार्कण्डेयोऽथ मतिमान् सुवर्णमुखरीं गतः ।  
तत उत्तरदिग्भागे दृष्टवान् शेषभूधरम् ॥ १  
दैवादगस्त्यशिष्योऽपि शेषाद्रिनिकटं गतः ।  
वेङ्कटाद्रेरधोभागे तीर्थं किञ्चित् समागतः ॥ २  
यत्तीर्थं ऋषिलं चापि चक्रतीर्थं विदुर्वुधाः ।  
तस्योपरि क्रमात्सन्ति तीर्थानि कतिचिद्विरौ ॥ ३

इन्द्रस्य विष्वक्सेनस्य चक्रादीनाञ्च पञ्चकम् ।	
अग्नितीर्थं ब्रह्मतीर्थं सप्तर्षीणां क्रमेण च ॥	४
आगत्य शिष्यसहितो मार्कण्डेयो महामुनिः ।	
चक्रादिसप्तदशसु तीर्थेषु स्नानकृत् शुचिः ॥	५
तत्पश्चिमे च तीर्थानि विद्यन्ते वेङ्कटाचले ।	
ब्रह्मक्षत्रविडन्यानामवरोहक्रमेण तु ॥	६
स्नात्वा तेष्वपि शुद्धेनागस्त्यशिष्येण संयुतः ।	
आरुह्य वेङ्कटं शलं मध्येमार्गं ददर्श सः ।	
नारसिंहगुहास्थानं लोके विख्यातवैभवम् ॥	७
“ लक्ष्मीनृसिंह ! प्रह्लादवरदानन्दवैभव ! ।	
दासानुदासं देवेश ! मां पाहि मधुसूदन ! ॥ ”	८

### मार्कण्डेयस्य स्वामितीर्थस्नानपूर्वक श्रीवराहसेवाप्राप्तिः

इति प्रणम्य शुद्धेन स्वामिपुष्करिणीं गतः ।	
तत्र स्नात्वा महातीर्थे सङ्कल्प्य विधिपूर्वकम् ॥	९
तत्पश्चिमतटे श्वेतसूकरं वसुधाधरम् ।	
साष्टाङ्गञ्च प्रणम्याथ स्तोतुं समुपचक्रमे ॥	१०

मार्कण्डेयः —

“ जलौघमग्ना सचराचरा धरा विषाणकोट्याऽखिलविश्वमूर्तिना ।	
समुद्धृता येन वराहरूपिणा स मे स्वयम्भूर्भगवान् प्रसीदतु ॥ ११	
पोत्रिरूप ! नमस्तुभ्यं पुरुषोत्तम ! ते नमः ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरवासिने वरदाच्युत ! ॥	१२
श्रीवेङ्कटवराहाय विश्वमङ्गलकारिणे ।	
भक्तानां रक्षिणे तुभ्यं भगवन् ! सततं नमः ॥ ”	१३



श्रीमार्कण्डेयकृत श्रीश्रीनिवामस्तुतिः

इति स्तुत्वाऽथ पीत्वा च तत्पादसलिलं मुदा ।  
 निर्गत्य दक्षिणे तीरे जगाम हरिमन्दिरम् ॥ १४  
 नमस्कृत्य विमानान्तः प्रविश्यासौ ददर्श ह ।  
 शङ्खचक्रधरं देवं वरदं वारिजेक्षणम् ।  
 वेङ्कटेशं प्रणम्यासौ चकार स्तुतिमुत्तमम् ॥ १५  
 “भास्वच्चन्द्रसमे यदीयनयने भार्या यदीया रमा  
 यस्माद्विश्वस्तुडप्यभूद्यमिकुलं यद्वचनयुक्तं सदा !  
 नाथो यो जगतां नगेन्द्रदुहितुर्नाथोऽपि यद्वक्तिमान्  
 तातो यो मदनस्य यो दुरितहा तं वेङ्कटेशं भजे ॥ १६  
 पाहि मां वेङ्कटाश्रितं प्रणतार्तिप्रभञ्जन ! ।  
 आत्मबन्धो कृपासिन्धो ! सततं ते नमोनमः ॥ १७  
 नारायणाद्रिकृतवास ! हरे ! नमस्ते  
 नारायणाखिलजगत्पतये नमस्ते ।  
 कारुण्यपूर्ण ! कमलापतये नमस्ते  
 कञ्जाक्ष रक्ष कमनीयतनो नमस्ते ॥ १८  
 विना वेङ्कटेशं न नाथो न नाथः ; सदा वेङ्कटेशं स्मरामि स्मरामि ।  
 हरे ! वेङ्कटेश ! प्रसीद प्रसीद ; प्रियं वेङ्कटेश ! प्रयच्छ प्रयच्छ ॥ १९  
 अहं दूरतस्ते पदाम्भोजयुग्मप्रणामेच्छयाऽऽगत्य सेवां करोमि ।  
 सकृत्सेवया नित्यसेवाफलं त्वं प्रयच्छ प्रयच्छ प्रभो वेङ्कटेश ! ॥ २०  
 अज्ञानिना मया दोषानशेषान् विहितान् हरे ! ।  
 क्षमस्व त्वं क्षमस्व त्वं शेषशैलशिखामणे ! ॥ ” २१

मार्कण्डेयः—

इति स्तुत्वा तु भावेन शुद्धेन सह सादरम् ।  
 तूष्णीं बभूव पुरतो मस्तके विहिताञ्जलिः ॥ २२  
 मार्कण्डेयस्य भगवद्भक्तिनैरन्तर्यवरप्राप्तिः  
 तमाह वेङ्कटाधीशो मार्कण्डेयं महामुनिम् ।  
 'मार्कण्डेय ! महाबुद्धे ! प्रसन्नोऽस्मि तवानघ ! ॥ २३  
 श्रुत्वा गरुडवाक्यं तदागतो यत् वृषाचलम् ।  
 स्तुतिर्हि विहिता सम्यक् तस्मादिष्टं ददामि ते ॥ ' २४  
 इत्युक्तः स मुनिः प्राह 'ममेष्टं किं जनार्दन ! ।  
 यथा तव स्मृतिर्भूयात् सततं वेङ्कटेश्वर ! ॥ २५  
 तथा मां पाहि देवेश ! भक्तवत्सल ! ते नमः ।'  
 तथाऽस्त्विति कृपां कृत्वा हरिः शुद्धमुवाच ह ॥ २६

शुद्धाख्यागस्त्यशिष्यस्य भगवदनुग्रहेण निष्पापत्वप्राप्तिः

'शुद्ध ! शुद्ध दुरन्तानि पापानि विहितानि ते ।  
 तानि सर्वाणि शान्तानि सेवया मे न संशयः ॥ २७  
 गुर्वाश्रममितो गत्वा धर्मतन्त्रं समाचर ।  
 प्रदक्षिणं मद्विमानं कुरुतादिति चोक्तवान् ॥ ' २८  
 प्रदक्षिणं ततः कृत्वा विमानं सम्प्रणम्य च ।  
 त्रिरावृत्त्या कचित्तिष्ठन् शुद्धं मुनिरथाब्रवीत् ॥ २९  
 'कुतस्त्वमागतः शुद्धः ! को गुरुः कुत्र वाऽऽश्रमः ।  
 त आसन् कानि पापानि शान्तानि हरिसेवया ? ॥ ३०  
 मार्कण्डेयं प्रति शुद्धकृतस्वोदन्तज्ञापनम्  
 एतत्सर्वं वद क्षिप्रं सखे ! मयि दया यदि ।'  
 इति पृष्टोऽगस्त्यशिष्यः सखे ! शृण्वति चाब्रवीत् ॥ ३१

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३७९

- “ यथार्थं शृणु मत्तत्त्वं मार्कण्डेय मुनीश्वर ! ।  
काञ्चीदेशे मध्यराष्ट्रे द्विजो बहुकुटुम्ब्यहम् ॥ ३२  
कुटुम्बभरणार्थाय दुर्दानानि गृहीतवान् ।  
वसनासनहीनत्वात् भ्रमामि जगतीतले ॥ ३३  
एकोद्दिष्टं षोडशानि बहु भक्तानि पापिना ।  
धनं धनमिति भ्रान्तं भ्रान्तचित्तेन केवलम् ॥ ३४  
स्नानं सन्ध्या जपो होमो देवार्चाऽतिथिकर्म च ।  
वैश्वदेवं ब्रह्मयज्ञो न कदाचित् कृतं मया ॥ ३५  
पापिनं मां समालोक्य सर्वे ग्रामे महाजनाः ।  
“ महाब्राह्मण ” इत्येव शपन्तौ नाम चक्रिरे ॥ ३६  
रेवती नाम मे भार्या मामवोचन्मनीषिणी ।  
“ बहूनि पातकान्यत्र कुटुम्बभरणेच्छया ॥ ३७  
कुर्वन्नपि धनं किञ्चित् न प्राप्नोषि क्वचिद्द्विज ! ।  
प्रेतोद्देशकृता गावो गृहीताः प्रेतभोजनम् ॥ ३८  
प्रेतवासांसि बहुशो निन्द्यं कर्म सदा कृतम् ।  
एवं कृतेषु पापेषु गृहे किञ्चिन्न दृश्यते ॥ ३९  
अद्याऽऽहारो नैव गृहे क्षुधिताः पुत्रबालिकाः ।  
तव मे बालकानाञ्च च्छादनं नैव विद्यते ॥ ४०  
अतीव दीनोऽहमिति निश्चयं नाधिगच्छसि ।  
“ आयुरारोग्यमैश्वर्यं दातुं सर्वमनोरथम् ॥ ४१  
सकृदप्यानतिकृतां शक्तो वेङ्कटनायकः । ”  
इति प्राज्ञा वदन्तीह तत्प्रयाणं कुरु द्विज ! ॥ ४२  
उत्तरस्यां दिशि नदी सुवर्णमुखरीति वै ।  
तत्तीरे वेङ्कटो नाम हरिक्षेत्वं महीधरः ॥ ४३

तत्र वेङ्कटनाथस्य सेवां कर्तुमितो ब्रज ।  
 लक्ष्यंशा योषितः सर्वा इति विद्वद्विरीरितम् ।  
 प्रमाणीकृत्य मद्राक्यं शीघ्रं गच्छ सुखाय वै ॥ ” ४४

शुद्धः—

आकर्ष्य प्रेयसीवाक्यं पञ्चभिर्दिवसैरहम् ।  
 सुवर्णमुखरीं प्राप्य अगस्त्याश्रममुपेयिवान् ॥ ४५  
 सुवर्णमुखरीतीरे तपस्यन्तं शिवाग्रतः ।  
 प्रणाममाचरं दृष्ट्वा ‘ नमस्तुभ्य ’ मिति ब्रुवन् ॥ ४६  
 कुम्भोद्भवोऽथ मां दृष्ट्वा कृपालुः ऋषिसत्तमः ।  
 ‘ कुतस्त्वं केन दुःखित्वं किं कार्यम् ? ’ इति पृष्ठवान् ॥ ४७

शुद्धः—

‘ मां पाहि करुणासिन्धो पापिनामपि पापिनम् ॥ ४८  
 मत्कृत्यं तपसा सर्वं त्वमेव ज्ञातुमर्हसि ।  
 काञ्चीप्रदेशे मदग्रामः तद्ग्रामस्य महाजनाः ॥ ४९  
 पापीति कृत्वा मां सर्वे ‘ महाब्राह्मण ’ मब्रुवन् ।  
 तस्मादहं दुःखितः सन् वेङ्कटाद्रीच्छयाऽऽगतः ॥ ५०  
 मत्पुण्येन भवान् मध्ये मार्गे दृष्टोऽसि केवलम् ।  
 पूर्वपुण्यविपाकेन दृश्यन्ते खलु सज्जनाः ॥ ५१  
 प्रतिगृहीष्व मां शिष्यं तव शिष्योऽस्मि साम्प्रतम् ।  
 पापोऽहं पापकर्माणं पावनीकुरु मां मुने ! ॥ ’ ५२  
 इति वादिनमालोक्य मामुवाच महामुनिः ।  
 ‘ बहु त्वया कृतं पापं विदितं तपसा मम ॥ ५३  
 बुद्धिर्वेङ्कटयात्रायां यतः शुद्धोऽसि साम्प्रतम् ।  
 ‘ अयं शुद्धोऽस्ति ’ ति ब्रूत सर्वे विप्रा इति ब्रुवन् ॥ ५४

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३८१

मामाह त्वरितं गत्वा वेङ्कटाह्वयभूधरम् ।  
भूवराहश्च लक्ष्मीशं सेवित्वा पुनराव्रज ॥ ५५  
नष्टपापस्य ते पश्चात् श्रेयो दास्यामि मा चिरम् ।'  
इत्येवमुक्त्वा भगवान् अगस्त्यः सेवाक्रमं चापि ममोपदिश्य ।  
प्रस्थापयामास तदाऽऽगतोऽहं मार्गे भवन्तं खलु दृष्टवान् मुदा ॥ ५६  
एवं त्वगस्त्यशिष्योऽहं शुद्धनामाऽस्मि साम्प्रतम् ।  
याम्याश्रमं नदीतीरे ह्यगस्त्यस्य दयानिधेः ॥ ५७  
वेङ्कटाचलमाहात्म्यविदामग्रेसरं मुनिम् ।  
द्रष्टुं मया सह त्वञ्च किमायासि वदधुना ॥ ५८

मार्कण्डेयस्य शुद्धेन सह सुवर्णमुखरीतीरस्थागस्त्याश्रमगमनम्

इति ब्रुवन्तं तं शुद्धं मार्कण्डेयोऽब्रवीद्वचः ।  
'अहमप्यागमिष्यामि द्रष्टुं तं मुनिपुङ्गवम् ॥ ५९  
सुवर्णमुखरीतीरे मां नयस्व तदाश्रमम् ।'  
इत्युक्त्वा सहितौ विप्राववस्त्रं गिरिरधः ॥ ६०  
सुवर्णमुखरीतीरे त्वगस्त्याश्रममीयतुः ।  
तत्राऽऽश्रमे महर्षिभिः सेव्यमानमनेकशः ॥ ६१  
वेङ्कटेशकथाव्याख्यातत्परं तमपश्यताम् ।  
तेभ्यो नमस्कृत्य तदा तं प्रणम्य विशेषतः ॥ ६२  
तपोधनेनागस्त्येन बहुमानेन पूजितौ ।  
मार्कण्डेयश्च शुद्धश्च तस्मिन् सदसि तस्थतुः ॥ ६३

अगस्त्यवर्णित श्रीवेङ्कटाचलवैभवम्

विप्रा वेङ्कटमाहात्म्यं शृणुतेति प्रसन्नधीः ।  
उवाचानन्दभरितो लोपामुद्रापतिस्तदा ॥ ६४

अगस्त्यः—

‘सुवर्णमुखरीतीरद्वयनित्यनिवासिनः ।  
 वेङ्कटाचलमाहात्म्यं श्रोतव्यं पापनाशनम् ॥ ६५  
 श्रीवेङ्कटाचलो नाम पुण्यक्षेत्रं महीतले ।  
 शेषाद्रिः वृषशैलश्च गरुडाचल इत्यपि ।  
 पुण्यानि सन्ति नामानि पुनरन्यानि कानिचित् ॥ ६६  
 वैकुण्ठलोकात् गरुडेन विष्णोः क्रीडाचलो वेङ्कटनामधेयः ।  
 आनीय च स्वर्णमुखीसमीपे संस्थापितो विष्णुनिवासहेतोः ॥ ६७  
 तत्राचले वसन् विष्णुः कमलालयया सह ।  
 आनन्दनिलये चैव वर्तते लोकरक्षकः ॥ ६८

### श्रीनिवाससेवार्थं ब्रह्मरुद्रादीनां श्रीवेङ्कटाचलगमनवर्णनम्

पुरा कदाचित् कतिचित्समेता वयं हरिं सर्वजगच्छरण्यम् ।  
 अन्विष्य वैकुण्ठपुरेऽप्यदृष्ट्वा समागता ब्रह्मगिरा वृषाद्रिम् ॥ ६९  
 समागतास्तत्र तपो विधातुं समाः शतं सर्वतपस्विसङ्घाः ।  
 श्रीस्वामितीर्थस्य जले पवित्रे स्नानादि सर्वं कृतवन्त एव ॥ ७०  
 तत्राऽऽगता ब्रह्ममुखाः समस्ताः तत्राऽऽगता जिष्णुमुखाः सुराश्च ।  
 तत्राऽऽगतास्ते सनकादियोगिनः सेवापरास्ते वृषशैलभर्तुः ॥ ७१  
 गणैश्च सर्वैः सह शम्भुरागतः क्षीराब्धिवासा अपि सिद्धसङ्घाः ।  
 बृहस्पतिश्चैव गुरुश्च शुक्रो वसुश्च राजा हरिभक्तमुत्स्यः ॥ ७२  
 देवाश्च ऋषयः सिद्धाः चारणा वसुकिन्नराः ।  
 सर्वे च स्वामिसरसि स्नात्वा प्रयतमानसाः ।  
 ध्यायन्तो देवदेवेशमवतस्थुश्च तत्तटे ॥ ७३

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३८३

### श्रीभगवत्प्रादुर्भाववर्णनम्

प्रादुर्भूतं ततस्तेज एकमत्यद्भुतं तदा ।  
विमानमेकं तन्मध्ये ददृशे दिव्यमङ्गलम् ॥ ७४  
तन्मध्ये स्थं दिव्यमूर्तिं वरेण्यं शङ्खं चक्रं धारयन्तं कराभ्याम् ।  
सेव्यत्वेन स्वं पदाम्भोजयुग्मं सर्वेषां सन्दर्शयन्तं करेण ॥ ७५  
स्वाङ्घ्रिद्वन्द्वं संश्रितानां जनानां संसाराब्धिर्जानुदघ्नः किलेति ।  
न्यस्तेनोरौ वामतो दर्शयन्तं सव्येनान्येनापि हस्तेन सम्यक् ॥ ७६  
सर्वाभीष्टं दातुमुद्युक्तहेतिं भक्तानां श्रीवासवक्षःस्थलञ्च ।  
मन्दस्मेरश्रीमुखं भूषणाढ्यं सर्वे श्रीमद्वेङ्कटेशं द्रष्टव्यम् ॥ ७७

### ब्रह्मरुद्रादिकृत श्रीश्रीनिवासस्तुतिः

कृतप्रणामास्ते सर्वे स्तोत्रयामासुरीश्वरम् ।  
“जय देव ! जगन्नाथ ! सर्वलोकैकवन्दित ! ॥ ७८  
जय वेङ्कटशैलेश ! करुणाकर ! पाहि नः ।  
त्वां नमामो वयं विष्णो ! वेङ्कटाचलनायक ! ॥ ७९  
अस्माकं वाञ्छितं दत्त्वा पाहि पाहि जगद्गुरो ।”  
इति स्तुतः श्रीनिवासो देवैः सिद्धैश्च चारणैः ॥ ८०  
मुनिभिर्वसुमुख्यैश्च ब्रह्माद्यैः शङ्करेण च ।  
सर्वान् विलोक्य तानाह करुणापयसां निधिः ॥ ८१  
‘सर्वेषामपि युष्माकं प्रसन्नोऽस्मि सुरेश्वराः ! ।  
युष्माकं यद्यदिष्टं स्यात् तत्तद्दत्तं मयाऽनघाः ॥’ ८२  
इति तेभ्यो वरं प्रादात् सर्वेभ्यो वेङ्कटेश्वरः ।  
अथ ते मुनयः सर्वे ब्रह्माद्याः किञ्चिद्ब्रुवन् ॥ ८३

“ कृपानिधे ! नमस्तुभ्यं वरदाय नमो नमः ।  
 वेङ्कटाधीश ! विश्वेश ! शतकृत्वो नमोनमः ॥ ८४  
 विज्ञाप्यं किञ्चिदस्तीह शृणुष्व करुणाकर ! ।  
 अनुगृह्यन्नशेषांस्त्वं दददिष्टानि सर्वशः ॥ ८५  
 मानवानामपि सहन् अपराधानशेषतः ।  
 दयालुत्वं प्रकटयन् इह त्वं तिष्ठ केशव ! ॥ ८६  
 दृग्गोचरं त्वामालोक्य वेङ्कटाद्रिशिरोमणे ! ।  
 कलौ युगे मनुष्याश्च भूयासुः वीतकल्मषाः ॥ ८७  
 एवं सर्वोपकारार्थं अत्र स्वामिसरस्तटे ।  
 रमासमेतः सन्तिष्ठस्वैतन्नः प्रार्थितं हरे । ”  
 इति सम्प्रार्थितः सर्वैः तत्रैवाऽऽस्ते कृपानिधिः ॥ ’ ८८

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीश्रीनिवासाविर्भाववर्णनं  
 नाम द्वितीयोऽध्यायः

अथ तृतीयोऽध्यायः

अगस्त्यकृत श्रीस्वामितीर्थमाहात्म्यमगस्त्योत्सवयोर्वर्णनम्

अगस्त्यः —

एतादृशो वेङ्कटाद्रिः सर्वलोकेषु विश्रुतः ।  
 गङ्गादिकानि तीर्थानि तत्र सन्ति बहून्यपि ॥ १  
 तानि वक्तुं न शक्नोमि बहुत्वात् ऋषिसत्तमाः ।  
 राजते सर्वतीर्थानां स्वामि स्वामिसरोवरम् ॥ २  
 तत्र स्नातुं समायान्ति प्रतिवर्षं जना भुवि ।  
 धनुर्मासे शुक्लपक्षे द्वादश्यामरुणोदये ॥ ३



श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे तृतीयोऽध्यायः ३८५

आयान्ति सर्वतीर्थानि तत्र स्नाता निरेनसः ।	
तस्य श्रीवेङ्कटेशस्य ब्रह्मा लोकपितामहः ॥	४
चकार कन्यामासे तु ध्वजारोहमहोत्सवम् ।	
प्रतिवर्षञ्च तत्सेवानिमित्तं सर्वमानवाः ॥	५
अङ्गकोसलकर्णाटकाशीगुर्जरदेशगाः ।	
चोलकेरलपाण्ड्यादिसर्वदेशसमुद्भवाः ॥	६
सकुटुम्बाश्च सेवार्थं आयान्ति प्रतिवत्सरम् ।	
देवाश्च ऋषयः सिद्धा योगिनः सनकादयः ॥	७
ये भाद्रपदमासे तु वेङ्कटेशमहोत्सवे ।	
सेवां कुर्वन्ति ते सर्वे निष्पापा उत्तमोत्तमाः ॥	८
पुनस्त्वहं प्रवक्ष्यामि तीर्थवैभवमद्भुतम् ।	
तच्छृणुध्वं सावधानं श्रवणेऽपि महाफलम् ॥	९
उत्तरे स्वामितीर्थस्य पापनाशनसंज्ञकम् ।	
तीर्थं महत्सर्वपापविनिर्मोचनसाधनम् ॥	१०

#### कुमारधारामाहात्म्यम्

ततो वायव्यदिग्भागे कौमारं तीर्थमुत्तमम् ।	
‘कुमारधारिका’ चेति नाम लोके प्रशस्यते ॥	११
अद्भुतं तस्य माहात्म्यं शृणुत द्विजपुङ्गवाः ! ।	
पुरा कश्चित् द्विजो वृद्धो दारिद्र्येण च पीडितः ॥	१२
कुटुम्बभरणायोग्यो विललाप दिवानिशम् ।	
‘इह लोके परे लोके सौख्यहेतुर्धनं किल ॥	१३
तत्रास्ति मम पापेन पूर्वजन्मकृतेन च ।	
परलोकहितं भर्माचरणेन हि साध्यते ॥	१४

शक्तिस्तदस्ति कर्तुं न वृद्धत्वाद् दुर्बलस्य मे ।  
 वृथा जन्म ममैतद्धि कर्तव्यं विमतः परम् ॥ १५  
 इति निन्दापरो भूत्वा पुत्रदारान् विहाय च ।  
 आगत्य दुःखितः सोऽथ स्वर्णमुत्थाः समीपतः ॥ १६

दारिद्र्यदुःखासहमानवृद्धद्विजकृतभृगुपतनयनः

अहं शेषाद्रिशिखरात् पतिष्ये इति निश्चितः ।  
 आरुह्य वेङ्कटं शैलं भृगोःपातसमीहया ॥ १७  
 उच्चैःस्वरेण चुक्रोश तत्र स्थित्वा स भूसुरः ।  
 'ब्रह्मविष्णुमहेशानाः ! चन्द्रसूर्यौ तथाऽश्विनौ ! ॥ १८  
 सर्वभूतानि शृण्वन्तु दुःखितस्य वचो मम ।  
 दारिद्र्यात् वृद्धभावाच्च जन्मव्यर्थमभूदिति ॥ १९  
 पतिष्येऽहं पतिष्येऽहं पतिष्येऽहं न संशयः ' ।  
 इत्याक्रोशन्तमागत्य वेङ्कटेशो ददर्श ह ॥ २०  
 मृगयारसिकस्तत्र सञ्चरन् मुनिपुङ्गवम् ।  
 अधस्तात् पर्वतप्रान्ते राजपुत्राकृतिं दधत् ॥ २१  
 हस्तमुद्धृत्य तं पश्यन् उवाचेदं द्विजं तदा ।

भृगुपतनोद्युक्तं वृद्धं प्रति भगवदुक्तिः

'विप्र ! विप्रावरोह त्वं मा साहसमिदं कुरु ॥ २२  
 विप्रस्य तु भृगोः पातः शास्त्रेषु न हि निश्चितः ।  
 तस्मात् प्रेत्य च दुखाय मा साहसमिदं कुरु ॥ २३  
 मयोच्यते तव हितं अवरुह्य शृणुष्व तत् ' ।  
 श्रुत्वेति तं नृपाकारं दृष्ट्वा वृद्धो महीसुरः ॥ २४

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे तृतीयोऽध्यायः ३८७

अवरुह्य तमाहेदं पुण्यात् शैलोत्तमात् तदा ।  
'पुत्रदारांश्च मां रक्ष महैश्वर्यप्रदो भव' ॥ २५  
इत्युक्तवति विप्रेऽस्मिन् माधवो वाक्यमब्रवीत् ।  
'सर्वं ददामि हस्तं त्वमवलम्ब्यानुयाहि माम्' ॥ २६  
इत्युक्तस्तत्करालम्बं कृत्वा मन्दं ययौ द्विजः ।

वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारसम्पत्प्राप्तिः

तमादाय हरिः श्रीमद्वेङ्कटाचलनायकः ॥ २७  
पापनाशादुत्तरतः एतत्तीर्थं निनाय तम् ।  
उवाच खिन्नं स भृशं खेदशान्त्यर्थमल्ल वै ॥ २८  
'स्नानं कुरु ततः खेदशान्तिस्तत्र भविष्यति' ।  
इत्युक्ते तत्र तत्तीर्थे स्नात्वोत्थाय युवाऽभवत् ॥ २९  
मनः प्रसन्नतां यातं कुमारश्च तदाऽभवत् ।  
तीरं तु सर्वतः पश्यन् तमदृष्ट्वाऽन्वतप्यत ॥ ३०  
मदिष्टदेवो मामल्ल त्यक्त्वा कुत्र गतो नु किम् ।  
अन्तर्हितः स भगवानाकशस्थोऽब्रवीदिदम् ॥ ३१

कुमारधारास्नानप्राप्तयौवनवृद्धं प्रति अन्तर्हितभगवदुक्तिः

'अयं तु वेङ्कटाधीशः तव स्वामी न संशयः ।  
दत्तं तव कुमारत्वं तीर्थस्नानेन भूसुर ! ॥ ३२  
वेङ्कटेशेन ते दत्तमैश्वर्यमिह भूसुर ! ॥  
त्वदेशं गच्छ शीघ्रं वै स्त्रीबालसहितो भव ॥ ३३  
शरीरे च बलं जातं शारीरं धर्ममाचर ।  
दानानि दिश विप्रेभ्यो बन्धुभ्यश्च धनं दिश ॥ ३४

भोजनं दिश विप्रेभ्यः स्वयं भुङ्क्ष्व यथासुखम् ।	
अनिषिद्धसुखत्यागी पशुरेव न संशयः ॥	३५
निषिद्धसुखभोक्ता च पशुरेव न संशयः ।	
श्रीवेङ्कटेशः प्रीयतामित्येव सकलं कुरु ॥	३६
स्त्रीत्यागभोगाकरणे निन्द्यमेव विदुर्बुधाः ।	
इत्युक्ते सर्वदेवाश्च समागत्याब्रुवन् वचः ॥	३७
‘अस्य तीर्थस्य महिमा ह्यहो वाचामगोचरः ।	
कुमारत्वं धनित्वञ्च सद्य एव द्विजोऽभवत् ॥	३८
यतः कुमारतां यातः सद्यो वृद्धमहीसुरः ।	
तस्मात् ‘कुमारधा’ रेति लोके ख्यातिं गमिष्यति ॥	३९
कुमारतीर्थे यः स्नातो निष्पापः स सुखी भवेत् ।	
इत्युक्त्वा सर्वदेवेषु गतेषु त्रिदिव द्विजः ॥	४०
यातः स्वदेशं सन्तोषात् महदैश्वर्यमाप्तवान् ।	
पुत्रदारादिसहितो बहु धर्मं चकार ह ॥	४१
“श्रीवेङ्कटेशः प्रीयता” मित्येव कथयन् सदा ।	
दृष्टं फलमवाप्यान्ते विष्णुलोकं जगाम ह ।	
कुमारधारिकेत्येव विष्णुनाऽप्येकदोदितम् ॥	४२

ऋषयः —

तत्कदाऽऽगत्य देवेन विष्णुना प्रभविष्णुना ।	
कुमारधारिकेत्येतदुक्तं तद्विस्तराद्बद्ध ॥	४३

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटचलमाहात्म्ये कुमारधारामाहात्म्यवर्णनं  
नाम तृतीयोऽध्यायः

— — —

अथ चतुर्थोऽध्यायः

~~~~~

स्कन्दस्य कुमारधारातीर्थे तपःकरणेन तारकवधोत्थ

ब्रह्महत्याविमुक्तिः

अगस्त्यः—

| | |
|--|---|
| कुमारधारिकाख्यानं वेङ्कटेशकथाऽन्वितम् । | |
| सर्वे शृणुत विप्रेन्द्राः ! वाजपेयफलाधिकम् ॥ | १ |
| कदाचिच्छङ्करसुतः तारकाख्यं महासुरम् । | |
| हत्वा तत्कर्मपाकेन ब्रह्महत्यामवाप्तवान् ॥ | २ |
| शम्भोः सकाशमागत्य दुःस्वितस्तारकान्तकः । | |
| उवाच पितरं 'स्वामिन् ! मत्पापं शृणु मे पितः ! ॥ | ३ |
| देवानामुपकारार्थं तारको निहतो मया । | |
| तेन तस्य वधेनैव हत्या मां बाधतेऽधिकम् ॥ | ४ |
| तत्प्रायश्चित्तमधुना प्रब्रूहि मम शङ्कर ! । | |
| सर्वज्ञः शङ्करः प्राह पुत्रं देवहितावहम् ॥ | ५ |
| 'सकृत् नारायणेत्युक्त्वा पुमान् कल्पशतत्रयम् । | |
| गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्नातो भवति पुत्रक ! ॥ | ६ |
| एतत्प्राह रहस्यं वै सदा मनसि तिष्ठतु । | |
| अन्यच्च किञ्चित्ते वक्ष्ये प्रायश्चित्तमनुत्तमम् ॥ | ७ |
| सुवर्णमुखरीतीरे लक्ष्मीपतिनिवासभूः । | |
| वेङ्कटाद्रिरिति ख्यातः सर्वलोकेषु वर्तते ॥ | ८ |
| तत्र तीर्थान्यनन्तानि तेषु किञ्चिद्ब्रूयामि ते । | |
| चक्रतीर्थं स्वामितीर्थं मत्स्यपाण्डवतीर्थकम् ॥ | ९ |

| | |
|---|----|
| नागतीर्थं बिल्वतीर्थं जाबालेस्तीर्थमेव च । | |
| आकाशगङ्गातीर्थञ्च पापनाशनमेव च ॥ | १० |
| तुम्बुवामनतीर्थे च कौमारं मुख्यमेव च । | |
| वेङ्कटाचलतीर्थानि यः कीर्तयति सर्वदा ॥ | ११ |
| अनेकजन्मपापानि नश्यन्त्येव न संशयः । | |
| स्वामितीर्थस्य तीरे तु श्रीनिवासः परात्परः ॥ | १२ |
| नित्यं वसति सर्वेषां लोकानां हितकाम्यया । | |
| तत्र वेङ्कटशैलेशं वेङ्कटेशेति सर्वदा ॥ | १३ |
| यो वै स्मरति तं नित्यं तस्य विष्णुः प्रसीदति । | |
| गत्वा तच्च प्रणम्य त्वं कौमारं व्रज तीर्थकम् ॥ | १४ |
| तत्र स्नात्वा तीर्थवर्ये त्रिकलं विजितेन्द्रियः । | |
| “ श्रीवेङ्कटेशाय नमः ” एवं प्रणवपूर्वकम् ॥ | १५ |
| मन्त्रं जपन् महाबुद्धे ! तपः कुर्वित्यबोधयत् । | |
| पितृवाक्यं ततः श्रुत्वा देवसेनापतिस्तदा ॥ | १६ |
| चक्रतीर्थे कृतस्नानः स्वामिपुष्करिणीं ययौ । | |
| वेङ्कटाद्रेः कोशमात्रे कोशन्ती विस्वरं स्थिता ॥ | १७ |
| ब्रह्महत्या तस्य गिरेः माहात्म्यं वर्ण्यते कथम् ! । | |
| प्रयातः स्वामिसरसि स्नात्वा सूनुरुमापतेः ॥ | १८ |
| वेङ्कटेशं प्रणम्याथ कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् । | |
| ‘ ब्रह्मरुद्रादिवन्द्यं त्वां भजे वेङ्कटनायकम् ॥ | १९ |
| निवारयन् अनिष्टानि साधयेष्टानि माधव ’ । | |
| इति स्तुत्वा वेङ्कटेशं पापनाशनमाययौ ॥ | २० |
| तत्र स्नानेन सर्वाणि पापानि विलयं ययुः । | |
| ततो वायव्यदिग्भागे काञ्चिद्द्वारां जगाम सः ॥ | २१ |

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ३९१

| | |
|--|----|
| धारारूपेण पतितां अत्यन्तगिरिगह्वरे । | |
| चूतमन्दारपनसकुटजैश्चापि चार्जुनैः ॥ | २२ |
| नयनानन्दजननैः बहुशखिमिरावृते । | |
| सिंहशार्दूलशरभैः हरिणादिमृगान्वते ॥ | २३ |
| तापसैः नियताहारैः तपोनिष्ठैः समन्विते । | |
| तस्मिंस्तीर्थे कृतस्नानः कृतदेवर्षितर्पणः ॥ | २४ |
| वसानो वाससी शुद्धे यतवाक्कायमानसः । | |
| प्राङ्मुखः सुखमासीनो वेङ्कटेशमनुस्मरन् ॥ | २५ |
| लक्ष्मीमहीभ्यां सहितं भूषणोत्तमभूषितम् । | |
| स्मेराननाम्बुजं पीतवाससं तमधोक्षजम् ॥ | २६ |
| महादेवोक्तमन्त्रेण जपं कुर्वन् दिवानिशम् । | |
| फलाहारो जलाहारो निराहारस्ततः स्थितः ॥ | २७ |
| कुमारधारतीरे स्कन्दतपस्तुष्टभगवदाविर्भावः | |
| तपः कुर्वति शेषाद्रौ नीलकण्ठालम्बे शुभे । | |
| कुम्भमासे पौर्णमास्यां मघायां सौम्यवासरे ॥ | २८ |
| मध्याह्ने प्रादुरभवत् यथा मनसि चिन्तितः । | |
| “ भो कुमार ! कुमारे ’ ति प्राह गम्भीरया गिरा । | |
| उन्मील्य चक्षूषि तदा षण्मुखोऽपश्यदन्तिके ॥ | २९ |
| शङ्खं चक्रं धारयन्तं कराभ्यां फलप्रदशूरुगवामहस्तम् । | |
| प्राप्ये इमे इत्यपरेणपादौ सन्दर्शयन्तं करपङ्कजेन ॥ | ३० |
| लक्ष्मीमहीभ्यां ललिताकृतिभ्यां अशेषभूषोत्तमभूषिताभ्याम् । | |
| अतिप्रसन्नाननपङ्कजाभ्यां निषेव्यमाणं नितरां प्रहृष्टम् ॥ | ३१ |
| दृष्ट्वोत्थितो देववरः कुमारः प्रदक्षिणानां त्रितयं विधाय । | |
| प्रणम्य साष्टाङ्गमनन्यचेताः कृताञ्जलिः स्तोत्रमथो चकार ॥ | ३२ |

“ जय देव ! जगन्नाथ ! जय लक्ष्मीपते ! हरे ! ।
जय लोकेश ! सर्वेश ! दोषापह ! नमो नमः ” ॥ ३३

भगवत्सेवार्थं कुमारधाराम्प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्

सर्ववाद्यान्यवाद्यन्त शङ्खध्वनिरभून्महान् ।
तुम्बुरुर्नारदश्चैव वीणाहस्तौ समागतौ ।
ब्रह्मा च स्कन्दसान्निध्यं ज्ञात्वा सर्वैः समागतः ॥ ३४

पार्वतीसहितः शम्भुः पुत्रस्नेहादुपागतः ।
आरुह्य वृषभं विघ्नराजाद्यैः प्रमथैर्वृतः ॥ ३५

इन्द्रादयो लोकपालास्त्वशेषा अमृतान्धसः ।
वैखानसा वालखिल्या ऋषयो ये तपोधनाः ॥ ३६

गन्धर्वाप्सरसां सङ्घा नागविद्याधरादयः ।
ये देवयोनयः सन्ति तेऽपि सर्वे समागताः ॥ ३७

“ जय जय वेङ्कटशैलनाथ ! विष्णो !
मुनिजनसेवित ! शेषशैलवास ! ।

सकलजनहितावतीर्ण ! देव !
जय जय भक्तजनाभिराम ! पाहि ” ॥ ३८

इति स्तुत्वा प्रणम्याथ ददृशुर्वेङ्कटेश्वरम् ।
श्रीभूमिसहितं विष्णुं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥ ३९

शङ्खचक्रधरं देवं वनमालविभूषितम् ।
शेषेण पक्षिराजेन विष्वक्सेनेन पार्षदैः ॥ ४०

प्रत्यहं सेव्यमानञ्च प्रह्लादादिभिरेव च ।
शुकेन शुकसन्तानैः छलचामरधारिभिः ।

प्रसन्नं वेङ्कटाधीशं प्रणम्य पुनरुत्थिताः ॥ ४१

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ३९३

व्यासादयः प्रणम्याथ सर्वे तूष्णीं स्थितास्तदा ।
सर्वेषु शृण्वत्सु तदा हरसूनुस्तमब्रवीत् ॥ ४२

स्कन्दकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः

“ नामाम्यहं वेङ्कटनाथ ! विष्णो !
नारायणाशेषजगन्निवास ! ।
भक्तार्तिहारिन् ! भगवन् ! मुरारे !
भान्विन्दुनेत्राखिल्लोकपूज्य ! ॥ ४३
ब्रह्मरुद्रादिवन्द्याय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये ।
नारायणगिरीशाय नमो नारायणाय ते ॥ ४४
देवाधिदैवतपते ! सततं नमस्ते
सेवा परेषु सुतरां करुणाकराय ।
दावानललय महते दनुजाटवीनां
श्रीवास ! वक्षसि धृतोत्तमकौस्तुभाय ॥ ४५
पश्यन्ति त्वां भाग्यवन्तो हि लोके
विश्वत्राणायोद्यतं वेङ्कटेशम् ।
लक्ष्मीभूभ्यां पार्श्वयुग्मस्थिताभ्यां
द्वाभ्यां नित्यं सेवितं नित्यबन्धुम् ॥ ४६
अहो ! भाग्यमहोभाग्यम् ! अहोभाग्यमहो महत् ।
वेङ्कटेशं कृपासिन्धुं दृष्टवानस्मि साम्प्रतम् ” ॥ ४७
इत्युक्त्वा पार्वतीपुत्रः प्रेमावेशवशात्तदा ।
अशेषवदनैः विष्णुं आबभाषे घनध्वनिः ॥ ४८
“ चक्षूषि मे कृतार्थानि दर्शनाद्वेङ्कटेश ! ते ।
श्रीसूक्तामृतसेकेन कर्णानपि तथा कुरु ” ॥ ४९

| | |
|---|----|
| इति वादिनि पुत्रे तु महादेवमुवाच ह । | |
| हरिः स्मेरमुखाम्भोजः शृण्वत्सु सकलेष्वपि ॥ | ५० |
| ‘ धन्योऽसि सुतरां शम्भो ! सत्पुत्रेणामुना त्वहो ! । | |
| अनेकजन्मतपसां फलं सत्पुत्रता खलु ॥ | ५१ |
| अनेकजन्मपापानां फलं दुष्पुत्रता भुवि ’ । | |
| इत्युक्त्वा पुनरुचे तं तनयं शूलपाणिनः ॥ | ५२ |
| ‘ धन्योऽसि कृतकृत्योऽसि वरं वरय साम्प्रतम् । | |
| तपसा तव सन्तुष्टिः स्तोत्रेण च ममाभवत् ॥ | ५३ |
| प्रमाणीकृत्य वचनं पितुः प्रामाणिकोत्तम ! । | |
| द्वादशाब्दं तपः कृत्वा शान्तोऽसीह सुखी भव ’ ॥ | ५४ |

स्कन्दः —

| | |
|--|----|
| अतः परं किं करणीयमास्ते | |
| मयाऽद्य लब्धा तव देव सेवा । | |
| समस्तलोकैरपि वेङ्कटेश ! | |
| सम्प्रार्थ्यते तावकपादसेवा ॥ | ५५ |
| अहो ! ह्यस्यापि भूर्भर्तुः महिमा सुतरां हरेः । | |
| ममाद्य तारकवधोद्धूता हत्या पृथक् स्थिता । | |
| श्रीनिवास दयाम्भोधे ! दुरितक्षयकारक ! ॥ | ५६ |

भगवद्वर्णितकुमारधारास्नानकालादिनिर्णयः

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| “ मदीयं मन्त्रमुच्चार्य सुखी भव महामते । | |
| एतत्पर्वतमारोढुं वाञ्छा यस्याविवेकिनः ॥ | ५७ |
| पातकं दूरतो नश्येत् किमु भक्तिमतस्तव । | |
| तत्रापि स्वामिसरसि स्नानं कोऽप्यघनाशनम् ॥ | ५८ |

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ३९५

शृण्वन्तु देवताः ! सर्वाः शृणु स्कन्द ! वचो मम ।
'कुमारधारिके' त्येव त्वन्नाम्नेदं भविष्यति ॥ ५९
तत्र स्नाति पुमान् स्त्री वाऽवश्यं कोऽपि तु मानवः ।
तस्य पापानि नश्यन्ति सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ६०
यो माघमासे वरपञ्चदश्यां
मघायुतायामथवाऽपि कश्चित् ।
स्नात्यत्र भक्त्या च कुमारधारिका-
तीर्थे स वन्द्यो विधिरुद्रजिष्णुभिः ॥ ६१
मदाविर्भावदिवसे यः स्नाति मनुजोत्तमः ।
तस्य पुण्यफलं वक्तुं शेषेणापि न शक्यते ॥ ६२
वर्षे वर्षे च दिवसे स्नातव्यमखिलैरपि ।
कुमारधारिकास्नानमशेषाघहरं विदुः ॥ ६३
तस्य पुण्यफलं वक्तुं शेषेणापि न शक्यते ।
तस्मिंस्तीर्थे स्वर्णदानं अणु मेरुसमं भवेत् ॥ ६४
वस्त्रदानञ्च गोदानं भूदानञ्च ततोऽधिकम् ।
यो वा ददाति मत्प्रीत्या तस्य लक्ष्मीः गृहे स्थिता ॥ ६५
अन्नं ददाति चैकस्मै तत्तीर्थदिवसे तु यः ।
फलं स लभते विप्रः सहस्रान्नप्रदानजम् ॥ ६६
प्रपां यः कुरुते मार्गे शीतलोदकपूरिताम् ।
तत्सन्ततिमहं सर्वा रक्षामि कृपयाऽनघ ! ॥ ६७
ताम्बूलं चन्दनं वापि ब्राह्मणानां ददाति यः ।
ते निष्पापा भवन्त्येव दशपूर्वैः दशापरैः ॥ ६८
कुम्भमासे पौर्णमास्यां प्रादुर्भावदिने हरेः ।
कुमारधारिकास्नानं कुलकोटिं समुद्धरेत् ॥ ६९

| | |
|--|----|
| इति मन्त्रं समुच्चार्य स्नात्वाऽनन्तफलं लभेत् । | |
| वर्षे वर्षे कुम्भमासे पौर्णमास्यां मघायुजि ॥ | ७० |
| देवा मनुष्याः सर्वे च स्नातुमायान्तु सर्वदा । | |
| पुण्यदेशेषु सर्वेषु वेङ्कटाद्रिः विशिष्यते ॥ | ७१ |
| तत्र सर्वेषु तीर्थेषु स्वामिपुष्करिणी वरा । | |
| ततोऽप्येतद्वरं तीर्थं मदाविर्भाववासरे ॥ | ७२ |
| इह शम्भुकुमार ! त्वं आकल्पं पूजयन् वस । | |
| एतत्तीर्थस्य माहात्म्यं बुद्ध्वा वै सर्वदेवताः ॥ | ७३ |
| प्रतिवर्षं स्नातुमत्र मां द्रष्टुञ्च तपोधनाः । | |
| आयान्ति सावधानं वै ममाऽविर्भाववासरे ॥ | ७४ |
| तस्माच्छम्भुकुमार ! त्वं सर्वदा वस पर्वते । | |
| इत्युक्त्वा तं तु हस्तेन पस्पर्शं गुहमच्युतः ॥ | ७५ |

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये कुमारधारास्नानेन स्कन्दस्य
तारकवधजनितब्रह्महत्याविनिर्मुक्तिवर्णनं
नाम चतुर्थोऽध्यायः

अथ पञ्चमोऽध्यायः

अगस्त्यादीनां कुमारधारातीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

अगस्त्यः—

‘ततस्तु देवा ऋषयश्च सर्वे गन्धर्वविद्याधरयक्षसिद्धाः ।
“आश्चर्यमाश्चर्य”मिति ब्रुवाणा दिव्यं हरेर्नाम च कीर्तयन्तः ।
कुमारधारां सततं स्तुवन्तो ययुः स्वधामानि मुदान्वितास्ते ॥ १

| | |
|--|---|
| शिवात्मजोऽपि तत्रैव भजन् वेङ्कटनायकम् । | |
| कुमारधारिकातीरे तिष्ठत्येव चिरं किल ॥ | २ |
| वर्षे वर्षे समायान्ति सिद्धगन्धर्वदानवाः । | |
| ऋषयश्च तथा सर्वे भूलोके प्राणिनस्तथा ॥ | ३ |
| स्नातुं तस्मिन् महातीर्थे त्वहो वेङ्कटवैभवम् । | |
| सुवर्णमुखरीतीरे लोपामुद्रापतिः स्वयम् ' ॥ | ४ |
| इत्युक्त्वा मुनिमुख्येभ्यः पुनरेवमुवाच ह । | |
| ' पञ्चमेभ्यो दिनेभ्योऽथ सेयं पञ्चदशी शुभा ॥ | ५ |
| यूयं सर्वेऽपि मुनयो मार्कण्डेय ! महामुने ! | |
| शुद्धकाञ्चीप्रदेशीया ! सर्वे गच्छत वेङ्कटम् ॥ | ६ |
| पुनः स्वामिसरस्तीरे वेङ्कटेशं विलोक्य च । | |
| तदुत्तरे पापनाशतीर्थे स्नानादिकारिणः ॥ | ७ |
| कुमारधारिकां गत्वा स्नानं कुरुत सत्तमाः । | |
| सर्वपापविशुद्धयर्थं ऐश्वर्यसमवाप्तये ॥ | ८ |
| मार्कण्डेय ! महाभाग ! किं तीर्थाचरणेन ते । | |
| सर्वतीर्थस्नानफलं अमुनैव भविष्यति ' ॥ | ९ |

भीस्तः—

| | |
|--|----|
| इत्युक्त्वा सर्वे एवैते समारुह्य वृषाचलम् । | |
| स्वामिपुष्करिणीस्नानं कृत्वा दृष्ट्वा च केशवम् ॥ | १० |
| पूर्णिमादिवसे माघे पापनाशे कृताऽऽप्लवाः । | |
| कुमारधारिकातीर्थे स्नातुं सर्वे समागताः ॥ | ११ |
| समस्तदेशजान् मर्त्यान् सर्वान् देवान् ऋषीनपि । | |
| योगिनः सनकाद्यांश्च सिद्धेगन्धर्वकिन्नरान् ॥ | १२ |

- समागतान् स्वर्णमुखीतीरजान् ऋषिसत्तमान् ।
 अगस्त्यशिष्यं शुद्धञ्च मार्कण्डेयमथाग्निजः ॥ १३
- दृष्ट्वा स स्नातुमायातान् प्रहृष्टहृदयोऽभवत् ।
 सर्वे कुमारधारायां सन्तुः सङ्कल्पपूर्वकम् ॥ १४
- वेङ्कटेशार्पणं कृत्वा दानं चक्रुश्च केचन ।
 गन्धर्वयक्षोरगसिद्धसाध्यदेवादिबृन्देष्वपि तीर्थवर्ये ।
 स्नातेषु सर्वेषु मुदाऽन्वितोऽसौ सस्तौ स्वयं शङ्करनन्दनोऽपि ॥
- विष्णोर्नुकञ्च श्रीसूक्तं भूसूक्तञ्च जपन् सदा ।
 तीरमारुह्य विप्राणां नमश्चक्रे प्रसन्नधीः ॥ १६
- ‘नमो ब्रह्मण्यदेवाये’ त्युच्चरन् पार्वतीसुतः ।
 तदा प्रादुरभूद्देवो वरदः शङ्खचक्रधृक् ॥ १७
- पश्यन्तस्तं सिन्धुजाकाश्यपीभ्यां
 युक्तं देवा ऋषयो मानुषाश्च ।
 मार्कण्डेयः स्वर्णमुख्या द्विजाश्च
 शुद्धाः तेनुः सर्वे एव प्रणामम् ॥ १८
- “लक्ष्मीमहीसेवित ! वेङ्कटेश !
 कृपानिधे ! कृष्ण ! जगत्तूयेश ! ।
 मां पालयानाथमनाथबन्धो !
 नमो नमस्ते चरणाम्बुजाय ” ॥ १९
- इति कृतनतीन् दृष्ट्वा देवः प्रसन्नमनास्तदा
 विजितजलध्वानं वाक्यं स्वयं हरिरब्रवीत् ।
 ‘इह विधिकृतं स्नानं दानं मम प्रियबुद्धितः
 सकलदुरितं हत्वा दत्ते सुखान्यखिलान्यपि ॥ २०

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे पञ्चमोऽध्यायः ३९९

| | |
|--|----|
| मार्कण्डेय ! महाबुद्धे ! सर्वतीर्थफलं तव । | |
| अनेन दत्तं शुश्रूषां मातापितोः कुरुष्व ह ॥ | २१ |
| अगस्त्यशिष्य ! विप्रेन्द्र ! त्वत्पापान्यखिलान्यपि । | |
| गतान्यनेन दत्तानि श्रेयांसि बहुशो मया ॥ | २२ |
| पुत्रदारादिसंयुक्तः सदाचाररतः सदा । | |
| दानानि बहु कुर्वाणः सुखी भव सुखी भव ' ॥ | २३ |
| इति ब्रुवन् वेङ्कटेशो दृग्गोचरमथो ययौ । | |
| इत्थं देवस्वामिनोक्ते गतेष्वपि सुरेषु च ॥ | २४ |
| शुद्धः स्वदेशमागत्य पुत्रदारसमन्वितः । | |
| स्नानं दानं जपं कुर्वन् 'वेङ्कटेश' इति ब्रुवन् ॥ | २५ |
| इह लोके परत्रापि परं सौख्यमवाप्तवान् । | |
| मृकण्डोराश्रमं गत्वा मार्कण्डेयः प्रसन्नधीः ॥ | २६ |
| पितरौ तु नमस्कृत्य वृत्तान्तं सर्वमब्रवीत् । | |
| वाक्यं गरुत्मतः पूर्वं वेङ्कटाचलवैभवम् ॥ | २७ |
| अगस्त्यशिष्यवृत्तान्तं सुवर्णमुखरीस्थलम् । | |
| श्रीवेङ्कटेशसेवाञ्च स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ | २८ |
| कुमारधारिकातीर्थमाहात्म्यं स्कन्दवैभवम् । | |
| आविर्भावं तस्य हरेः वाक्यं तस्य सुधामयम् ॥ | २९ |
| उक्त्वा स्वापित्रोः सकलं शुश्रूषामकरोत्तदा । | |

श्रीसूतः—

| | |
|--|----|
| वेङ्कटेशस्य माहात्म्यं यः शृणोत्यपि वा सकृत् ॥ | ३० |
| सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वश्रेयो भविष्यति । | |
| वेङ्कटाद्रेस्तु माहात्म्यं कुमारसरसस्तथा । | |
| शृणोति वा पठति वा तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ | ३१ |

कुमारधारिकातीर्थतीरे पठति यस्त्विदम् ।

शृणोति वा तस्य तस्य सर्वाभीष्टप्रदो हरिः ॥

३२

इति मार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यादीनां कुमारधारातीर्थ-

स्नानादिवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ।

॥ हरिः ॐ । ॐ तत्सत् ॥



श्रीवेङ्कटेश चरणारविन्दार्पणमस्तु इत्थं श्रीमार्कण्डेय पुराणान्तर्गतः

प्रथमप्रभृतिपञ्चमपर्यन्त पञ्चाध्यायात्मकः श्रीवेङ्कटाचल-

माहात्म्यपरो भागः समाप्तिमगमत् ।



श्रीरस्तु
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः
श्रियै पद्मावत्यै नमः
श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

(श्रीवामनपुराणान्तर्गतम्)

— : ❁ : —

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

विंशोऽध्यायः

प्रयागमाहात्म्यम्

हरिः ॐ

यच्छरीरं त्रयो वेदाः यच्चेष्टाऽऽथर्वणः स्मृतः ।

यदङ्गानि षडङ्गानि तस्मै बागात्मने नमः ॥

१

व्यासः—

कदाचित् दुःखितः प्राह जनको मिथिलाधिपः ।

शतानन्दं महाभागं सर्वज्ञं तत्त्वदर्शिनम् ॥

२

सीतादिस्वसुताविवाहाद्यर्थं जनकनृः कृतानुतापक्रमः

ब्रह्मन् ! मां बाधते दुःखं सीतादर्शनजं महत् ।

केन दुःखमिदं त्यक्ष्ये क आराध्योऽघनाशनः ॥

३

| | |
|---|----|
| दुष्टात्मा रावणो रक्षःपतिः वैश्रवणानुजः ।
हरेदयोनिजां सीतां किन्नु न ज्ञायते मया? ॥ | ४ |
| कमाराध्य महाभाग ! लप्स्ये जामातरं वरम् ।
समानोत्तमवंश्यश्च योग्यमस्या महामुने ! ॥ | ५ |
| ममापि दुहिता चैषा ह्यूर्मिल्ल नाम नामतः ।
कुशध्वजस्य च सुते कनिष्ठभ्रातुरेव मे ॥ | ६ |
| माण्डवीश्रुतकीर्त्याख्ये सुशीले सुमनोहरे ।
काऽसां चक्रे वरान् ब्रह्मन्निति चिन्ताकुलोऽस्म्यहम् ॥ | ७ |
| परमध्यात्मविद्योगी दृष्टलोकपरावरः ।
पुरोहितोऽस्य वंशस्य गतिर्मेऽस्तु भवानिह ॥ | ८ |
| वेदशास्त्रपुराणज्ञः कालवित् कालधर्मवित् ।
दुःखिनां दुःखहर्ता च सुखिनां स्मयनाशनः ॥ | ९ |
| त्वं मे गतिश्च परमा भवदुःखविनाशन ! ।
राजानो विषयासक्ताः कामक्रोधसमन्विताः ॥ | १० |
| कन्यारत्ननिमित्तञ्च ह्यागमिष्यन्ति कोटिशः ।
तेभ्यो युद्धं कथं दास्ये एकोऽहं ब्रह्मवित्तम ! ॥ | ११ |
| एतावन्तमहं कालं सुखं राज्यमशासिषम् ।
इदानीमस्मि दुःखार्तो वृद्धः पुत्री तपोधन ! ॥ | १२ |
| अजो विविक्तो विमलो विष्णुभक्तो ममात्मजाः ।
चत्वार एते शिशवः शिखिनो नास्त्रकोविदाः ॥ | १३ |
| ममानुजस्य पुत्राश्च विचिकित्सो विकर्तनः ।
प्रतर्दन इति त्वेते त्रयश्च शिशवस्तथा ॥ | १४ |
| वृद्धत्वादात्मनश्चैव पुत्राणाञ्चैव शैशवात् ।
कन्यकानाञ्च रत्नत्वात् दुःखितोऽहं तपोधन ! ॥ | १५ |

| | |
|---|----|
| कस्मादस्मादहं मोहात् निर्गमिष्याम्युपायतः । | |
| तं मे वद त्वं ब्रह्मर्षे ! गमिष्यामीह कां गतिम् ॥ | १६ |
| येन मन्वादयस्तीर्णाः संसाराख्यं महार्णवम् । | |
| इह दुःखञ्च राजानः तन्मे ब्रूहि तपोधन ! ॥ | १७ |
| कं ध्यात्वा पुरुषो लोके भुक्तिं मुक्तिञ्च विन्दते । | |
| आपद्रक्षाकरः को वा ? तं देवं ब्रूहि सत्तम ! ॥ | १८ |

जनकनृपतापापनोदनर्थं शतानन्दोक्तपुगतनेतिहासः

शतानन्दः —

| | |
|---|----|
| राजन् ! मनुष्या अपि यं प्रपन्नाः | |
| सन्त्यक्तदुःखाः सुखिनो भवन्ति । | |
| वक्ष्यामि देवं वरदं रमेशं तं | |
| प्राप्य दुःखानुनिधिं तरिष्यसि ॥ | १९ |
| पुराऽहं चम्पकारण्यात् तमसातीरमुत्तमम् । | |
| वाल्मीकिं मुनिशार्दूलं द्रष्टुमस्मि गतो नृप ! ॥ | २० |
| तेनागमनतुष्टेन प्रत्युद्यतो नृपोत्तम ! । | |
| उपचारैश्च पाद्याद्यैरतिथिः पूजितोऽस्म्यहम् ॥ | २१ |
| अभिवन्द्य मुनिश्रेष्ठं तच्छिष्यैश्च नमस्कृतः । | |
| क्रियां माद्याद्विर्कीं कृत्वा भुक्त्वा वाल्मीकिना सह ॥ | २२ |
| अन्यैश्च मुनिभिः सार्धं भरद्वाजादिभिस्तदा । | |
| वाल्मीकेराश्रमे रम्ये ह्यासं वाल्मीकिना सह ॥ | २३ |
| उक्त्वा कालोचिता वार्ताः कथाश्चात्र पुरातनीः । | |
| हृष्टावन्योन्यसङ्गेन ह्यभूव परमं नृप ! ॥ | २४ |
| एतस्मिन्नन्तरे स्वर्गादाजगाम च नारदः । | |
| शुद्धस्फटिकसङ्काशो महात्मा महतीं दधत् ॥ | २५ |

- तं दृष्ट्वा मुनिशार्ङ्गमुदतिष्ठत्तदासनात् ।
 सह शिष्यो मया सार्धं वाल्मीकिः भगवान् ऋषिः ॥ २६
 कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रीतिसंहृष्टमानसः ।
 सशिष्यः कल्पयामास पूजां तस्य विधानतः ॥ २७
 “इदं पाद्यमिदं त्वर्घ्यं इदमासनमेव च ।
 इदं मूलं फलं स्वादु भगवन् ! प्रतिगृह्यताम् ॥ २८
 आगतस्त्वं चिराद्ब्रह्मन् ! स्वागतं ते तपोधन ! ” ।

शतानन्दः—

- इति वाल्मीकिना शिष्यैः अभिवाद्य च पूजितः ॥ २९
 निषसाद च सुप्रीतो नारदो मृगचर्मणि ।
 आस्वाद्य फलमूलानि श्रमं स्वमपनीय च ॥ ३०
 कुशलं परिप्रच्छ वाल्मीकिं मुनिपुङ्गवम् ।
 “निर्विघ्नं ते तपो ब्रह्मन् ! वर्धते त्रिविधं मुने ! ॥ ३१
 अवन्ध्यास्तरवः काले भवन्त्यपि तवाऽऽश्रमे ।
 अपि क्रियार्थाः समिधः सुलभाश्च कुशा अपि ” ॥ ३२
 इति पृष्टस्तदा प्रीत्या प्राह नारदमुत्तरम् ।
 “त्वत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठ ! सर्वं मङ्गलमेव मे ॥ ३३
 वर्धते च तपो ब्रह्मन् ! त्रिविधं कालवित्तम् ! ।
 अकालेऽपि फलन्त्येव तरवो वासवाज्ञया ” ॥ ३४
 इत्युक्तो नारदस्तेन प्रमुमोद महाद्युतिः ।
 कृताञ्जलिपुटाः सर्वे परिवार्य च नारदम् ॥ ३५
 तदागमनसंहृष्टाः तस्थुः तद्वनवासिनः ।
 नारदेनाभ्यनुज्ञातः प्राप्य कृष्णाजिनासनम् ॥ ३६

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे विंशोऽध्यायः

४०५

कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रहो वाक्यविशारदः ।
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुङ्गवम् ॥ ३७
“ त्रैलोक्ये वैष्णवं क्षेत्रं किं श्रेष्ठं भुवि नारद ! ।
आब्रह्मलोकं सर्वं त्वं विशेषं दृष्टवानसि ॥ ३८
यत्तीर्थे सर्वतीर्थानि सन्निधानं व्रजन्ति च ।
यत्क्षेत्रवासिनां पुण्यमनन्तमिति कीर्त्यते ॥ ३९
यत्नाऽऽस्ते भगवान् विष्णुः सश्रीभूः पुरुषोत्तमः ।
तद्ब्रूहि मम देवर्षे! क्षेत्रं त्रैलोक्यपावनम् ” ॥ ४०

नारदः—

“ साधु पृष्ठं त्वया ब्रह्मन्! सर्वेषां हितकाम्यया ।
तत्ते वक्ष्यामि वाल्मीके! समाहितमनाः शृणु ॥ ४१
इममेव पुरा प्रश्नं पृष्ठः प्राह महेश्वरः ।
पुत्रेण षण्मुखेनैव जिष्णुना हिमवद्भिरौ ॥ ४२

स्कन्दः—

‘ हत्वा देवासुरे युद्धे तारकाख्यं महासुरम् ।
आगतोऽस्मि जयी तात! पादमूलं त्रिलोचन! ॥ ४३
बुभुक्षा बाधते तीवा ब्रह्महत्यासमुद्रवा ।
स्नात्वा भोक्ष्यामि यत्तीर्थे तत्तीर्थं तात! मे वद ’ ॥ ४४

स्कन्दं प्रति शंकरोक्तब्रह्महत्याविमुक्तिहेतूपन्यासः

महेश्वरः—

‘ सकृन्नारायणेत्युक्त्वा पुमान् कल्पशतत्रयम् ।
गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्नातो भवति पुत्रक ! ’ ॥ ४५
श्रुत्वा परममित्युक्त्वा भुक्त्वा पित्रा सहोमया ।
ततः पप्रच्छ पितरं शङ्करं लोकशङ्करम् ॥ ४६

‘उक्तो नारायणो देवः त्वया सर्वाघनाशनः ।
जनैराराधितः केन कर्मणा दृश्यते भुवि ॥ ४७
स कुत्र सेव्यते देवः प्रियं तस्यापि किं पितः !’ ।

नारदः--

इति पृष्टः पुनस्तेन पुत्रं प्राहाऽथ शङ्करः ॥ ४८

‘यं योगिनो मुनिवरा हृदि सन्निषण्णं
ज्येतिर्मयं प्रणवरूपमचिन्त्यरूपम् ।
आदित्यमण्डलनिवासमनन्तमाद्यम्
आराधयन्ति सततं तमुदीरयामि ॥ ४९

शङ्करः—

पुरा दक्षाध्वरे पुत्र ! तस्य शीर्षं मया हृतम् ।
तच्च हस्ततले लभ्यं ब्रह्महत्या च सङ्गता ॥ ५०
स्वर्गे कपाली भिक्षार्थी पर्यटन्नियतेन्द्रियः ।
न मोक्षं ब्रह्महत्याया अपश्यं तत्र पुत्रक ! ॥ ५१
मेरौ ब्रह्मसरस्तीरे तप उग्रमुपाश्रितः ।
स्नातुमभ्यागतो ब्रह्मा मामपश्यच्चतुर्मुखः ॥ ५२
तच्च दृष्ट्वा प्रणम्याहमतिष्ठं पुरतस्तदा ।
स मां कपालिनं दृष्ट्वा किमित्याह पितामहः ॥ ५३
तच्छ्रुत्वा ब्रह्मणो वाक्यं ततो देवं व्यजिज्ञप्त्वा ।
“किं ब्रुवे तात ! शप्तोऽस्मि दक्षं हत्वा तु तेन ह ॥ ५४
हत्यामोक्षं न पश्यामि कुत्र वा केन कर्मणा ।
दृष्टो भवान् मया दिष्ट्या शापमोक्षं वदस्व मे ” ॥ ५५

इत्युक्तश्च मया पुत्र ! ब्रह्मा प्राह च मां तदा ।

ब्रह्मा :—

‘ मा विषीद महादेव ! हत्यामोक्षं वदामि ते ॥ ५६

पुरा शङ्कर ! गङ्गाया यमुनायाश्च सङ्गमे ।

धनुस्त्रिशतविस्तीर्णे पुण्यक्षेत्रे च माधवे ॥ ५७

प्रयागक्षेत्रस्य भगवद्वर्णितप्रयागाभिधाननिरुक्तिः

माधवप्रीतये तत्र यज्ञाः सर्वे मया कृताः ।

प्रादुरासीत्तदा वेद्यां माधवो भक्तवत्सलः ॥ ५८

शङ्खचक्रगदापाणिः श्रीवत्साङ्कश्चतुर्भुजः ।

प्राञ्जलिस्तं प्रणम्याहं प्रसीदेत्यस्तुवं तदा ॥ ५९

प्रसन्नो माधवः प्राह ‘ ब्रह्मन् ! प्रीतोऽस्मि तेऽध्वरैः ।

प्रकृष्टाश्च कृता यज्ञाः प्रीतोऽहञ्च त्वयाऽनघ ! ॥ ६०

यत्तद्ब्रह्मन्निदं क्षेत्रं प्रयागाख्यं गमिष्यति ।

अस्यां वेद्यामहं नित्यं सन्निधानं करोमि ते ’ ॥ ६१

इतः प्रभृति ये पापाः पुरुषा याः स्त्रियश्च वा ।

क्षेत्रेशं मां प्रपश्यन्ति मुक्ताः सर्वे भवन्तु ते ’ ॥ ६२

इति दत्त्वा वरं देवो ममाभीष्टञ्च माधवः ।

आस्ते लक्ष्म्या महादेव ! प्रयागे पुण्यसत्तमे ॥ ६३

त्वञ्च हत्यासमायुक्तो मोक्षं तत्र गमिष्यसि ” ।

शङ्करः—

इत्युक्त्वा मां ततो ब्रह्मा सत्यलोकं जगाम ह ॥ ६४

शङ्करहस्तात् कपालविनिर्मुक्तिप्रकारः

ततः प्रीतो वरं लब्ध्वा पुण्यक्षेत्रं गतोऽस्मि तत् ।

क्षेत्रे प्रविष्टमात्रे तु मया हत्या पृथक् स्थिस्थिता ॥ ६५

पञ्चक्रोशाद्बहिर्भूता क्रोशन्ती विस्वरं गता ।
 कपालश्च च्युतो हस्तात् प्रससाद मनो मम ॥ ६६
 ततः स्नात्वा प्रयागेऽहं देवं नत्वा च माधवम् ।
 अयाचं माधवं क्षेत्रं देहीदं मे जनार्दन ! ॥ ६७
 इत्युक्तो माधवो दत्त्वा क्षेत्रं मे वरदः प्रभुः ।
 श्रिया परमया युक्तः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ ६८
 स्वं लोकश्च ययौ 'देवः तपः कुर्वि' ति मां वदन् ।
 तत्राहञ्च तपः कृत्वा ब्रह्महत्यां व्यपोह्य च ।
 विहरन्नुमया सार्धं तत्रैव हि षडानन ! ॥ ६९
 लक्ष्मीसहायं रमणीयवेषं अजं हरिं कालघनान्तरामम् ।
 पीताम्बरं पाटलपाणिपादं ध्यात्वाऽर्चयंस्तत्र वसामि पुत्र ! ॥ ७०
 इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये प्रयागमाहात्म्यवर्णनं
 नाम विंशोऽध्यायः ।

अथ एकविंशोऽध्यायः

~~~~~

अथ स्कन्दं प्रति शंकरकृतं तपःसमुचितवेङ्कटाद्रिवर्णनम्

नारदः—

स्कन्दः श्रुत्वा पितुर्वाक्यं मङ्गलं पापनाशनम् ।  
 पुनः पप्रच्छ संहृष्टः पितरं तत्त्वदर्शिनम् ॥ १  
 'ममापि तपसो योग्यं क्षेत्रं ब्रूहि शुभान्वितम् ।  
 न विघ्नास्तपतो यत्र प्रभवन्ति मम प्रभो ! ॥ २  
 त्वयाऽऽज्ञप्तस्तपस्तप्ये भवदुःखविनाशन ! ।  
 योगीन्द्रवन्द्यचरण द्वन्द्वानन्दैकलक्षण ! ॥ ३



मम शङ्कर तद्ब्रूहि वैष्णवं क्षेत्रमुत्तमम् ।	
एवमुक्तस्ततः शम्भुः पुत्रेण प्राप्तकारिणा ॥	४
उमामालोक्य संहृष्टो ध्यात्वा चैनं बभाण ह ।	
‘शृणु पुत्र महाभाग ! देवदुःखविनाशन ! ॥	५
वृषो नाम महाशैलो वृषेणाराधितः पुरा ।	
तं गच्छ शिखिना पुत्र कुरु त्वं तत्र वै तपः’ ॥	६

नारदः -

इति प्रतिसमादिष्टः पुनराह च षण्मुखः ।	
‘उक्तो यस्तत्र भवता वृषामिख्यो महागिरिः ॥	७
नायं कुलचलो नूनं कुत्राऽऽस्ते स महागिरिः ।	
किमर्थञ्च वृषस्तत्र तपस्तेपे महातपाः ॥	८
वृषः किं वृषभो धर्मो मनुर्वा नीललोहित ! ।	
प्रोक्तः कोऽयं भगवता ब्रूहि मे पुत्रवत्सल !’ ॥	९
इति पृष्टस्तस्तेन प्राह तं वृषभध्वजः ।	
‘नायं कुलचलः पुत्र ! मेरुपुत्रो महागिरिः ॥	१०
अञ्जनो नाम नाम्ना च त्रिषु लोकेषु विश्रुतः ।	
शैलः स्वर्णमयो वत्स ! रत्नसानुः सुशोभनः ॥	११
शेषमारुतसंवादे विधूतो दक्षिणां दिशम् ।	
नियुक्तोऽयं गिरिः पुत्र ! पूर्वमेव तु विष्णुना ॥	१२
सर्वतीर्थमयः पुण्यः पावनोऽञ्जनभूधरः ।	
सुदुर्लभो मनुष्याणां देवभूमौ वसन्निह ॥	१३
स्थातव्यं भवता शैलदक्षिणस्यां दिशीति वै’ ।	
एवमुक्तोऽपि हरिणा पितृस्नेहवशेन सः ॥	१४

पितुराज्ञामवेक्ष्यायं कञ्चित्कालमवर्तत ।	
शेषमारुतसंवादे प्रवृत्ते लोकभीषणे ॥	१५
मेरुगैवाऽभ्यनुज्ञातः प्रयातो दक्षिणां दिशम् ।	
आस्ते पूर्वोदधेः पश्चात् वत्सायं पञ्चयोजने ॥	१६
उत्तरे दक्षिणाब्धेस्तु षट्त्रिंशद्योजनान्तरे ।	
तीरे पुण्यतमे पुत्र ! रुक्मनद्यास्तथोत्तरे ॥	१७
क्रोशद्वयार्धमात्रे तु हरिचन्दनमण्डिते ।	
वने रम्यतमे वत्स ! नानापादपमण्डिते ॥	१८
सिद्धा मुनिगणास्तत्र तपः कुर्वन्ति नित्यशः ।	
चण्डालयवनाद्यैस्तु वेदबाह्यैश्च नास्तिकैः ॥	१९
नारोदुमपि यः शक्यः पावनः पर्वतोत्तमः ।	
शुकाद्या मुनयः केचित् भृग्वाद्याश्च तपोधनाः ॥	२०
प्रह्लादप्रमुखाः पुण्याः अम्बरीषादयो नृपाः ।	
दिष्णोरेवापरं देहं मन्वानाः तं नगोत्तमम् ॥	२१
पद्म्यामाक्रमितुं भीताः पर्यन्तेष्वेव वर्तनाः ।	
तन्निर्गतनदीष्वेव कुर्वाणाः स्नानतर्पणे ॥	२२
तपः कुर्वन्ति वान्छन्तः साक्षात्कर्तुं जनार्दनम् ।	
एवंविधः स शैलेन्द्रो नित्यमत्यन्तपावनः ॥	२३
शिखरं यस्य दृष्ट्वैव सद्यः पापैः प्रमुच्यते ।	
तत्राऽऽस्ते कोलरूपी तु महाविष्णुः सनातनः ॥	२४
उद्धृतां धरणीं देवीमालिङ्ग्यङ्के निधाय च ।	
आराधितो मुनिगणैः त्रिसन्ध्यं श्रद्धयाऽन्वितैः ॥	२५
तदा प्रभृति तत्पुण्यं वाराहं क्षेत्तमुच्यते ।	
तस्मिन् पुण्यतमे क्षेत्रे वाराहे वेङ्कटाचले ॥	२६

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकविंशोऽध्यायः ४११

सन्निधौ भूवराहस्य ये केचिन्नियतव्रताः ।	
शास्त्रोक्तेन विधानेन वाराहं मन्त्रमुत्तमम् ॥	२७
जपन्ति विजितात्मनो मासमेकं निरन्तरम् ।	
गृहक्षेत्रादिकं तेषां सद्यः सिद्ध्यति वाञ्छितम् ॥	२८
पृथिवीं ये च वाञ्छन्ति राजानः शासितुं चिरम् ।	
ये तु तत्र प्रकुर्वन्ति महादानानि षोडश ॥	२९
प्रीणयन्तो महीं देवीं दक्षिणाभिः तदुद्धृताम् ।	
तेषामादिवराहस्तु भगवान् भक्तवत्सलः ॥	३०
प्रयच्छति चिरं कालं महीं सागरमेखलाम् ।	
बुद्धजानपदोपेतां हतावग्रहकण्टकाम् ॥	३१
अनाहत्य तु यस्तत्र वराहवदनं हरिम् ।	
धरणीञ्च तदङ्गस्थां पृथ्वीं शासितुमिच्छति ॥	३२
तेन दोषेण तद्राज्यं पीड्यतेऽवग्रहैः सदा ।	
दस्युभिः शत्रुभिश्चैव महारोगैस्तथैव च ॥	३३
तस्मात् तत्र स्थितं देवं वराहं धरणीयुतम् ।	
सम्यगाराधयेद्राजा भक्तिश्रद्धासमन्वितः ॥	३४
तस्याग्रे देवदेवस्य सरस्त्रैलोक्यपावनम् ।	
स्वामिपुष्करिणी नाम सरसां वरमस्ति वै ॥	३५
त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि पावनान्यपि देहिनाम् ।	
पुष्करिण्यश्च नद्यो याः सन्ति ब्रह्माण्डगोचराः ॥	३६
तानि सर्वाणि षड्रक्तू ! स्वात्मनां पावनाय वै ।	
वर्षेर्वर्षे समायान्ति तत्तीर्थे स्नातुमात्मज ! ॥	३७
वैवस्वते मनौ पुत्र ! लोकं शासति चाऽज्ञया ।	
धर्मो मनुस्तपस्तेपे सोऽयं वृष इतीरितः ॥	३८

तपश्चरति तस्मिंस्तु ववृधे धर्म उत्तमः ।	
ततः प्रसन्नो भगवान् महाकोलो महीयुतः ॥	३९.
समक्षमब्रवीद्धर्म शरन्मेघ इव स्थितः ।	
“धर्म ! त्वया तपस्तप्तं वृषश्च ववृधे यतः ॥	४०
तस्मादयं गिरिवरो वृषाभिरुत्थां गमिष्यति ।	
तवापि लोकपालत्वं यमात्पश्चाद्भविष्यति ” ॥	४१
इत्युक्त्वाऽन्तर्दधे देवो गिरिमूर्ध्नि षडानन ! ।	
अथ लब्धवरो धर्मो जगाम च यथागतम् ॥	४२
इदानीञ्च महाभाग ! वायुरास्ते तपश्चरन् ।	
जपन् सतारकं मन्त्रं गणयन्नक्षमालया ॥	४३
परात्परतरं राममर्चयन् विधिपूर्वकम् ।	
श्रीभूमिसहितं देवं चतुर्बाहुं विरीटिनम् ॥	४४
शङ्खचक्रधनुर्बाणपाणिं नीलोत्पलद्युतिम् ।	
देवदेवं जगन्नाथं अपरोक्षं निरीक्षितुम् ।	
सर्वप्राणात्मको वायुः तपस्तीव्रं चरत्यहो ! ॥	४५
ब्रह्मादिदेवा अपि देवदेवं	
वाञ्छन्ति यं सेवितुमात्तभावाः ।	
तं वै वरेण्यं सकलान्तरस्थं द्रष्टुं	
तपो वर्धयते स वायुः ’ ॥	४६

नारद —

इत्युक्तो गुरुणा स्कन्दः पप्रच्छ पितरं पुनः ।	
‘ममापि वैष्णवं मन्त्रं वैष्णवेष्वपि चोत्तमम् ॥	४७
मन्त्रेषु वरदं शम्भो ! ब्रूहि तत्प्राप्तिसाधनम् ’ ।	
इति विज्ञापितः शम्भुः पुत्रेणाक्लिष्टकारिणा ॥	४८

तपःकरणाय स्कन्दस्य श्रीवेङ्कटाचलगमनम्

विधिनाऽऽशु ततः प्रादान्मन्त्रं तस्मै स तारकम् ।	
लब्ध्वा मन्त्रं महादेवात् स्कन्दः प्रीतोऽभवत्पितुः ॥	४९
प्रहः प्रदक्षिणं कृत्वा पितरं सोऽभ्यवादयत् ।	
प्रणम्य मातरं पश्चात् प्रतस्थे शिखिवाहनः ॥	५०
तं प्रस्थितं ततो दृष्ट्वा देवास्त्विन्द्रपुरोगमाः ।	
अनुजमुर्महात्मानं देवसेनापतिं विभुम् ॥	५१
तैर्देवैरन्वितो गच्छन् शिखिना वेगगामिना ।	
गिरिं स पादलक्षप्रसवणैरन्वितं ययौ ॥	५२
अध्वश्रमहरे तस्मिन् निषण्णः समरुद्गणः ।	
अदृष्ट्वा तत्र पितरौ विषण्णोऽभूत् सुराग्रणीः ॥	५३

बृहस्पत्युक्तः स्कन्दोत्पत्तिक्रमः

तं विषण्णं ततो दृष्ट्वा गुरुः प्राहेन्द्रचोदितः ।	
‘मा विषीद महाबाहो ! देवसेनापतेऽग्रणीः ॥	५४
किं न स्मरसि चात्मानं वैष्णवं धाम शाश्वतम् ’ ।	

नारदः—

इत्युक्तो गुरुणा स्कन्दः प्रीतः प्राह बृहस्पतिम् ॥	५५
‘कोऽहं ब्रूहि गुरो ! नाऽहं जानाम्यात्मानमात्मना ’ ।	
एवमुक्तो गुरुश्चैनं वक्ष्यामीत्याह कारणम् ॥	५६
‘उपप्लुतः तारकेण देवैः सेनापतीप्सुभिः ।	
याचितः प्राह भगवान् ब्रह्मा कारणवित् सुरान् ॥	५७

ब्रह्मा :—

‘सुरेन्द्र ! दक्षेण विमानिताऽथ सती यदा योगविसृष्टदेहा ।  
 तदा प्रतिज्ञां ह्यकरोन् त्रिनेत्रः सतीं विनाऽन्यां न भजामि चेति ॥ ५८  
 तपश्चचारातिमहत् सुधोरं दिगम्बरः स्थाणुवद्धूर्ध्वबाहुः ।  
 त्रिलोचनस्तम्भितवायुचारो विचिन्तयन्नात्मनि चात्मभावम् ॥ ५९  
 काले हि तस्मिन् असुरास्तपोऽचरन्मां प्रीणयन्नुग्रतपाः स तारकः ।  
 प्रीतस्ततोऽहं वरदस्तमब्रुवं वरं वृणीष्वेति मनोरथोऽप्यसतम् ॥ ६०  
 अयाचतान्येन तदा ह्यवध्यतां विना च शम्भोस्तनयेन सोऽसुरः ।  
 तथाऽस्त्विति प्रचतवरो मया ततो नाशोऽसुरस्यास्य परो न विद्यते ॥ ६१  
 सती च सा पर्वतराजकन्यका प्रवर्धते मेनकयोपललिता ।  
 तयैव संयोज्य च शङ्करं विभुं सुरेश्वरं प्रार्थय तारकान्तकम् ॥ ६२  
 विष्णोः कलांशो भविता भगवान् नः सुखावहः ।’

बृहस्पतिः—

एवमुक्तो विरिञ्चेन काममाहूय देवराट् ॥ ६३  
 रतिदेवीसमायुक्तं वसन्तसहितं तदा ।  
 अचोदयत्कर्मसिद्धयै देवानामेव शङ्करम् ॥ ६४  
 वशीकर्तुञ्च पार्वत्या संयोक्तुं कृतनिश्चयः ।  
 जगाम कामः स्थाणुं तं गिरिजायाश्च सन्निधौ ॥ ६५  
 जग्राहास्त्रं त्वभूद्गन्धः त्रिनेत्रेण तपोऽव्ययात् ।  
 कामं दग्ध्वा शिवस्तच्च जहावाश्रममुत्तमम् ॥ ६६  
 तपस्विनामयुक्तं हि सन्निधानं तु योषितः ।  
 जगाम कैलासगिरेरुत्तरे चाश्रमोत्तमम् ॥ ६७  
 ततश्चोमातपःशक्त्या वशीकृतपराक्रमः ।  
 उपयेमे तदा शम्भुरुमां काममजीवयत् ॥ ६८

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकविंशोऽध्यायः ४१५

कैल्यसशृङ्गे हिमवत्प्रदेशे कल्यधरः कामवशं प्रपन्नः ।  
रेमे हि सम्प्राप्य मनोरथांस्तान् उमासमेतः शरदां शतं सः ॥ ६९  
ततस्तमिन्द्रप्रमुखाश्च देवा ययाचिरे 'देहि सुतं भवेश ! ।  
पापेन तारेण हि पीडिताः स्मः पापञ्च तं हन्तुमलं महान्तम्' ॥ ७०  
इति याचितो गिरिजापतिरेतानमरान्विजनो भवितेति बभाण ।  
कुपितं गिरिशं मरुतो विदिताः सहसा विविशुः ककुभो हि दशैते ॥ ७१

त्रिससर्ज तदा तेजः क्षुभितं गिरिजापतिः ।  
तच्च तेजोमयं भूतमाववार हि मेदिनीम् ॥ ७२  
तेन तेजोमयेनेयं विकीर्णा सर्वमेदिनी ।  
धर्तुं तदक्षमा देवी तेजः प्राह मरुद्गणान् ॥ ७३  
'अहो दग्धाऽस्मि मरुतः ! पान्तु मां भवतेजसः ' ।  
ततो दृष्ट्वा तु देवास्ते मेदिनीं परितापिताम् ॥ ७४  
इत्यृचुरग्निदेवं स्वे तेजस्तेजसि धारय ।  
इत्यादिष्टो जातवेदास्तेज आवार्य शाम्भवम् ॥ ७५  
ररक्ष मेदिनीं दीनामापदो हव्यवाहनः ।  
तेजस्ततो धारयन्तं शाम्भवं जातवेदसम् ॥ ७६  
प्रीताऽऽह पार्वती देवी 'त्वमग्ने पुत्रवान् भव ।  
धृतं तेजस्त्वया यस्मात् तमात्त्वं सर्वजन्तुषु ॥ ७७  
गर्भे गर्भधरो भूत्वा विहर त्वं ममाऽज्ञया ।  
प्रीताऽस्मि ते त्वया ह्यग्ने ! स्कन्नं गर्भं धृतं यतः ॥ ७८  
भक्त्या ये त्वां पूजयन्ति तेषां पुत्रा भवन्तु वै ' ।  
इति तस्मै वरं दत्त्वा शशाप मरुतः शिवा ॥ ७९  
'इतः प्रभृति युष्माकमप्रजाः सन्तु पत्नयः ' ।  
उमा शशाप पृथ्वीञ्च 'पुत्रप्रीतिं न लप्स्यसे ॥ ८०

मत्पुत्रो न धृतो यस्मात् बहुभार्या भविष्यसि ।	
ततः प्रसन्ना सा देवी शङ्करेण समागता ॥	८१
तपस्तप्तुं जगामाऽऽशु भृगुप्रसवणं तदा ।	
ततो विमनसो देवाः पुनरुचुः चतुर्मुखम् ॥	८२
‘भवदाज्ञा कृताऽस्माभिः व्यर्था सा चागवत्प्रभो ! ।	
शशाप सा तदास्मान्वै किं कुर्मो ब्रूहि का गतिः ’ ॥	८३
धाता विज्ञापितो देवैः आह तान् सा यथाऽब्रवीत् ।	
‘तद्वचः सत्यमेवास्तु तस्या बाङ् नानृता भवेत् ॥	८४
किञ्च वक्ष्याम्युपायं वो जातवेदाः प्रदास्यति ।	
यूयं गङ्गां प्रार्थयध्वं सा गर्भं धारयिष्यति ’ ॥	८५
इति तस्य वचः श्रुत्वा देवा जम्भुर्यथागतम् ।	
गङ्गां सम्प्रार्थयामासुः देवाः सर्वे समागताः ॥	८६
ततः सा प्रार्थिता देवैः विसृष्टं वह्निना विभो ! ।	
त्वां दध्रे पार्वती गङ्गा तेजोराशिं महाद्युतिम् ॥	८७
सा च त्वां व्यसृजद्गङ्गा सन्तप्ता तेजसा तव ।	
उमाऽऽश्रमप्रदेशे तत् जातरूपमभूद्वनम् ॥	८८
कुमारं त्वां तदा दृष्ट्वा जातं हृष्टा दिवौकसः ।	
षट् कृत्याः प्रेषिता देवैः अदधुस्त्वां षडाननम् ॥	८९

### बृहस्पतिकृतस्कंदस्तुतिः

एवंप्रभावो बाल्ये त्वं कुमार ! सुरतापहन् ! ।	
त्वां प्रपद्ये सुवर्णभ ! शङ्करात्मज ! शङ्कर ! ॥	९०
त्वं विष्णुस्त्वं विधाता च त्वं रुद्रः कालरूपधृक् ।	
शिखिवाहन ! षडङ्ग ! कुमारस्तारकान्तकः ॥	९१



श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकविंशोऽध्यायः ४१७

सुब्रह्मण्यः शिखी स्कन्दः कुमारः षोडशाब्दकः ।

शरजन्मा शक्तिहस्तो गाङ्गेयोऽग्निसमुद्भवः ॥ ९२

एकवक्तो द्विबाहुश्च कुमारः पुरुषोत्तमः ।

मातृप्रीत्या च षड्वक्त्रः पार्वतीप्रीतिवर्धनः ॥ ९३

उज्ज्वलषड्द्रितयाक्षिविराजत्षण्मुख शङ्करनन्दन वीर ! ।

सर्वदिगीश्वरसैनिकनाथ ! शं दिश शक्तिधरेशकुमार ! ॥ ९४

द्वादशहस्तविराजित हे ते दुःखपरामरवैरिहरेश ! ।

द्वादशकोटिरविद्युतितेजः शं दिश शक्तिधरेशकुमार ! ॥ ९५

ये तव बालरविद्युतिराजत्कुलसरोरुहकान्तिपदाब्जम् ।

नो शिरसा प्रणमन्ति कुमार ! ते तनयं तु न हीह लभन्ते ॥ ९६

स्फुरन्तं चलन्तं तडित्कोटिकान्तिं मयूराधिरूढं मनोहारिवेषम् ।

पुलिन्दापतिं त्वां प्रपद्ये कुमारं कुमारश्च मे देहि मृत्युञ्जय ! त्वम् ॥ ९७

नारदः—

प्रसन्नो बभूवाथ वाग्भिः स्तुतोऽसौ गुहं प्राह भूतेशपुत्रो महात्मा ।

सुब्रह्मण्यः—

वरं ते ददामीह पुत्रानभीष्टान् स्वमृत्युं जय त्वञ्च तारुण्यमेवम् ॥ ९८

स्तोत्रेणानेन यो मर्त्यः त्वयोक्तेन गुरो ! भुवि ।

आनन्दयति मां नित्यं त्रिसन्ध्यं मानवोत्तमः ॥ ९९

स पुत्रधनधान्यादिसम्पदो लभते ध्रुवम् ।

अपमृत्युञ्जयं चापि सैभाग्यं राजपूज्यताम् ॥ १००

नारदः—

इति दत्त्वा वरं तस्मै देवान् सर्वान् विसृज्य च !

जगाम शिखिना तस्मात् कुमारो वृषभाचलम् ॥ १०१

तत्र रम्ये शुचौ देशे ददर्श सर उत्तमम् ।

स्नानार्थं देवपूजार्थं पद्मोत्पलसुशोभितम् ॥

१०२

स्कन्दस्य तपःकरणप्रकारः

कृतस्नानः सरस्तीरे कुमारः समुपाविशत् ।

दृष्ट्वा तपन्तं वायुञ्च तत्समीपे षडाननः ॥

१०३

त्रिसन्ध्यं देवदेवेशं नारायणमनुस्मरन् ।

आतिष्ठत्तप उग्रञ्च समाधिध्यानसंयुतः ।

ध्यायन्नारायणं देवं शङ्खचक्रधरं परम् ॥

१०४

पादद्वयालङ्कृतभूमिभागो भासा ज्वलत्काञ्चनतुल्यतेजाः ।

ध्यायन् परं ब्रह्म कुमार आस्ते परात्परं यन्महतो महत्तत् ॥ १०५

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुब्रह्मण्यस्य

वृषभाद्रिप्राप्तिवर्णनं नामैकविंशोऽध्यायः ।

— : \* : —

अथ द्वाविंशोऽध्यायः

~~~~~

शङ्करकथित श्रीनिवासाविर्भावहेतूपोद्धातः

ऋषयः —

ततः विष्मकरोदम्बा कुमारे वृषशैलगे ।

सा पुत्रवत्सल्य नूतं भवानी शिवसंयुता ॥

१

नारदः —

तपसोऽर्थे प्रयाते तु स्कन्दे काञ्चनतेजसि ।

देवसेनासमायुक्ते धनुःशक्तिधरे द्विजाः ! ॥

२

भर्तारं भक्तिनम्राऽथ पुत्रवात्सल्यचोदिता ।

पप्रच्छ पार्वती शम्भुं हरं चन्द्रार्धशेखरम् ॥

३

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे द्वाविंशोऽध्यायः ४१९

| | |
|--|----|
| ‘ किं करिष्यति ? पुत्रो मे तत्र बालखिलोचन ! ।
कथं द्रक्ष्यति तं देवमचिन्त्यो ब्रह्मणाऽपि यः ’ ॥ | ४ |
| इति पृष्टः स तां प्राह सोत्प्रासं परमेश्वरः ।
‘ शृणु देवि ! परं गुह्यं भविष्यते मयोच्यते ॥ | ५ |
| सर्वे च मुनयस्तस्मिन् आगमिष्यन्ति पर्वते ।
द्रष्टुकामाः परं ब्रह्म तपस्तप्तुमनुत्तमम् ॥ | ६ |
| देवा मनुष्याः पितरो गन्धर्वा यक्षराक्षसाः ।
सिद्धाः साध्याश्च गरुडाः पन्नगा ऋषयस्तथा ॥ | ७ |
| चरिष्यन्ति तपस्तस्मिन् गिरौ गिरिवरात्मजे ! ।
प्रत्यक्षं परमात्मानं द्रष्टुकामाः सनातनम् ॥ | ८ |
| अर्चयिष्यन्ति मां केचित् केचिद् ब्रह्माणमेव च ।
केचित् स्कन्दं महात्मानं शक्रं केचित्तथाऽपरे ॥ | ९ |
| योद्धुकामास्तथा केचित् अमरैरमरायः ।
उग्रं तपः करिष्यन्ति प्रीणयन्तश्च नः परम् ॥ | १० |
| आवां तत्र गमिष्यावः कालेन महता प्रिये ।
द्रष्टुं तत्परमं ब्रह्म तत्त्वं नारायणं परम् ॥ | ११ |
| श्रीवेङ्कटाचले पुण्ये यत्तु प्रादुर्भविष्यति ।
तत्प्रादुर्भावहेतोर्वै कर्तुञ्चापि महत्तपः ॥ | १२ |

सुदर्शनस्य शङ्करसमीपप्राप्तिक्रमः

| | |
|---|----|
| आवाभ्यामपि गन्तव्यं तथाऽन्यैः दैवतर्षिभिः ।
यत्कालाख्यञ्च तच्चक्रं करिष्यति तपो महत् ॥ | १३ |
| मदर्थं हिमवत्पुत्रि ! मद्द्वियोगैकदुःखितम् ।
विष्णुनैवाभ्यनुज्ञातं चक्रतीर्थे वसिष्यति ’ ॥ | १४ |

नारदः—

श्रुत्वैतत्पार्वती देवी वाक्यं शङ्करमब्रवीत् ।
 'आश्चर्यमुक्तं भवता विष्णुचक्रं प्रतीश्वर ! ॥ १५
 तत्पवितं करे विष्णोः वसत्येव सदा प्रभो ! ।
 त्वन्निमित्तं किमर्थं तत् तपस्तपस्यति शङ्कर ! ॥ १६
 त्वयि स्नेहश्च कस्तस्य ब्रूयेतन्मे महाद्भुतम् ' ।

नारदः—

एतच्छ्रुत्वाऽम्बिकां प्राह शङ्करो लोकशङ्करः ॥ १७
 'अनादिनिधनं दिव्यं अप्रमेयपराक्रमम् ।
 सहस्रारसमायुक्तं कोटिसूर्यसमप्रभम् ॥ १८
 सुदर्शनाख्यं तच्चक्रं विष्णोरेव तु पार्वति ! ।
 धर्तुमन्यैर्न शक्यं तत् तं विना पुरुषोत्तमम् ॥ १९
 तेन चक्रेण दिव्येन दग्धा वाराणसी पुरी ।
 सा राजधानी मे दिव्या कृत्याहेतोः विनाशिता ॥ २०
 कस्मिंश्चिदथ काले तु मयि प्रीतो जनार्दनः ।
 किमिच्छसीति मां प्राह वरदानसमुद्यतः ॥ २१
 एवमुक्ते मया तस्मात् याचितं वरमुत्तमम् ।
 "येन चक्रेण मे दग्धा पुरी वाराणसी हरे ॥ २२
 तद्यथा मद्रश्नं यायात् मम प्रेप्यञ्च माधव ! ।
 तथा कुरु मयि प्रीतो नान्यं वरमहं वृणे " ॥ २३
 एवं विज्ञापितो देवः प्रहस्य मधुसूदनः ।
 हस्तेन मम हस्ताग्रं गृहीत्वेदमुवाच ह ॥ २४
 "कथं सूर्यं परित्यज्य प्रभाऽन्यस्य भविष्यति ।
 एवं श्रीः कौस्तुभं चक्रं गरुडः शार्ङ्गमेव च ॥ २५

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे द्वाविंशोऽध्यायः

४२१

एवमादीनि वस्तुनि नित्यसिद्धानि शङ्कर ! ।

नैतेषां जन्मविलयौ नान्यस्तेषां व्यपाश्रयः ॥

२६

अशक्यमिदमत्यर्थं याचितं प्रमथाधिप ! ।

न चाहमनृतं वक्ष्ये तथैवास्तु यथेप्सितम् ॥

२७

एतत्सुदर्शनं दिव्यं कुतश्चित्कारणान्तरात् ।

ब्रह्मणा निर्मितं भूत्वा लेशेनावतरिष्यति ॥

२८

अवतीर्णन्तु तच्चक्रं त्वत्प्रेष्यत्वं गमिष्यति ।

दिव्यं वर्षसहस्रं तु त्वत्समीपे वसिष्यति ॥

२९

त्वया प्रत्यर्पितं पश्चात् स्वं भावमुपयास्यति ” ।

एवं विष्णुप्रसादेन वरदानसमागतम् ॥

३०

देवि चक्रं ममैतद्धि सहस्ररविसन्निभम् ।

विष्णवे च पुरा दत्तं मया पुरविमर्दने ॥

३१

मन्त्रोपदेष्ट्रे कालख्यं दक्षिणार्थं हि पार्वति ! ।

चिरं मया धृतं चक्रं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥

३२

रक्षणाय च देवानां नाशार्थं सुरवैरिणाम् ।

मया विहीनं यच्चक्रं मदर्थञ्चैव तप्स्यति ’ ॥

३३

नारदः—

श्रुत्वैतत्पार्वती प्रीता पुनः पप्रच्छ शङ्करम् ।

‘चक्रतीर्थमिति प्रोक्तं त्वया शङ्कर कुत्र तत् ॥

३४

ब्रूहि मे विस्तरात् शम्भो ! पावनं तीर्थमुत्तमम् ’ ।

इति पृष्टुः पार्वत्या प्राहैनां शङ्करः पुनः ॥

३५

‘वृषाद्रेः दक्षिणे पार्श्वे बहुप्रस्रवणे तटे ।

सन्त्याश्रमाः सप्तदश चक्रादीनां महात्मनाम् ॥

३६

| | |
|--|----|
| तावन्ति चैव तीर्थानि तेषु पुण्यतमानि वै । | |
| तत्राद्यं चक्रतीर्थं यत् वज्रतीर्थादधःस्थितम् ॥ | ३७ |
| कालचक्रतपःस्थानं कपिलोद्गमजं सरः । | |
| तत्र स्नानेन नश्यन्ति सर्वपापानि वै नृणाम् ॥ | ३८ |
| तद्वि विष्णोः परं क्षेत्रं महापुण्यतमं स्मृतम् । | |
| इत्युक्त्वा पार्वती प्राह भर्तारं भक्तिमत्यथ ॥ | ३९ |
| ‘वज्रतीर्थमिति प्रोक्तं केनेदं हेतुना सरः । | |
| यदूर्ध्वं चक्रतीर्थात्तु विद्यमानमुदीरितम् ’ ॥ | ४० |

इन्द्रस्य सहस्राक्षत्वप्राप्तिप्रकारः

| | |
|---|----|
| इति पृष्ठस्तु पार्वत्या प्राहेनां शङ्करः पुनः । | |
| ‘पुरा शक्रो महातेजा गौतमस्य स्त्रियं प्रियाम् ॥ | ४१ |
| भामिनीं तां समाक्रम्य शप्तोऽभूच्च महर्षिणा । | |
| तवैकामिच्छतो योनिं तत्सहस्रं भवत्विति ’ ॥ | ४२ |

शङ्करः—

| | |
|---|----|
| ‘इत्युक्तमात्रे मुनिना सर्वाङ्गे योनयोऽभवन् । | |
| दृष्ट्वा सहस्रं योनीनां विषण्णोऽभूच्छचीपतिः ॥ | ४३ |
| ‘कष्टं मया बत कृतं युक्तं गन्तुं क वे’ति च । | |
| इति सञ्चिन्त्य सहसा जगाम ब्रह्मणः सरः ॥ | ४४ |
| तत्र पङ्कजनालेन निलीनोऽभूत्सुरेश्वरः । | |
| ततो देवाः सगन्धर्वाः ससिद्धाश्चारणैः सह ॥ | ४५ |
| द्रष्टुकामा महेन्द्रन्तं नापश्यन्मरालये । | |
| अनिन्द्रं सुरसैन्यं तत् दीनं दृष्ट्वा सुरादयः ॥ | ४६ |
| आक्रम्य देवलोकञ्च विविशुश्चामरावतीम् । | |
| मरुतस्ते शचीं देवीं वाक्पतिप्रमुखा ययुः ॥ | ४७ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे द्वाविंशोऽध्यायः ४२३

प्रणम्य तां महाभागां सर्वे प्राञ्जल्योऽब्रुवन् ।
'क यातस्ते पतिर्भद्रे ! वयं शत्रुभिरर्दिताः ॥ ४८
अदृष्ट्वा रक्षितारं तं अस्माकं व्यथिता वयम् ' ।
इत्युक्ता सा शची देवी जगाद सुरसत्तमान् ॥ ४९
'तेनाहं निशि शय्यायां भर्त्रा सुप्ता सुरोत्तमाः ! ।
क यातः स तु मायावी मया न ज्ञायते प्रभुः ॥ ५०
गुरुः सुराणामस्माकं नूनं जानाति वाक्पतिः ' ।

शङ्करः—

इत्युक्तास्तेऽमराः सर्वे पुलोमसुतया तदा ॥ ५१
प्रणम्य च गुरुं भक्त्या ब्रह्माणमिव शाश्वतम् ।
'अस्माकं ब्रूहि भगवन् ! इन्द्रः काऽऽस्ते महेश्वरः ' ॥ ५२
याचितः सोऽथ देवैस्तैः अपश्यद्योगवर्त्मना ।
विहस्य किञ्चिदमरान् प्राह वाचस्पतिस्तदा ॥ ५३
'कृत्वाऽकृत्यमसौ तस्य फलं प्राप्य शचीपतिः ।
आस्ते लज्जासमाविष्टो मेरौ पङ्कजनालके ॥ ५४
गच्छामस्तत्सरो देवा द्रक्ष्यामस्तं सुरेश्वरम् ' ।
इत्युक्त्वा तान् सुरान् सर्वान् जगाम सह तैर्गुरुः ॥ ५५
तत्सरः प्राप्य तानाह ' गायध्वं सुरसत्तमाः ' ।
इत्यादिष्टाः जगुः सर्वे गन्धर्वाप्सरसां गणाः ।
देवाश्च ऋषिभिः सार्द्धं तौर्यत्रिकसमन्वितम् ॥ ५६

'नाथ ! त्रयाणामपि विष्टपानामुपप्लुताः स्मः सुरैरिभिः प्रभो ! ।
आगच्छ देवेन्द्र ! जगच्च रक्ष सरोजलीनोऽसि कृतञ्च किं त्वया ' ॥ ५७

| | |
|---|----|
| श्रुत्वा गीतं सुरेशोऽथ ज्ञात्वा तानागतान् सुरान् ।
बहन् योनिशतं देवो दृश्योऽभूद्वल्लसूदनः ॥ | ५८ |
| निर्गत्यास्मात् पद्मनालत् स्वपदार्पितलोचनः ।
अवाङ्मुखो गुरोः पादौ जग्राह बल्लसूदनः ॥ | ५९ |
| उवाच दीनया वाचा देवेन्द्रोऽङ्गिरसः सुतम् ।
'आदित्यानां हितार्थाय तपोविघ्नं हि कुर्वता ॥ | ६० |
| मया फलमिदं प्राप्तं गौतमस्य महात्मनः ।
एतच्छ्रुत्वाऽथ धिषणो विहस्य गिरिजेऽवदत् ॥ | ६१ |
| 'कृतमेतत्त्वया वज्रिन् ! कामिना ज्ञातमेव मे ।
देवार्थं कर्म कृत्वैतत् फलं प्राप्तं भृगो रुषा ॥ | ६२ |
| देवा यूयं प्रार्थयध्वमेता मेढ्रा भव' न्त्विति ।
गुरोरेतद्वचः श्रुत्वा देवाः सर्वे वरानने ॥ | ६३ |
| 'तावन्मेढ्रा भवन्त्वेता योनयश्चेन्द्रमाश्रिताः ।
इत्थमुक्तेषु देवेषु योनयो मेढ्रां ययुः ॥ | ६४ |
| अथ दृष्ट्वा सहस्रन्तु मेढ्राणामप्सरोगणाः ।
'ऊचुरस्मानलं भोक्तुं बह्वैरेकक्षणादयम्' ॥ | ६५ |
| इति तासां वचः श्रुत्वा प्रीतोऽभूद्वल्लसूदनः ।
ततो विमानमारुह्य दंशनं चोद्वहन् महत् ॥ | ६६ |
| गीतवादित्रनिर्घोषैः पूरयन्म्वरं दिशः ।
विवेश च पुरीमिन्द्रो निहत्यसुरैरिणः ॥ | ६७ |
| सुखमात्यन्तिकं भेजे बहुभिः सोऽप्सरोगणैः ।
विजहारैकवारेण विषयासक्तचेतनः ॥ | ६८ |

| | |
|--|----|
| एवं स विहरन् नक्तं दिवा च गिरिकन्यके ! । | |
| न तृप्तिमाययौ कामी कामभोगैः सुदुस्त्यजैः ॥ | ६९ |
| “न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति । | |
| हविषा कृष्णवर्त्मव भूय एवाभिवर्धते ” ॥ | ७० |
| देवेन्द्रो विहरन्नेवं अशक्तः सोढुमद्रिजे ! । | |
| मेहनानां सहस्रं तु तेषां मोक्षमचिन्तयत् ॥ | ७१ |
| केनैतत्कर्मणा भोक्तुं शक्यं शिश्नसहस्रकम् । | |
| ‘नाशयिष्याम्यहं त्वेतत्तपसे ’ ति सुनिश्चितः ॥ | ७२ |
| धिषणेनाभ्यनुज्ञातो विष्वक्सेनसरो ययौ । | |
| विस्मृत्य देवानिन्द्राण्या ह्यातिष्ठत्तपसे सह ॥ | ७३ |
| विष्वक्सेनसरोधस्तात् वज्रेणाहत्य भूधरम् । | |
| स्नानार्थं देवार्जुनार्थं पातालयत् जल्माददे ॥ | ७४ |
| क्षीराहारो जितक्रोधो जितकामो जितेन्द्रियः । | |
| पादाङ्गुष्ठेन सम्पीड्य ह्यातिष्ठन्मेदिनीं शुभे ! ॥ | ७५ |
| जपंश्च नियतं देवीं गायत्रीं वेदमातरम् । | |
| पूर्णं वर्षसहस्रन्तु ततः प्रीतोऽभवद्धरिः ॥ | ७६ |
| वराहरूपो भगवान् धरण्या सह भूधरे । | |
| प्राह चेन्द्रं ‘सुरेशाहं वरदस्ते समागतः ॥ | ७७ |
| वृणीष्व यद्भीष्टं ते ददामि सुरसत्तम ! ’ । | |
| एवमुक्तोऽथ देवेन्द्रः प्रणम्य धरणीधरम् ॥ | ७८ |
| प्रीतस्त्वमसि देवेश वरं देहि दयानिधे । | |
| सहस्रमेतच्छिश्नानां विनैकं नश्यतां मम ॥ | ७९ |
| एवमेव वरं देहि ममैतावद्धि काङ्क्षितम् । | |
| ततो वराहो देवाय वरं दत्त्वा यथेप्सितम् ॥ | ८० |

| | |
|---|----|
| तलैवान्तर्दधे देवो वृषभाद्रौ वरानने ! ! | |
| ततः शिक्षाः सहस्रं ते न्यपतन् वज्रिदेहतः ॥ | ८१ |
| सद्यस्तेजोमया भूत्वा ब्राह्मणा वेदपारगाः । | |
| सहस्रमब्रुवन्निन्द्रं प्रीत्या परमया युताः ॥ | ८२ |
| ‘ शृणु देव ! वयं विप्राः पौलोमीसङ्गमेच्छया । | |
| तपः कृत्वा ततो भूमौ तवाङ्गे देवसत्तम ! ॥ | ८३ |
| मेढ्राः सहस्रमेवैते गौतमस्य तपोबलात् । | |
| स्वर्गस्त्रियोऽनुभुक्ताश्च तथेन्द्राणी यथासुखम् ॥ | ८४ |
| वरं ददाम ते प्रीता वृणीष्व बलसूदन ’ । | |
| इति तेषां वचः श्रुत्वा प्रीत्या वज्रघब्रवीद्धि तान् ॥ | ८५ |
| ‘ यदि प्रीताः स्थ मे विप्रा व्रणानां तु सहस्रकम् । | |
| भवन्तु चक्षूषि सदा भवतां तु प्रसादतः ’ ॥ | ८६ |
| तथाऽस्त्विति ब्रुवन्तस्ते द्विजा जग्मुस्तपोधनाः । | |
| सहस्रदृक्च देवोऽथ जातोऽभूद्भुताकृतिः ॥ | ८७ |
| सह शच्या विशालक्ष्या प्रविवेशमरावतीम् । | |
| दिव्यमङ्गलवाद्यैश्च हर्षयन् सर्वदेहिनः ॥ | ८८ |
| लब्ध्वा वरं देववरो वृषाद्रौ तुङ्गं समारुह्य तुरङ्गयुक्तम् । | |
| वज्री रथं काञ्चनमप्सरोभिः सुगीयमानश्च ययौ स्वगेहम् ’ ॥ | ८९ |

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये स्कन्दकृततपः-

प्रकारादिवर्णनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ।

सुवर्चलायां श्रीविष्वक्सेनोत्पत्तिक्रमः

नारदः—

- श्रुत्वा चित्रां कथां देवी पुनः प्रीताऽऽह शङ्करम् ।
 'विष्वक्सेनश्च को वाऽसौ विमर्शश्च तपोऽचरत् ॥ १
 किं लेभे कुत्र चाऽस्तेऽसौ ब्रूहि मे तत्त्वदर्शन !' ।
 श्रुत्वाऽथ पार्वतीवाक्यं प्रीतः प्राह महेश्वरः ॥ २
 'पुरा कृतयुगे देवी कुन्तला नाम चाप्सराः ।
 दुर्वासस्याऽऽश्रमं प्राप्य रम्यमिन्द्रेण चोदिता ॥ ३
 सा लस्यमकरोद्वाला महर्षेः भाविताऽत्मनः ।
 अग्रतो रुचिरां दृष्ट्वा सोऽशप्त कोपनो मुनिः ॥ ४
 'किराती भव दुर्बुद्धे कुन्तले नीलकुन्तले !' ।
 सा शप्ता कुन्तला भीता प्राञ्जलिः प्रणताऽवदत् ॥ ५
 'स्वाधीना नास्मि भगवन् ! क्षमस्व मम दुर्नयम्' ।
 प्राञ्जलिं प्रणतां दृष्ट्वा दुर्वासा वाक्यमब्रवीत् ॥ ६
 'नानृता वाक् च मे बाले ! शापमोक्षं वदामि ते ।
 भीरु ! पुत्रमुखं दृष्ट्वा पुनः स्वर्गं गमिष्यसि' ॥ ७
 इत्युक्त्वा सा पुनः प्राह 'पुत्रं विष्णुपराक्रमम् ।
 दीर्घायुषं तपोनिष्ठं सोताऽस्मि तव वैभवात्' ॥ ८
 इति नम्रां पुनस्तां तु 'तथाऽस्त्व' त्यब्रवीन्मुनिः ।
 वीरबाहोः किरातस्य पत्न्यां जज्ञे सुवर्चला ॥ ९
 पुत्री ह्यपुत्रिणस्तस्य ववृधे प्रीतिवर्धनी ।
 वरा सा रूपलावण्यगुणैः नारीगणेष्वभूत् ॥ १०

धर्मपुत्राय भद्राय तां पिता प्रददौ तदा ।
 पीनोन्नतस्तनी श्यामा सा बाल्य तनुमध्यमा ॥ ११
 कदाचित् फाल्गुने मासि शुक्लपक्षे शुभे दिने ।
 ऋतुस्नाता नर्मदायां स्थिता ऋक्षवतस्तटे ॥ १२
 अपश्यत्तां तु वरुणः सङ्गम्य ह्यवदच्च ताम् ।
 'प्रीतोऽहं सुभगे ! सुभु वृणीष्व वरमीप्सितम् ' ॥ १३

सुवर्चला. —

'प्रीतो यदि भवान् दद्याद्देव ! मे पुत्रमुत्तमम् ' ।
 वरुणस्त्वाह 'कल्याणि ! सुपुत्रा त्वं भविष्यसि ' ॥ १४

शङ्करः —

इति दत्त्वा वरं तस्यै ययौ जलपतिस्ततः ।
 तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य प्रीता साऽभूत् सुवर्चला ॥ १५
 साऽसूत पुत्रं तपनीयगात्रं पूर्णेन्दुवक्त्रं जलजामनेत्रम् ।
 शङ्खासिबाणासनकुम्भरेखासमुज्ज्वलद्रक्तकराङ्घ्रियुग्मम् ॥ १६
 देवदुन्दुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिश्च खाच्च्युता ।
 ववौ वायुः सुखस्पर्शः तज्जन्मदिवसे तदा ॥ १७
 पुण्यक्षे कर्कटे जातः सुवर्चलसुतो बली ।
 ववृधे वीर्यवांस्तत्र शुक्लपक्ष इवोडुराद् ॥ १८
 पुत्रस्य दशमे वर्षे कालधर्मं ययौ च सा ।
 ततस्त्यक्तश्च पित्राऽसौ काश्यपस्याश्रमं ययौ ॥ १९
 आयान्तं तं मुनिर्दृष्ट्वा ज्ञात्वा तं वरुणात्मजम् ।
 राजपुत्रं महात्मानं रूपलावण्यसंयुतम् ॥ २०
 प्रीतो जग्राह तं शिष्यं मन्त्रं प्रादान्महामुनिः ।
 लब्ध्वा मन्त्रं मुनिवराद्वेदान् साङ्गानधीत्य च ॥ २१

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे त्रयोविंशोऽध्यायः ४२९

| | |
|--|----|
| अनुज्ञातो ययौ तेन तपसे वृषभाचलम् । | |
| तपस्तप्त्वा चिरं कालं तैस्तैश्च नियमैः सह ॥ | २२ |
| सम्पूर्णं द्वादशे वर्षे मासि चाश्वयुजे शुभे । | |
| पूर्वाषाढे च पुण्यर्क्षे वरं लब्ध्वा जनार्दनात् ॥ | २३ |
| सारूप्यं श्रीपतेस्तस्य सैनापत्यमवाप्य च । | |
| शङ्खचक्रगदापाणिः विष्णवाज्ञापरिपालकः ॥ | २४ |
| पञ्चायुधाश्रमाधःस्थात् ययौ स्वाश्रमतस्तटम् । | |
| नारायणाद्रेर्गिरिजे ! गन्धर्वैः परिवारितः ॥ | २५ |
| चतुर्दशानां जगतामधीश्वरैः महाबलैः भूतगणैः महास्वनैः । | |
| ज्वलच्छिखैः उज्ज्वलहेतिभिर्वृतो नैर्ऋत्यकोणे त्ववसद्विरेस्तटम् ॥ | २६ |
| विष्वक्सेनस्य यदिदं जन्म प्रोक्तं मया तव । | |
| आश्रमाणां प्रसङ्गेन न तत्कर्मनिबन्धनम् ॥ | २७ |
| अवतीर्णस्तु देवोऽसौ देवैरभ्यर्थितः पुरा । | |
| विष्णोराज्ञां पुरस्कृत्य विष्णुतुल्यपराक्रमः ॥ | २८ |

चक्रादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यम्

| | |
|---|----|
| विष्वक्सेनाश्रमादूर्ध्वं सरस्यः पञ्च चोज्ज्वलाः । | |
| पञ्चायुधैः भगवतो देवि ! नित्यमुपाश्रिताः ॥ | २९ |
| तत्तदाकरयुक्तास्ताः दृश्यन्तेऽद्यापि पर्वते । | |
| तासामूर्ध्वं जातवेदाः तपस्तेपे सरोवरे ॥ | ३० |
| तत्सरस्तु दुरारोहमगाधं पापनाशनम् । | |
| आग्नेयमिति विख्यातं तीर्थानामुत्तमोत्तमम् ॥ | ३१ |
| ब्राह्मं सरस्ततश्चोर्ध्वं पावनं परिकीर्तितम् । | |
| सप्तर्षीणां ततश्चोर्ध्वं आश्रमाश्च सरांसि च ॥ | ३२ |

एषां सप्तदशानाञ्च हेकैकं पापनाशनम् ।
दर्शनात् कीर्तनाच्चापि स्नानात् पानाच्च पार्वति !' ॥ ३३

नारदः—

श्रुत्वैतत्पार्वती प्राह भर्तारं भक्तवत्सलम् ।
'आदितः सरसामेषां माहात्म्यं वद शङ्कर !' ॥ ३४
सर्वलोकहितार्थाय पावनं पुण्यवर्धनम् ।
शंकरः प्राह 'पद्माक्षि ! शृणु दुर्वाससे पुरा ॥ ३५
ब्रह्मणा पृच्छते प्रोक्तं कापिलं लिङ्गमुत्तमम् ।
ऋषिणा कपिलाख्येन पाताले पूजितं सदा ॥ ३६
क्षीराभिषिक्तं सुरभेः उद्भिद्य भुवमुद्गतम् ।
कुपिता सुरभिस्तस्य मूर्ध्न्याधायान्वशात् खुरम् ॥ ३७
मा वर्धस्वेति लिङ्गन्तु नावर्धत खुराङ्कितम् ।
आदौ रजतवर्णञ्च मध्ये स्वर्णप्रभं महत् ॥ ३८
अग्रेऽरुणामं सम्भूतं पञ्चवक्त्रं त्रियम्बकम् ।
पञ्चवर्णं महाभीमं पातालाधिष्ठितं सदा ॥ ३९
महर्षिणा कृते पूर्वं कपिलेन प्रपूजितम् ।
'कपिलेश्वर' इत्येतत्कृते ख्यातं युगे पुरा ॥ ४०
त्रेतायामग्निना पश्चात् 'आग्नेय' मिति कीर्तितम् ।
अनाद्यन्तं महालिङ्गं द्वापरे चक्रपूजितम् ॥ ४१
कलौ युगे भविष्यं तत् कपिलापूजितं शिवम् ।
अग्रे कापिललिङ्गस्य सरोवरमनुत्तमम् ॥ ४२
पातालादुद्गतस्यास्य कपिलस्य महात्मनः ।
मार्गो हि तद्बलं गुह्यं कापिलं परिकीर्तितम् ॥ ४३

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे त्रयोविंशोऽध्यायः ४३१

| | |
|--|----|
| जलमिपूरितं तत्तु सरोवरमनुत्तमम् । | |
| दर्शनादेव तत्तीर्थं सर्वाधौघविनाशनम् ॥ | ४४ |
| दर्शनात् स्वर्गदं पुंसां स्त्रीणामपि च पार्वति ! । | |
| स्नाने पाने कृते तस्मिन् जरामरणनाशनम् ॥ | ४५ |
| सकृत्स्नातस्य तु फलं जनस्य शृणु पार्वति ! । | |
| वाजपेयाध्वमेधानां पुष्कलं फलमश्नुते ॥ | ४६ |
| वाजपेयात्पुनर्जन्म सकृत्स्नातस्य न च्युतिः । | |
| तदूर्ध्वसरसि स्नातो वज्रतीर्थमिति स्मृते ॥ | ४७ |
| दशाधिकफलं लब्ध्वा शकलोकं स गच्छति । | |
| वज्रतीर्थोर्ध्वतः कुण्डे विष्वक्सेनसरोवरे ॥ | ४८ |
| स्नातस्तु यस्तस्य फलं शताधिकमितीरितम् । | |
| एवं सप्तदशानां तु तीर्थानामधिकं फलम् ॥ | ४९ |

कापिलारख्यचक्रतीर्थस्नानकालनिर्णयादिः

| | |
|---|----|
| त्रैलोक्ये सर्वतीर्थानि कार्तिके मासि पर्वणि । | |
| मध्याह्ने कापिले तीर्थे सान्निध्यं यान्ति पार्वति ! ॥ | ५० |
| तिष्ठन्ति प्राणिरक्षार्थं मध्याह्ने दश नाडिकाः । | |
| तत्र स्नातास्तु ये पापाः पुरुषा योषितोऽमले ! ॥ | ५१ |
| सर्वपापविनिर्मुक्ता ब्रह्मलोकं प्रयान्ति वै । | |
| तत्र दानानि कुर्वन्ति ये नरास्तीर्थसन्निधौ ॥ | ५२ |
| तिलमात्रहिरण्यन्तु दत्तं मेरुसमं भवेत् । | |
| भिक्षामात्रं तथान्नस्य दानं कापिलसन्निधौ ॥ | ५३ |
| कुर्वन्ति ये नरा देवि सोमलोकं व्रजन्ति ते । | |
| कन्यागोभूप्रदातारो विद्यामन्त्रोपदेशकाः ॥ | ५४ |

| | |
|--|----|
| स्वर्गकैलासवैकुण्ठब्रह्मलोकान् वजन्ति ते । | |
| ‘वर्षे वर्षे तु कार्तिक्यां पौर्णमास्यां महातिथौ ॥ | ५५ |
| आयान्ति सर्वतीर्थानि मध्याह्ने कापिलं सरः ’ । | |
| इमं मन्त्रं समुच्चार्य स्नातस्तत्फलमाप्नुयात् ॥ | ५६ |
| स्नानं तु दुर्लभं तत्र तद्विष्णोः परमं पदम् । | |
| इति ते कथितं सर्वतीर्थमाहात्म्यमुत्तमम् । | |
| अतः परं प्रवक्ष्यामि पवनस्य तपो महत् ’ ॥ | ५७ |

इति श्रीवामनपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये चक्रादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यवर्णनं
नाम त्रयोविंशोऽध्यायः

अथ चतुर्विंशोऽध्यायः

भगवन्तमुद्दिश्य वाय्वादिकृततपःप्रकारः

शङ्करः—

| | |
|--|---|
| ‘वायोस्तपः प्रभावन्तु शृणु देवि ! ततः प्रिये ! । | |
| ग्रीष्मे पञ्चतपा वायुः वर्षासु भुवि तिष्ठति ॥ | १ |
| हेमन्ते शिशिरे चापि शेते स्वामिसरोजले । | |
| एवं वर्षसहस्रान्ते देवदेवो जनार्दनः ॥ | २ |
| प्रादुर्भविष्यति हरिः वायोः प्रियचिकीर्षया । | |
| ततः पश्चात्तु शङ्खस्य राज्ञः प्रियचिकीर्षया ॥ | ३ |
| विश्वविख्यातसुमहाप्रादुर्भावं करिष्यति । | |
| सर्वलोकहितायैव शङ्खव्याजेन वै हरिः ॥ | ४ |
| श्रीवेङ्कटाचले पुण्ये प्रादुर्भावं गमिष्यति । | |
| तस्य हेतोस्ततः पूर्वं कर्तुञ्च सुमहत्तपः ॥ | ५ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४३३

आवां तत्र गमिष्यावः चिरकालादनन्तरम् ।
गमिष्यन्ति सुराः सर्वे सह सर्वैः महर्षिभिः ॥ ६
तदा कुमारं द्रक्ष्यावो विष्णुभक्तिपरायणम् ।
इत्युक्त्वा शङ्करेणाथ विरराम तदा सती ॥ ७
ततः कालेन महता शङ्करो गमनोन्मुखः ।
बभाषे पार्वतीं देवीं पुत्रदर्शनलालसाम् ॥ ८

शङ्करः —

‘अयं स कालः सम्प्राप्तो यः पुरा ते मयोदितः ।
श्रीवेङ्कटाह्वयं गन्तुं महापुण्यं नगोत्तमम्’ ॥ ९
इति संस्मारिता देवी तदा पप्रच्छ शङ्करम् ।

पार्वती —

‘किं नु वायोस्तपः पूर्णं ? प्रादुर्भूतः किमीश्वरः ? ॥ १०
कथं प्रत्यक्षतां यातो वायोः नारायणो हरिः ? ।
किं नु तस्मै वरं प्रादात् ? तत्सर्वं शंस मे विभो ! ’ ॥ ११
इति शृष्टो महादेवः पार्वतीमब्रवीत्तदा ।

शङ्करः —

‘चचार खलु वै वायुः दारुणं सुमहत्तपः ॥ १२

प्रादुर्भूतं भगवन्तमुद्दिश्य वायुकृतविश्वरूपस्तुतिः

ततो वर्षसहस्रान्ते देवदेवो जनार्दनः ।
प्रादुर्बभूव भगवान् परमात्मा सनातनः ॥ १३
श्रीभूमिसहितो देवो गरुडोपरि संस्थितः ।
सरोषः शङ्खचक्राभ्यां अन्वितः शार्ङ्गबाणधृक् ॥ १४

| | |
|---|----|
| तं दृष्ट्वा विस्मितो भूत्वा वायुः सर्वात्मगोचरः ।
आसनादुदतिष्ठत्स मत्तोन्मत्त इव भ्रमन् ॥ | १५ |
| सम्पतन्नुत्पतन् हर्षात् उद्भ्रमन् विभ्रमन्नपि ।
'अद्भुतं किमिदं दृष्टं वृषभाद्रौ मयाऽद्य वै' ॥ | १६ |
| इत्युन्मादात् विसंज्ञोऽभूत् मुहूर्तं परमेश्वरि ! ।
उदतिष्ठत्संज्ञोऽथ ददर्श हरिमञ्जसा ॥ | १७ |
| यो वेदैश्च तपोभिश्च योगिभिः मुनिभिस्तथा ।
द्रष्टुं शक्यो न देवस्तु तमपश्यत्सनातनम् ॥ | १८ |
| प्रणनाम पुनश्चापि साष्टाङ्गं पुरुषोत्तमम् ।
वायुस्तुष्टाव गिरिजे ! भगवन्तं जनार्दनम् ।
तत्त्वार्थयुक्तया वाचा वेदवेद्यं सनातनम् ' ॥ | १९ |
| “नमस्ते देवदेवेश ! पुराणपुरुषोत्तम ! ।
श्रीधराऽनन्त ! गोविन्द ! जिष्णवे विष्णवे नमः ॥ | २० |
| एकस्त्वं पुरुषः साक्षात् आदौ मायासमन्वितः ।
जगदेकार्णवीकृत्य शेषे सागरसम्लवे ॥ | २१ |
| त्वन्नाभिपङ्कजोद्भूतो ब्रह्मा ब्रह्मविदां वरः ।
येनेदं जगदुत्सृष्टं चराचरसमन्वितम् ॥ | २२ |
| रजोगुणं समाश्रित्य जगत्सृष्टं त्वया विभो ! ।
सत्त्वं गुणं समाश्रित्य रक्ष्यते ह्यखिलं जगत् ॥ | २३ |
| तमोगुणं समाश्रित्य ह्रियते च पुनस्त्वया ।
जातास्त्वयि ब्रह्मरूपे ते प्रजापतयो नव ॥ | २४ |
| येभ्यः सम्भूतमेतत् देवमानुषराक्षसम् ।
मधुकैटभहन्ता त्वं सम्प्राप्ते ब्रह्मसङ्कटे ॥ | २५ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४३५

| | |
|---|----|
| ततोऽसुरं सोमकाख्यं हत्वा वेदञ्च तत्करात् । | |
| गृहीत्वा ब्रह्मणे प्रादात् मीनरूपी महेश्वरः ॥ | २६ |
| निराधारे जगत्पस्मिन् निरालम्बे चराचरे । | |
| आधारः कूर्मरूपी त्वं पुरुषोत्तम ! तिष्ठसि ॥ | २७ |
| गतामुद्धृत्य पातालं भुवं सगिरिकाननाम् । | |
| बोद्धाऽसि पोत्रिरूपेण त्वं महात्मा सनातनः ॥ | २८ |
| पुनः कृतयुगादौ तु हिरण्यारूपेऽसुरे सति । | |
| सैर्हीं प्रह्लादरक्षार्थं नरार्थननुमुद्रहन् ॥ | २९ |
| स्तम्भात् कालायसाज्जातो विदार्याऽथ महासुरम् । | |
| लक्ष्मीमालिङ्ग्य भगवन् ! रक्षिता त्वं जगत्त्रयम् ॥ | ३० |
| अथ कालान्तरे विष्णो ! यागे वैरोचनेर्विभो ! । | |
| त्वमिन्द्रचोदितो देव ! वामनो वाग्मिनां वरः ॥ | ३१ |
| पदानि लीणि याचित्वा प्रतिगृह्य महाबलेः । | |
| आक्रम्य भूर्भुवोलोकान् दत्त्वेन्द्राय जगत्त्रयम् ॥ | ३२ |
| चन्द्रमण्डलमासाद्य पद्मासनगतो विभो ! । | |
| अमृताऽन्नाधिपो विष्णो ! जगत्प्राप्तिं चराचरम् ॥ | ३३ |
| जापदग्न्यो महाबाहो ! राक्षसान् राजरूपिणः । | |
| हत्वा तद्रक्तकुण्डेषु कृत्वा पितृजलक्रियाम् ॥ | ३४ |
| महीं निःक्षत्रियां कृत्वा यज्ञं कृत्वाऽश्वमेधिकम् । | |
| दक्षिणार्थं महीं दत्त्वा काश्यपाय जगत्प्रभो ! ॥ | ३५ |
| गत्वा महोदधिं तत्र समुद्रेण कृताल्लयः । | |
| सह्यादौ रमणीये त्वं तपश्चरसि भार्गवः ॥ | ३६ |
| रावणे राक्षसे देव ! सम्भूते देवकण्ठके । | |
| ततस्त्रेतायुगे जिष्णो ! रामो दाशरथिः स्वयम् ॥ | ३७ |

| | |
|---|----|
| लक्ष्मणानुचरो भूत्वा भार्याहर्तारमाहवे । | |
| सपुत्रपौत्रं सगणं सामात्यं संहरिष्यसि ॥ | ३८ |
| बलभद्रोऽथ कृष्णस्त्वं वासुदेवः सनातनः । | |
| कल्यन्ते कल्किरूपी च भविताऽसि त्रिलोकधृक् ॥ | ३९ |
| आदित्यानाञ्च विष्णुस्त्वं ज्योतिषां त्वं प्रभाकरः । | |
| वसूनां पावकश्च त्वं रुद्राणां शम्भुरुत्तमः ॥ | ४० |
| ग्रहाणाञ्च बुधोऽसि त्वं देवानां बलभित् भवान् । | |
| सिद्धानां कपिलोऽसि त्वं देवर्षिणाञ्च नारदः ॥ | ४१ |
| यज्ञानां जपयज्ञोऽसि तपश्चासि तपस्विनाम् । | |
| यक्षाणाञ्च धनेशस्त्वं यमः संयमतां भवान् ॥ | ४२ |
| मत्स्यानां मङ्गरोऽसि त्वं वरुणो यादसां पतिः । | |
| आपगानाञ्च गङ्गा त्वं सरसां सागरो भवान् ॥ | ४३ |
| वायूनां प्राणवायुस्त्वं विधातृणां चतुर्मुखः । | |
| वर्णानां ब्राह्मणश्च त्वमाश्रमाणां गृही भवान् ॥ | ४४ |
| तारकाणाञ्च चन्द्रस्त्वं इन्द्रियाणां मनो भवान् । | |
| सिंहोऽसि त्वं मृगाणाञ्च गजेन्द्रोऽसि चतुष्पदाम् ॥ | ४५ |
| द्विपदां ब्राह्मणश्चासि पक्षिणां गरुडो भवान् । | |
| वासुकिस्त्वन्तु सर्पाणां विषाणां कालकूटकम् ॥ | ४६ |
| नागानां त्वमनन्तोऽसि मेरुस्त्वं कुलभूभृताम् । | |
| गिरीणां हिमवांश्च त्वं वेदानां सामरूपधृक् ॥ | ४७ |
| छन्दसामपि गायत्री मन्त्राणां प्रणवो भवान् । | |
| पशूनां सुरभिश्च त्वं हुतभुक् यज्ञभोजिनाम् ॥ | ४८ |
| अचराणां गिरिश्च त्वं वृक्षाणां पिप्पलो भवान् । | |
| सेनानीनां भवान् स्कन्दः क्षमा शौर्यवतां भवान् ॥ | ४९ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४३७

| | |
|---|----|
| बीजानामङ्कुरश्चासि प्राणिनां प्राणधृक् भवान् । | |
| ब्रह्मर्षीणां वसिष्ठस्त्वं चरतां पवनो भवान् ॥ | ५० |
| महर्षीणां भृगुश्च त्वं व्यासो वेदविदां भवान् । | |
| वाल्मीकिश्च कवीनां त्वं जनानां त्वं जनेश्वरः ॥ | ५१ |
| यत्सत्त्वं सर्वलोकेषु तेजोबलसमन्वितम् । | |
| तद्भवानिति विज्ञेयमिति ब्रह्मविदो विदुः ॥ | ५२ |
| सहस्रशिरसे तुभ्यं पुरुषाय नमो नमः । | |
| भुजासहस्रयुक्ताय ते सहस्रपदे नमः ॥ | ५३ |
| नानाविधानि देव ! त्वदायुधानि सहस्रशः । | |
| दीप्यमानानि सर्वाणि द्योतयन्ति दिशो दश ॥ | ५४ |
| वक्त्राणि तव तीव्राणि दंष्ट्राप्रतिभयानि च । | |
| बालार्कमण्डलाकारकुण्डलाभ्यां विभान्ति वै ॥ | ५५ |
| त्वत्पादाम्भोरुहैरेतैः सहस्रैर्भाति ते पदम् । | |
| बालार्कद्युतिसम्भिन्नरक्ताम्भोजैरिवाञ्छितम् ॥ | ५६ |
| पृथिवी पूरिता पद्मिराकाशं मूर्धमिस्तव । | |
| बाहुमिश्च दिशो व्याप्ता महाविष्णो ! नमोऽस्तु ते ॥ | ५७ |
| वेदास्तवैव निःश्वासाः चन्द्रसूर्यौ तवाक्षिणी । | |
| ज्योतिष्कणाश्च ताराणि जगद्रूप ! नमोऽस्तु ते ॥ | ५८ |
| कल्यकाष्ठामुहूर्तादिदिनरात्रिशरीरिणे । | |
| चतुर्युगाय कालाय नमोऽनन्ताय ते विभो ! ॥ | ५९ |
| कालदृक् कालरूपी च कालऽत्मा कालकारणम् । | |
| कालविद्धिरवेद्यस्त्वं विश्वमूर्ते ! नमोऽस्तु ते ॥ | ६० |
| आनादीनि च भूतानि महान्ति मधुसूदन ! । | |
| तव मूर्तानि रूपाणि भूतभावन ! ते नमः ॥ | ६१ |

| | |
|--|----|
| प्राणात्मा प्राणधृक् प्राणी साक्षी त्वं सर्वकर्मणाम् । | |
| नित्यः सर्वगतः स्थाणुः अचलस्ते नमो नमः ॥ | ६२ |
| शरीरभृत् शरीरी त्वं शरीरात्मा शरीरगः । | |
| शरीरकर्मणा स्पृष्टः शुद्धमूर्ते ! नमोऽस्तु ते ॥ | ६३ |
| अणीयसामणीयांस्त्वं महीयांश्च महीयसाम् । | |
| बृहताञ्च बृहच्च त्वं विश्वमूर्ते नमोऽस्तु ते ॥ | ६४ |
| खस्थस्त्वं खगुणश्चापि खगुणातीत एव च । | |
| खनूर्तिः खगतिश्चासि खगेशारूढ ! ते नमः ॥ | ६५ |
| ज्ञानात्मा ज्ञानदृग् ज्ञानी ज्ञानं ज्ञानवतां भवान् । | |
| ज्ञानविद्धिरविज्ञेयः तुभ्यं ज्ञेयाऽत्मने नमः ॥ | ६६ |
| वेदात्मा वेदवित् वेद्यो वैद्यो वेदविदां वरः । | |
| वेदान्तवेद्यरूपाय ब्रह्मरूपाय ते नमः ॥ | ६७ |
| अक्षराय क्षराद्याय ह्यक्षराकारधारिणे । | |
| क्षराक्षरविभक्तौ द्वावतीताय च ते नमः ॥ | ६८ |
| नमो निरन्तरानन्दमूलकन्दाय जिष्णवे । | |
| उष्णत्वमग्नौ शैत्यञ्च जले पृथ्व्याञ्च गन्धिता ॥ | ६९ |
| स्पर्शित्वञ्च भवान्वायौ नैर्मल्यं खे नमोऽस्तु ते । | |
| घनाः केशेषु नद्यस्ते भगवन् ! सर्वसन्धिषु ॥ | ७० |
| कुक्षौ च सिन्धवः सप्त नमस्ते जलमूर्तये । | |
| स्तोत्रैः स्तुताय स्तोत्राय स्तोत्रकृत्प्रियकारिणे ॥ | ७१ |
| स्तोत्रज्ञेयाय स्तुत्याय स्तोत्ररूपाय ते नमः । | |
| अद्भुताकाररूपाय नमस्ते शार्ङ्गपाणये ॥ | ७२ |
| भक्तप्रियाय शान्ताय भक्तचिन्तानुवर्तिने । | |
| भक्तपापविनाशाय नमस्ते शार्ङ्गपाणये ॥ | ७३ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४३९.

रक्षाकराय जगतां रक्षोघ्ने राक्षसारये ।
श्रीवत्सवक्षसे तुभ्यं शार्ङ्गपाणे ! नमो नमः ॥ ७४
श्रिया सरोजकरया सरोजान्तरवर्णया ।
दिव्याभरणविद्योतिदेहया दिव्यवेषया ॥ ७५
पलाशश्यामया देव्या धरिण्योत्पलहस्तया ।
संश्रितोभयपार्श्वाय नमस्ते शार्ङ्गपाणये ॥ ७६
चराचराणि भूतानि भीतानि चलितानि वै ।
लभन्ते न स्थितिं देव ! भीमरूप ! नमोऽस्तु ते ॥ ७७

युगान्तकालानलकोटितुल्य ! प्रभाभिरापूरितलोकजाल ! ।
रत्नाङ्गदालङ्कृतबाहुदण्ड ! नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रबाहो ! ॥ ७८
नमोऽस्तु देवा अपि लोकपाला भूताविशेषेण विरूपनेत्र ! ।
विमानगास्ते प्रणमन्ति चैते प्रसीद देवेश ! जगन्निवास ! ॥ ७९
पश्यामि देवेश तवैव देहे चराचराणीह गतागतानि ।
भूतानि चैतानि च भूतवास ! तपःप्रभावाच्च भवत्प्रसादात् ॥ ८०
अनेकरत्नान्वितभूषणानां प्रभाभिरादीपितलोकजाल ! ।
तडिद्गुणालङ्कृतमेघकान्ते ! प्रसीद देवेश ! जगन्निवास ! ॥ ८१
त्वदीयवक्त्राणि महाद्युतीनि कल्पान्तसूर्यानलसन्निभानि ।
दंष्ट्राकरालानि महास्वनानि बिभेमि पश्यन् भगवन् ! प्रसीद ॥ ८२
ब्रह्मत्रिणेत्रप्रमुवांश्च देवान् सयक्षगन्धर्वमहोरगांश्च ।
पश्यामि सर्वास्तव देव ! देहे प्रसीद देवेश जगन्निवास ! ॥ ८३
दिशो न जाने न रुभे च शर्म सीदाम्यहो ! देववर ! प्रसीद ।
भक्तानुकम्पिन् ! परमार्थरूप ! प्रसीद विष्णो ! भगवन् ! प्रसीद ॥ ८४
शहरः — “ प्रसीदे ” ति नमस्कृत्य वायुः प्राञ्जलिरास वै ।
प्रीतोऽथ भगवान् विष्णुः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ ८५

श्रीभूमिसहितो देवो वरदो वायुमब्रवीत् ।
‘वरं वृणीष्व भद्रं ते वायो ! यन्मनसेच्छसि ’ ॥ ८६

वायुः —

‘वरं न याचे देवेश ! श्रीनाथ ! परमेश्वर ! ।
त्वत्सान्निध्यं ममैवेदं नित्यमस्तु रमापते !’ ॥ ८७

वायुं प्रति भगवत्कृतानवरतस्वसान्निध्यवरप्रदानम्

शङ्करः —

एतच्छ्रुत्वा हरिः प्राह देवतानाञ्च सन्निधौ ।

श्रीभगवान्—

‘चतुःषष्टिं त्वयोक्तानां श्लोकानां यः पठेन्नरः ॥ ८८
भुक्तिं मुक्तिं स लभते मत्प्रसादात् न संशयः ।
त्रिसन्ध्यं यः पठेत् भक्त्या पूजयन् मामनन्यधीः ॥ ८९
षण्मासान्मम सान्निध्यं लभते स न संशयः ।
तवास्तु यद्यदिष्टं तत् देवानामपि दुर्लभम् ॥ ९०
अस्य स्कन्दकुमारस्य पूजनं मम नित्यशः ।
आकल्पान्तं मया दत्तं तथा सान्निध्यमत्र वै’ ॥ ९१

शङ्करः —

वायुर्लब्ध्वा वरान् विष्णोः ययावथ सुराऽलयम् ।
आस्ते वृषाचले देवः श्रीभूमिसहितोऽनघे ॥ ९२
अप्रत्यक्षाऽलयो दृश्यो विहरन् गिरिमूर्धनि ।
नानाद्रुमलताकीर्णे सर्वर्तुगणसंयुते ॥ ९३
स्वामिवापीसमीपे तु कोटिकन्दर्परूपवान् ।
आस्ते लक्ष्म्या च धरया रमन् षोडशवार्षिकः । ९४

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४४१

| | |
|--|-----|
| दृष्ट्वा गुहोऽपि तं देवं चैतमासि शुभे तिथौ । | |
| आराधयं स्त्रिसन्ध्यं वै देवगन्धर्वकिन्नरैः ॥ | ९५ |
| नृत्यैरप्सरसाञ्चैव गीतवादिनिःस्वनैः । | |
| रमयंश्च रमानाथं उत्तरे गह्वरे गिरेः ॥ | ९६ |
| कुमारधारिका नाम तत्रं निर्झरिणी शुभा । | |
| मयूरवाहको देवि ! तस्यास्तीरे वसत्यहो ! ॥ | ९७ |
| ब्रह्महत्या तु या तस्य दुःसहा घोररूपिणी । | |
| सा वृषाचलशृङ्गाग्रे दृष्टमात्रे बहिः स्थिता ॥ | ९८ |
| स क्रमयानः शेषाद्रौ नित्यसेवां हरेरसौ । | |
| पुनरागमनं देवि ! षण्मुखो नाभिवाञ्छति ॥ | ९९ |
| अथ काले गते देवि ! बहुवर्षगणायुते । | |
| गरुत्मांस्तु वृषाद्रिं तं काञ्चनं रत्नमण्डितम् ॥ | १०० |
| उद्धृत्य 'अहं विष्णुलोकं गमिष्यामी' त्यचिन्तयत् । | |
| तज्ज्ञात्वा भगवान् विष्णुर्गुरुडं त्वाह सुस्मितः ॥ | १०१ |

भगवान्

| | |
|---|-----|
| 'पक्षिराज ! महासत्त्व ! शृणु कारणमुत्तमम् । | |
| गरुत्मन्निह सर्वे वै वसाम गिरिमूर्धनि ॥ | १०२ |
| त्वं गिरेर्दक्षिणं सानुमासाद्य वस नित्यशः । | |
| शेषाऽऽगच्छ वसेह त्वं ताक्ष्याधःशैलरूपधृक् ॥ | १०३ |
| तावन्नित्यं मम प्रीत्यै शैलमाश्रित्य सर्वतः । | |
| आकल्पान्तं वसामीह जगत्पालनकारणात् ॥ | १०४ |
| युगे युगे गिरिरयं नामानि विविधानि वै । | |
| गमिष्यति वराण्येव वरदोऽयं वृषाचलः ॥ | १०५ |

| | |
|---|-----|
| कृते वृषाद्रिं वक्ष्यन्ति लेतायां गरुडाचलम् । | |
| द्वापरे शेषशैलश्च वेङ्कटाद्रिं कलौ युगे ॥ | १०६ |
| वेङ्कारोऽमृतबीजन्तु कटमैश्वर्यमुच्यते । | |
| अमृतैश्वर्यसङ्ख्याद्वेङ्कटाद्रिरिति स्मृतः ॥ | १०७ |
| विविधा मुनयश्चैव मनुष्याश्च युगे युगे । | |
| नारायणाद्रिं वक्ष्यन्ति नामभिः विविधैरसुम्' ॥ | १०८ |
| इत्याज्ञाप्य च तौ देवो रमया विहरन् सदा । | |
| आस्ते सुरासुरैर्वन्धः स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ | १०९ |
| आवां गच्छाव तं शैलं गिरिजे! गणसंयुतौ । | |
| नित्यं वसाव तलैव पश्यन्तौ गुहमव्ययम् । | |
| देवसेनापुलिन्दाभ्यां विहरन्तं वृषाचले' ॥ | ११० |

देव्या सहागतस्य शम्भोः शेषाचलाग्नेयदिगवस्थानम्

नारदः—

| | |
|---|-----|
| इत्युक्त्वा वृषमारूढः पार्वत्या सह शङ्करः । | |
| सगणश्च ययौ स्कन्दं द्रष्टुं तं वृषभाचलम् ॥ | १११ |
| उषित्वा वसतीस्तिष्ठो मार्गे पर्यतमूर्धसु । | |
| आराधितस्तदा तत्र देवैः सोमो वृषध्वजः ॥ | ११२ |
| स जगामास्थिकूटाख्यं वृषभाद्रौ सरोवरम् । | |
| मृतानामस्थिकूटानि प्रक्षिप्तानि सरोवरे ॥ | ११३ |
| येषान्तु पूर्वरूपास्ते समुद्रच्छन्ति तज्जलात् । | |
| तस्मात् तदस्थिकूटाख्यमागच्छ सर उत्तमम् ॥ | ११४ |
| अवरुह्य च तर्त्तरे वृषभादुमया सह । | |
| स्नात्वा तीर्थे महादेवः पार्वत्या सह शूलभृत् ॥ | ११५ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४४३

नत्वा श्रीशं वृषाद्रीशं दृष्ट्वा स्कन्दं ततः परम् ।
मयूरवाहनं बालं सोमः सोमकलाधरः ॥ ११६
आससाद् सरोमुख्यं शिवः स्वामिसरस्ततः ।
स्नात्वा श्रीशाभ्यनुज्ञातः पूर्वदक्षिणतो गिरिः ॥ ११७
कपिलस्य सरस्तीरे कापिलं लिङ्गमुत्तमम् ।
अपश्यद्रूपभारुढः चक्रपूजितमत्र वै ॥ ११८
प्रादुर्बभूव सगणः सुदर्शनपुरः शिवः ।

चक्रतीर्थे तपस्यन्तं सुदर्शनं प्रति शङ्करवचनम्

दृष्ट्वा सुदर्शनो देवो नत्वा बद्धाञ्जलिः स्थितः ॥ ११९
प्रीतोऽथ भगवानाह सुदर्शनमुमापतिः ।
'प्रीतस्ते तपसा चक्र ! यद्भीष्टं वृणीष्व ते ॥ १२०
ददामि देवैरपि यत् प्रार्थितं दुर्लभञ्च तत् ' ।
सुदर्शनो वरं वव्रे ज्ञात्वा प्रीतञ्च शङ्करम् ॥ १२१
'यदि प्रीतो गिरीश ! त्वं अन्तरात्मनि मे वस ।
नित्यं भीमश्च सौम्यश्च वरदो मृत्युहा भव ' ॥ १२२

नारदः—

'गिरीशः प्राह सुप्रीतः कालचक्रमनुत्तमम् ।
'हेतिराज ! महाबाहो ! पर्याप्तं तपसा तव ॥ १२३
विष्णोः वरप्रसादेन स्नेहो मयि तवाधिकः ।
प्रागेव दर्शितः सम्यक् शाठ्यं तत्र न किञ्चन ॥ १२४
दृष्टवानहमद्य त्वां मां प्रीणयसि किं ! पुनः ।
तदलं तपसा देव नाऽवयोर्विद्यतेऽन्तरम् ॥ १२५

| | |
|--|-----|
| अन्तरात्मनि ते वासः प्रार्थितो यस्त्वयाऽनघ ! । | |
| तदशक्यं महाचक्र ! विष्णोरन्यस्य कस्यचित् ॥ | १२६ |
| अन्तरात्मा हि सर्वेषामेको नारायणः प्रभुः । | |
| स्नेहातिशयतस्त्वेवं भवानाहेति मे मतिः ॥ | १२७ |
| दक्षिणार्थं तु दत्तस्त्वं चिरमाकाङ्क्षितोऽपि यत् । | |
| तलैवाशङ्कमानेन हरिणा त्वमुदीरितः ॥ | १२८ |
| ‘प्रसादय पुनः शम्भु’ इत्याह्वय महात्मना । | |
| तदेतद्विदितं सर्वं मया योगबलेन वै ॥ | १२९ |
| उपायश्चात्र दृष्टो मे त्वयि वासो ममेप्सितः । | |
| ममापि हि मतं तावत् त्वया निर्वर्त्यतां सखे ! ॥ | १३० |
| शुद्धसत्त्वस्य तद्विष्णोः सर्वयज्ञमयं वपुः । | |
| साक्षात् स्पष्टमहं भीतः तमे गुणसमाश्रयः ॥ | १३१ |
| वस्तव्यञ्च मया विष्णोः दिव्यमङ्गलविग्रहे । | |
| त्वामेव तदहं नित्यं विष्णोः नित्यानपायिनम् ॥ | १३२ |
| अनुप्रविश्य तद्देहे वसिष्यामि सुदर्शन ! । | |
| एवंसति ममाभीष्टं प्रार्थितं च तवाद्भुतम् ॥ | १३३ |
| उभयं प्रार्थ्यते तस्मात् कुरुष्व वचनं मम । | |
| ज्वालामालावृतो नित्यं वह मां हृदये स्थितम् ॥ | १३४ |
| सुवर्णाभं शतभुजं अष्टाविंशतिहस्तकम् । | |
| अथवा षोडशभुजं अष्टबाहुं चतुर्भुजम् ॥ | १३५ |
| ज्वालाकेशं त्रिनयनं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् । | |
| अर्चयिष्यन्ति मां लोके वसन्तं त्वयि नित्यशः ॥ | १३६ |
| उपचारैः तथा साङ्गैः पीठे शैवे च वैष्णवे । | |
| पुरुषा वा स्त्रियो वाऽपि भवन्तु फलभागिनः ’ ॥ | १३७ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४४५

इति दत्त्वा वरं तस्मै वरदो वृषभध्वजः ।
आस्ते तत्रेश्वरो नित्यं अदृश्यः सगणस्तटे ॥ १३८
वरं लब्ध्वाऽथ चक्रोऽपि पञ्चायुधसरो ययौ ।
आसाद्य स्वं सरोऽदृश्यः तपश्चरति नित्यशः ' ॥ १३९

शतानन्दः —

‘श्रुत्वैतन्मुनयः प्रीता आख्यानं नारदेरितम् ।
सार्द्धं वाल्मीकिना सर्वे जग्मुस्त वृषभाचलम् ॥ १४०
अहं तैरभ्यनुज्ञातो मिथिलामागतो नृप ! ।
इति ते कथितं सर्वमाख्यानं तु यथाश्रुतम् ’ ॥ १४१

व्यासः —

‘श्रुत्वा सविस्तरं वाक्यं अद्भुतं रोमहर्षणम् ।
पुनः प्रीतोऽभवद् राजा शतानन्दं पुरोधसम् ॥ १४२
‘शृण्वतस्ते कथां ब्रह्मन् ! तृप्तिर्मे नोपजायते ।
भूयः कथय मे ब्रह्मन् ! वेङ्कटाद्रीश्वरं प्रति ’ ॥ १४३

व्यासः —

शतानन्दः पुनः प्राह जनकं मिथिलापतिम् ।
‘वक्ष्यामि विस्तरेणाऽहं सावधानमनाः शृणु ॥ १४४
वामदेवेन मुनिना कथितां जनकाय वै ।
निमिपुत्राय च पुरा कथां यज्ञान्तरे नृप ! ’ ॥ १४५

इति श्रीवामनपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वायुं प्रति भगवत्सन्निध्य-

वरप्रदानादिवर्णनं नाम

चतुर्विंशोऽध्यायः ।

जनकं प्रति शतानन्दोक्तभगवदाविर्भावकथोपोद्धातः

शतानन्दः —

| | |
|---|----|
| पुरा तु जाह्नवीतीरे जनकं शंसितव्रतम् । | |
| अश्वमेधे महायज्ञे दीक्षितं मुनयोऽभ्ययुः ॥ | १ |
| तानभ्यर्च्य मुनीन् सर्वान् राजा स ऋषिसत्तमान् । | |
| जनकः प्रीतिसंहृष्टो वाक्यमेतदुवाच ह ॥ | २ |
| ‘अद्य मे सफलं जन्म सुतसञ्च महत्तपः । | |
| सङ्गम्य यूयमस्माकं यज्ञवाटमिहागताः ’ ॥ | ३ |
| तेनैव मुनयः सर्वे संहृष्टाः परमां मुदम् । | |
| ययुस्तत्र निशामेकां अवसन् मुनिसत्तमाः ॥ | ४ |
| बहु संभाषमाणानां अन्योन्यं वै महात्मनाम् । | |
| पर्यस्ता रजनी चापि प्रातःकालो ह्यवर्तत ॥ | ५ |
| कृत्वा प्रातस्तर्नीं सन्ध्यां मुनयश्च समागताः । | |
| यज्ञवाटं महात्मानो जनको यत्र तिष्ठति ॥ | ६ |
| नारायणकथाश्चापि कथयन्तः परस्परम् । | |
| आसीनास्तत्र ते सर्वे जनकेन महात्मना ॥ | ७ |
| तस्मिन् काले महातेजाः पर्यटन् पृथिवीमिमाम् । | |
| ब्रह्मर्षिः वामदेवस्तु सङ्गतो मुनिसत्तमः ॥ | ८ |
| अभ्युत्थितास्ततः सर्वे ऋषयो वेदपारगाः । | |
| पप्रच्छुः सङ्गताः सर्वे वामदेवं द्विजोत्तमम् ॥ | ९ |
| ‘भूरियं वामदेवाद्य परिक्रान्ता त्वया विभो ! । | |
| श्रोतुमिच्छामहे त्वत्तो नारायणकथां शुभाम् ॥ | १० |

| | |
|--|----|
| क वा वसति देवेशः श्रीनिवासो जगत्पतिः ? । | |
| उत्कण्ठा विद्यते चाऽस्य जनकस्य महात्मनः । | ११ |
| इति तैः परिपृष्टस्तु वामदेवस्तदाऽब्रवीत् । | |
| ‘नारायणगिरिर्नाम भूधरेन्द्रो द्विजोत्तमाः ! ॥ | १२ |
| इतो दक्षिणतश्चापि द्विशते योजने पुनः । | |
| तत्र देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ॥ | १३ |
| वसन्ति नियताऽऽहारा वेङ्कटाह्वयभूधरे । | |
| अहमप्यागतस्तत्र भूधरेन्द्रे द्विजोत्तमाः ॥ | १४ |
| अगस्त्यं नारदञ्चैव पुलस्त्यं पुलहं तथा । | |
| ऋतुमाङ्गिरसञ्चैव दक्षं जाबालिमेव च ॥ | १५ |
| योगाभ्यासरतांस्तांस्तु दृष्ट्वाऽहं पुनरब्रुवम् । | |
| किमत्र संज्ञता यूयमासीनाः पर्वते द्विजाः ॥ | १६ |
| इति पृष्ट्वास्तु ते सर्वे प्रत्युचुर्मै न किञ्चन । | |
| अगस्त्यः परमर्षिस्तु मामाहूय महायशाः ॥ | १७ |
| उवाच मुनिशार्दूलो निवामे तत्र कारणम् । | |
| ‘भगवन्तमुपासीनो नारदो योगवित्तमः ॥ | १८ |
| वसन् गोदावरीतीरे न ददर्श श्रियःपतिम् । | |
| वैकुण्ठे तु परे लोके तेनोद्विग्नमना मुनिः ॥ | १९ |
| ब्रह्माणं समुपागम्य पर्यपृच्छत् सनातनम् । | |
| ‘निवासः सर्वभूतानां परमात्मा सनातनः ॥ | २० |
| क प्रयातः परो देवः ? तन्मे ब्रूहि पितामह !’ । | |
| इति पृष्टस्तदा तेन ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ | २१ |
| ‘ध्यात्वा चिरमुवाचेदं नारदं प्राञ्जलिं स्थितम् । | |
| नारायणगिरिर्नाम भूमौ कापि महामुने ! ॥ | २२ |

| | |
|--|----|
| तस्मिन् हि रमया सार्धं रमते पुरुषोत्तमः । | |
| प्रीतिः सुमहती जाता तस्मिंस्तु गिरिमूर्धनि ॥ | २३ |
| गच्छ नारद ! सर्वेशं द्रष्टुमिच्छसि चेत्प्रभुम् । | |
| इति तेन समादिष्टो नारदो मुनिसत्तमः ॥ | २४ |
| ततस्तस्मादपाक्रम्य शैलेन्द्रमुपागमत् । | |
| आगच्छन्तं वयं सर्वे सङ्गताः पथि नारदम् ॥ | २५ |
| अस्माभिः सह सङ्गत्य पर्वतेन्द्रमुपागमत् । | |
| ततश्चतुर्मुखश्चापि देवैः सह समागतः ॥ | २६ |
| अस्माभिः सहितः पूर्वं तस्मिन्पर्वतसत्तमे । | |
| चचार भगवान् ब्रह्मा परमात्मानमव्ययम् ॥ | २७ |
| अदृष्ट्वा नारदं चास्मान् इत्युवाच पितामहः । | |
| ‘यावत्यः सरितश्चास्मिन् सरांसि च महामुने ॥ | २८ |
| याश्च सन्ति महापुण्याः पुष्करिण्यः शुभोदकाः । | |
| तटाकान्युदधानानि तथा प्रसवणानि च ॥ | २९ |
| वाप्यश्च सर्वदा पुण्या हृदाश्च मुनिसेविताः । | |
| यानि सन्त्येवमादीनि पुण्येऽस्मिन् पर्वतोत्तमे ॥ | ३० |
| तानि सर्वाणि विप्रेन्द्र ! सेवमानः समन्ततः । | |
| कुर्वन् प्रदक्षिणञ्चैव विचरस्व महीधरम् ॥ | ३१ |
| यावता भगवान् देवः कालेन द्रक्ष्यते हरिः । | |
| तावत्कालमिहैव त्वं विचरस्व महामुने !’ ॥ | ३२ |
| इत्युक्त्वा भगवान् देवो ब्रह्मा लोकपितामहः । | |
| स्वानुगैः सह देवैश्च तत्रैवान्तरधीयत ॥ | ३३ |
| वामदेवः— अगास्त्योऽथ महीपाल ! तैरेव मुनिभिः सह । | |
| प्रणम्य तस्मै देवाय ब्रह्मणेऽव्यक्तजन्मने ॥ | ३४ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे पञ्चविंशोऽध्यायः ४४९

चिन्तयन् वालुदेवाख्यं परब्रह्मस्वरूपिणम् ।
द्रष्टुकामश्च तं देवं वृषभाद्रिनिवासिनम् ॥ ३५

अगस्त्यस्य शेषाचलवायव्यदिशि महाभूतविलोकनम्

अतीत्य पश्चिमं भागं पर्वतस्य महीयसः ।
उदीचीं दिशमभ्यायात् तपसा च समन्वितः ॥ ३६
चिन्तयन् देवदेवेशं भूपाल ! हरिमीश्वरम् ।
संस्मरन् ब्रह्मणो वाक्यं विचचार ततस्ततः ॥ ३७
ऋषिभिः सहितः सर्वैः तपसा भावितात्मभिः ।
आदित्यकल्पतेजोभिः जटामण्डलधारिभिः ॥ ३८
संयुक्तो विचरंस्तत्र भूपते ! पर्वतोत्तमे ।
वायव्यां दिशि चाद्राक्षीत् इदमाश्चर्यमुत्तमम् ॥ ३९
“ शुद्धस्फटिकसङ्काशा तत्राऽसीन्महती शिल्प ।
दर्शनीयतमा स्निग्धा विस्तीर्णा विमल शुभा ॥ ४०
तस्यां शिलायामास्ते स्म समुच्छ्रिततनुः पुमान् ।
दीप्यमानः स्ववपुषा पर्वतेन्द्र इवापरः ॥ ४१
महाबाहुः विशालाक्षो महादंष्ट्रो महाहनुः ।
रक्तमाल्याम्बरधरो रक्तगन्धानुलेपनः ॥ ४२
बिभ्रद्रक्ते तथा दिव्यकुण्डले रत्नभूषिते ।
बिभ्रच्चन्द्रप्रतीकांशं स्निग्धहेमविभूषितम् ” ॥ ४३
अनेकरत्नसञ्छन्नैः भूषणैः सुविभूषितम् ।
श्यामं नानाविधैः रत्नैः शोभमानकिरीटकम् ॥ ४४
तमुपेत्य महाकायं महावीर्यं महाभुजम् ।
अगस्त्यो विस्मयाऽऽविष्टो भूयो भूयोऽन्ववैक्षत ॥ ४५

ततस्तमृषिशार्दूलः प्राह चैवं वचो नृप ! ।

प्रणम्य तस्मै देवाय ज्वलद्भास्करतेजसे ॥

४६

अगस्त्यः—

‘को भवान् सुमहावीर्य ! कस्य वा प्रियदर्शन ! ।

एतन्नस्त्वं तु तत्त्वेन पृच्छतां ब्रूहि नानृतम्’ ॥

४७

वामदेवः—

एवमुक्ते ततस्तेन नरेन्द्र ! मुनिना तदा ।

शृण्वतां प्रीतिदायिन्या वाचा मधुरया गिरा ॥

४८

महौजसं मुनीन्द्रं तं न किञ्चित्प्रत्यभाषत ।

स्तुवन्तश्च तदाऽगस्त्यमुदैक्षत पुनः पुनः ॥

४९

पश्यताञ्चैव सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् ।

अनर्द्धे महातेजाः तदद्भुतमिवाभवत् ॥

५०

ततस्ते मुनयः सर्वे विस्मयोत्कुललोचनाः ।

“अहो दृष्टम् ! अहो दृष्टम् आश्चर्यं” मिति चाब्रुवन् ॥

५१

‘दर्शयित्वा महाश्चर्यं रूपं भास्करसन्निभम् ।

मायया मोहयित्वाऽस्मान् सद्यो ह्यन्तरधीयत’ ॥

५२

इति ब्रुवन्तस्ते सर्वे मुनयोऽद्भुततेजसः ।

प्रणम्य तस्मै देवाय व्यचरन्तं महीधरम् ॥

५३

संवृतो मुनिभिः सर्वैः अगस्त्यो भगवांस्तदा ।

तमेव देवदेवेशं द्रष्टुकामोऽनपायिनम् ॥

५४

भागं परित्यज्य नरेन्द्र ! पश्चात् नारायणाद्रेः विमलं विशालम् ।

द्विजेन्द्रवर्यः सहसा महात्मा तस्योत्तरं भागमथ प्रपेदे ॥

५५

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवदाविर्भाव-

उपोद्धातो नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ।

अथ पट्टिशोऽध्यायः

~~~~~

शेषाचलोत्तरदिशि अगस्त्यादिकृतभगवदन्वेपणप्रकारः

वामदेहः ---

ततस्तस्मिन् महातेजाः विचरन् पर्वतोत्तमे ।	
उत्तरं भागमाश्चर्यं ददर्शाद्भुतदर्शनम् ॥	१
लम्बमानमहाशखैः जम्बूवृक्षैश्च पाण्डुरैः ।	
शुद्धस्फटिकसङ्काशैः फलवद्भिः सुशोभितम् ॥	२
सरितः पुण्यदास्तत्र ददर्श विमलोदकाः ।	
सर्वपापहराः शुद्धाः शतशः शुभदर्शनाः ॥	३
सर्वासु तासु पुण्यासु सरित्सु विमलासु च ।	
मुनीन्द्रो मुनिभिः सार्धं कृतशौचो यथाविधि ॥	४
स्नानं चक्रे प्रयत्नेन प्रयतः सुसमाहितः ।	
चिन्तयन् वासुदेवाख्यं हृदि नारायणं हरिम् ॥	५
कृत्वा स्नानक्रियाः सर्वाः अर्चयामास केशवम् ।	
अर्चयित्वा जगन्नाथं जगाम सुसमाहितः ॥	६
नरेन्द्र ! मुनिभिः सार्द्धं द्रण्डुकामः सुरेश्वरम् ।	
विचरन् सर्वशस्तत्र मुनीन्द्रः पर्वतोत्तमे ॥	७
ददर्श चोत्तरं भागं शोभितं विविधैः द्रुमैः ।	
मेघैः शैलनिभैश्चापि शोभितं शुभदर्शनम् ॥	८
मृगसर्पमहाव्यालद्विजसङ्घनिषेवितम् ।	
बहुपुष्पलताभिश्च सुसञ्छन्नमहीतलम् ॥	९
सुखत्रातानुचरितं शीतोदकतटाकम् ।	
अमरैः गीयमानञ्च पिबद्भिः पुष्पजं मधु ॥	१०

शैलकन्दरनिष्क्रान्तैः कोविलैः मधुरस्वनैः । सुस्वरैर्गीयमानञ्च गन्धर्वैस्तु निषेवितम् ॥	११
नृत्यद्विश्च महापक्षैः मयूरैरुपशोभितम् । अश्वत्थप्लक्षविल्वैश्च शोभितं बहुशाखिभिः ॥	१२
तिलकैः पुष्पितैश्चापि कृतमालैश्च पुष्पितैः । करञ्जैः कोविदारैश्च पाटलैश्चापि पुष्पितैः ॥	१३
अङ्गोलैः मातुलुङ्गैश्च शोभितं चित्रशाखिभिः । शिरीषशिशिपोत्तालहिन्तलपनसैस्तथा ॥	१४
तिमिशैः नक्तमालैश्च स्यन्दनैः चन्दनैस्तथा । बकुलैः पुष्पितैश्चापि राजद्विः रक्तचन्दनैः ॥	१५
एवं बहुविधैर्वृक्षैः नानाशाखोपशोभितैः । शोभितं शुभगन्धाढ्यं नानाधातुसमन्वितम् ॥	१६
पर्वतस्योत्तरं भागं मणिप्रवरसेवितम् । ददर्श नृपते ! धीमान् मुनिभिर्भगवांस्तदा ॥	१७
अथ तैर्मुनिभिः सार्वं विचरन् गिरिमूर्धनि । ददर्श दिव्यामाश्चर्यात् पद्मिनीं पद्मशोभिताम् ॥	१८
उत्फुल्लैरुत्पलैश्चापि प्रफुल्लैः कुसुमैस्तथा । शोभितां शुभगन्धाढ्यां प्रसन्नसलिलां शुभाम् ॥	१९
इन्दुस्फटिकसङ्काशां राजहंसनिषेविताम् । सिंहव्याघ्रगृगैश्चापि निनदद्विर्निषेविताम् ॥	२०
जलार्थिभिश्च मातङ्गैः शोभितां शुभदंष्ट्रिभिः । क्रौञ्चैः प्लवङ्गैः वाराहैः शोभितां शुभदर्शनैः ॥	२१
अधिकं शोभमानां तां कूजद्विश्च विहङ्गमैः । सेवितां देवगन्धर्वयक्षविद्याधरादिभिः ॥	२२

एवमत्यद्भुतां तां तु सर्वदुःखप्रणाशिनीम् ।	
दृष्ट्वा स विस्मयाविष्टो मुनीन्द्रः प्राह तान् मुनीन् ॥	२३
अगस्त्यः— 'अस्यां स्नात्वाऽथ गच्छामो दिशं प्राचीं महागिरेः ।	
लोकेऽस्मिन् श्रूयते चैषा पापहानिप्रदेति वै ॥	२४
सर्वपापहरा शुद्धा पद्मिनी लोकविश्रुता ।	
सर्वदुःखहरा चापि सर्वतीर्थफलप्रदा ' ॥	२५
एवमुक्त्वा तु तैः सार्धं ऋषिभिः भावितात्मभिः ।	
निवेश्य हृदि देवेशं ममज्ज सहसा जले ॥	२६
स्नानं कृत्वाऽथ देवेशं प्रणम्यात्मनि तं प्रति ।	
अभ्यर्च्य च हृषीकेशं वासुदेवं सनातनम् ।	
विचचार यथापूर्वं ऋषिभिः सहितो मुनिः ॥	२७

अगस्त्यादीनां सनत्कुमारविलोकनपूर्वकं पूर्वदिग्गमनम्

तस्या एवोत्तरे तीरे वृक्षमूलं समाश्रितान् ।	
समाहितान् समासीनान् पद्मिन्याः सुमहौजसः ॥	२८
दक्षिणाभिमुखान् भूप ! योगीन्द्रान् स ददर्श ह ।	
सनत्कुमारप्रमुखान् भगवन्न्यस्तमानसान् ॥	२९
भक्त्या परमया युक्तान् निमीलितविलोचनान् ।	
तान् दृष्ट्वा सहसा हृष्टो योगीन्द्रान् योगपारगान् ॥	३०
तेषां समीपमभ्यागात् अगस्त्योऽथ महामुनिः ।	
तमायान्तं ततो दृष्ट्वा मुनीन्द्रं मुनिभिः सह ॥	३१
सनत्कुमारप्रमुखाः योगीन्द्राः तमपूजयन् ।	
सङ्गम्य सहिताः सर्वैः योगीन्द्रैः मुनिपुङ्गवैः ॥	३२
सम्पूजितो यथान्यायं ततस्तैः मिथिलेश्वर ! ।	
अथ तान् मधुरं वाक्यमुवाचेदं महामुनिः ॥	३३

अगस्त्यः— 'किमत्र दृष्टमाश्चर्यं? को वाऽत्र वसते पुमान्? ।

युष्माभिश्चिन्त्यमानः कः किं वा यूयं समागताः? ॥ ३४

एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं एतन्मे शंसताऽमलाः! ।

एवं पृष्टास्तदा तेन मुनिना भावितात्मना ॥ ३५

सनत्कुमारप्रमुखाः योगीन्द्राः तमथानुवन् ।

'सर्वात्मा भगवान् विष्णुः वसत्यस्मिन् महागिरौ ॥ ३६

चिन्तनीयः स एवैको मुनीन्द्र! पुरुषोत्तमः ।

तमचिन्त्यं विधातारं चिन्तयामोऽनपायिनम् ॥ ३७

नान्यं वयं जगन्नाथात् चिन्तयामो जनार्दनात् ।

द्रक्ष्यसे तं महात्मानं त्वं चापि पुरुषोत्तमम् ॥ ३८

अचिरेणैव कालेन ब्रह्मभूतं सनातनम् ।

नारायणं हरिं विष्णुं सर्वलोकपरायणम् ॥ ३९

दृष्टवन्तो वयं चापि सकृत्तममरार्चितम् ।

वेङ्कटाख्यगिरावस्मिन् पूर्वं पुण्यप्रदायिनि ॥ ४०

अस्त्यन्यादृष्टमाश्चर्यं प्राच्यां दिशि महामुने! ।

पर्वतस्यास्य दिव्यस्य शृणु तद्वदतां वर! ॥ ४१

शक्रश्च सहितो देवैः साक्षात् वज्रधरः स्वयम् ।

द्रष्टुं कामो गिरा वस्मिन् वसत्यव्यक्तरूपिणम् ॥ ४२

त्वं चापि सुरलोकेशं द्रक्ष्यसे तं शचीपतिम् ।

एतैः सार्धं मुनीन्द्रैस्त्वं प्राचीं गच्छ शुभां दिशम्' ॥ ४३

वामदेवः— इत्युक्त्वाऽन्तर्हिताः सर्वे मुनीन्द्रास्तं महौजसः ।

सनत्कुमारप्रमुखाः तदद्भुतमिवाभवत् ॥ ४४

अन्तर्हितेषु सर्वेषु योगीन्द्रेषु महात्मसु ।

अगस्त्यो मुनिभिः सार्धं सर्वैस्तैः मुनिसत्तमः ॥ ४५

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे षड्विंशोऽध्यायः ४५५

पराजितायामद्राक्षीत् आश्चर्यं दिशि भूपते ! ।  
तस्यां दिशि महावृक्षः इन्द्रकेतुरिवोच्छ्रितः ॥ ४६  
लम्बमानमहाशाखः पुष्पभारनिपीडितः ।  
आसीदाच्छादयन् सर्वं भूधरं छायाया नृप ! ॥ ४७  
तन्मूले तु समासीनाः आदित्यसमतेजसः ।  
सप्तर्षयो महात्मानो भगवन्न्यस्तमानसाः ॥ ४८  
तान् दृष्ट्वा स मुनिस्तेषां समीपमगमन् नृप ! ।  
अगस्त्यो मुनिभिः सार्धं तपसा भावितात्मभिः ॥ ४९  
तमायान्तं ततो दृष्ट्वा मुनयो यमिनां वरम् ।  
स्नेहान्विता यथान्यायं महात्मानमपूजयन् ॥ ५०  
ततोऽब्रवीन्महातेजाः अभिवाद्य च तान् मुनीन् ।  
अर्थवन्मधुरं वाक्यं प्रश्रयान्मृदुलाक्षरम् ॥ ५१

अगरत्यः—

‘किमर्थमागता यूयं दिव्येऽस्मिन् पर्वतोत्तमे ? ।  
को वा ध्येयो महादेवो युष्माकं मुनिसत्तमाः ? ॥ ५२  
एतदास्त्यात मे यूयं सर्वं सत्येन पृच्छतः ।  
पृच्छामि श्रोतुकामोऽहं कौतूहलसमन्वितम् ॥ ५३

वाग्देवः—

एवं पृष्टस्तदा तेन मुनिना मुनिपुङ्गवाः ।  
इदं प्रोचुर्महात्मानं ‘वक्ष्यामः श्रूयता’ मिति ॥ ५४

ऋषयः—

‘वयमत्रागता ब्रह्मन् ! द्रष्टुं देवं जनार्दनम् ।  
नारायणं विशालाक्षं जगत्प्रातारमीश्वरम् ॥ ५५

स एव देवः सर्वात्मा ध्येयो नः पुरुषोत्तमः ।  
 न चान्यो विद्यते ध्येयः तमृते जगतां पतिम् ॥ ५६  
 तमजं सर्वलोकेशं कृष्णमच्युतमीश्वरम् ।  
 पूज्यं वरेण्यं वरदं चिन्तयिष्यामहे वयम् ॥ ५७  
 त्वं चापि सर्वलोकेशं द्रष्टुमिच्छसि कमलेक्षणम् ।  
 सिंहाख्ये पर्वते ह्यस्मिन् गच्छ प्राचीं दिशं मुने ' ॥ ५८

वामदेवः —

एवमुक्तो मुनिश्रेष्ठैः नृपश्रेष्ठ ! महासुनिः ।  
 अभ्यनुज्ञाय तान् सर्वान् जगाम मुनिसत्तमः ॥ ५९  
 चिन्तयन् मनसा देवं विश्वकर्तारमीश्वरम् ।  
 चिन्तयन् मनसा वाक्यं पितामहसमीरितम् ।  
 जगाम सहसा दिव्यां दिशं प्राचीं गिरेस्ततः ॥ ६०

नृपेन्द्र ! दृष्ट्वा भगवानगस्त्यः तस्योत्तरं भागमदृष्टपूर्वम् ।  
 तत्राप्यदृष्ट्वा भगवन्तमाद्यं द्रष्टुं तदा पूर्वमथ प्रपेदे ॥ ६१

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यादीनां  
 सनत्कुमारादिदर्शनपूर्वकं भगवदन्वेषणप्रकारादिवर्णनं  
 नाम षड्विंशोऽध्यायः ।





अथ सप्तविंशोऽध्यायः

~~~~~

शेषाचलपूर्वदिशि अगस्त्यादीनां अद्भुतवस्तुदर्शनम्

वामदेवः—

| | |
|---|----|
| अथ पूर्वा समासाद्य दिशं तां मुनिभिः सह । | |
| नारायणगिरेस्तस्य द्रुममण्डलभूषिताम् ॥ | १ |
| विचचार यथापूर्वं सहितस्तैः महात्मभिः । | |
| ज्वलद्वास्करतेजोभिः मुनिभिः भावितात्मभिः ॥ | २ |
| सोऽपश्यद्विरिशृङ्गाभान् वृक्षान् पुष्पफलान्वितान् । | |
| लम्बमानमहाशाखान् मृदुपल्लवशोभितान् ॥ | ३ |
| समदान् वारणांश्चापि सुदंष्ट्रान् सम्यगुच्छ्रितान् । | |
| नदतश्च महासिंहान् वराहांश्चापि धावतः ॥ | ४ |
| गुह्यकिन्नरगन्धर्वान् यक्षाद्यांश्च सहस्रशः । | |
| एवमाद्यैस्तथाऽन्यैश्च शोभितं पर्वतोत्तमम् ॥ | ५ |
| पश्यन् समन्तात् सोऽगस्त्यो विचचार महामुनिः । | |
| विचरन् स ददर्शाथ मुनिप्रवरसेवितम् ॥ | ६ |
| महाभागं महापुण्यं मृगयूथपसेवितम् । | |
| नित्यपुष्पफलोपेतैः द्रुमैः नानाविधैर्युतम् ॥ | ७ |
| मत्तद्विपानुचरितं मत्तकोविल्लादितम् । | |
| महद्विरुच्छ्रितैः शृङ्गैः शोभनीयैश्च शोभितम् ॥ | ८ |
| भयङ्करमहानागं महासानुं शुभावहम् । | |
| उच्छ्रितामलकैश्चापि फलवद्भिश्च शोभितम् ॥ | ९ |
| एवंभूतं महाश्चर्यं महाभोगं महागिरिम् । | |
| अगस्त्यो भगवान् पूर्वा दिशं दृष्ट्वा महागिरिः ॥ | १० |

| | |
|---|----|
| दृष्ट्वाऽथ विचचाराशु मुनिभिस्तैः समावृतः । | |
| तत्राद्भुतमथापश्यत् अगस्त्यः पर्वतोत्तमे ॥ | ११ |
| बिलं पातालसङ्काशं पश्यतां भयदायकम् । | |
| महान्तं भैरवं दुर्गं अदृष्टं मानुषैर्नृप ! ॥ | १२ |
| निपतेयुर्हि पश्यन्तो नरा यस्मिन् विमोहिताः । | |
| तद्विलं समुपागम्य मुनीन्द्रो मुनिभिः सह ॥ | १३ |
| पुनः पुनर्निरीक्ष्येदं वचः प्रोवाच धर्मवित् । | |

अगस्त्यः—

| | |
|---|----|
| ‘ दृष्ट्वा चैवविधं सर्वं निपतिष्यन्ति मोहिताः ॥ | १४ |
| मानवा द्रष्टुकामा ये समारूढा महीधरम् । | |
| तस्मादेतन्न चैवास्मिन् भवेदिति मतिर्मम ॥ | १५ |
| बिलन्तु भैरवं घोरं मृत्युवक्तसमं गिरौ ’ । | |

वामदेवः—

| | |
|--|----|
| इत्युक्तो मुनिना तेन सद्यश्चान्तर्हितं बिलम् ॥ | १६ |
| अगस्त्यस्य प्रभावेण तदद्भुतमिवाभवत् । | |
| अन्तर्हिते ततस्तस्मिन् विचचार महामुनिः ॥ | १७ |
| तस्मिन्नेव महापुण्ये वेङ्कटाख्ये महागिरौ । | |
| ददर्शाऽथ चिरं तत्र शतशाखसमुच्छ्रितम् ॥ | १८ |
| सालं महाद्भुताकारं मृदुपल्लवशोभितम् । | |
| महान्तं महदाश्चर्यं अदृष्टं भुवि मानुषैः ॥ | १९ |
| तं दृष्ट्वा शीघ्रमभ्यायात् अगस्त्योऽथ महामुनिः । | |
| तत्समीपे महातेजाः विस्मयाविष्टचेतनः ॥ | २० |

भगवतः साक्षात्काराय ततः कुर्वन्तं इन्द्रं प्रति अगस्त्योक्तिः

- तमुपेत्य महासालं मुनीन्द्रो मुनिभिः सह ।
ददर्श शक्रमासीनं देवं साक्षात् शचीपतिम् ॥ २१
- सालस्कन्धप्रतीकाशबाहुशाखं शतक्रतुम् ।
रत्नजालोपसम्पन्नमकुटेन विराजितम् ॥ २२
- वैडूर्यमणिरत्नाढ्यकुण्डलाभ्यामलङ्कृतम् ।
वज्रपाणिं विशालाक्षं नारायणमिवापरम् ॥ २३
- सूर्याभियमवस्वश्चिकुबेरवरुणैस्तथा ।
गन्धर्वकिन्नरेन्द्रैश्च शुभकुण्डलधारिभिः ॥ २४
- दिव्याम्बरधरैरारात् सर्वैः समुपसेवितम् ।
तं दृष्ट्वा नृपते ! देवं देवजन्मा महामुनिः ॥ २५
- तत्समीपं महातेजाः सहसा व्यगमत्तदा ।
संबृतं देवदेवेशं त्रैलोक्याधिपतिं द्विजः ॥ २६
- मुनिभिः सहितः सर्वैः अपूजयदरिन्दमम् ।
देवाश्च सह शक्रेण मुनीन्द्रानागतांस्तथा ॥ २७
- अपूजयन् यथान्यायं स्थिताः सार्धं महात्मना ।
तानुवाच सशक्रांस्तु ततोऽगस्त्यः सुरोत्तमान् ॥ २८
- ‘श्रूयता’ मिति चाभाष्य प्रहसन्निव विस्मितः ।
‘किमर्थमागता यूयं किं वा चिन्तयताऽमराः ! ॥ २९
- आश्चर्यञ्चापि किं दृष्टमस्मिन् पुण्ये नगोत्तमे ? ।
एतत् सत्येन मे सर्वं आस्त्येयं त्रिदशेश्वराः ! ॥ ३०
- श्रोतुमिच्छाम्यहं त्वेतत् युष्माभिः समुदीरितम्’ ।

वामदेवः—

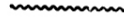
- अगस्त्येनैवमुक्तास्ते सर्वे एव ततः सुराः ॥ ३१

| | |
|--|----|
| एवमूचुः मुनिश्रेष्ठं नृपश्रेष्ठाऽसुरार्दनाः । | |
| ‘द्रष्टुं क्रमा वयं देवं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ॥ | ३२ |
| नारायणं हृषीकेशं शङ्खचक्रगदाधरम् । | |
| प्रणतार्तिहरं विष्णुं ब्रह्मभूतं सनातनम् ॥ | ३३ |
| समागम्य मुनिश्रेष्ठ ! सिंहारूढेऽस्मिन् नगोत्तमे । | |
| जयं देवजिदादीनां दैत्येन्द्राणां महौजसाम् ॥ | ३४ |
| प्रार्थयामो वयं ब्रह्मन् ! देवदेवात् जनार्दनात् । | |
| तं द्रष्टुमजरं देवं समासीनं महौजसम् ॥ | ३५ |
| चिन्तयन्तस्तमेवेशं सृष्टिस्थित्यन्तकारणम् । | |
| एवमूचुर्मुनिश्रेष्ठं नृप श्रेष्ठाऽसुरार्दनाः ॥ | ३६ |
| स एव भगवान् देवो ध्येयोऽस्माभिः सनातनः । | |
| नान्यो ध्येयः पुमान् यस्मात् विद्यते न च दृश्यते ॥ | ३७ |
| दृष्टं चापि महाश्रुत्यै पर्वतेऽस्मिन् महामुने ! । | |
| शुभे तु दक्षिणे भागे गिरेरस्य महीयसः ॥ | ३८ |

इन्द्रोक्त्या अगस्त्यस्य शङ्करदर्शनाय आग्नेयदिग्गमनम्

| | |
|---|----|
| आश्चर्यभूतो भगवान् वसतीशः सदा हरः । | |
| पिनाकपाणिः सर्वात्मा सर्वशक्तिः महेश्वरः ॥ | ३९ |
| स्वैरेव संवृतो भूतैः किन्नरोरगराक्षसैः । | |
| तत्र गत्वा च देवेशं द्रष्टाऽसि भुवनेश्वरम् ॥ | ४० |
| ऋषिं दुर्वाससञ्चापि नन्दिकेश्वरमेव च । | |
| ये चाप्यनुचरास्तत्र तांश्चापि द्रक्ष्यसे मुने ! ॥ | ४१ |
| इतो गच्छ हितं देशं यत्राऽऽस्ते भगवान् हरः । | |
| एभिर्मुनिवैरैः सार्धं मा विलम्बितुमर्हसि ॥ | ४२ |

| | |
|--|-----|
| श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे सप्तविंशोऽध्यायः | ४६१ |
| वामदेव — | |
| एव मुक्तः सुरैः सर्वैः अभ्यनुज्ञाय तान् सुरान् । | |
| पूर्वभागं विहायाथ भूधरस्य महीयसः ॥ | ४३ |
| अभ्यगात् दक्षिणं भागं तैरेव मुनिभिः सह । | |
| स पश्यन् दक्षिणं भागं अगस्त्योऽथ महामुनिः ॥ | ४४ |
| आग्नेय्यां दिशि चाद्राक्षीदिदमाश्चर्यमुत्तमम् । | |
| शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गशक्तिलाङ्गलनन्दकान् ॥ | ४५ |
| स्वैः स्वै रूपैः समासीनान् आजयद्विः दिशो दश । | |
| दिव्याभरणमालाभिः आजितान् शुभदर्शनान् ॥ | ४६ |
| रक्तचन्दनदिग्धाङ्गान् दिव्यमाल्योपशोभितान् । | |
| शुभन् पुरकेयूरकटकादिविभूषितान् ॥ | ४७ |
| अथ तान् सहसा दृष्ट्वा मुनीन्द्रः पुरुषर्षभान् । | |
| तेषां समीपमागम्य सहर्षो मुनिभिः सह ॥ | ४८ |
| अगस्त्यश्च ततस्तेभ्यः प्रणाममकरोत्तदा । | |
| प्रणम्य प्राञ्जलिर्भूत्वा प्रस्तूय च महाद्युतिः ॥ | ४९ |
| कृत्वा प्रदक्षिणञ्चापि दक्षिणां दिशमभ्यगात् । | |
| अत्यन्तं विस्मयाऽऽविष्टो मुनिभिः सहितो नृप । ॥ | ५० |
| आदिदेवं महादेवं द्रष्टुकामो जनार्दनम् । | |
| आश्चर्यरूपमारुह्य प्रेक्षमाणो महागिरिम् ॥ | ५१ |
| परीत्य तस्यैव नगोत्तमस्य प्राचीं दिशं देवगणाभिजुष्टाम् । | |
| अवाप्य तस्यैव गिरेर्महात्मा तं दक्षिणं भागमसौ प्रपेदे ॥ | ५२ |
| इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यस्य | |
| शेषाचलवासीन्द्रादितपःप्रकारभगवद्दिव्यायुधदर्शनादिवर्णनं | |
| नाम सप्तविंशोऽध्यायः । | |



अगस्त्यकृतशेषाचलदक्षिणभागस्थशङ्करसेवाक्रमः

वामदेवः—

| | |
|--|----|
| तस्याथ दक्षिणं भागं भूधरस्य महीयसः । | |
| अवाप परया प्रीत्या मुनीन्द्रो मेघसन्निभम् ॥ | १ |
| शुभगुल्मल्लागूढं नानापादपसङ्कुलम् । | |
| मार्जारैः वानरैश्चापि गोपुच्छैश्च निषेवितम् ॥ | २ |
| फलवद्भूमखण्डैश्च पुष्पभारनिपीडितैः । | |
| दर्शनीयतमैः दिव्यैः शोभितं शुभशाखिभिः ॥ | ३ |
| भिन्नाञ्जनचयाकारं शिलामिरुपशोभितम् । | |
| हंससारसगृध्रैश्च शतपत्तैश्च शोभितम् ॥ | ४ |
| शोभितं रमणीयैश्च चक्रवाकैः महास्वनैः । | |
| नानाधातुसमाकीर्णं नानाप्रसवणाकुलम् ॥ | ५ |
| गुह्यविद्याधराद्यैश्च सभार्यैः शुभदर्शनैः । | |
| शोभितं शुभगन्धाढ्यं शुभमारुतसेवितम् ॥ | ६ |
| गायद्भिः किन्नरैश्चापि गन्धर्वैश्च निषेवितम् । | |
| प्रसादयद्भिः देवेशं कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ॥ | ७ |
| एवमत्यद्भुतं दिव्यं दक्षिणं भागमात्मवान् । | |
| ददर्श मुनिशार्दूलः पर्वतस्य महीयसः ॥ | ८ |
| तत्रापि नृपतेऽद्राक्षीत् पुष्पितं बहुशाखिनम् । | |
| अत्युच्छ्रितं महाश्चर्यं दर्शनीयतमं नृप! ॥ | ९ |
| अतीव शुभगन्धाढ्यं मृदुपल्लवशोभितम् । | |
| वृक्षं महाद्भुतं दिव्यं यो न दृष्टः पुरातनैः ॥ | १० |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे अष्टाविंशोऽध्यायः ४६३

| | |
|---|----|
| तं दृष्ट्वा सहसाऽगस्त्यो ययौ शीघ्रतरं मुनिः ।
मुनीन्द्रैः सहितः सर्वैः नरेन्द्रः सोऽतिविस्मितः ॥ | ११ |
| तत्समीपं समागम्य कौतूहलसमन्वितः ।
उदैक्षत महातेजाः तं वृक्षं बहुशाखिनम् ॥ | १२ |
| तत्राऽऽसीनं ततोऽपश्यत् भगवन्तमुमापतिम् ।
नेतैः रक्तैः समायुक्तं त्रिभिस्त्रिभिरिवाग्निभिः ॥ | १३ |
| उदङ्मुखं महाश्रयजटामण्डलधारिणम् ।
चतुर्भुजं महादेवं नीलकण्ठं पिनाकिनम् ॥ | १४ |
| तरुणादित्यसङ्काशं ज्वलन्तं स्वेन तेजसा ।
स्वेनैवं तेजसा देवं भासयन्तं दिशो दश ॥ | १५ |
| कपिलाक्षं विशालाक्षं चार्वोष्ठं चारुवक्षसम् ।
समुन्नततनुं सौम्यं सर्वलोकनमस्कृतम् ॥ | १६ |
| नानामणिगणच्छन्नज्वलत्कुण्डलधारिणम् ।
तैस्तैरनुचरैश्चापि नानारूपधरैस्तथा ॥ | १७ |
| अनेकबाहुसाहस्रैः बलवद्भिः निषेवितम् ।
नन्दिकेश्वरदुर्वासो - बाणाद्यैश्च निषेवितम् ॥ | १८ |
| यक्षकिन्नरगन्धर्वैः दैवैश्चापि निषेवितम् ।
हाहाहूहूभ्याञ्च तथा गन्धर्वाभ्यां निषेवितम् ॥ | १९ |
| तैस्तैरभिष्टुतञ्चैव महादेवं महाद्युतिम् ।
दृष्ट्वा शम्भुं तदाऽगस्त्यो ननाम शिरसा भुवि ॥ | २० |
| प्रणोमुः मुनयश्चापि भगवन्तं महेश्वरम् ।
ब्रुवन्तो देवदेवेशं 'प्रसीदे'ति पुनःपुनः ॥ | २१ |
| प्रस्तूय तं महादेवं भगवन्तं महेश्वरम् ।
उवाच च तदाऽगस्त्यः समासीनं महौजसम् ॥ | २२ |

नानारत्नविचित्रैश्च वलयैश्च विभूषितम् ।
 जाम्बूनदमयैश्चापि केयूरैः समलङ्कृतम् ।
 वरदं सर्वभूतानां सर्वदेवनमस्कृतम् ॥ २३
 'किं न मां भाषसे देव ! त्वत्समीपमिहागतम् ।
 को वा ध्येयस्त्वया देवः कोऽस्मिन् वा निवसत्यहो !' ॥ २४

सेवाकांक्षिणमगस्त्यं प्रति शङ्करोक्तिः

वामदेवः—

एवमुक्तो महातेजा महादेवो महामुनिम् ।
 जलदस्वनगम्भीरवचसा वाक्यमब्रवीत् ॥ २५

शङ्करः—

'परावरपतिर्देवो विश्वयोनिः जनार्दनः ।
 मया चान्यैश्च सर्वाऽत्मा ध्येयो नारायणो हरिः ॥ २६
 नान्यो ध्येयः पुमाँल्लोके दृश्यते न च विद्यते ।
 तमृते जगतां नाथं सर्वव्यापिनमीश्वरम् ॥ २७
 नारायणगिरावस्मिन् वसत्येष सनातनः ।
 नारायणो जगद्योनिः भगवान् पुरुषोत्तमः ॥ २८
 अस्मिन् न्यस्तं मनो यस्मात् मया सर्वेश्वरे हरौ ।
 तस्मात् समागतं त्वाऽहं नाभिभाषे न चान्यथा ॥ २९
 त्वञ्चापि तं विशालाक्षं जनानामीश्वरेश्वरम् ।
 शरण्यं सर्वभूतानां अनादिनिधनं हरिम् ॥ ३०
 ज्वलन्मुकुटकेयूरकटकादिविभूषितम् ।
 मालया दिव्यया चापि वैजयन्त्या विराजितम् ॥ ३१

| | |
|---|-----|
| श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे अष्टाविंशोऽध्यायः | ४६५ |
| पतत्रिराजमारुढं द्रक्ष्यसे विश्वरूपिणम् । | |
| ब्रह्मणाऽपि मया चात्र प्रोक्तमेतत् तवानघ ! ॥ | ३२ |
| द्रष्टाऽसीति जगन्नाथं भवत्येतत् न संशयः । | |
| अचिरेणैव कालेन भगवान् पुरुषोत्तमः ॥ | ३३ |
| करिष्यति स विश्वात्मा सान्निध्यं तव केशवः । | |
| विचरस्व यथापूर्वं पर्वतेऽस्मिन् महामुने ! ॥ | ३४ |
| मा विषादं कृथा ब्रह्मन् ! तस्मिन् न्यस्तमना भव' । | |
| एवमुक्तस्तु देवेन शम्भुना परमेष्ठिना ॥ | ३५ |
| पुनः पुनः प्रणम्येशं तस्मान्नैवाभ्ययान्मुनिः । | |
| खेहान्वितो मुनिश्रेष्ठः तस्मिन् देवे पिनाकिनि ॥ | ३६ |
| पश्यतान्तु मुनीन्द्राणां अगस्त्यस्य तु पश्यतः । | |
| सानुगः सहसा शम्भुः तत्रैवान्तरधीयत ॥ | ३७ |
| मुनयश्चापि तं देवं संस्तूय परमेश्वरम् । | |
| प्रणम्य च मुनीन्द्रेण सह तेऽभ्यगमस्तदा ॥ | ३८ |
| एवमेतन्महाश्वर्यं संवादं शम्भुना सह । | |
| ऋषिभिर्विस्तृतं लोके ह्यगस्त्यस्य महात्मनः ॥ | ३९ |
| आख्यातं ते मया चापि मिथिलेश ! महाद्भुतम् । | |
| सर्वपापप्रशमनं किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ॥ | ४० |
| जनक — 'आश्चर्यमिदमाख्यानं कथितं मे महामुने ! । | |
| श्रुतञ्चापि मया सम्यक् प्रहृष्टेनाभ्युत्तरात्मना ॥ | ४१ |
| ततः परं मुनीन्द्रोऽसौ अकरोत् किं महाद्युतिः । | |
| एतदाचक्ष्व मे ब्रह्मन् ! श्रोतुमिच्छा प्रवर्तते' ॥ | ४२ |
| वामदेवः — अगस्त्योऽथ महातेजाः प्रणिपत्य महेश्वरम् । | |
| त्यक्त्वाऽथ दक्षिणं भागं नैर्ऋतीं दिशमास्थितः ॥ | ४३ |

तं दक्षिणं भागमतीत्य भूपते !

नारायणादेः सह तैः मुनीश्वरैः ।

अथोत्तमां दक्षिणपश्चिमां दिशं

द्रष्टुं परेशं प्रययौ प्रतापवान् ॥

४४

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यकृत-

शेषाचलदक्षिणभागवासिशङ्करदर्शनादिवर्णनं नाम

अष्टाविंशोऽध्यायः ।

अथ एकोनविंशोऽध्यायः

शेषाचलनैर्ऋतदिशि अगस्त्यादीनां विष्वक्सेनदर्शनम्

वामदेवः—

तां दिशं समनुप्राप्य नैर्ऋतीं भगवान् अथ ।

मन्दराद्रिप्रतीकाशं शतशास्त्रं महोच्छ्रितम् ॥

१

वटं महान्तमाश्चर्यं ददर्श स महामुनिः ।

तस्य मूले समासीनं भगवन्तं सुरेश्वरम् ॥

२

शिलायामद्भुतायान्तु महत्यां दीप्ततेजसम् ।

विष्वक्सेने सुराध्यक्षं भगवन्त्यस्तमानसम् ॥

३

सर्वैरनुचरैश्चापि महेन्द्रसमविक्रमैः ।

संवृतं बलिभिर्देवैः शतक्रतुमिवापरम् ॥

४

असन्तमिव चाकाशं भक्षयन्तमिव प्रजाः ।

दैत्येन्द्रा बलवन्तस्तं परिवार्योपतस्थिरे ॥

५

शतशो दृष्टकर्मणो राक्षसाश्च भयावहाः ।

गन्धर्वपतयश्चापि यक्षाश्चापि सहस्रशः ॥

६

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ४६७

| | |
|---|----|
| तमासीनं महावीर्यं विष्वक्सेनं नराधिप ! । | |
| उपातिष्ठन्त ते सर्वे गृहीतविविधायुधाः ॥ | ७ |
| भूतयूथानि चोग्राणि वैष्णवानि सहस्रशः । | |
| मेरुमन्दरसङ्काशरूपवन्ति महान्ति च ॥ | ८ |
| क्रुद्धानि यानि भूतानि निर्दहेयुरिमाः प्रजाः । | |
| पिबेयुः सहसा सर्वान् उद्धींश्चापि सर्वशः ॥ | ९ |
| तानि चाऽऽवार्य तं देवं उपातिष्ठन्त सर्वशः । | |
| एवमेतैस्तथान्यैश्च समेतैः तत्र भूधरे ॥ | १० |
| उपास्यमानं तं देवं प्रासतोमरपाणिभिः । | |
| सुस्वरैः गायमानश्च गन्धर्वाः तस्य सन्निधौ ॥ | ११ |
| जमुर्नारायणं देवं किञ्चरेन्द्रास्तु सर्वशः । | |
| गायन्त्यः सुस्वनाश्चापि नृत्यन्त्योऽप्सरसस्तथा ॥ | १२ |
| विष्वक्सेनस्य देवस्य सन्निधौ तस्य धीमतः । | |
| देवा ब्रह्मर्षयश्चापि सिद्धाश्चापि सहस्रशः ॥ | १३ |
| उपतस्थुर्हि तं देवं नारायणमिवापरम् । | |
| तं दृष्ट्वा विस्मयाऽऽविष्टो रोमाञ्चिततनुस्तदा ॥ | १४ |
| अगस्त्यो मुनिशार्दूलः तत्समीपमुपेयिवान् । | |
| तत्समीपमुपागम्य प्रणाममकरोद्भुवि ॥ | १५ |
| व्याहरन् श्लक्ष्णया वाचा “प्रसीदे ”ति पुनः पुनः । | |
| प्रणेमुः मुनयश्चापि तमासीनं महाबलम् ॥ | १६ |
| सुखासीनं महेष्वासं नारायणमिवापरम् । | |
| शङ्खचक्रगदापाणिं अभयोद्यतपाणिकम् ॥ | १७ |
| तानब्रवीन्महावीर्यो विष्वक्सेनो नराधिप ! । | |
| अगस्त्यप्रमुखान् सर्वान् ऋषीन् परपुरञ्जय ! ॥ | १८ |

अगस्त्यादीन् प्रति विष्णुक्सेनोक्तभगवद्दर्शनोपायः

विष्णुक्सेनः—

| | |
|--|----|
| ‘युष्मानिर्भगवान् देवो विश्वरूपधरो हरिः । | |
| अस्मिन्गिरौ महातेजा द्रष्टुं शक्यो हि सोऽव्ययः ॥ | १९ |
| सर्ववेदोदितस्यास्य देवस्यानुचरा वयम् । | |
| दृष्टवन्तोऽजितं पूर्वं समासीनं महौजसम् ॥ | २० |
| नारायणं सुराध्यक्षं शङ्खचक्रासिधारिणम् । | |
| वसत्यस्मिन् स विश्वात्मा नारायणगिरौ द्विजाः ! ॥ | २१ |
| विचरध्वं यथापूर्वमस्मिन् पर्वतसत्तमे । | |
| एतस्मिन् पर्वते दिव्ये प्रसादात् तस्य शार्ङ्गिणः ॥ | २२ |
| अदृष्टरूपमाश्चर्यं दृष्टवन्तः पुरा वयम् । | |
| तपस्तप्यन्ति ये चास्मिन् द्रष्टुकामास्तमीश्वरम् ॥ | २३ |
| ददाति भगवांस्तेषां दर्शनं पुरुषोत्तमः । | |
| यूयमप्यत्र चास्माभिः विमले पर्वतोत्तमे ॥ | २४ |
| परमं तप आस्थाय भक्त्या परमया युताः । | |
| चरताऽशेषभूतानामीश्वरे न्यस्तमानसाः । | |
| विष्णौ ब्रह्मणि गोविन्दे जगद्धातरि केशवे ’ ॥ | २५ |

वामदेवः—

| | |
|--|----|
| एवमुक्त्वाऽथ भगवान् विष्णुक्सेनः स वीर्यवान् । | |
| अन्तर्दधे तदा देवः तलैव नृपते ! प्रभुः ॥ | २६ |
| सर्वैरनुचरैः सार्धं सर्वदेवनमस्कृतः । | |
| पश्यतामेव सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् ॥ | २७ |
| मुनयश्चापि ते सर्वे सहस्रैव महाद्युतिम् । | |
| प्रणम्य तं महात्मानं विष्णुक्सेनं मुदा युताः ॥ | २८ |

अगस्त्यादीनां शेषाचलस्थविष्वक्सेनानुचरावलोकनम्

| | |
|---|----|
| पुनश्चापि यथापूर्वं विचेरुवनीपते ! । | |
| वेङ्कटाख्ये गिरौ तस्मिन् वृक्षखण्डविभूषिते ॥ | २९ |
| गिरिमूर्ध्नि चरन्तस्ते मुनयः सर्वे एव तु । | |
| ददृशुस्तत्र रम्याणि शिखराणि महान्ति च ॥ | ३० |
| पुष्पितद्रुमखण्डैश्च मण्डितानि सहस्रशः । | |
| नीलजीमूतवर्णानि पाण्डुराभ्रनिभानि च ॥ | ३१ |
| देवदानवगन्धर्वयक्षाकिंपुरुषैस्तथा । | |
| गुह्यविद्याधराद्यैश्च सेवितानि महात्मभिः ॥ | ३२ |
| शिखरात् शिखरं गत्वा चरन्तस्ते महीपते ! । | |
| ददृशुः शिखरे रम्ये कस्मिंश्चिन्मुनयोऽमलाः ॥ | ३३ |
| समासीनान् महावीर्यान् महाबलनिभांस्तथा । | |
| कामरूपधरान् घोरान् वायुवेगसमान् जवे ॥ | ३४ |
| मेरुमन्दरसङ्काशान् समवेगान् सहस्रशः । | |
| किन्नरांश्चापि गन्धर्वान् यक्षांश्चापि महासुरान् ॥ | ३५ |
| तान् दृष्ट्वा स मुनीन्द्रस्तु मुनीन्द्रानिदमब्रवीत् । | |
| विस्मयोत्कुलनयनो विस्मयोत्कुललोचनान् ॥ | ३६ |

अगस्त्यः—

| | |
|--|----|
| ‘नूनमेतैः पुरा शक्रो बलवीर्यसमन्वितैः । | |
| देवासुरमहायुद्धे दैतेयानजयद् द्विजाः ! ॥ | ३७ |
| एते हि बलिनः सर्वे विचित्राद्भुतवाससः । | |
| नानाप्रहरणोपेता दृश्यन्तेऽद्भुतरूपिणः ॥ | ३८ |
| एतान् दृष्ट्वाऽथ गच्छामो द्रष्टुमेतं महागिरिम् । | |
| आलभ्यं सर्वभूतानां ईश्वरस्याऽव्ययात्मनः’ ॥ | ३९ |

वामदेवः—

इति निश्चित्य मनसा नरेन्द्र ! मुनिभिर्वृतः ।
 तेषां समीपमभ्यायात् गन्धर्वाणां तरस्विनाम् ॥ ४०
 तमायान्तं ततो दृष्ट्वा मुनीन्द्रं मिथिलेश्वर ! ।
 उपतस्थुर्हि ते सर्वे ब्रह्माणं त्रिदशा इव ॥ ४१
 प्रणमुश्च महात्मानं तत्समीपमुपागमन् ।
 तानुवाच ततोऽगस्त्यो ब्रह्मर्षिः श्लक्ष्णया गिरा ॥ ४२

अगस्त्यः—

‘श्रूयता’ मिति चाभाष्य मधुरं वदतां वरः ।
 ‘यूयं सर्वे महावीर्याः श्रुणुध्वं मधुरं वचः ॥ ४३
 कस्य यूयं किमर्थं वा चरन्त इह पर्वते ।
 आश्चर्यं वा महात्मानो द्रष्टव्यं दृष्टमेव वा ? ॥ ४४
 एतद्यूयं समासेन सर्वमाख्यात तत्त्वतः ।
 पृच्छामि श्रोतुकामोऽहं युष्मान् सर्वान् समागतान् ’ ॥ ४५

अगस्त्यादीन् प्रति विष्वक्सेनपरिजनकृतस्वोदन्तज्ञापनम्

गन्धर्वाद्याः—

एवं ब्रुवाणं ब्रह्मर्षिं प्रोचुस्तं ‘श्रूयता’ मिति ।
 ‘देवस्यानुचरास्तस्य वयं ब्रह्मन् ! महात्मनः ॥ ४६
 बलवीर्याभिजुष्टस्य विष्वक्सेनस्य धीमतः ।
 यः सर्वलोकनाथस्य मधुकैटभघातिनः ॥ ४७
 हरेरनुचरस्तस्य वयं ब्रह्मन् ! निदेशगाः ।
 उपतिष्ठन्ति यं सर्वे विष्वक्सेनं समाहिताः ॥ ४८
 यद्वशे वर्तते विप्र ! जगदेतच्चराचरम् ।
 ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् ॥ ४९

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकोनविंशोऽध्यायः ४७१

मुनयो देवगन्धर्वा दैत्याः सिद्धाः तथोरगाः ।
प्रणेमुः यं महावीर्यं नारायणमिवापरम् ॥ ५०
देवदेवेन चाऽज्ञतो ऋषभं योऽवधीत् पुरा ।
दैत्येन्द्रं सुमहावीर्यं शक्रतुल्यपराक्रमम् ॥ ५१
देवासुरे महायुद्धे दारुणे रोमहर्षणे ।
सूदिता येन दैत्येन्द्राः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ ५२
सदा हि यो जगद्धातुः निदेशे परिवर्तते ।
अचिन्त्यबलवीर्यौजाः विष्णुपादाब्जसंश्रयः ॥ ५३
संकुद्धः सहसा लोकान् हन्तुं शक्तः सवासवान् ।
सयक्षनागगन्धर्वगुह्यकिन्नरराक्षसान् ॥ ५४
एवंप्रभावो यो देवो हरेरनुचरो बली ।
विश्रुतः सर्वलोकेषु तस्यैवानुचरा वयम् ' ॥ ५५
एवमुक्तस्तदा तैस्तु गन्धर्वाद्यैः नरेश्वर ! ।
प्रशशंस तदा देवं विष्वक्सेनं महामुनिः ॥ ५६
प्रणम्य च तदा देवं हरिं भक्त्या च तैः सह ।
तपोबलसमायुक्तैः मुनिभिः भावितात्मभिः ॥ ५७
ताननुज्ञाय संहृष्टो गन्धर्वाद्यांस्तपस्विनः ।
विचचार यथापूर्वं नारायणदिदृक्षया ॥ ५८

वामदेवः—

अगस्त्यादिकृतशेषाचलस्थानेऋषुण्यतीर्था लोकां नमू

तस्मिन् गिरिवरे रम्ये वृषभाख्ये महीयसि ।
गिरिमूर्धनि राजेन्द्र ! विचरन् वै ततस्ततः ॥ ५९
ददर्श शतशो वृक्षान् पुष्पितान् पर्वतोपमान् ।
शुभोदकवहाः शुद्धाः सरितश्चातिशोभनाः ॥ ६०

| | |
|---|----|
| गुहाश्च विविधास्तत्र द्रुमषण्डविभूषिताः । | |
| कन्दराणि च दिव्यानि दरीश्च प्रियदर्शनाः ॥ | ६१ |
| शिखराणि च मुख्यानि नीलमेघनिभानि च । | |
| तटाकांश्च तथा दिव्यान् शोभितांश्च शुभैर्जलैः ॥ | ६२ |
| हंसकारण्डवाकीर्णान् सारसैश्चानुनादितान् । | |
| जीवज्जीवैश्च सारङ्गैश्च वारणैश्च सदामदैः ॥ | ६३ |
| राजद्विश्चक्रवाकैश्च शकुन्तैरनुनादितान् । | |
| एवमाद्यैस्तथान्यैश्च शोभितान् विमलोदकान् ॥ | ६४ |
| सरसीश्च तथा दिव्या नारायणमहागिरौ । | |
| कुन्दैर्नैर्पैस्तथा सालैः अर्जुनैस्तिलकैस्तथा ॥ | ६५ |
| चम्पकाशोकपुन्नागकोविदारासनादिभिः । | |
| तीरजैः द्रुमषण्डैश्च शोभितेषु सरःसु च ॥ | ६६ |
| प्रीत्या स्नात्वा तथा चक्रुः देवपूजां यथाविधि । | |
| स गच्छन्नथ त्रिप्रेन्द्रो नरेन्द्र ! मुनिभिर्वृतः ॥ | ६७ |
| ददर्श पर्वते भूयो दर्शनीयतमान् मुनीन् । | |
| शष्पाङ्कुरकृताहारान् हरिणान् वनचारिणः ॥ | ६८ |
| चरतः सर्वतो भूप ! स्थलेषु मृगपोतकान् । | |
| कुञ्जरान् मेघसङ्काशान् शुभदन्तविभूषितान् ॥ | ६९ |
| शिखराच्छिखरं शीघ्रं पततश्चापि वानरान् । | |
| एवमाद्यैस्तथान्यैश्च शोभितो गिरिमूर्धनि ॥ | ७० |
| विचचार तथाऽगस्त्यः चिरकालं नृपेश्वर ! । | |
| ऋषिभिः सहितः सर्वैः पितामहवचः स्मरन् ॥ | ७१ |
| दिदृक्षुर्देवं देवेशं भगवन्तं सनातनम् । | |
| अन्यानपश्यत् सोऽगस्त्यं तस्मिन्नद्रौ जलाशयान् ॥ | ७२ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ४७३

सरितश्च महापुण्यवैदूर्यविमलोदकाः ।
पुष्करिण्यः शुभाश्चापि सरांसि विमलानि च ॥ ७३
सर्वेषु तेषु पुण्येषु तीर्थेषु मुनिसत्तमः ।
स्नात्वा स्नात्वा जगन्नाथं अर्चयामास भक्तिमान् ॥ ७४

अगस्त्यादीनां कुमारधारस्नानम्

एकदा तु स धर्मात्मा विचरन् गिरिमूर्धनि ।
कौमारीं महतीं धारां पतन्तीं ददृशे मुनिः ॥ ७५
अत्युच्चगिरिपृष्ठात् कार्तिकेयेन सेविताम् ।
तां दृष्ट्वा विस्मयाऽऽविष्टः सर्वपापहरां शुभाम् ॥ ७६
देवर्षिसिद्धमनुजैः सेवितां पुण्यकाङ्क्षिभिः ।
यत्र सा निपतत्युच्चात् शिखराद्विमलोदका ॥ ७७
तटाके विमले दिव्ये पवित्रे पापनाशने ।
यस्मिन् वसति राजेन्द्र ! शम्भुपुत्रः प्रतापवान् ॥ ७८
दारुणं तप आस्थाय प्रीतये मधुघातिनः ।
देवसेनापतिः श्रीमान् सुब्रह्मण्योऽसुरार्दनः ॥ ७९
त्रिकालमर्चयन् विष्णुं श्रीनिवासं जगत्पतिम् ।
तस्मिन् गत्वा मुनीन्द्रस्तु नरेन्द्र ! मुनिभिः सह ॥ ८०
आचम्य प्रयतो भूत्वा ममज्ज सुसमाहितः ।
सर्वपापहरे शुद्धे तीर्थे तस्मिन् सदाऽमले ॥ ८१
चिन्तयन् देवदेवेशं नारायणमनामयम् ।
स्नात्वा मुनिवरस्तस्मिन् आचम्य च यथाविधि ॥ ८२
देवदेवं जगद्योनिं वासुदेवमधोक्षजम् ।
अर्चयामास गोविन्दं दिव्यैः पुष्पैः सुगन्धिभिः ॥ ८३

| | |
|--|----|
| ऋषयश्च महात्मानः स्नात्वा तस्मिन् महोदके । | |
| अर्चयामासुरव्यग्रं देवदेवं जनार्दनम् ॥ | ८४ |
| समाधाय मनस्तस्मिन् ब्रह्मण्यमिततेजसि । | |
| मनो निवेक्ष्य जगतामीश्वरे पुरुषोत्तमे ॥ | ८५ |
| नारायणे जगद्धाम्नि सर्वपापहरे हरौ । | |
| अथ तं वरदं विष्णुं सर्वलोकनमस्कृतम् ॥ | ८६ |
| प्रणेमुर्मुनिशार्दूलः वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् । | |
| प्रणतार्तिहरं देवं कृष्णं सर्वेश्वरं हरिम् ॥ | ८७ |
| रमन्तं मायया सार्धं अर्चयित्वा सुरोत्तमम् । | |
| यथापूर्वं मुनिश्रेष्ठः चचार गिरिमूर्धनि ॥ | ८८ |
| विचरंश्च ततस्तत्र तीर्थोद्यान् पापनाशनान् । | |
| देवदानवगन्धर्वैः सिद्धचारणपन्नगैः ॥ | ८९ |
| ऋषिभिर्वालखिल्यैश्च सेवितं पर्वतोत्तमम् । | |
| अगस्त्यो मुनिभिस्तत्र ददर्श विमलं गिरिम् ॥ | ९० |

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यादिमहर्षि-
कृतविष्वक्सेन-तत्पारिषदादिदर्शनं नाम
एकोनत्रिंशोऽध्यायः



अथ त्रिंशोऽध्यायः



अथ श्रीवेङ्कटाचलस्थपुण्यतीर्थवर्णनम्

जनकः—

‘मुनिना तेन दृष्टानां अगस्त्येन महात्मना ।
नामानि तेषां तीर्थानां पर्वतेन्द्रनिवासिनाम् ॥ १
माहात्म्यं चापि सर्वेषां पापहानिं वदस्व मे ।
यद्वा सम्प्राप्यते मर्त्यैः स्नात्वा तेषु फलं मुने ! ॥ २
विस्तरेणैतदाश्चर्यं वक्तुमर्हस्यशेषतः ।
श्रोतुकामो ह्यहं ब्रह्मन् ! पृच्छामि त्वां तपोधन !’ ॥ ३

वामदेवः— श्रूयतां नृपते ! वक्ष्ये यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ।
तीर्थानां नामधेयानि माहात्म्यञ्च तथाऽद्भुतम् ॥ ४
विस्तरात् नैतदाख्यातुं शक्यं वर्षशतैरपि ।
सङ्क्षेपेण मया त्वेतत्कथ्यमानं निशामय ॥ ५
“वाराहं वामनं सौम्यं दिव्यं पञ्चनदं तथा ।
शिलातोयं महातीर्थं पाद्मं सौरं तथाऽपरम् ॥ ६
पापनाशनमैन्द्रञ्च वायव्यं वारुणं तथा ।
ब्रह्मतीर्थं तथाऽघन्नम् आग्नेयं सर्वकामदम् ॥ ७
पञ्चतीर्थं महापुण्यं सर्वलोकेषु पूजितम् ।
गौरीतीर्थञ्च विख्यातम् आश्विनं पारमेश्वरम् ॥ ८
चक्रतीर्थं महापुण्यं शङ्खतीर्थमतः परम् ।
विजयं विमलञ्चापि शोकनाशनमेव च ॥ ९
मात्स्यं कौर्मं तथा दिव्यं गारुडं पाण्डवं तथा ।
मायामयं महातीर्थं काण्डवं काहलं तथा ॥ १०

दाडिमं मधुरञ्चापि सर्वपापप्रणाशनम् । ”
तीर्थान्येतानि पुण्यानि विद्यन्ते वेङ्कटाचले ॥ ११

अथ कपिलतीर्थपश्चिमभागस्थपञ्चतीर्थमाहात्म्यम्

जनकः—

‘पञ्चतीर्थमिति प्रोक्तं यत्त्वया मुनिसत्तम ! ।
तन्मे ब्रूहि महाभाग! श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः’ ॥ १२

नामदेवः—

कापिलं नाम यत्तीर्थं तस्य पश्चिमभागतः ।
“पञ्चतीर्थं” मिति ख्यातं पावनं पुण्यवर्धनम् ॥ १३
विप्रक्षत्रियविद्वद्ग्रा ये चान्त्याः पापयोनयः ।
तेषां क्रमेण तीर्थानि पञ्चैतानि नरोत्तम ! ॥ १४
देवास्तत्र तपस्यन्ति पञ्चजात्यभिमानिनः ।
वसन्ति कापिलं लिङ्गं पश्यन्तः परया मुदा ॥ १५
वराहरूपिणं देवमञ्जनाद्रिनिवासिनम् ।
भर्चयन्तः स्तुवन्तश्च सदा तद्भावभाविताः ॥ १६
“उपरि प्रथमं तीर्थं ब्राह्मणानां शुभोदकम् ।
सद्यः सिद्धिकरं तेषां स्नानपानजपादिभिः ॥ १७
तस्याधस्तान्महातीर्थं क्षत्रियाणामभीष्टदम् ।
अनन्तरञ्च वैश्यानां तीर्थमाशु फलप्रदम् ॥ १८
तस्य त्वनन्तरं तीर्थं शूद्राणामघनाशनम् ।
चतुर्णामप्यधस्तात्तु चण्डालानां च पापिनाम् ॥ १९
तीर्थं पर्वतमूले तु सद्यः पापनिबर्हणम् ।
वराहरूपी भगवन् विष्णुर्भक्तानुकम्पया ॥ २०

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे त्रिंशोऽध्यायः

४७७

| | |
|---|----|
| तेषु पञ्चसु तीर्थेषु सान्निध्यं कुरुते सदा ।
वर्णाश्रमाणामाचारवैकल्यं नाशयत्यहो ! ॥ | २१ |
| तेषामन्यतमं तीर्थं सेवमानो नरो नृप ! ।
तांस्तांश्च समवाप्नोति कामांस्तीर्थप्रभावतः ॥ | २२ |
| प्रसादात्तस्य देवस्य प्राप्नोति शुभमुत्तमम् ।
तीर्थान्येतानि सम्भूय वर्तन्ते पर्वतोत्तमे ॥ | २३ |
| नद्यः समस्ताः पापघ्न्यः तासां सङ्ख्या न विद्यते ।
तथाऽपि शृणु वक्ष्यामि षट्षष्टिः कोट्यस्तथा ॥ | २४ |
| नारायणाऽचले तस्मिन् अञ्जनारुये नगोत्तमे ।
देवर्षिसिद्धगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगैः ॥ | २५ |
| गुह्यविद्याधरैश्चापि ह्यप्सरोभिः समन्ततः ।
किन्नरैर्गरुडैश्चापि देवैर्देवाधिपैरपि ॥ | २६ |
| एवमाद्यैस्तथाऽन्यैश्च सेविताः पुण्यकाङ्क्षिभिः ।
तीर्थानि तेषां माहात्म्यं गदितुं नैव शक्यते ॥ | २७ |
| यस्मिन् यस्मिन् गिरेः शृङ्गे वारि संदृश्यते शुभम् ।
तदद्भुतं महापुण्यं तीर्थेभ्यः सम्भवं नृप ! ॥ | २८ |
| तेषु तेषु च तीर्थेषु स्नात्वा स्नात्वा बुधो जनः ।
आभ्यन्तरविशुद्धयर्थं विचरेत् सुसमाहितः ॥ | २९ |
| पुनरत्र प्रवक्ष्यामि तीर्थानि मुनिसत्तम ! ।
यानि तानि तु सर्वाणि शृणुष्वैकमना विभो ! ॥ | ३० |

वामदेवः —

अथ स्वामिपुष्करिण्यादिसर्वतीर्थमाहात्म्यवर्णनम्

| | |
|---|----|
| पर्वतस्योत्तरे भागे पुण्यतीर्थानि मे शृणु ।
सर्वदोषप्रशमनं गिरिरूपमतः परम् ॥ | ३१ |
|---|----|

| | |
|--|----|
| शालिवाहं तथा चान्यत् रोगघ्नं शान्तमेव च । | |
| सर्वदुःखप्रशमनं कृष्णनिध्यानमेव च ॥ | ३२ |
| स्वामितीर्थं महापुण्यं सर्वपापप्रणाशनम् । | |
| यस्य तीरे जगन्नाथो रमते रमया सह ॥ | ३३ |
| विश्रुतं सर्वलोकेषु विशेषेण नृपात्मज ! । | |
| पाण्डुराभ्रघनप्रख्यैः राजहसैर्निषेवितम् ॥ | ३४ |
| कोकिलैश्च तथा मत्तैः चक्रवाकैश्च शोभनैः । | |
| दुर्मैर्नानाविधैश्चापि पुष्पभारनिपीडितैः ॥ | ३५ |
| तोयार्थमापतद्भिश्च शैलेन्द्रसदृशैर्गजैः । | |
| ऋक्षैः सिंहैर्वराहैश्च वृकैश्च हरिणैः शिवैः ॥ | ३६ |
| एवमाद्यैस्तथान्यैश्च लोलितं विमलोदकम् । | |
| धनुःशतेन विस्तीर्णं चन्द्रकान्तामलोदकम् ॥ | ३७ |
| मुख्यान्येतानि राजेन्द्र ! तीर्थानि कथितानि ते । | |
| सर्वतीर्थानि कथितुं न शक्यं नृपसत्तम ! ॥ | ३८ |
| उद्देशतस्तत्रोक्तानि नारायणमहीधरे । | |
| या मया भवतः प्रोक्ता "स्वामिपुष्करिणी" शुभा ॥ | ३९ |
| तस्याः प्रभावमतुलं सखुरैरपि मानुषैः । | |
| वक्तुं न शक्यते चापि यस्यास्तीरे हरिः स्वयम् ॥ | ४० |
| रमते ह्यधिकं तस्मिन् नारायणगिरावपि । | |
| यां गत्वा सर्वपापघ्नीं देवर्षिगणसेविताम् ॥ | ४१ |
| विश्रुतां सर्वलोकेषु पूजितां त्रिदशैरपि । | |
| अनेकबहुसाहस्रैः पातकैरपि संवृतः ॥ | ४२ |
| नरस्तेभ्यः समस्तेभ्यः पापेभ्योऽपि प्रमुच्यते । | |
| साक्षान्नारायणस्याद्रेः सर्वलोकविमोहिनी ॥ | ४३ |

| | |
|--|----|
| सर्वदोषप्रशमनी मायैषा परमेश्वरी । | |
| वरिष्ठा सर्वतीर्थेभ्यः स्वामिपुष्करिणी नृप ! ॥ | ४४ |
| ये नराः प्रातरुत्थाय “ स्वामिपुष्करिणी ” ति वै । | |
| कीर्तयन्ति महात्मानः ते यान्ति परमां गतिम् ॥ | ४५ |
| तस्यां स्नात्वा च तद्वारि दृष्ट्वा च महद्भुतम् । | |
| सर्वपापविनिर्मुक्ताः सर्वशोकविवर्जिताः ॥ | ४६ |
| विमानं दिव्यमारुह्य व्रजन्ति त्रिदशालयम् । | |
| ये चाप्यस्यास्तथा वारि पिबन्ति मिथिलाधिप ! ॥ | ४७ |
| अनेकबहुसाहस्रैः पातकैश्चापि संयुताः । | |
| नरास्तेभ्यो विमुच्यन्ते पापेभ्यः पापकृत्तमाः ॥ | ४८ |
| मुच्यन्ते रोगिणो रोगात् मुच्यन्तेऽसुखिनोऽसुखात् । | |
| मुच्यन्ते मोहमापन्नाः नरा मोहान्नराधिप ! ॥ | ४९ |
| शोकसागरमापन्नाः मुच्यन्ते शोकसागरात् । | |
| संसारदुःखतापार्ताः पुरुषा ध्वस्तमानसाः ॥ | ५० |
| यां समाश्रित्य तद्ब्रह्म प्राप्नुवन्ति सदाऽमलम् । | |
| या पुरा देवदेवेन विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ | ५१ |
| ब्रह्मणा लोकनाथेन प्रभुणाऽव्यक्तरूपिणा । | |
| “ गङ्गाद्यैः सकलैस्तीर्थैः सर्वपापप्रणाशनैः ॥ | ५२ |
| प्रोक्ता समे ” ति देवेन मेघगम्भीरया गिरा । | |
| शृण्वतां सर्वदेवानां ऋषीणाञ्च तथा नृप ! ॥ | ५३ |
| जनकः — कथं प्रोक्ता पुरा ब्रह्मन् ! स्वामिपुष्करिणी शुभा । | |
| गङ्गाद्यैः सकलैस्तीर्थैः समेति हरिणा पुरा ॥ | ५४ |
| एतद्ब्रह्मन् महाभाग ! याथार्थ्येनाद्य शंस मे । | |
| एतच्छ्रोतुमिहेच्छामि त्वत्तोऽहं मुनिपुङ्गव ! ॥ | ५५ |

शतानन्दः—

एवं पृष्टस्तदा तेन जनकेन महात्मना ।

मुनिः प्राह नरेन्द्रं तं 'वक्ष्येऽहं श्रूयता' मिति ॥ ५६

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमहात्म्ये स्वामिपुष्करिण्यादि-

सर्वतीर्थमहात्म्यवर्णनं नाम

त्रिंशोऽध्यायः

अथैकत्रिंशोऽध्यायः

— : * : —

अथ शङ्खोत्थयन्पवृत्तान्तः

वामदेवः—

शङ्खो नाम पुरा राजा राजन् ! आसीन्महाद्युतिः ।

हैहयानां कुले जातः कर्मणा विश्रुतो भुवि ॥ १

श्रुतस्य बलिनो राज्ञः पुत्रः परपुरञ्जयः ।

सोऽन्वशासन् महीं कृत्स्नां सशैलवनकाननाम् ॥ २

सोऽभवत् भगवद्भक्तः प्रह्लादेन समो भुवि ।

गुणैः सर्वैः समायुक्तः श्रीमान् परमधार्मिकः ॥ ३

सोऽयजत् सर्वभूतेशं अश्वमेथादिभिर्मलैः ।

नारायणं जगन्नाथं प्रणतार्तिहरं हरिम् ॥ ४

अददाद् भक्तिमान् देवे दक्षिणाश्च सहस्रशः ।

सर्वेषु तेषु यज्ञेषु प्रीतये मधुघातिनः ॥ ५

न चाद्राक्षीत्स तैर्यज्ञैः भगवन्तं सनातनम् ।

नारायणं नृपाचिन्त्यं पुण्डरीकनिभेक्षणम् ॥ ६

द्रष्टुं तमजरं देवं कृतवानपि तान् मखान् ।

श्रद्धया परया युक्तो विविधैः भूरिदक्षिणैः ॥ ७

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकविंशोऽध्यायः ४८१

सोऽभवद् दुःखसन्तप्तः ततोऽपश्यज्जनार्दनम् ।
भक्तिभावेन मनसा चेष्टा सर्वमखैरपि ॥ ८

स्वामिपुष्करिण्या भगवदुक्तगङ्गाग्रशेषपुण्यतीर्थसाम्यम्

एकदा तु महात्मानं भूपते ! भूपतिं विभुः ।
अन्तर्हितो जगादैवं भगवान् पुरुषोत्तमः ॥ ९
तस्य दुःखं समालोक्य वासुदेवो महीपते ! ।
शृण्वतां सर्वभूतानां मेघगम्भीरया गिरा ॥ १०
“नारायणगिरौ मां त्वं द्रक्ष्यसे हे महीपते ! ।
भक्तिभावेन मनसा तपस्तप्त्वा सुदुश्चरम् ॥ ११
तत्र पुष्करिणी दिव्या विमला पापहारिणी ।
धनुःशतपरीणाहा वैडूर्यविमलोदका ॥ १२
त्रैलोक्यविश्रुता पुण्या “स्वामिपुष्करिणी” ति वै ।
गङ्गाद्यैः सकलैस्तीर्थैः सा समा विमलोदका ॥ १३
तस्यां स्नात्वा भविष्यन्ति नराः पापविवर्जिताः ।
तस्यास्तीरे महापुण्ये पुष्करिण्यां नृपात्मज ! ॥ १४
महता तपसा युक्तः तिष्ठ त्वं सुसमाहितः ।
वत्सराणां सहस्रे तु समतीते महामुनिः ॥ १५
आयास्यति महातेजाः अगस्त्यो मुनिभिः सह ।
अनेकशतसाहस्रैः परीतस्तं महीधरम् ॥ १६
द्रष्टुकामश्च मां विप्रो विचरन् गिरिर्धूनि ।
वहन् मयि परां भक्तिं सर्वब्रह्मविदां वरः ॥ १७
आगतेऽथ मुनौ तस्मिन् अचिरेणैव मां नृप ! ।
द्रष्टाऽसि मत्प्रसादेन तेन सार्धं महात्मना ॥ १८

| | | |
|----------|--|----|
| | त्वया न शोकः कर्तव्यो दास्ये तव यथेप्सितम् । | |
| | मा विषादं कृथा वीर ! गच्छ त्वं तं महीधरम्" ॥ | १९ |
| वामदेवः— | एवं पुरा हि भगवान् गङ्गाद्यैः साम्यमादिशत् । | |
| | देवदेवो जगन्नाथः स्वामिपुष्करिणीं प्रति ॥ | २० |

भगवदुक्तं च शंखनृपकृतस्वामितीर्थतपःप्रकारः

| | |
|---|----|
| शङ्खोऽपि नृपतिर्धामान् गदितं तस्य शार्ङ्गिणः । | |
| नारायणस्य देवस्य विष्णोरन्तर्हितस्य सः ॥ | २१ |
| निशम्य मधुरं वाक्यं नरेन्द्रोऽथ नरेश्वर ! । | |
| अभिषिच्य सुतं वीरं महेन्द्रसमविक्रमम् ॥ | २२ |
| सौम्यं पुरुषशार्दूलं वज्रपाणिमिवापरम् । | |
| नारायणालयं दिव्यं नारायणगिरिं तदा ॥ | २३ |
| अभ्यगात् द्रष्टुकामः स वासुदेवं नराधिप ! । | |
| तत्र गत्वा महीपालः स तेपे परमं तपः ॥ | २४ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे यथोक्तं परमेष्ठिना । | |
| विषयेभ्यः समस्तेभ्यः समाहृतमनोरथः ॥ | २५ |
| निवेक्ष्य च मनस्तस्मिन् परे ब्रह्मणि केशवे । | |
| तपश्चरंश्च विश्वेशं अर्चयंश्च यथाविधि ॥ | २६ |
| वत्सराणां सहस्रन्तु सोऽभवन्नियतात्मवान् । | |
| एवमेषा महापुण्या स्वामिपुष्करिणी शुभा ॥ | २७ |
| एनां पुरातनीं पुण्यां सेवमानो न सीदिति । | |
| नरः समस्तपापैस्तु संयुक्तोऽपि नरेश्वर ! ॥ | २८ |
| यस्त्वेनां सेवते भक्त्या स गच्छेत्परमां गतिम् । | |
| देवदेवप्रसादेन कृष्णस्य परमात्मनः ॥ | २९ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकत्रिंशोऽध्यायः ४८३

सकामाश्चापि सेवन्ते ये नरा नियतेन्द्रियाः ।
स्वामिपुष्करिणीमेनां तान् कामानाप्नुवन्ति हि ॥ ३०
ऋषयो वाल्खिल्याश्च सिद्धाश्चापि सहस्रशः ।
अस्यां स्नात्वा जगन्नाथं अर्चयन्ति दिनेदिने ॥ ३१
अस्यास्तीरं समागम्य गन्धर्वाश्च सहस्रशः ।
प्रसादयन्तो देवेशं सुस्वरं बहु किन्नराः ॥ ३२
गायन्ति विविधैर्दिव्यैः कर्मभिस्तमहर्निशम् ।
नृत्यन्त्यप्सरसश्चापि गायन्ति शुभलोचनाः ।
प्रसादयन्त्यो देवेशं दिवारात्रमतन्द्रिताः ॥ ३३
एषा महाश्चर्यतमा महीपते !
महीतले देवगणैरभिष्टुता ।
नारायणाद्रिप्रवरं समाश्रिता
नारायणेनाप्युदिता प्रियेति सा ॥ ३४

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये स्वामिपुष्करिणी-
माहात्म्यवर्णनं नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ।



अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः



स्वामिपुष्करिणीतीर्थे भगवन्तमुद्दिश्य अगस्त्यादिकृततपश्चिन्ता
नामदेवः—

अगस्त्योऽथ मुनीन्द्रस्तु नरेन्द्र ! मुनिभिः सह ।
एतानि तीर्थानि मुनिः स्वामिपुष्करिणीं विना ॥ १

| | |
|--|----|
| मनःप्रह्लादजननीं दृष्ट्वा हर्षमुपागमत् । | |
| तेषु तेषु च सर्वेषु तीर्थेषु शुभवारिषु ॥ | २ |
| स्नात्वा स्नात्वा प्रणम्येशं अर्चयामास केशवम् । | |
| मुनयश्चापि ते सर्वे परां प्रतिमुपागताः ॥ | ३ |
| दृष्ट्वा तीर्थानि पुण्यानि शतशोऽथ सहस्रशः । | |
| ते चापि तेषु तेप्वेवं स्नात्वा स्नात्वा द्वजोत्तमाः ॥ | ४ |
| अर्चयामासुरव्यग्रा भगवन्तं सनातनम् । | |
| अथ तैः सहितैः सर्वैः अगस्त्योः नियतात्मवान् ॥ | ५ |
| अर्चयित्वा जगन्नाथं अभ्यगा पुरुषोत्तमम् । | |
| द्रष्टुकामो महीपाल ! भूतभव्यभवत्प्रभुम् ॥ | ६ |
| आदिदेवं विशालाक्षं कृष्णमङ्घ्रिकारिणम् । | |
| मुनीन्द्रः परमायत्तो विचरन् गिरिमूर्धनि ॥ | ७ |
| कालेन महता चापि नाद्राक्षीत् पुरुषोत्तमम् । | |
| स्रष्टारमीश्वरं देवं सर्वलोकपरायणम् ॥ | ८ |
| दुःखेन महताऽऽविष्टो मुनीन्द्रो मुनिभिः सह । | |
| निषसाद ततो भूप ! कस्मिंश्चित् गिरिगह्वरे ॥ | ९ |
| भूधरं सर्वतः पश्यन् “किमेत” दिति चिन्तयन् । | |
| यत्पुरा ब्रह्मणा प्रोक्तं “द्रष्टाऽसी” ति सुरेश्वरम् ॥ | १० |
| तच्चापि संस्मरन् वाक्यं निषसाद सुदुःखितः । | |
| ऋषयश्चापि दुःखार्ता ब्रूयन्तः सुरेश्वरम् ॥ | ११ |
| परिवार्य मुनीन्द्रं तं निषेदुरवनीपते ! । | |
| राजंस्तेषां मुनीन्द्राणां चरतां तत्र भूधरे ॥ | १२ |
| वेङ्कटाख्येऽभ्यगात्पुण्ये वर्षाणामधिकं शतम् । | |
| ततस्तेषूपविष्टेषु मुनीन्द्रेषु महीधरे ॥ | १३ |

भगवत्सेवार्थं वेङ्कटाचलं प्रति गुरुशुक्राद्यागमनम्

| | |
|--|----|
| आजमुः शिखरे तस्मिन् द्रुमखण्डविभूषिते । | |
| बृहस्पतिश्च भगवान् शुक्रश्चापि तथाऽत्मवान् ॥ | १४ |
| तथा च भगवद्भक्तो राजोपरिचरो वसुः । | |
| सान्निध्यं कुरुते यस्य सदा कृष्णो महीपते ! ॥ | १५ |
| यः पुरा विप्रशापेन पातालतलपातितः । | |
| उद्धृतो हरिणा तस्मात् संसारगहनादिव ॥ | १६ |

अतः —

| | |
|--|----|
| ‘कथं स विप्रशापेन पातालतलपातितः ? । | |
| उद्धृतो हरिणा कस्मात् संसारगहनादिव ? ॥ | १७ |
| एतन्मुने ! महाश्वर्यं श्रोतुमिच्छाम्यशेषतः । | |
| नारायणाश्रितत्वेन प्रसादसुमुखो वद ’ ॥ | १८ |

शतानन्दः —

| | |
|---|----|
| इत्थं निशम्य वचनं जनकस्य मुनिस्तदा । | |
| वामदेवो ‘महीपाल ! श्रूयता ’मिति चाब्रवीत् ॥ | १९ |

वामदेवः —

| | |
|---|----|
| ‘इदं चोवाच भगवान् सर्वशास्त्रविशारदः । | |
| पुण्यमेतन्महाश्वर्यं श्रुत्वा चैवावधारय ॥ | २० |
| वासुदेवाश्रयं पुण्यं इतिहासं पुरातनम् । | |
| ऋषयश्च पुरा राजन् सेन्द्राश्च त्रिदिवौकसः ॥ | २१ |
| तं देशं प्रस्थिताः सर्वे यत्रोपरिचरो वसुः । | |
| धर्मसंशयमापन्ना द्रष्टुं तं वसुधाधिपम् ॥ | २२ |

उपरिचरवसुवृत्तान्तः

| | |
|--|----|
| अत्रान्तरे समायातः सोऽयं मार्गवशाद्वसुः । | |
| अभिजग्मुश्च तं देवा ऋषयश्च तदा वसुम् ॥ | २३ |
| तानागतांस्ततो दृष्ट्वा देवान् ब्रह्मर्षिभिः सह । | |
| पूजयामास धर्मात्मा समुत्थाय वरासनात् ॥ | २४ |
| सम्पूज्य तान् यथान्यायं प्रणम्य च कृताञ्जलिः । | |
| सकौतुकं समाविष्टः प्राह चेदं वचो नृप ! ॥ | २५ |
| ‘कृतार्थोऽस्मि महाभागा यद्यूयं मम चान्तिकम् । | |
| आगतास्त्रिषु लोकेषु पूजिता वेदपारगाः ॥ | २६ |
| एष्वासनेषु सर्वेषु विशन्तु च यथाविधि । | |
| प्रसीदन्तु भवन्तोऽत्र देवा ब्रह्मर्षयोऽमलः ! ’ ॥ | २७ |
| इत्युक्त्वा प्रददौ तेषां आसनानि महान्ति वै । | |
| मणिकाञ्चनचित्राणि दीप्यमानान्यनेकशः ॥ | २८ |
| मुनीन्द्राणाञ्च सर्वेषां त्रिदशानाञ्च धर्मवित् । | |
| तेषु तेषूपविष्टेषु देवेषु मुनिभिः सह ॥ | २९ |
| कृताञ्जलिर्मुदा युक्तः पप्रच्छाथ स चेदिराद् । | |
| ‘विमर्शमागता यूयं किं कार्यं भवतां मया ? । | |
| एतत्सर्वं समासेन त्वाख्यात मुनिसत्तमाः ! ’ ॥ | ३० |

उपरिचरवसुं प्रति महर्षिकृतप्रश्नप्रकारः

वामदेवः—

| | |
|--|----|
| इत्युक्त्वा वसुना दृष्ट्वा मुनीन्द्रास्ते सुरैः सह । | |
| धर्मसंशयमापन्ना आचख्युस्तस्य भूपते ॥ | ३१ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे द्वात्रिंशोऽध्यायः ४८७

- ‘धर्मसंशयमापन्ना वयं सर्वे समागताः ।
धर्मतत्त्वं परिप्रष्टुं छिन्धि नो धर्मसंशयम् ॥ ३२
- भो राजन्! केन यष्टव्यं सद्भिः किं पशुनाऽथवा ।
औषधैरेव यष्टव्यं? तदेतद्वद तत्त्वतः ॥ ३३
- एनं नः संशयं छिन्धि प्रमाणं नो भवान् मतः ’ ।
इत्येवमुक्तः स वसु कृताञ्जलिरभाषत ॥ ३४
- ‘कस्य वै को मतः पक्षो ब्रूत सत्यं द्विजोत्तमाः ’ ।
इत्युक्ता ऋषयः प्रोचुः पक्षौ द्वौ च पृथक् पृथक् ॥ ३५
- धान्यैर्यष्टव्यमित्येष पक्षोऽस्माकं नराधिप! ।
पशुपक्षस्तु देवानां मतो राजन्! वदस्व नः ’ ॥ ३६
- निशम्य वचनं तेषां नृपेन्द्रो वसुरात्मवान् ।
प्रश्नमेतं समाधित्सुः मनस्येवमचिन्तयत् ॥ ३७
- ‘महर्षिदेवतामध्ये पूर्वं पूज्या हि देवताः ।
ततो मयाऽद्य सङ्ग्राह्यः पक्षोऽत्र मरुता’ मिति ॥ ३८
- देवानान्तु मतं ज्ञात्वा वसुस्तत्पक्षसंश्रयात् ।
“छागेनैव तु यष्टव्यम्” इत्युचुरमरास्तु यत् ।
एवमेवैतत् इत्याह नान्यथे’ति नरोत्तम! ॥ ३९

महर्षिशापेन उपरिचावसोः पातालकुहरप्राप्तिः

- तेनोक्तं वचनं श्रुत्वा वसुना रक्तवीक्षणाः ।
मुनीन्द्रास्ते तु सङ्क्रुद्धाः प्रोचुरेवं वचो नृप ॥ ४०
- ‘यदि त्वयोक्तः परमो धर्मो न स्यात्परन्नप! ।
रसात्कृतं घोरं विविशेथा ह्यक्रमतः ॥ ४१

| | |
|--|----|
| यदि स्यात्परमो धर्मः त्वयोद्दिष्टो नरेश्वर ! ।
वयमेवाद्य तद्गौरं प्रविशेम रसातलम् ॥ | ४२ |
| विधाता भगवान् देवः सर्वात्मा परमेश्वरः ।
नारायणः स भगवान् कृष्णः कमललोचनः ॥ | ४३ |
| स एतदेव देवेशो वेत्त्येष मधुसूदनः ।
न वेदान्यः पुमाँलोके वैदैतद्वा पितामहः ॥ | ४४ |
| वेद देववरः साक्षात् शङ्करो वा पुरान्तकः ।
यं विदुः सर्वभूतानां संहर्तेति पुराविदः' ॥ | ४५ |
| एवमुक्ते ततस्तैस्तु निपपात स चेदिराद् ।
अनिच्छन्नेव भूपाल ! घोरदुर्गे रसातले ॥ | ४६ |
| भावयन् हृदि देवेशं त्वातारं मधुघातिनम् ।
भक्त्या परमया युक्तः कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ॥ | ४७ |
| पतमानं ततो वायुः विचरन् वै तदा बिले ।
दधौ परमया प्रीत्या भक्तोऽयमिति शार्ङ्गिणः ॥ | ४८ |
| बहन्नेव शनैर्देवो वायुस्तं चेदिपुङ्गवम् ।
प्रवेशयामास तदा पातालं दैत्यसेवितम् ॥ | ४९ |
| प्रविष्टः स नरेन्द्रोऽथ चेदिराद् विश्रुतो भुवि ।
मनस्यच्युतमीशेशं कृत्वा सर्वेश्वरं हरिम् ॥ | ५० |
| वासुदेवं सुराध्यक्षं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
स्थितिसंयमकर्तारं कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ॥ | ५१ |
| नारायणं समस्तानां लोकानां प्रभुमीश्वरम् ।
द्वादशाक्षरमैवेकं परं मन्त्रं जजाप ह ॥ | ५२ |
| सर्वेन्द्रियाणि संयम्य भक्त्या परमया युतः ।
विषादं नागमद्गौरं प्रविष्टोऽपि रसातलम् ॥ | ५३ |

भगवत्प्रेरितचक्रकृतवसुह ननोद्युक्त।सुरवधप्रकारः

| | |
|--|----|
| शोकं मोहं भयञ्चापि नागमत् पृथिवीपतिः । | |
| प्रविष्टमथ तं दृष्ट्वा चेदिराजं जिघांसवः ॥ | ५४ |
| पूर्ववैरं स्मरन्तस्तु दैतेयाः शस्त्रपाणयः । | |
| आजम्मुः सङ्घशस्तत्र शतशोऽथ सहस्रशः ॥ | ५५ |
| महाबल्य महावीर्या महादंष्ट्रा महौजसः । | |
| ते समेत्य महात्मानं चेदिराजं महाभुजम् ॥ | ५६ |
| निजघ्नुः सहसा तैस्तैरस्त्रैः शस्त्रैस्तरस्विनः । | |
| न शेकुस्तं महात्मानं हन्तुं दैतेयदानवाः ॥ | ५७ |
| ब्राह्माद्यैरस्त्रजालैश्च शस्त्रैश्चापि सुदारुणैः । | |
| चक्रं भगवताऽऽज्ञप्तं रक्षार्थं तस्य धीमतः ॥ | ५८ |
| आगतं तत्र पाताले दुर्दर्शं तद्दुरासदम् । | |
| चक्राग्रौ दैत्यनिर्मुक्तशस्त्राप्यस्त्राणि भूपते ! ॥ | ५९ |
| लयं यातानि सर्वाणि पतङ्गा इव पावके । | |
| अथ ते पापकर्माणो दैतेया दानवास्तदा ॥ | ६० |
| जम्मुर्थथागतं सर्वे स्वालयात् मिथिलेश्वर ! । | |
| बसुश्चापि स राजर्षिः चिन्तयन् मधुसूदनम् ॥ | ६१ |
| इष्टाभिर्वाग्भिरीशेशं तुष्टाव पुरुषोत्तमम् । | |
| भगवानपि विज्ञाय चेदिराजं रसातले ॥ | ६२ |

वस्त्रानयनाय पातालबिलं प्रति भगवत्कृतगरुडप्रेषणम्

| | |
|--------------------------------------|----|
| पतितं विप्रशापेन सर्वेशः सर्वभावनः । | |
| परः परात्मा पुरुषः परमात्मा सनातनः ॥ | ६३ |

| | |
|---|----|
| अव्यक्तरूपो विश्वात्मा विष्णुर्नारायणः स्वयम् । | |
| नागेन्द्रशयने रम्ये शयानो मधुसूदनः ॥ | ६४ |
| भक्तानुकम्पी देवेशः क्षीरार्णवनिकेतनः । | |
| वैनतेयं जगन्नाथः सस्मार शुभलोचनः ॥ | ६५ |
| संस्मृतो गरुडस्तेन विनतानन्दनस्ततः । | |
| शीघ्रमेव हरेस्तस्य पार्श्वमभ्यागमत्तदा ॥ | ६६ |
| आगतं तं गरुत्मन्तं समीक्ष्य वसुधाधिप ! | |
| मेघगम्भीरया वाचा प्रोवाचेदं प्रजापतिः ॥ | ६७ |

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| ‘वैनतेय ! स राजर्षिर्वसुर्नित्यं मम प्रियः । | |
| विप्रशापमयाद्दोरे पाताले पतितः किल ॥ | ६८ |
| पतितोऽपि स पाताले भक्त्या परमया युतः । | |
| मामेव भजते नित्यं मध्यावेश्य मनोगतिम् ॥ | ६९ |
| तमानयस्व भूपालं गरुत्मन् ! वचनान्मम । | |
| तस्मादुद्धृत्य पातालात् स्वदेशं प्रापयाव्ययम् ॥ | ७० |
| क्षिप्रं त्वं गच्छ राजर्षिः मद्भक्तो यत्र हि स्थितः । | |
| नैवमर्हति भूपालः स वसुः गरुडामलः ’ ॥ | ७१ |

वामदेवः—

| | |
|---|----|
| इत्युक्तो गरुडस्तेन हरिणा परमेष्ठिना । | |
| ‘तथे’त्युक्त्वा ततः शीघ्रं अभ्यगाद्वै रसातलम् ॥ | ७२ |
| भूप ! प्रविशतस्तस्य पातालन्तु तरस्विनः । | |
| गरुडस्योग्रवेगस्य पक्षवातेन वेगतः ॥ | ७३ |
| आहताः शतशो नेशुः पन्नगेन्द्रा रसातले । | |
| पातालवासिनश्चापि दैतेयाः शतशस्तथा ॥ | ७४ |

| | |
|---|----|
| तद्भयाच्च महावीर्या निपेतुः शतशस्ततः । | |
| चुक्षुभुः सागराश्चापि पर्वताश्च चकम्पिरे ॥ | ७५ |
| समूला न्यपतन् वृक्षा भग्नस्कन्धाः समुछिताः । | |
| परित्यज्य तदाऽऽकाशं खेचराः प्रययुर्दिवम् ॥ | ७६ |
| अन्तर्गत्वाऽथ पाताले गरुत्मान् विनतासुतः । | |
| ददर्श तं समासीनं चेदिराजं महीपतिम् ॥ | ७७ |
| भगवन्तं जगन्नाथं स्तुवन्तं पुरुषोत्तमम् । | |
| गरुत्मन्तं ततो दृष्ट्वा सहसा वसुरुत्थितः ॥ | ७८ |
| धृताञ्जलिर्महातेजाः पूजयामास भक्तिमान् । | |
| गरुडश्चापि भूपालं सम्पूज्येदमथाब्रवीत् । | |
| स्मयन्निव महावीर्यो हर्षयन्निव तं वसुम् ॥ | ७९ |
| ‘श्रूयतां भूपते ! वाक्यं कृष्णस्याक्लिष्टकारिणः । | |
| सृष्टिसंयमनेशस्य विष्णोरमिततेजसः ॥ | ८० |
| “आनयस्व वसुं भक्तं रसातलतलं गतम् । | |
| स्तुवन्तं मां समावेक्ष्य मध्येव मतिमुत्तमाम्” ॥ | ८१ |
| इत्युक्तो लोकनाथेन तवानयनकर्मणि । | |
| आगतोऽहं महीपाल ! समारोहं ममोपरि ’ ॥ | ८२ |

वामदेवः—

| | |
|---|----|
| वैनतेयेन तेनैव प्रोक्तः स पृथिवीपतिः । | |
| उवाच परया प्रीत्या गरुत्मन्तं वसुर्नृपः ॥ | ८३ |
| ‘तव पृष्ठं समारोढुं न चेच्छामि शुभेक्षण ! । | |
| यत्रारोहति गोविन्दः कृष्णः शुभविलोचनः ॥ | ८४ |
| नाथश्च जगतां धाता यस्मिंश्चक्रगदाधरः । | |
| आरोहति मया तस्मिन् आस्थातुं नैव चोचितम् ’ ॥ | ८५ |

| | | |
|----------|--|----|
| वामदेवः— | इत्युक्तो गरुडस्तेन चेदिराजेन धीमता । | |
| | ‘तवानुरूपं वचनमुक्तं’ मित्यब्रवीत्ततः ॥ | ८६ |
| | इत्युक्त्वा तं तथाभूतं गरुत्मान् पन्नगाशनः । | |
| | बाहुभ्यां सम्परिष्वज्य प्राह चैनं पुन पुनः ॥ | ८७ |
| | ‘उत्पपाताशु वेगेन बाहुभ्यां परिगृह्यताम्’ । | |
| | महाजवो महावीर्यो महादंष्ट्रो महामनाः ॥ | ८८ |
| | तत उत्पततस्तस्य गरुडस्य तरस्विनः । | |
| | पक्षवातेन सन्त्रस्ताः पातालतलवासिनः ॥ | ८९ |
| | महोरगा महावीर्याः प्रययुः सर्वतो दिशम् । | |
| | दैतेया दानवाश्चापि राक्षसाश्च सहस्रशः ॥ | ९० |
| | दिशो दश समाजग्मुः कृष्णागमनशङ्कया । | |
| | पातालं समतीत्याथ वैनतेयः प्रतापवान् ॥ | ९१ |
| | स्वदेशं प्रापयामास तं वसुं चेदिपुङ्गवम् । | |
| | हस्ताभ्यां भुवि निक्षिप्य तं वसुं गरुडस्तदा ॥ | ९२ |
| | ‘अत्रैव स्थीयतां राजन् !’ इत्युक्त्वा प्रययौ बली । | |
| | वसुश्चापि स राजर्षिः स्वराज्यं प्राप्य भूपतिः ॥ | ९३ |
| | बुभुजे सकलान् कामान् शशास च वसुन्धराम् । | |
| | विष्णोरेव प्रसादेन सर्वभूतनिवासिनः ॥ | ९४ |
| | जगद्धातुरनन्तस्य पश्चात् मुक्तिमवाप्तवान् । | |
| | एवमेतत्पुरावृत्तं कथितं ते नृपोत्तम ॥ | ९५ |
| | नारायणाश्रितं पुण्यं यः पठेत् भक्तिमान् नरः । | |
| | प्रणम्याच्युतमीशेशं स याति परमां गतिम् ॥ | ९६ |
| | नारायणेतिहासं यः शृणोति श्रावयिष्यति । | |
| | श्रद्धया भगवद्भक्तिं प्राप्नोति स नराधिप ! ॥ | ९७ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे अथत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ४९३

मुच्यन्ते ते नराः सद्यो दुष्कृतैः सकलैर्नृप ! ।
उद्ध्रियन्ते च संसारात् पातालच्छेदिराडिव ॥ ९८
विभुना वासुदेवेन कृष्णेनैव दयालुना ।
हरिणा लोकनाथेन सर्वकामप्रदायिना ॥ ९९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये उपरिचरवसु-
उपास्यानं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ।

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

शंखादीनां भगवद्विषयमङ्गलविग्रहसेवा

वामदेवः—

ततस्ते त्रय आश्चर्यं गिरेस्तत्र समाययुः ।
शिखरं मेरुसङ्काशं नानाधातुविभूषितम् ॥ १
श्रिया परमया युक्तं भासयन्तः स्वतेजसा ।
शिखरेण च येनैव पर्वतः स विराजितः ।
यस्मिंश्चापि समासीना मुनयः शतशो नृप ! ॥ २
अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे भास्करोपमतेजसा ।
आगत्य सहसा भूप ! दीप्यमाना इवामयः ॥ ३
भासयन्तो दिशः सर्वाः तेजोभिर्भास्करोपमाः ।
अगस्त्यप्रमुखान् विप्रान् सर्वास्तान् ददृशुस्तदा ॥ ४
निषण्णास्तस्य शिखरे विषण्णान् भृशदुःखितान् ।
तानागतांस्ततो दृष्ट्वा ह्यदित्यानपरानिव ॥ ५

| | |
|--|----|
| समुत्तस्थुर्द्विजास्तत्र निषण्णा ये नगोत्तमे । | |
| पूजयन्ति स्म तान् सर्वान् अगस्त्यप्रमुखांस्तथा ॥ | ६ |
| सङ्गत्य मुनिभिः सर्वैः त्रयस्तेऽथ महौजसः । | |
| प्रोचुः परमसंहृष्टा नादयन्तो दिशो दश ॥ | ७ |
| ‘शुभा व्युष्टा निशाऽस्माकं शुभाश्च तिथयोऽमलाः । | |
| युष्माभिः सङ्गता यस्मात् वयं ब्रह्मर्षिसत्तमाः ! ॥ | ८ |
| विमर्शमागता यूयं पर्वतेऽस्मिन् महीयसि । | |
| विषण्णाश्च विमर्शं वा कं वा द्रष्टुमिहागताः ? ॥ | ९ |
| एतन्मुनिवरा यूयं अस्माकं पृच्छतां द्विजाः । | |
| सर्वमाख्यात तत्त्वेन श्रोतुमिच्छामहे वयम्’ ॥ | १० |
| एवं मुनिवरास्तैस्तु सम्यक् पृष्ट्वा महात्मभिः । | |
| ‘श्रूयता’ मिति चाभाष्य प्रोचुस्ते मिथिलेश्वर ! ॥ | ११ |

श्लेषः—

| | |
|---|----|
| शङ्खचक्रधरं देवं पीतवाससमच्युतम् । | |
| नारायणगिरावस्मिन् वसन्तं पुरुषोत्तमम् । | १२ |
| ईशितारं समस्तस्य स्रष्टारं जगतोऽव्ययम् । | |
| तं वयं शुभदातारं द्रष्टुकामाः समागताः ॥ | १३ |
| न च दृष्टो जगन्नाथो विचरद्भिः समन्ततः । | |
| कालेन महता चापि विषण्णास्तेन ते वयम् ॥ | १४ |
| अदृश्यमाने गोविन्दे हरावव्यक्तजन्मनि । | |
| शोकेन महताऽऽविष्टा भृशमुद्विग्नमानसाः ॥ | १५ |
| विषण्णाश्च शुभे ह्यस्मिन् शिखरे धातुमण्डिते’ । | |
| एवमुक्ते मुनीन्द्रैस्तु ततस्तैः जनकामराः । | |
| मुनीन्द्राः तान् समाभाष्य प्रोचुस्ते ‘श्रूयता’ मिति ॥ | १६ |

वस्वादयः—

| | |
|---|----|
| ‘शङ्खो नाम महीपालो हैहयाधिपतिः प्रभुः । | |
| आसीत् श्रुतस्य तनयः सत्पथे निष्ठितः शुभे ॥ | १७ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे स च राजाऽर्चयन् हरिम् । | |
| तपश्चरति राजेन्द्र ! तस्य राज्ञो जनार्दनः ॥ | १८ |
| सान्निध्यं कुरुते देवो भगवानिति विश्रुतम् । | |
| सोऽयं समागतः कालो यस्मिन् काले जनार्दनः ॥ | १९ |
| शङ्खेन दृश्यते राजन् ! विश्वरूपधरो हरिः । | |
| तान्तु गच्छामहे पुण्यां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ॥ | २० |
| सर्वकामप्रदां शुद्धां सेवितां त्रिदशैरपि । | |
| तत्र गत्वा वयश्चापि द्रक्ष्यामः पुरुषोत्तमम् ॥ | २१ |
| सर्वकामप्रदातारं सर्वेशं सर्वभावनम् । | |
| तस्माद्युयं वयं चापि गच्छाम द्विजसत्तमाः ! ॥ | २२ |
| नात्र स्थेयं क्षणमपि त्वर्यतां त्वर्यतामिति ’ । | |
| इत्युक्तेऽथ तदा भूप ! वस्वाद्यैस्तैः महात्मभिः ॥ | २३ |
| संहृष्टमनसः सर्वे बभूवुः द्विजसत्तमाः । | |
| प्रोचुश्च ‘शीघ्रमेवास्मात् गम्यतां गम्यता’ मिति ॥ | २४ |
| गतमोहा महात्मानो गतशोका गतज्वराः । | |
| मुनयोऽथ ययुः सर्वे वस्वाद्यैः सहिता नृप ! ॥ | २५ |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थं मुनीनां गणसेविताम् । | |
| गच्छन्तस्तेऽथ संहृष्टाः प्रोचुरेवं परस्परम् । | |
| नरेन्द्र ! मुनिशार्दूला वीक्षमाणा महीधरम् ॥ | २६ |
| ‘अयं किल जगद्धातुः वासुदेवस्य शार्ङ्गिणः । | |
| भूधरो बहुवृक्षाढ्यः सदा प्रियतमो भुवि ॥ | २७ |

| | |
|--|----|
| एनं समाश्रिताः पुण्यं मुनयश्च पुरातनाः । | |
| पुरातनं सुराध्यक्षं दृष्टवन्तः किलाव्ययम् ॥ | २८ |
| भक्ताश्चापि जगद्धातुः स्तुवन्तः पुरुषोत्तमम् । | |
| एनमारुह्य शैलेन्द्रं द्रक्ष्यन्ति पुरुषाः किल ॥ | २९ |
| स्थानेभ्यश्च समस्तेभ्यः तस्येशस्य महात्मनः । | |
| अयं गिरिः महान् दिव्यः सम्यक् प्रियतरः किल ॥ | ३० |
| “नारायणाद्रि” रित्येतत् नामैव वदति स्वयम् । | |
| नारायणस्य स्थानेषु नैतस्मात् विद्यते परम् ॥ | ३१ |
| एवंविधानि वाक्यानि ब्रुवन्तस्ते द्विजोत्तमाः । | |
| ययुस्ते सर्वतस्तत्र शतशो मिथिलेश्वर ! ॥ | ३२ |
| एतस्मिन्नन्तरे तत्र समाजग्मुः सहस्रशः । | |
| तद्विज्ञाय ततः सिद्धाः श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥ | ३३ |
| यैः प्राप्तं देवसारूप्यं प्रसादात् तस्य शार्ङ्गिणः । | |
| नारायणस्य देवस्य हरेः क्षीरोदशायिनः ॥ | ३४ |
| सर्वदाऽनुगता ये वै प्रीणयन्ति जनार्दनम् । | |
| क्षीरोदशायिनं देवं विश्वकर्तारमीश्वरम् ॥ | ३५ |
| ते सङ्गतास्तु तैः सर्वैः अगस्त्यप्रमुखैर्द्विजैः । | |
| तपसा महता युक्तैः विचरद्भिर्महीधरम् ॥ | ३६ |
| अगस्त्यप्रमुखान् सर्वान् श्वेतद्वीपनिवासिनः । | |
| हर्षेण महता युक्ता यथान्यायमपूजयन् ॥ | ३७ |
| ते चापि मुनयः सर्वे प्रहर्षोत्फुल्ललोचनाः । | |
| तानागतांस्ततो दृष्ट्वा भास्करोपमतेजसः ॥ | ३८ |
| अपूजयन्महात्मानो यथान्यायमरिन्दमम् ! । | |
| सर्वे ते सङ्गतास्तत्र तैः सर्वैर्मुनिपुङ्गवैः ॥ | ३९ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ४९७

| | |
|--|----|
| ययुः परमया प्रीत्या श्वेतद्वीपनिवासिनः । | |
| स्वामिपुष्करिणीतीरं देवासुरनिषेवितम् ॥ | ४० |
| सर्वे मुनिवराश्चापि सिद्धाश्चापि सहस्रशः । | |
| बृहस्पतिश्च भगवान् शुक्रश्चापि तथा वसुः ॥ | ४१ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरं अवापुरवनीपते ! । | |
| सान्निध्यं कुरुते यत्नं भगवान् भूतभावनः ॥ | ४२ |
| तत्त गत्वाऽथ ते सर्वे नापश्यन् पुरुषोत्तमम् । | |
| नीलमेघप्रतीकाशं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ॥ | ४३ |
| तत्तापश्यंस्ततो राजन् ! तप्यन्तं सुमहत्तपः । | |
| विष्णोराराधनार्थाय शङ्खञ्च नियतेन्द्रियम् ॥ | ४४ |
| तानागतांस्ततो दृष्ट्वा शङ्खोऽथ नृपतेः सुतः । | |
| रोमाञ्चिताङ्गः सहसा परां प्रीतिमुपागमत् ॥ | ४५ |
| कृतकृत्यं तदात्मानं मेने नरवरात्मजः । | |
| संस्मरन् पूर्वमेवोक्तं हरिणा हरिमेधसा ॥ | ४६ |
| ‘अथ तेषु मुनीन्द्रेषु द्रष्टाऽसी ’ ति वचः स्मरन् । | |
| सहस्रोत्थाय तान् सर्वान् प्रणनाम नृपस्तदा ॥ | ४७ |
| व्याकुलीकृतसर्वाङ्गः ततः सम्भ्रान्तमानसः । | |
| सिद्धांश्चापि तथा सर्वान् श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥ | ४८ |
| वागीशञ्च तथा शुक्रं वसुञ्चापि महामतिम् । | |
| कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रणनाम च तान् नृप ! ॥ | ४९ |
| अगस्त्यप्रमुखाश्चापि सिद्धाश्चापि सहस्रशः । | |
| बृहस्पतिश्च भगवान् शुक्रश्चापि महामुनिः ॥ | ५० |
| तथा च भगवद्भक्तो राजोपरिचरो वसुः । | |
| श्रुतस्य तनयश्चापि शङ्खः परपुरञ्जयः ॥ | ५१ |

| | |
|--|----|
| एते सर्वे महात्मानः समवेता ह्यकल्मषाः । | |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे द्रष्टुकामा जनार्दनम् ॥ | ५२ |
| अपश्यन्तस्तु ते सर्वे गोविन्दं विभुमच्युतम् । | |
| अनादिमध्यनिधनं सर्वभूतनिवासिनम् ॥ | ५३ |
| तपः परममास्थाय प्रयता नियतेन्द्रियाः । | |
| चिन्तयन्तस्तु देवेशं तत्रातिष्ठन्ततो नृप ! ॥ | ५४ |
| तस्यामेव तदा सर्वे स्नात्वा पीत्वा मुदा म्वताः । | |
| पुष्करिण्यां शुभयान्तु विमलायां दिने दिने ॥ | ५५ |
| अर्चयन्तो हृषीकेशं दिव्यैः पुष्पैः सुगन्धिभिः । | |
| अकुर्वन्ते तपो घोरं द्रष्टुमव्यक्तरूपिणम् ॥ | ५६ |
| त्रिरात्रमेवं भूपाल ! व्यतिष्ठन्ते दिवानिशम् । | |
| ततो विमल आदित्ये चतुर्थेऽह्नि शुभे दिने ॥ | ५७ |
| तपसोऽन्ते च पुण्यक्षे विमले चाम्बरे शुभे । | |
| तदा प्रसन्नः सर्वात्मा साक्षात् नारायणः स्वयम् ॥ | ५८ |
| आविर्बभूव भगवान् नृपते ! पुरुषोत्तमः । | |
| भ्राजयन् सर्वलोकेशः सर्वान् लोकान् स्वतेजसा ॥ | ५९ |

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये शङ्खादीनां

भगवत्सेवाप्रातिवर्णनं नाम

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः



अथ चतुर्विंशोऽध्यायः

आविर्भूतभगवद्विषयमङ्गलविग्रहवर्णनम्

जनकः—

‘कीदृशं वै हरेस्तस्य रूपमव्यक्तरूपिणः ।
 कियन्तो वा भुजास्तस्य कियन्ति वदनानि च ॥ १
 कियन्तो वा धृतास्तेन तीक्ष्णाः प्रहरणास्तथा ? ।
 ब्रूहि तद्रूपसंस्थानं विश्वमूर्तेर्हरेर्मुने ! ।
 दृष्टवन्तो यथा सिद्धा मुनयश्च पुरातनाः ॥ २

शतानन्दः—

जनकेनैवमुक्तस्तु वामदेवो महामुनिः ।
 ‘श्रूयतामि ’ त्यथाऽभाष्य जनकं तं वचोऽब्रवीत् ॥ ३
 वक्ष्येऽहं नृपते ! सम्यक् श्रूयतामिदमादरात् ।
 यथाश्रुतं मयाऽगस्त्यात् मुनीन्द्रात् कुम्भजन्मनः ॥ ४

वामदेवः—

तद्रूपं वासुदेवस्य हरेरव्यक्तरूपिणः ।
 उद्यतादित्यसङ्काशैः नयनैः शोभितं शुभैः ।
 नानारत्नचित्त्रैश्चित्रैः किरीटैरुपशोभितम् ॥ ५
 प्रसन्नैर्वहुभिश्चापि वदनैरुपशोभितम् ।
 प्रवालमणिहेमाद्यैः चित्रितैः हेमकुण्डलैः ॥ ६
 नानावर्णैरनेकैश्च रुचिरैः समलङ्कृतम् ।
 दिव्याभरणजालैश्च नानारत्नविचित्रितैः ॥ ७
 अनेकशतसाहस्रैः शोभितं शुभलोचनैः ।
 कम्बुग्रीवं महोरस्कं महाबाहुं महाद्युतिम् ॥ ८

| | |
|--|----|
| सहस्रबाहुकं दिव्यं रत्नजालविभूषितम् । | |
| आयताश्च सुपीनाश्च सुवृत्ताश्च भुजाः शुभाः ॥ | ९ |
| नानाप्रहरणोपेताः नानाभूषणभूषिताः । | |
| सालस्कन्धोपमाश्चापि भूषिता भूषणोत्तमैः ॥ | १० |
| श्यामाः पृथुतरा दिव्याः तरुणादित्यतेजसः । | |
| तरुणाः स्निग्धवर्णाश्च सुखस्पर्शनखाङ्कुराः ॥ | ११ |
| शुभरेखाः सुरक्ताश्च समा मृदुतरास्तथा । | |
| दृश्यन्ते शतशस्तत्र राजन् ! करिकरोपमाः ॥ | १२ |
| यैरण्डमेतत् भूपाल ! ससागरमहीधरम् । | |
| सपातालतलं सर्वं सदेवासुरमानुषम् ॥ | १३ |
| सप्तलोकं सद्वीपं सर्वभूतसमाकुलम् । | |
| रक्षितं बहुशो दिव्यैः निहता यैश्च दानवाः ॥ | १४ |
| ये दुःखहानिदा नित्यं वैष्णवानां विशेषतः । | |
| वसन्ति यान् समाश्रित्य दैत्येभ्यो निर्भयाः सुराः ॥ | १५ |
| ते कराः सुरनाथस्य दृश्यमानाः चक्रशिरे । | |
| उदयादुद्यतस्तस्य भास्करस्य करा इव । | १६ |
| सद्रत्नजालक्रीक्रीणहारेणापि सुशोभितम् । | |
| मेघकाले तडिन्मालाशोभितस्य महात्मनः ॥ | १७ |
| मेघजालस्य वर्णेन सदृशं रुचिरं वपुः । | |
| चारुरक्तलोष्ठं तत् चारुरक्ततरेक्षणम् ॥ | १८ |
| मृदुचारुकपोलैश्च कुण्डलैरुपशोभितम् । | |
| शोभमानं ज्वलद्भिश्च ललाटफलकैरपि ॥ | १९ |
| शोभमानैस्तथा चारुभ्रूचापैरुपशोभितम् । | |
| पेरावतकराकारचारुपीनशुभोरुक्म् ॥ | २० |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ५०१

| | |
|--|----|
| द्युतिमन्मणिरलाढ्यचलन्नूपुरशोभितम् । | |
| काञ्चनेन विचितेण ब्रह्मसूत्रेण शोभितम् ॥ | २१ |
| सहस्रादित्यसङ्काशमचिन्त्यं महद्भुतम् । | |
| मेरुमन्दरसङ्काशं नीलपर्वतसन्निभम् ॥ | २२ |
| समुच्छ्रितोरसं सौम्यं समायतविलोचनम् । | |
| दिव्यपीताम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ॥ | २३ |
| दिव्यया वैजयन्त्या च सुस्कन्धगतया तथा । | |
| चक्राशो तद्यथा मेघो विद्युन्मालाविराजितः ॥ | २४ |
| जाम्बूनदमयैर्दिव्यैः निःवनद्विरनेकशः । | |
| किङ्किणीजालसङ्घैश्च शोभनैः रुचिरप्रभैः ॥ | २५ |
| स्वनद्विर्मणिजालैश्च शोभयद्भिर्द्विंशो दश । | |
| सुरक्तैर्वहुसाहस्रैः ज्वलद्भिर्भास्करोपमैः ॥ | २६ |
| उद्यदिन्दुप्रतीकाशैः दिव्यैश्च नखमण्डलैः । | |
| रक्तान्तैरुन्नतैश्चापि शोभमानं सदाम्बुजैः ॥ | २७ |
| अङ्कुशध्वजचक्राब्जशङ्खवज्राङ्कितैस्तथा । | |
| सुपादतलपद्मैश्च शोभितं वसुधाधिप ! ॥ | २८ |
| मुक्तादामभिरन्यैश्च वज्रसूर्यांशुसन्निभैः । | |
| प्रभया द्योतमानैश्च शोभमानपदाम्बुजम् ॥ | २९ |
| अनेकशतसाहस्रैः अङ्गुलीयकभूषणैः । | |
| नानारत्नचितैश्चापि संशोभिकरशाखिभिः ॥ | ३० |
| मूर्धजैः कुञ्चितैश्चापि नीलैः मृदुतरैस्तथा । | |
| लम्बमानैर्विनिष्क्रान्तैः किरीटात् शुभदर्शनात् ॥ | ३१ |
| प्रच्छाद्यमानवदनं मेघैरिव निशाकरम् । | |
| रत्नस्यूतेन सूत्रेण काञ्चनेन विराजितम् ॥ | ३२ |

| | |
|---|----|
| नानामणिनिबद्धेन शोभमानेन शोभितम् । | |
| शोभितं दिव्यमालाभिः भूषितं पृथुलोचनम् ॥ | ३३ |
| नानाश्चर्यसमायुक्तं नानामणिगणान्वितम् । | |
| समन्ताद्दीप्यमानं तत् भूरिणा स्वेन तेजसा ॥ | ३४ |
| आदित्य इव तेजोभिः उद्यतं तूदयाद्वितः । | |
| तेजोभिः काञ्चनाभैश्च समन्तान्निर्गतैस्तथा ॥ | ३५ |
| जाज्वल्यमानं तद्रूपं चकाशेऽद्भुतदर्शनम् । | |
| स्वभासा दुर्निरीक्ष्यं तत् मुनिभिश्च सुरैरपि ॥ | ३६ |
| तप्यते तेजसा तस्मात् निर्गतेन स्म भूरिणा । | |
| ससुरासुरगन्धर्वं जगदेतत् चराचरम् ॥ | ३७ |
| ज्वलद्भिरर्कवर्णैश्च जाम्बूनदमयैस्तथा । | |
| अनेकशतसाहस्रैः संयुक्तं हेमभूषणैः ॥ | ३८ |
| करेषु तेषु संयुक्ताः तीक्ष्णाः प्रहरणास्तथा । | |
| ज्वलन्तश्च स्फुरन्तश्च मिथिलेश ! चकाशिरे ॥ | ३९ |
| अर्चांषि तेभ्यो निष्पेतुः यैर्दिशो विमलीकृताः । | |
| उदयाद्रिसमारूढात् सूर्यात् दीप्तांशवो यथा ॥ | ४० |
| व्यालोला लोकनाथस्य प्रसन्नाः शुभदर्शनाः । | |
| आयताः कृष्णरक्ताश्च भ्रूचापा दृष्टिमार्गणाः ॥ | ४१ |
| रक्तपद्मदलप्रख्याः कान्तिमन्तः सुवर्चसः । | |
| श्रिया परमया युक्ताः पक्षमराजिविराजिताः ॥ | ४२ |
| येषां निपातैः दैतेयाः नेदुः भीताः सहस्रशः । | |
| रक्षांसि दानवाश्चपि जग्मुः वैवस्वतक्षयम् ॥ | ४३ |
| दुर्लभञ्चापि देवत्वं प्राप्नुवन्ति नरा अपि । | |
| अन्यांश्च दुर्लभान् कामान् मुक्तिञ्चापि सुदुर्लभाम् ॥ | ४४ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ५०३

यान् द्रष्टुं कामाः तद्वक्ताः शोचन्ति हि दिवानिशम् ।
ते भूप! शतशो दिव्या राजन्ते रुचिरप्रभाः ॥ ४५
अनेकशतसाहस्राः कालाग्निसदृशप्रभाः ।
नानाप्रहरणा घोराः संयुक्तास्तत्र बाहुषु ॥ ४६
भयदाः सुरशत्रूणां दैत्येन्द्राणां महौजसाम् ।
सर्वगाः सर्वदेशेषु भक्तानामभयप्रदाः ॥ ४७
जाज्वल्यमानास्तेजोभिः रूक्षकैः सौम्यकैरपि ।
अकुर्वन्निष्प्रभौ सद्यः चन्द्रसूर्यौ स्वरश्मिभिः ॥ ४८
तद्रूपमाश्चर्यमनेकवर्णं
वित्रीटमालाभिरशेषभूतैः ।
व्यराजताऽदित्य इवान्तकाले
स्वरश्मिमालाभिरनेकरश्मिः ॥ ४९
तद्दीप्तवक्त्रं विमलं विशोकं
जाज्वल्यमानं महता स्वतेजसा ।
अशोभताऽद्यं वपुरद्भुतेक्षणं
युगान्तकालाग्निरिव प्रदीप्तम् ॥ ५०

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवद्दिव्य-
मङ्गलविग्रहवर्णनं नाम
चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ।



आविर्भूतं भगवन्तं प्रति महर्षिकृतप्रणामादिक्रमः

वामदेवः—

| | |
|--|----|
| एवंविधं हरिस्तेभ्योऽदर्शयद्भगवान् वपुः । | |
| यन्न देवा न मुनयो नापि सिद्धा न चारणाः ॥ | १ |
| न योगिनो न गन्धर्वा नापि विद्याधरा अपि । | |
| न च यक्षा न चाप्यन्ये वालखिल्याश्च तापसाः ॥ | २ |
| नोरगा नापि दैतेया नापि किम्पुरुषास्तथा । | |
| दृष्टवन्तः पुरा राजन् ! कृष्णस्य वपुरद्भुतम् ॥ | ३ |
| ततस्तु मुनयो दिव्यं रूपं तद्विश्रतोमुखम् । | |
| अनेकरत्नसञ्छिन्नविरीटोज्ज्वलिताननम् ॥ | ४ |
| व्यालोलमानैर्वहुभिः कुण्डलैः समलङ्कृतम् । | |
| पिबन्त इव नेत्रैस्ते सङ्क्षोभस्तिमितैस्तदा ॥ | ५ |
| ददृशुर्मुदिताः सर्वे नरेन्द्रानिमिषेक्षणाः । | |
| ‘भृशमार्ताः स्म देवे’ ति सहसा भुवि भूपते ! ॥ | ६ |
| निपेतुरथ ते सर्वे सम्भ्रान्तमनसोऽमलाः । | |
| अथ दृष्ट्वा जगन्नाथं वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ॥ | ७ |
| सहस्रशः समागम्य भक्तिभारावनामितैः । | |
| शिरोभिरवनीपाल ! प्रणेमुः सहसा भुवि ॥ | ८ |
| बृहस्पतिरगस्त्यश्च शुक्रश्चापि वसुस्तथा । | |
| भगवन्तं ततो दृष्ट्वा गरुडोपरि संस्थितम् ॥ | ९ |
| जाम्बूनदाद्रिशिखरे नीलमेघमिवोत्थितम् । | |
| भक्त्या प्रणेमुस्तं देवं वीक्षमाणा इतस्ततः ॥ | १० |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ५०५

उत्थायोत्थाय ते सर्वे भूयोभूयो नीरीक्षितम् ।
'प्रसीदे' ति ब्रुवन्तस्तं प्रणेमुः बहुशो नृप! ॥ ११

भगवदाविर्भावकाले देवताद्यापूरितशङ्खादिमङ्गलवाद्यक्रमः

एतस्मिन्नन्तरे स्वस्थैः शतशोऽथ सहस्रशः ।
पाञ्चजन्योपमाः शङ्खाः दधिमरे हेमभूषणाः ॥ १२
अवाद्यन्त च दिव्यानि वाद्यानि बहुशोऽम्बरे ।
मृदङ्गादीनि सर्वाणि हेमरत्नचितानि वै ॥ १३
महता शङ्खनादेन वादित्राणां स्वनेन च ।
जगदापूरितं सर्वं क्षुभिताश्चापि दानवाः ॥ १४
निवसन्ति च ये तत्र नारायणगिरौ नृप! ।
ते सर्वे सहसा हृष्टाः समुत्तस्थुश्च सङ्घशः ॥ १५
तस्मिन्लब्धे श्रुते सर्वे सिंहपक्षिमृगास्तथा ।
प्रसन्नतां ययुः सर्वे वेङ्कटाद्रिनिवासिनः ॥ १६

भगवत्सेवार्थं वेङ्कटाचलं प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्

श्रुत्वा तं शब्दमतुलं ब्रह्मा लोकपितामहः ।
ज्ञात्वाऽथ वासुदेवं तं हरिं प्रत्यक्षतां गतम् ।
आजगामाथ तत्पार्श्वं कृष्णस्याक्लिष्टकारिणः ॥ १७
मुनीन्द्रैर्देवसङ्घैश्च गन्धर्वैश्च समावृतः ।
भगवान् शङ्करश्चापि त्र्यम्बकस्त्रिपुरान्तकः ॥ १८
ज्वलद्भास्करसङ्काशजटामण्डलशोभितः ।
तेन शब्देन विज्ञाय सान्निध्यं हरिमेधसः ॥ १९
अभ्यगादाशु तत्पार्श्वं द्रष्टुं तं वसुधाधिप! ।
दुर्वाससा मुनीन्द्रेण नन्दिना च समं विभुः ॥ २०

| | |
|--|----|
| शक्रश्च त्रिदशश्रेष्ठः श्रुत्वा तं शब्दमद्भुतम् । | |
| हरिं प्रत्यक्षतां यान्तं ज्ञात्वा देवं जनार्दनम् ॥ | २१ |
| देवैः परिवृतः पार्श्वं ययावव्यक्तजन्मनः । | |
| ततः शङ्खध्वनिं श्रुत्वा विष्वक्सेनः प्रतापवान् ॥ | २२ |
| ज्ञात्वा प्रत्यक्षतां यान्तं नारायणमनामयम् । | |
| सहस्रोत्थाय भूपाल! शीघ्रमेवाभ्यगात्तदा ॥ | २३ |
| सप्तभिः सचिवैः सार्धं सकाशं शार्ङ्गधन्वनः । | |
| अनुरक्तैर्महावीर्यैः प्रयतैः सुसमाहितैः ॥ | २४ |
| सनन्दनादयश्चापि योगिनस्तेऽथ चक्रिणः । | |
| पार्श्वमभ्याययुः श्रुत्वा तं शब्दं मिथिलेश्वर ! ॥ | २५ |
| सप्तर्षयश्च ये पूर्वं मयोक्ता मुनिसत्तमाः । | |
| तेऽपि श्रुत्वा च तं शब्दं हरेः पार्श्वं ययुस्तदा ॥ | २६ |
| यश्चापि मुनिर्भिदृष्टो वायव्यां दिशि भूमृतः । | |
| शिलातले समासीनः पुरुषोऽद्भुतदर्शनः ॥ | २७ |
| सोऽपि शङ्खध्वनिं श्रुत्वा भगवत्पार्श्वमाययौ । | |
| ब्रह्मा प्रजापतिश्चापि भगवान् शम्भुरेव च ॥ | २८ |
| विष्वक्सेनश्च भगवान् शक्रश्च त्रिदशाधिपः । | |
| सप्तर्षयश्च मुनयः सनकाद्याश्च योगिनः ॥ | २९ |
| वायव्यां दिशि यो दृष्टो मुनिभिः सोऽपि भूपते ! । | |
| एते सर्वे समागम्य सकाशं शार्ङ्गधन्वनः ॥ | ३० |
| भक्त्या परमया युक्ताः राजन्! संहृष्टमानसाः । | |
| ददृशुस्ते समारूढं वैनतेयं महाबलम् ॥ | ३१ |
| हरिं हेमाद्रिशिखरे नीलमेघमिव स्थितम् । | |
| शिरोभिस्ते प्रणेमुस्तं विश्वेशं विश्वरूपिणम् ॥ | ३२ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

५०७

| | |
|---|----|
| “जय देव ! जयेशे” ति वदन्तः सहसा भुवि ।
सर्वे देवगणाश्चापि प्रणमुः पृथुलोचनम् ॥ | ३३ |
| “प्रसीद देवदेवे” ति वदन्तस्ते पुनः पुनः ।
ब्रह्माद्या देवताश्चापि मुनयश्च तपोधनाः ॥ | ३४ |
| सिद्धाश्चापि तथा सर्वे श्वेतद्वीपनिवासिनः ।
एते सर्वे हरेस्तस्य रूपं परपुरञ्जय ! ॥ | ३५ |
| द्रष्टुं नाशक्नुवन् नेत्रैः तेजसा तस्य तापिताः ।
प्रतपन्तमिवादित्यं संहारसमये नराः ।
न्यमील्यन्त नेत्राणि ब्रह्माद्यास्ते ततो नृप ! ॥ | ३६ |

ब्रह्मकृतभगवत्स्तुतिः

| | |
|--|----|
| तेजसा पीडितास्तस्य देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।
तुष्टावाथ तदा ब्रह्मा देवाधिपतिमव्ययम् ।
पतत्रिराजमारूढं शिरोभिः प्रणिपत्य तम् ॥ | ३७ |
|--|----|

ब्रह्मोवाच—

| | |
|--|----|
| “नामामि त्वां जगन्नाथ ! सहस्रवदनेक्षण ! ।
ज्वलत्किरीटसाहस्रधारिणं पुरुषोत्तमम् ॥ | ३८ |
| रुचिरैर्बहुभिर्दिव्यैः बाहुभिः परिघोपमैः ।
संयुक्तं त्वां नमाम्याद्यं विश्वेशं विश्वतोमुखम् ॥ | ३९ |
| अणीयसामशेषाणां अणीयांसं सनातनम् ।
भूतादीनां समस्तानां गरिष्ठञ्च गरीयसाम् ॥ | ४० |
| नारायण ! त्वां वरदं नमामि परमेश्वरम् ।
योगिभिर्गम्यमानं त्वां जनलोकगतं विभुम् ॥ | ४१ |

| | |
|--|----|
| परं पुराणं पुरुषं नमामि सुरनायकम् ।
प्रसीदतु भवान् विष्णो ! रहितः प्राकृतैर्गुणैः ॥ | ४२ |
| शुद्धः पुमान् समस्तेभ्यो भूतेभ्यः सर्वसम्भवः ।
साक्षिभूतः समस्तस्य जगतोऽस्य जगत्पते ! ॥ | ४३ |
| नमामि त्वामहं नित्यं व्यालोलयतलोचनम् ।
यः प्रोच्यते विशुद्धो हि सर्वेश इति केशव ! ॥ | ४४ |
| तं त्वां नमाम्यशेषाणां आत्मानं सर्वदेहिनाम् ।
समस्तकारणानां त्वं कारणं प्रभुरव्ययः ॥ | ४५ |
| ब्रह्मवित् योगिनाञ्चासि प्रजानाञ्च प्रजापतिः ।
यं न जानन्ति मुनयो नापि देवा न दानवाः ॥ | ४६ |
| नाहं न शम्भुर्विष्णुवाक्यं तत्पदं परमं भवान् ।
इन्द्राद्याः शतशो यस्य देवाः लिभुवनेश्वराः ॥ | ४७ |
| द्रष्टुकामा न जानन्ति रूपमव्यक्तरूपिणः ।
तदहं विमलं देव ! शाश्वतं पदमव्ययम् ॥ | ४८ |
| न स्तोतुमीशो न च देव वक्तुं
गुणांस्तवेशाच्युत ! लोकनाथ ! । | |
| प्रसीद वेदाधिपते ! समस्तान्
आलोकयासान् विमलैः सुनेत्रैः " ॥ | ४९ |

शम्भुकृतभगवत्स्तुतिः

| | |
|--|----|
| इत्युक्ते ब्रह्मणा तेन शम्भुरव्यक्तरूपिणम् ।
अस्तौषीद्भगवन्तं तं अच्युतं पुरुषोत्तमम् ॥ | ५० |
|--|----|

शम्भुः—

| | |
|---|----|
| “परावरेणं पुरुषं दुष्टदैत्येन्द्रघातिनम् ।
जगत्पालनकर्तारं जगदुत्पत्तिकारणम् ॥ | ५१ |
|---|----|

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

५०९

प्रजापतीनां सर्वेषां सष्टारमलेक्षणम् ।
भक्तार्तिहानिदातारं भक्तानां प्रियकामदम् ॥
त्वां नमामि हरे ! दिव्यं परब्रह्मस्वरूपिणम् ।
प्रधानपुंसोरजयोः जगत्कारणभूतयोः ॥
नित्ययोर्व्यापिनोश्चापि प्रभुं त्वां कारणं परम् ।
तं त्वां नमामि भूतेशं भूतानामपि कारणम् ॥
सूरयो यच्च पश्यन्ति परमं धाम शाश्वतम् ।
तत्त्वमेतत्परं धाम परं ब्रह्म सनातनम् ॥
तं त्वां नमामि गोविन्दं सहस्रादित्यसन्निभम् ।
मुनयस्त्वां समभ्यर्च्य बहुवर्षशतानि वै ॥
त्वत्प्रसादाच्च देवेश ! त्वय्येव लयमागताः ।
पुरन्दरोऽपि देवेश ! त्वामेव पुरुषोत्तम ! ॥
अश्वमेधशतैरिष्ट्वा देवेन्द्रत्वमवाप्तवान् ।
ब्रह्माऽश्वमेधसाहस्रैः त्वामिष्ट्वा जगदीश्वरम् ॥
प्राप ब्रह्मपदं दिव्यं दुःखशोकविवर्जितम् ।
अहमाराध्य देव ! त्वां सर्वमेधे महाक्रतौ ॥
प्राप्तवान् देवदेवत्वं दुर्लभं सर्वदैवतैः ।
त्वमेवेश ! जगद्धाता त्वमेव जगतो गतिः ॥
स्रष्टा त्वमेव जगतः संहर्ता च त्वमेव हि !
तं त्वां नमामि शोकार्तिमोहहानिप्रदायिनम् ॥
प्रसीदेश ! महामाय ! सहस्रवदनेक्षण ! ।
सर्वलोकपते ! नाथ ! सर्वलोकपरायण ! ॥
विष्णो ! तवैतद्बहुबाहुशाखं
तमालवर्णं बहुवक्त्रनेत्रम् ।

५२

५३

५४

५५

५६

५७

५८

५९

६०

६१

६२

ज्वलत्किरीटैः बहुरत्नवद्भिः

जाज्वल्यमानं प्रणमामि रूपम् ॥

६३

महर्षिकृतभगवत्स्तुतिः

बामदेवः—

एवं स्तुते जगन्नाथे शम्भुना परमेष्ठिना ।

तुष्टुवुर्मुनयो भूप ! प्रणम्यामलचेतसः ॥

६४

मुनयः—

“नमः कृष्णाय हरये परस्मै ब्रह्मरूपिणे ।

नमो भगवते तस्मै विष्णवे परमात्मने ॥

६५

सर्वभूतशरण्याय सर्वज्ञाय नमो नमः ।

वासुदेवाय भक्तानां सर्वकामप्रदायिने ॥

६६

नमः पङ्कजनेत्राय जगद्धात्रेऽच्युताय च ।

हृषीकेशाय सर्वाय नमः कमलमालिने ॥

६७

अनन्तनागपर्यङ्के सहस्रफणशोभिते ।

दीप्यमानेऽमले दिव्ये सहस्रार्कसमप्रभे ॥

६८

योगनिद्रामुपेताय तस्मै भगवते नमः ।

यद्रूपं न च पश्यन्ति सूरयो न च योगिनः ॥

६९

तं नताः स्म जगन्नाथं क्षीरोदारणवशायिनम् ।

त्वामेवार्ताः प्रपन्नाः स्म शरण्यं वयमीश्वरम् ॥

७०

अस्मान् पाहि शरण्येश ! प्रणतार्तिहराव्यय ! ।

त्वद्रूपमेतद्भोविन्द ! सहस्रार्कसमद्युते ! ॥

७१

जाज्वल्यमानं तेजोभिः नोक्षितुं शक्नुमो वयम् ।

कुरु प्रसादमस्माकं प्रसन्नवदनेक्षण ! ।

त्वमेव गतिरस्माकं सर्वेषामेव केशव ! ॥

७२

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ५११

नताः स्म दिव्यं पुरुषं पुराणं त्वामेव सर्वेश्वरमीश्वराणाम् ।
युगान्तकालाग्निसमप्रतापं प्रदीप्तवक्त्रेक्षणमप्रमेयम् ॥ ७३

सप्तर्ष्यादिकृतभगवत्स्तुतिः

वामदेवः —

इति तेषां मुनीन्द्राणां वचः श्रुत्वा ततो नृप ! ।
सप्तर्षयो महात्मानो वागीशश्च महाद्युतिः ॥ ७४
वसुश्च भगवद्भक्तो महेन्द्रश्च प्रतापवान् ।
तुष्टुर्देवदेवेश शिरोभिः प्रणिपत्य तम् ॥ ७५

सप्तर्ष्यादयः —

“नमोनमोऽस्तु विश्वात्मन् ! त्वं ब्रह्मा त्वं पिनाकधृत् ।
चन्द्रेन्द्रार्काश्विमरुतः त्वमेव जगतः पते ! ॥ ७६
सहस्रादित्यसङ्काशचक्रहस्ताय ते नमः ।
शङ्खहस्ताय ते नित्यं नमो विष्णो ! महात्मने ॥ ७७
नमः किरीटिने नित्यं नमः कौस्तुभधारिणे ।
नीलमेघप्रतीकाशवपुषे ब्रह्मणे नमः ॥ ७८
असिरत्नगदाचापशक्तितोमरपाणये ।
प्रदीप्तायुधजालाय प्रदीप्तवपुषे नमः ॥ ७९
यज्ञेशाय नमस्तुभ्यं ज्वलत्कुण्डलधारिणे ।
नमोऽस्तु पद्मनाभाय नमस्ते विश्वयोनये ॥ ८०
परावराणां पतये करालवपुषे नमः ।
कालनेमिहिरण्याक्षहिरण्यादिविघातिने ॥ ८१
उग्ररूपाय ते नित्यं नृसिंहायाप्यनादये ।
नमोऽस्तु पद्मनाभाय नमोऽस्तु वरदाय च ।
भूयोभूयो नमो नित्यं व्यापिने शार्ङ्गपाणये ॥ ८२

नताः स चैतत्तव विश्वरूपं
 सर्वायुधोपेतमपास्तदोषम् ।
 विद्मो न चाद्यं परमं तवाद्यं
 रूपं परं वेद न चाब्जयोनिः ॥ ८३

सनकादिपरमयोगिकृतभगवत्स्तुतिः

सामदेवः—

एवमुक्ते ततस्ते तु सनकाद्याश्च योगिनः ।
 प्रणम्य तुष्टुबुर्देवं वैनतेयोपरि स्थितम् ॥ ८४

सनकाद्याः—

“जय यज्ञपते देव ! जय नाथ ! जयाक्षर ! ।
 जय शंखधराचिन्त्य ! जय चक्रधराव्यय ! ॥ ८५
 विभो ! जय विशालाक्ष ! परमात्मन् ! जयाच्युत ! ।
 जय दंष्ट्राग्रविन्यस्तमहीपद्म ! जयेश्वर ! ॥ ८६
 जय सर्वद ! सर्वेश ! जय सर्वहृदि स्थित ! ।
 पद्मनाभ ! जयाजय ! जय पूरुष ! मानद ! ॥ ८७
 मायया तव मोहिन्या देवाश्चापि विमोहिताः ।
 अनेकरत्नसञ्छन्नसुवर्णमुकुटाय ते ॥ ८८
 नताः सोऽचिन्त्यरूपाय योगिध्येयाय ते नमः ।
 नताः सोऽत्यन्तशुद्धाय सर्वज्ञायादिवेधसे ॥ ८९
 परब्रह्मस्वरूपाय नताः सो वरदायिने ।
 अव्यक्तायाप्रमेयाय श्रीधराय सुवर्चसे ॥ ९०
 श्रियःकान्ताय दान्ताय भक्तानां मुक्तिदायिने ।
 शक्रादिलोकपालानां पालयित्रे नमोऽस्तु ते ।
 पीताम्बराय ते नित्यं नताः स पुरुषोत्तम ! ॥ ९१

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे पञ्चविंशोऽध्यायः

५१३

व्याप्तं त्वया नाथ ! नमः सुदीप्तं
विश्वात्मनाऽशेषनिवासिना विभो ! ।

त्वामद्य सर्वे वयमीशितारं नताः

स्म पद्माभविलोललोचनम् ॥

९२

तन्नास्ति किञ्चित् रहितं त्वया हरे !

समस्तलोकेष्वपि जातु यस्यात् ।

वन्दामहे त्वां विमलार्कवर्णं

किरीटहारोज्ज्वलितं शुभोरुक्मम् ॥

९३

एतत्परं रूपमपेतजन्मजरादि-

दोषं विमलं विशोकम् ।

अदृष्टपूर्वं मनुजामराद्यैः नताः

स्म विद्युज्ज्वलितोरुशोभम् ” ॥

९४

इन्द्रादिदिक्पालकृतभगवत्स्तुतिः

वामदेवः —

एवं स्तुते जगन्नाथे सनकादिमहात्मभिः ।

शक्राद्या लोकपालास्तं तुष्टुवुर्मधुसूदनम् ॥

९५

वन्दमानाः शिरोभिस्तं भूतभावनभावनम् ।

अञ्जलिं मूर्ध्नि सन्धाय विस्मयोत्फुल्ललोचनाः ॥

९६

इन्द्रादयः —

“ नमोऽस्तु विश्वरूपाय पीताम्बरधराय ते ।

नमस्तेऽस्तु जगद्धात्रे शार्ङ्गचापासिधारिणे ॥

९७

मधुहन्त्रे नमो नित्यं नमः कैटभघातिने ।

कालाग्निसमचक्रेण निहन्त्रे सुरवैरिणाम् ॥

९८

| | |
|---|-----|
| सर्वकल्याणभूताय वरदाय वरार्थिनाम् । | |
| नमो नित्यमदृश्याय दृश्यरूपाय ते नमः ॥ | ९९ |
| परस्मै ब्रह्मणे तुभ्यं नमो यज्ञस्वरूपिणे । | |
| नमो भव्याय ते नित्यं श्रीवत्साङ्कितवक्षसे ॥ | १०० |
| भयदाय नमो नित्यं दैत्येन्द्राणां बलीयसाम् । | |
| भोगदाय नमो नित्यं अस्माकं स्वर्गदायिनाम् ॥ | १०१ |
| वरेण्याय नमो नित्यं अवलायाव्ययाय च । | |
| शरण्याय नमो नित्यं नमः क्षीरोदशायिने ॥ | १०२ |
| योगात्मने नमो नित्यं नमो दामोदराय च । | |
| क्षयवृद्धिविहीनाय निर्गुणाय नमोनमः ॥ | १०३ |
| यत्तत्परमनिर्देश्यं अचिन्त्यमजमक्षरम् । | |
| अव्यक्तमजरं नित्यं अव्ययं धाम शाश्वतम् ॥ | १०४ |
| अरूपममलं ब्रह्म सर्वेशमचलं विभुम् । | |
| यद्ब्रह्म तत्परं धाम भवानेव न चापरः ॥ | १०५ |
| तन्न विद्मः परं रूपं तव यत्तु पुरातनम् । | |
| एतच्चापि न जानीमो यदेतद्दर्शितं त्वया ॥ | १०६ |
| प्रसीद विश्वेश्वर ! विश्वतोमुख ! | |
| प्रसीद विश्वक्षयपालनेश ! । | |
| प्रसीद विश्वालय ! विश्वमूर्ते ! | |
| विश्वस्य योने भगवन् प्रसीद ! ॥ | १०७ |

श्वेतद्वीपवासिसिद्धकृतभगवत्स्तुतिः

वामदेवः—

| | |
|--|-----|
| एवं स्तुतेऽथ देवेशे शक्राद्यैः त्रिदशेश्वरैः । | |
| तुष्टुवुस्तं प्रणम्येशं श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥ | १०८ |

| | | |
|----------|---|-----|
| सिद्धाः— | यं विष्णुमाद्यं पुरुषं पुराणं
देवा नमस्यन्ति शुभोरुबाहुम् ।
नताः स्म तं देवमजं सुरेशं
विश्वस्य कर्तारमनादिमूर्तिम् ॥ | १०९ |
| | येनैव दंष्ट्राग्रसमुद्धृता धरा
विभर्ति विश्वं ससुरासुरेन्द्रम् ।
नताः स्म तस्मै वरदाय पुंसे
सर्वात्मने शेषविभूतिदायिने ॥ | ११० |
| | येनेदमण्डं सकलं महीयसा
व्याप्तं त्वयैकेन सुरारिघातिना ।
तं त्वां नताः स्माऽच्युतमीडितारो
वयं विभुं लोकविभूतिहेतुम् ॥ | १११ |
| | येनान्तकाले जगदेतदादिना
ग्रस्तं त्वया ह्यक्षयशक्तिरूपिणा ।
ज्ञानैकदृश्यं परमार्थतत्त्वं तं
बालरूपं प्रणमाम नित्यम् ॥ | ११२ |
| | येनादिकाले विभुना महीयसा
स्वनाभिपद्मान्तरुपेतमण्डलम् ।
विसृष्टमप्सु स्वपताऽऽत्मलीलया
तं त्वां नताः सामरलोकनाथ ॥ | ११३ |
| | येनेदमण्डं बहुशो विभूतं
दुरात्मभिर्दैत्यवरैः सुघोरैः ।
निहत्य दैत्यान् सहसा महारणे
संरक्षितं तं प्रणमाम नित्यम् ॥ | ११४ |

जानन्ति यन्नैव पितामहाद्याः

परं पदं नैव वयं च नान्ये ।

त्वं तत्पदं वृद्धिविनाशहीनं

रक्षस्व चास्मान् भगवन् ! प्रसीद ॥

११५

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये ब्रह्मादिकृत-

भगवत्स्तुतिपरम्परा नाम

पंचविंशोऽध्यायः ।

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः

वामदेवः —

एवं स्तुत्वाऽथ ते सर्वे ब्रह्माद्या देवतागणाः ।

अगस्त्यप्रमुखाश्चापि मुनयोऽमलचेतसः ॥

१

सिद्धाश्चापि तथा सर्वे श्वेतद्वीपनिवासिनः ।

वागीशवसुशुक्राश्च दुर्वासाश्च महामुनिः ॥

२

सप्तर्षयश्च राजेन्द्र ! सनकाद्याश्च योगिनः ।

सर्वे एते महीपाल ! ये चाप्यन्ये समागताः ॥

३

द्रष्टुं तमीश्वरं देवं तत्प्रसादानुवर्तिनः ।

भूयोभूयः प्रणम्येशं नारायणमरिन्दमम् ॥

४

कृताञ्जलिपुटास्तन्तु परिवार्योपतस्थिरे ।

ततस्तेषां स भगवान् मध्ये राजीवलोचनः ॥

५

स्मयन्निव महाबाहुः विनतानन्दनास्थितः ।

अतिष्ठदेवदेवेशः स तान् सर्वान् विलोकयन् ॥

६

दीप्यमानः स्वतेजोभिः अंशुमानिव रश्मिभिः ।

एतस्मिन्नन्तरे देवं वाय्वाहाराङ्गना नृप ! ॥

७

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे षट्त्रिंशोऽध्यायः

५१७

| | |
|--|----|
| अगायन् कर्मभिर्दिव्यैः दिव्यभूषणभूषिताः । | |
| रावणादिवधं केचित् गन्धर्वपतयो जगुः ॥ | ८ |
| कंसकेशिजरासन्धशाल्वादीनां वधं तथा । | |
| बाणदुर्योधनादीनां वधश्चापि महाद्भुतम् ॥ | ९ |
| अगायन्परे तत्र गन्धर्वपतयोऽमलाः । | |
| हिरण्यकशिपोस्तत्र वधश्चापि जगुः परे ॥ | १० |
| अवतारेषु चान्येषु यानि यानि कृतानि वै । | |
| केचित् जगुः जगत्सृष्टिं ब्रह्मादिस्थावरान्तिकाम् ॥ | ११ |
| गन्धर्वपतयस्तत्र सुस्वरा हरिसन्निधौ । | |
| नृत्यन्त्योऽप्सरसस्तत्रादृश्यन्त शतशो नृप ! ॥ | १२ |
| गायन्त्यो देवदेवेशं नादयन्त्यो दिशो दश । | |

ब्रह्मादीनां भगवद्विश्वरूपदर्शनम्

| | |
|--|----|
| अथ ते प्रेक्षमाणास्तं नारायणमनामयम् ॥ | १३ |
| विस्मयाविष्टहृदया ब्रह्माद्या देवतागणाः । | |
| अगस्त्यप्रमुखाश्चापि मुनीन्द्राश्च सहस्रशः ॥ | १४ |
| ददृशुर्देवदेवस्य दिव्ये रूपे महाद्भुते । | |
| तस्मिन् महति भूपाल ! पद्मपत्रनिभेक्षणे ॥ | १५ |
| अण्डमेतदशेषं वै साद्रिग्रामनदीवनम् । | |
| सर्वतः सपातालं सदेवासुरमानुषम् ॥ | १६ |
| सप्तलोकं सत्त्वं पञ्चसंक्षारक्षसम् । | |
| सासुरं सामरपुरं जङ्गमाजङ्गमाकुलम् ॥ | १७ |
| सतिर्यक्तरूपाषाणं स्काननमहोरगम् । | |
| एवमाद्यैस्तथान्यैश्च संयुक्तं महद्भुतम् ॥ | १८ |

| | |
|---|----|
| अदृष्टपूर्वमाश्चर्यं दृष्ट्वा हर्षमुपागमन् । | |
| विस्मिताश्चाभवस्तेऽथ मुदिताश्चाभवन् नृप ! ॥ | १९ |
| व्याकुलीकृतनेत्रास्ते व्याकुलीकृतमानसाः । | |
| व्याकुलीकृतसर्वाङ्गा आसन् सर्वे भयाकुलाः ॥ | २० |
| अथ तान् भगवान् भूष ! प्रसन्नैः विमलैः शुभैः । | |
| पद्मोत्पलदलमैस्तैः नेत्रैस्तान् समलोकयत् ॥ | २१ |
| अथ ते भूपते ! सर्वे ब्रह्माद्यास्तेन शार्ङ्गिणा । | |
| प्रसन्नैर्नयनैर्दिव्यैः आयतैरवलोकिताः ॥ | २२ |
| प्रसन्नातां ययुः सर्वे त्यक्तमोहभयाः स्थिताः । | |
| मुनीन्द्रानवलोक्यथ भगवानिदमब्रवीत् ॥ | २३ |
| नृपते ! सर्वलोकेशो विश्वरूपधरो हरिः । | |
| शृण्वतां सर्वदेवानां ब्रह्मादीनां सनातनः ॥ | २४ |
| मेघगम्भीरया वाचा श्राव्यया श्लक्ष्णरूपया । | |
| जगदापूरयत्सर्वं सुतरां प्रीतया तदा ॥ | २५ |

महर्षीन् प्रति भगवदुक्तिः

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| युष्माभिर्भूरितेजोभिः मत्तो यत्प्रार्थ्यते द्विजाः ! ॥ | २६ |
| त्रियतां तदशेषेण नात्र कार्या विचारणा । | |
| मां दृष्ट्वा प्रार्थितान् कामान् प्राप्नुवन्ति नरा भुवि ॥ | २७ |
| अचिरेणैव कालेन मुक्तिश्चापि सुदुर्लभाम् । | |
| अप्राप्य प्रार्थितान् कामान् न यास्यन्ति द्विजोत्तमाः ॥ | २८ |
| मयि दृष्टेऽचिरात्तस्मात् ब्रूत प्रार्थितमुत्तमम् । | |
| मुनयः— कृतार्थाः स्म वयं देव ! त्वयि दृष्टे सनातने ॥ | २९ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे षट्तिंशोऽध्यायः ५१९

त्वत्प्रसादं विना नाथ ! न त्वं द्रष्टुं हि शक्यसे ।
त्वां द्रष्टुं क्वमा गोविन्द विचरन्तो वयं विभो ! ॥ ३०
नारायणगिरावस्मिन् त्वत्पादतलवासिते ।
त्वां दृष्ट्वा भृशमुद्विग्ना भगवन् पुरुषोत्तम ! ॥ ३१
संसारात् मोक्षमिच्छन्तो देव ! त्वत्पादमाश्रिताः ।
मुक्तिं प्रयच्छ देवेश संसारात् भीतिवर्धनात् ॥ ३२

वामदेवः —

एवमुक्त्वाऽथ गोविन्दो वरेण्यः पुरुषोत्तमः ।
भगवान् भूतभण्येशः प्रोवाचेदं वचो नृप ॥ ३३
येन यत्प्रार्थितं मत्तो दत्तं तद्धि न संशयः ।
मुक्तिर्न चैषा भवतां प्रसन्ने मयि दुर्लभा ॥ ३४
कल्पान्ते मत्प्रसादेन मुक्तिं प्राप्स्यथ सत्तमाः ।
तावत्कालं जगत्यस्मिन् तपसे कृतनिश्चयाः ॥ ३५
शृण्वन्तः श्रावयन्तश्च मत्कथां मुनिसत्तमाः ।
तिष्ठन्तु तप आस्थाय महत्परमदारुणम् ॥ ३६

वामदेवः —

एतस्मिन्नन्तरे राजन् ! ब्रह्मा लोकपितामहः ।
शिरस्यञ्जलिमाधाय प्रणम्य जगतां पतिम् ॥ ३७

मुनीनाश्वासयन्तं भगवन्तं प्रति ब्रह्मकृतविज्ञप्तिः

ब्रह्माः —

इदं विज्ञापयामास देवायामिततेजसे ।
भगवन् सर्वलोकेश ! सर्वयज्ञमयाच्युत ! ॥ ३८
दैत्यैः निराकृता ह्येते देवाः सर्वे सवासवाः ।
यज्ञभागांश्च दैतेया भुञ्जन्ते न दिवौकसः ॥ ३९

तान् हन्तुं समरे ह्येते न शक्ता देवतागणाः ।
विबुद्धान् घातयाद्येश ! तान् सर्वानसुरोत्तमान् ॥

४०

वामदेवः—

इत्युक्ते ब्रह्मणा राजन् ! प्रहसन्निदमब्रवीत् ।

भगवत्कृतब्रह्माद्यभीष्टवरप्रदानम्

श्रीभगवान् —

एते च दानवा घोरा बाधन्ते देवतागणान् ॥

४१

महावीर्या महामाया महाकाया महौजसः ।

रणकर्मणि संयुक्ता दुर्जया दुर्निवारणाः ॥

४२

एतांस्त्वमद्य दैत्येन्द्रान् हन्याः सर्वान् सबान्धवान् ।

एवमुक्त्वा हृषीकेशो विष्वक्सेनं प्रतापिनम् ॥

४३

विलोक्य सर्वभूतात्मा बलुं नारायणोऽब्रवीत् ।

तव दत्तं महावीर्य ! चेदिराज ! नृपोत्तम ! ॥

४४

संसारबन्धनान्मोक्षमचिरेणाऽथ गच्छसि ।

मद्भक्तस्त्वत्समो नैव त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥

४५

हिरण्यकशिपोः पुलं ऋते दैत्येन्द्रसत्तम ! ।

प्रह्लादः सर्वभूतेभ्यो यः पुरा रक्षितो मया ॥

४६

वामदेवः—

एवमुक्त्वा महीपाल ! चेदिराजं प्रजापतिः ।

अगस्त्यमवलोक्याथ बाष्पपर्याकुलेक्षणम् ॥

४७

भक्त्या परमया युक्तं जगादेदं वचो विभुः ।

प्रसन्नोऽहं द्विजश्रेष्ठ ! त्रियतां यत्तवेप्सितम् ॥

४८

मत्तः सुदुर्लभं चापि तत्ते दास्याम्यसंशयम् ।

वामदेवः—

एवमुक्तस्तु देवेन हर्षात् किञ्चिदिदं वचः ॥

४९

| | |
|---|-----|
| श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे षट्त्रिंशोऽध्यायः | ५२१ |
| विज्ञापयामास मुनिः परस्मै हरिमेधसे ।
मूर्धन्यञ्जलिमाधाय प्रोत्फुल्लपुलकोद्गमः ॥ | ५० |
| अगस्त्यः— | |
| नारायणगिरावस्मिन् चरतो मम केशव ! ।
समतीतं महाबाहो ! वर्षाणामधिकं शतम् ॥ | ५१ |
| सुचिरं कालमत्रैव विचरन् वै ततस्ततः ।
न चापश्यं विशालक्षं त्वामाद्यमजमक्षरम् ॥ | ५२ |
| ततोऽहं भृशमुद्विग्नो विषादं चाप्यवाप्तवान् ।
दिष्ट्या दृष्टो जगत्स्वामी त्वमद्य पुरुषोत्तम ! ॥ | ५३ |
| वृणे तत्त्वप्रसादेन प्राप्तुं यद्वाञ्छितं मया ।
भूते भव्ये तथा काले वर्तमाने तथा प्रभो ! ॥ | ५४ |
| सर्वेषामेव भूतानां दुर्ज्ञेया गतिरुत्तमा ।
दुर्ज्ञेयामपि तां सम्यग् ज्ञातुमिच्छाम्यहं हरे ! ॥ | ५५ |
| सहस्रशस्तु या श्रुत्वा दुर्ज्ञेया च सुरैरपि ।
त्वत्प्रसादेन भगवन् ! भवेत् सा विदिता मम ॥ | ५६ |
| त्वयि भक्तिः परा चापि निश्चला स्यात् ममामला । | |
| वामदेवः— | |
| इत्युक्ते मुनिना भूप ! प्रहसन्निव लोकधृत् ॥
उवाच श्लक्ष्णया वाचा मेघगम्भीरया तदा । | ५७ |
| श्रीभगवान्— | |
| अगस्त्य ! यत्त्वया प्रोक्तमेतद्दत्तं मया तव ॥
प्रसन्नेनात्र भवता पूजितेन महीधरे ! । | ५८ |
| अगस्त्यः— | |
| त्वच्च दृश्यो वसेद्देश ! सर्वेषां प्राणिनामपि ॥ | ५९ |

श्रीभगवान्—

| | |
|---|----|
| अहं दृश्यो वसामीह श्रीभूमिसहितोऽनघ ! । | |
| विमानं मम दिव्यं तु गूढं मुक्तिपरं भवेत् ॥ | ६० |
| आकाशगमचिन्त्यञ्च नानारत्नसमन्वितम् । | |
| अन्येऽपि ये मुनीन्द्रास्मिन्नारायणगिरौ नराः ॥ | ६१ |
| समारुद्धामलाञ्छेमां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् । | |
| दृष्ट्वा स्नात्वाऽथ पीत्वा तु तस्याः पुण्यजलं शुभम् ॥ | ६२ |
| अस्यास्तीरे महत्यस्मिन् विमाने मदधिष्ठिते । | |
| मम प्रीतिकरे पुण्ये सर्वपापहरे शुभे ॥ | ६३ |
| भक्ता मामर्चयिष्यन्ति मयि सन्न्यस्तमानसाः । | |
| ददामीष्टतमान् कामांस्तेषामपि सुदुर्लभान् ॥ | ६४ |
| ये नराः कुर्वते विप्र ! योजनानां शतेष्वपि । | |
| प्रणामं दिशमुद्दिश्य भक्त्या मत्पर्वतोत्तमे ॥ | ६५ |
| ते नरा मत्प्रसादेन पापराशिं व्यपोह्य वै । | |
| प्राप्नुवन्ति पदं पुण्यं प्रविष्टं दुरात्मभिः ॥ | ६६ |
| य एनां सेवते नित्यं स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् । | |
| सोऽपि भुक्तिमवाप्नोति मुक्तिञ्चापि न संशयः ॥ | ६७ |

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवत्कृत-

अगस्त्याभीष्टवरप्रदानवर्णनं नाम

षट्त्रिंशोऽध्यायः ।



अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः

~~~~~

महर्षीणां भगवद्विषयविमानदशनम्

वामदेवः—

मुनयस्तेऽथ भूपाल ! तद्वाक्यसमनन्तरम् ॥	१
ददृशुर्विमलं दिव्यं विमानं भास्करोपमम् ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरे दक्षिणे लोकविश्रुते ॥	२
नारायणाश्रितं दिव्यं नित्यञ्च महद्भुतम् ।	
पाण्डुराभ्रघनप्रख्यं नानाशृङ्गैरलङ्कितम् ॥	३
अनेकरत्नसञ्छन्नं मुक्तादामविभूषितम् ।	
भासयत्तेजसा सर्वा दिशो दश नराधिप ! ॥	४
दीप्यमानं स्वतेजोभिः नानारत्नविभूषितम् ।	
अत्युच्छ्रितं सुदुष्पेक्षं पश्यतां हर्षवर्धनम् ॥	५
यन्न दृष्टं मुनीन्द्रैस्तैः देवैरपि सवासवैः ।	
तस्मिन् महीधरे दिव्ये विचरद्भिरितस्ततः ॥	६
मुनीन्द्रास्ते तु तद् दृष्ट्वा विमानं परमाद्भुतम् ।	
अदृष्टपूर्वमन्यस्मिन् काले नरवरात्मज ! ॥	७
इतस्ततो विचिन्वद्भिः तस्मिन्नेव महीधरे ।	
विस्मयं परमं जग्मुः ततो मुनिगणास्तदा ॥	८
किमिदं नैव चास्माभिः दृष्टमासीत् पुरातनम् ।	
पुरा विमानमाश्चर्यं विचरद्भिरितस्ततः ॥	९
विमानमद्भुताकारं तच्चापि पुरुषोत्तमम् ।	
दृष्ट्वा तत्प्रोचुराश्चर्यं ते हर्षोत्फुल्ललोचनाः ॥	१०

अहो बत ! महाश्चर्यं नूनमेतन्महात्मना ।	
अनेनान्तर्हितं यस्मात् पूर्वं तत् न ह्यदृश्यत ॥	११
विमानं पुण्यमाश्चर्यं ज्वलद्भास्करसन्निभम् ।	
अस्या एव शुभे तीरे पुष्करिण्याः स्थितैरपि ॥	१२
अस्माभिः सहितैः सर्वैः सद्भिरत्रैव चादरात् ।	
हरिणा ध्रुवमेतत्स्यात् अनेनैव स्वमायया ॥	१३
अन्तर्हितं कृतं दिव्यं विमानं सिद्धसेवितम् ।	
एवंविधानि वाक्यानि मुनयस्ते परस्परम् ।	
प्रोचुर्देवाधिदेवस्य सन्निधौ तस्य शार्ङ्गिणः ॥	१४

### शङ्खनुपस्य वरं प्रदाय भगवन्निरोधानम्

एतस्मिन्नन्तरे देवः शङ्खं प्रोवाच केशवः ।	
हेहयाधिपतेः पुत्रं श्रुतस्य सुमहात्मनः ॥	१५

श्रीभगवान्—

वरं वरय भूपाल ! यत्ते मनसि वर्तते ।	
तद्दास्ये तव तुष्टोऽहं वरदः समुपस्थितः ॥	१६

वामदेवः—

इदं निशम्य वचनं गदितं तस्य शार्ङ्गिणः ।	
जगद्धातुरनन्तस्य विश्वयोनेर्महात्मनः ॥	१७
शङ्खः परमसंहृष्टो रोमाञ्चिततनुस्तदा ।	
इत्थं विज्ञापयामास ब्रह्मणेऽव्यक्तजन्मने ॥	१८
एतस्मै देवदेवाय परस्मै हरिमेधसे ।	

शङ्खः—

त्वल्लोकं प्राप्तुमिच्छामि त्वत्प्रसादादधोक्षज ! ॥	१९
----------------------------------------------------	----

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे सप्तविंशोऽध्यायः ५२५

त्वत्पदे वस्तुकामोऽहं तपस्तीव्रं समास्थितः ।  
त्वं ममैतत्प्रयच्छाऽऽशु विष्णो ! राजीवलोचन ! ॥ २०  
नान्यदिच्छामि देवेश ! त्वत्तः प्राप्तुं सुरेश्वर ! ।

वामदेवः —

इत्युक्तस्तु प्रहस्यैनं शङ्खं प्राह जनार्दनः ॥ २१  
हर्षयन्निव भूतानि स्वया गधुरया गिरा ।

श्रीभगवानुवाच —

यावत्कल्यं महाभाग ! स्वर्लोके निवसिष्यसि ॥ २२  
सदा सम्पूजितः सर्वैः इन्द्रलोकनिवासिभिः ।

वामदेवः —

इत्युक्त्वा भगवान् देवः तत्रैवान्तरधीयत ॥ २३  
पश्यतामेव सर्वेषां ब्रह्मादीनां सुरेश्वरः ।  
नारायणः परो नित्यः परमात्मा प्रजापतिः ॥ २४  
सर्वस्वभूतो भक्तानां सर्वलोकपरायणः ।  
अन्तर्हिते ततस्तस्मिन् जगद्भातरि केशवे ॥ २५

भगवदन्तर्धानानन्तरं देवाद्यनुभूतानुत्तापवर्णनम्

विष्णो ! समस्तजगतां आधारे पुरुषोत्तमे ।  
सर्वस्वभूते देवानां सर्वेशे परमात्मनि ॥ २६  
तेजोराशियुते कृष्णे राजीवायतलोचने ।  
देवा ब्रह्मर्षयश्चापि मुनीन्द्राश्च तपोधनाः ॥ २७  
सिद्धाश्चापि तथा सर्वे मुनीन्द्रा विमलाशयाः ।  
वागीशवसुमुख्याश्च सनकाद्याश्च योगिनः ॥ २८  
सर्वे सप्तर्षयश्चापि श्वेतद्वीपनिवासिनः ।  
एते चान्ये च ये तत्र समेता द्रष्टुमीश्वरम् ॥ २९

सर्वे एते महीपाल भूयोभूयः सनातनम् । भन्तर्धानं गतं देवं प्रणमुः विस्मितेक्षणाः ॥	३०
दीनचित्तास्ततः सर्वे पश्यन्ति स्म दिशो दश । एते सर्वे मुनिश्रेष्ठा रुरुदुस्तेऽथ तत्र वै ॥	३१
प्रणम्य हरये तस्मै देवायान्तर्हिताय ते । ब्रह्माद्यास्तेऽथ भूपाल! सर्वे एवेदमब्रुवन् ॥	३२
अहो भगवतस्तस्य माहात्म्यममितौजसः । ब्रह्माण्डकमशेषन्तु तेन व्याप्तं स्वतेजसा ॥	३३
आयुधानि ज्वलन्ति स्म चक्रादीनि धृतानि वै । दहन्तीव जगत्सर्वं शोषयन्तीव चोदधीन् ॥	३४
प्रसन्नास्ते कटाक्षाश्च दीपयन्तो दिशो दश । चक्राशिरे स्वतेजोभिः शतशस्तस्य शार्ङ्गिणः ॥	३५
शतशो बाहवश्चापि हरेः करिक्रोपमाः । स्पर्धन्त इव चान्योन्यं रेजिरे रुचिरप्रभाः ॥	३६
बदनानि ज्वलन्ति स्म पूर्णेन्दुसदृशानि वै । शोभितान्यमलैर्दिव्यैः सरलैः कुण्डलैस्तथा ॥	३७
इन्दुमण्डलसङ्काशनखमण्डलशोभिते । पादपद्मे हरेस्तस्य शोभिते विमलप्रभे ॥	३८
अहो हि भूधरेन्द्रस्य माहात्म्यममितौजसः । यस्मिन्नेवंविधो देवो निवसत्यच्युतो हरिः ॥	३९
न शक्यमस्य माहात्म्यं वक्तुं वर्षशतैरपि । अस्माभिः सहितैः सर्वैः विमलेनापि तेजसा ॥	४०
वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन । वेङ्कटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति ॥	४१

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे सप्तत्रिंशोऽध्यायः

५२७

नास्ति पुण्यतमं तीर्थं स्वामिपुष्करिणीसमम् ।  
सममस्तीति यो ब्रूयात्तत्समो नास्ति पातकी ॥  
याश्च सप्त महापुरुषः कीर्त्यन्ते मुक्तिदायिकाः ।  
ता वेङ्कटाद्रिपर्यन्तग्रामकोट्यंशशक्तयः ॥  
एवं विधानि वाक्यानि वदन्तः सुबहूनि वै ।  
सर्वे संहृष्टमनसो ब्रह्माद्यास्ते सुरोत्तमाः ॥

४२

४३

४४

भगवद्विमानादि दृष्ट्वा ब्रह्मादिनिर्गमनम्

स्वामिपुष्करिणीतीर्थे स्नात्वा पीत्वा द्विजोत्तमाः ।  
ददृशुस्ते महाश्वर्ये विमानं पुनरद्भुतम् ॥  
अप्यदृष्टं पुरा सर्वैः ब्रह्माद्यैरपि सत्तमैः ।  
प्रहृष्टास्ते महात्मानो विमाने हरिमेधसः ॥  
ददृशुर्देवदेवेशं विमलार्कसमप्रभम् ।  
चतुर्बाहुमशेषेशं दिव्यकुण्डकधारिणम् ॥  
तिष्ठन्तमच्युतं देवं नानाभूषणभूषितम् ।  
शोभमानं किरीटेन नानारत्नचित्तेन वै ॥  
सुधृतायुधजातं तं वरदं सर्वदेहिनाम् ।  
दिव्यरत्नचित्तैश्चित्रैः वलयैरुपशोभितम् ॥  
दिव्याम्बरधरं सौम्यं दिव्यरत्नविभूषितम् ।  
प्रणतातिंहरं विष्णुं त्रैलोक्यतिलकं विभुम् ॥  
स्फुरन्मणिगणच्छन्नचारुहारविराजितम् ।  
स्फुरन्नूपुरसंशोभिपादं पद्मनिभेक्षणम् ॥  
सेव्यमानं श्रिया चापि स्वपार्श्वगतया तथा ।  
चारुमत्या पृथिव्या च सेव्यमानं स्वकान्तया ॥

४५

४६

४७

४८

४९

५०

५१

५२

वामदेव —

एवंभूतं तदा दृष्ट्वा ब्रह्माद्या विस्मितेक्षणाः ।	
प्रणोमुर्मुदिताः सर्वे शिरोभिर्भुवि केशवम् ॥	५३
प्रस्तूय च जगद्योनिं स्तुतिभिः शुभलोचनाः ।	
निश्चक्रमुस्तदा तस्मात् विमानात् दीप्तचक्रिणः ॥	५४
निष्क्रम्य सहिता नेमुः शिरोभिर्भुवि केशवम् ।	
कृत्वा प्रदक्षिणञ्चापि तद्विमानमनुत्तमम् ॥	५५
यथागतं ययुः सर्वे प्रशंसन्तो महीधरम् ।	
पितामहश्च भगवान् खेचरैः परिवारितः ॥	५६
संस्तूयमानस्त्रिदशैः निजलोकमथाभ्ययात् ।	
पिनाकपाणिर्भगवान् शङ्करश्चिपुरान्तकः ॥	५७
जगाम विश्रुतं दिव्यं कैलासं रजताचलम् ।	
नानारत्नैर्विराजन्तं पारिजातैरलङ्कृतम् ॥	५८
नानातपस्विभिर्युक्तं नानासिद्धनिषेवितम् ।	
ऋषयश्च तथा सर्वे कैलासं प्रति निर्ययुः ॥	५९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवद्विमान-  
दर्शनपूर्वकब्रह्मादिनिर्गमनादिवर्णनं नाम  
सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।

अथ अष्टत्रिंशोऽध्यायः

— : \* : —

श्रीवेङ्कटाचलात्कैलासं प्रति शङ्करगमनम्

जनक उवाच—

कथं स भगवान् ! शम्भुः शङ्करश्चन्द्रशेखरः ।  
प्रयातः पर्वताद्दिव्यं कैलासं स्वालयं शिवः ॥



श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे अष्टाविंशोऽध्यायः

५२९

वामदेवः

एतन्मुनिवराशेषं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ।	
कथयैतन्महाश्वर्यं शृण्वतां हर्षवर्धनम् ॥	२
श्रूयतामिदमाश्वर्यं वक्ष्यामि नृपते ! तव ।	
यदा हि भगवान् देवः प्रयातः स्वालयं प्रति ॥	३
वृषभं तं महावीर्यं मेरुमन्दरसन्निभम् ।	
नानामणिगणैश्चित्रैः स्वनवद्विरनेकशः ॥	४
अलङ्कृतं महावीर्यं महाकायं महाबलम् ।	
मेघाभं मेघसन्नादं द्विषतां शोकवर्धनम् ॥	५
विश्रुतं सर्वलोकेषु सर्वरत्नविभूषितम् ।	
उदग्रककुदं दिव्यं वायुवेगसमं जवे ॥	६
रज्जुभिश्च तदा दिव्यैः जाम्बूनदमयैः शुभैः ।	
स्फुरन्मणिगणाकीर्णैः समन्तात्परिवेष्टितम् ॥	७
आकाशगङ्गां महाशृङ्गं हेममालापरिष्कृतम् ।	
जाज्वल्यमानं वपुषा दर्शनीयतमं शुभम् ॥	८
अनेकशतसाहस्रैः जाम्बूनदमयैस्तथा ।	
किङ्किणीजालसङ्घैश्च समन्तात् परिवेष्टितम् ॥	९
मुक्तादामभिरालोलैः भ्राजमानैः सुरश्मिभिः ।	
अलङ्कृतमहाकर्णं महाकायं महोक्षकम् ॥	१०
आरुह्य भगवान् देवः सर्वपापहरो हरः ।	
बलिभिर्भूतसङ्घैश्च वेतालैश्च महाबलैः ॥	११
अनेकबाहुभिश्चैव संवृतः परमेश्वरः ।	
संस्तूयमानः सदृशैः खेचरैरप्यभिष्टुतः ॥	१२
स्वभासा भासयन् दिव्यं जगदेतच्चराचरम् ।	
शृण्वंश्च वदतां तेषां नारायणगिरेः कथाः ॥	१३

शनैर्जगाम भूपाल ! कैलासनिलयं शिवः । समस्ताः परिवार्येनं भूतसङ्घाः सहस्रशः ॥	१४
तन्निदेशकरा जम्मुः नानारूपभयावहाः । केचिन्नीलाचलप्रख्याः केचिद्विसनिभास्तथा ॥	१५
सन्ध्यामेघनिभाः केचित् केचिद्वै सूर्यवर्चसः । केचित् कालागरुनिभाः केचित् अग्निशिखोपमाः ॥	१६
केचित् दशभुजा राजन् ! केचित् एकभुजास्तथा । जानुदेशशिराः कश्चित् ऊरुदेशशिरास्तथा ॥	१७
पाणिदेशशिराः कश्चित् तत्रासीन्मिथिलेश्वर ! । तेषां वर्णञ्च रूपञ्च वक्तुं नाम न शक्यते ॥	१८
केचित् द्विपमुखास्तत्र केचित् अध्रमुखास्तथा । केचित् स्वराभवदनाः केचित् व्याघ्रमुखास्तदा ॥	१९
शक्यं देवैः न कालेन महता चापि तानि वै । रूपाणि तेषां भूतानां वक्तुं नानाकृतीनि वै ॥	२०
एवं विधैरनेकैस्तु भूतसङ्घैः समावृतः । लिपुरान्तकरो देवो जगाम रजताचलम् ॥	२१
हरस्य तद्रूपमपास्तदोषं सिताचलाभं शितिकण्ठकायम् । व्यराजताशेषजगत्प्रभोस्तत् नारायणस्येव वपुस्त्रिविक्रमे ॥	२२
नृपेन्द्र संशान्तमपेतदोषं समीक्ष्य देव लिपुरारिमीशम् । सर्वाणि भूतानि समेत्य पार्श्वं भक्त्या प्रणेमुः प्रणतैः शिरोभिः ॥	२३

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे अष्टाविंशोऽध्यायः ५३१

अथ तं भीमकर्माणं भगवन्तमुमापतिम् ।  
वहन् वृषेन्द्रः प्रययौ लील्यैवान्तरिक्षगः ॥ २४  
रराज सोऽत्यद्भुतचारुशृङ्गः  
संतप्तचामीकरचारुभूषणः ।  
हंसेन्दुकुन्दस्फटिकाचलाम्बो  
गच्छन् महामेघ इवान्तरिक्षे ॥ २५  
तं यान्तमनुजग्मुस्ते देवा ब्रह्मर्षयस्तदा ।  
कृताञ्जलिपुटा देवं स्तुवन्तः त्रिपुरान्तकम् ॥ २६

जनकः —

स्तुवन्ति स्म कथं देवं देवा ब्रह्मर्षयस्तदा ।  
शूलपाणिं प्रयास्यन्तं कैलासनिलयं प्रति ॥ २७

क्षतानन्दः —

जनकेनैवमुक्तस्तु वामदेवो महातपाः ।  
वक्ष्येऽहमेतद्भूपाल ! श्रूयतामित्यथाब्रवीत् ॥ २८

देवाद्याः —

पिनाकपाणिं देवेशं नताः स्म गिरिजेश्वरम् ।  
गरुत्मति तथा विष्णुं तद्रूपमिव संस्थितम् ॥ २९  
त्रिपुरस्य नियन्तारं त्रिनेत्रं शूलधारिणम् ।  
विष्णुभक्तं विरूपाक्षं विष्णुप्रियकरं शुभम् ॥ ३०  
दुष्टदैत्यनिहन्तारं कैलासनिलयं हरम् ।  
सर्वं भवन्तमीशानं शङ्करं कामरूपिणम् ॥ ३१  
उग्ररूपं महादेवं अप्रभृष्यं दुरासदम् ।  
नीलकण्ठं विरूपाक्षं सर्वसंहारमूर्तिकम् ॥ ३२

कपिलाक्षं विशालाक्षं जटामुकुटधारिणम् ।	
नताः स्म चर्मवसनं वयं त्वां वृषभध्वजम् ॥	३३
ब्राह्मस्मान् सर्वलोकेश ! त्वामद्य शरणं गतान् ।	
त्वमेव गतिरस्माकं सर्वेषामेव शङ्कर ! ॥	३४
एवं स्तुवन्तो देवेशं देवा ब्रह्मर्षयस्तदा ।	
अनुजग्मुर्महात्मानं नारायणमिवापरम् ॥	३५
एवं संस्तूयमानोऽसौ तदा पशुपतिर्नृप ! ।	
प्रपेदे तं महापुण्यं कैलासं पर्वतोत्तमम् ॥	३६
तत्रापि स्वालयं दिव्यं सर्वभूतनिषेवितम् ।	
देवर्षिसिद्धमनुजैः गन्धर्वैश्चापि सेवितम् ।	
अतीव शुभगन्धाढ्यं प्रपेदे त्रिदशेश्वरः ॥	३७
तेषां मुनीनामथ पश्यतां तदा	
गौरीश्वरो देववरः प्रतापवान् ।	
अन्तर्दधे सानुचरप्रभावः	
तत्रैव राजस्तदभून्महाद्भुतम् ॥	३८
अन्यदिच्छसि किं भूयस्तत्तच्छ्रोतुं महीपते ! ।	
वासुदेवाश्रितं पुण्यं तत्पृच्छ कथये तव ॥	३९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

श्रीवेङ्कटाचलाच्छङ्करस्य कैलासगमनादिवर्णनं नाम

अष्टविंशोऽध्यायः ।



अथ एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

— : \* : —

भगवद्विमानान्तर्धानहेतुनिरूपणम्

ज : कः —	अन्तर्हितं कथं तेषां मुनीनामञ्जनाचले । आसीद्विमानमाश्चर्यं श्रोतुमिच्छाम्यशेषतः ॥	१
वामदेवः —	आख्याहि मे महाश्चर्यं एतत्पुण्यमनुत्तमम् । लीलया देवदेवेन विष्णुना प्रमविष्णुना ॥	२
	तदाऽऽसीदद्भुतं दिव्यं विमानं मुनिसेवितम् । अन्तर्हितं कृतं राजन् मायया दिव्यया स्वया ॥	३
	सर्वे एते मुनिश्रेष्ठाः सुचिरं गिरिमूर्धनि । चरेयुरिति देवेन ह्यादावन्तर्हितं कृतम् ॥	४
	स्वेनैव तेषां सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् । मायामपास्य स्वं दिव्यं विमानं दर्शितं पुनः ॥	५
	तस्मान्मुनिवराः पूर्वं नापश्यन् दिव्यमुत्तमम् । विमानं सर्वपापघ्नं सर्वलोकेषु विश्रुतम् ॥	६
	अप्राकृतमनाद्यन्तं वैकुण्ठादागतं महत् । श्रीसहायस्य तद्विष्णोः विहारायतनं सदा ॥	७
	दृष्टवन्तश्च तद्विच्यं प्रसादात् जगदीशितुः । हरेर्भगवतस्तस्य तदद्भुतमिवाभवत् ॥	८
	एतच्चापि समाख्यातं यत्पृष्टोऽहं त्वया नृप ! । श्रोतव्यं यत्त्वया चान्यत् तत्पृच्छ कथयामि ते ॥	९
जनकः —	अगस्त्यप्रमुखास्तत्र विमकुर्वस्ततः परम् । मुनयो मुनिशार्दूल ! तन्मे कथय सुव्रत ! ॥	१०

स्वामिपुष्करिण्यां अगस्त्यादिकृतभगवन्मन्त्रोपासनाप्रकारः

वामदेवः—	अगस्त्याद्यास्ततस्तस्मिन् भगवत्यच्युतेऽमले ।	
	अन्तर्हिते जगद्भ्रान्ति परे ब्रह्मणि केशवे ॥	११
	कृतवन्तो महात्मानो यत्तत्र कथयामि तत् ।	
	चिरकालं विमानेऽस्मिन् पुण्ये पुण्यप्रदायिनि ॥	१२
	वसाम तत्परं ब्रह्म चिन्तयामो जनार्दनम् ।	
	पुष्करिण्या विशालयाः तस्या एव शुभे जले ॥	१३
	सर्वपापहरे शुद्धे स्नात्वा स्नात्वा दिनेदिने ।	
	सर्वे सम्पूज्य तपसा तमासाद्य दिवानिशम् ॥	१४
	एवमुक्त्वा ततः सर्वे मुनयोऽमलचेतसः ।	
	ऊषुस्तस्मिन् विमाने ते द्वादशाब्दं नराधिप ! ॥	१५
	तपस्तीव्रं समास्थाय विष्णोराराधनोद्यताः ।	
	स्वामिपुष्करिणीं दिव्यां सेवमाना अहर्निशम् ॥	१६
	जेपुरष्टाक्षरं मन्त्रं मुक्तिबीजमनुत्तमम् ।	
	विद्वद्भिः प्रेक्ष्यते पूर्वेः यो मन्त्रो मुक्तिकाङ्क्षिभिः ॥	१७
	अर्थार्थिभिस्तथान्यैश्च कामसंसिद्धये नृप ! ।	
	जजाप यं परं मन्त्रं पुरा ब्रह्मा सनातनम् ॥	१८
	कल्पादौ सर्वदेवेशः सिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः ।	
	तथा संहारसमये सम्प्राप्ते चन्द्रशेखरः ॥	१९
	यमभ्यस्य महामन्त्रं शक्तिं प्राप्नोति दुर्लभाम् ।	
	यत्समं चाधिकं वा न त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥	२०
	तथा सर्वेषु मन्त्रेषु वैदिकेषु शुभेषु च ।	
	यं ज्ञात्वा सर्वपापेभ्यो विमुच्यन्तेऽत्र मानवाः ॥	२१

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ५३५

सर्वान् कर्मांश्च विन्दन्ति यं जप्त्वा मन्त्रमुत्तमम् ।  
तं मन्त्रं सर्वपापघ्नं सर्वशोकप्रणाशनम् ॥ २२  
जेपुस्ते मुनयः सर्वे द्वादशाब्दमहर्निशम् ।  
समाप्ते द्वादशे वर्षे मुनयस्ते तपोधनाः ॥ २३

अगस्त्यादिकृतो भगवत्सेवापूर्वकः स्वात्मासगमनोद्योगः

अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे समाराध्य जगत्पतिम् ।  
शङ्खचक्रधरं देवं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥ २४  
श्रीभूमिसहितं देवं उदयादित्यसन्निभम् ।  
सहस्रशो विमानं तत् कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ॥ २५  
प्रणम्य च जगन्नाथं सर्वलोकेश्वरं हरिम् ।  
गन्तुं प्रचक्रमुस्तस्मात् वेङ्कटाख्यात् नगोत्तमात् ॥ २६

भगवद्विमानमन्तर्हितं दृष्ट्वा अगस्त्यादिकृता चिन्ता

एतस्मिन्नन्तरे तत्र विमानं मुनिसेवितम् ।  
पश्यतामेव सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् ॥ २७  
पुनश्चापि जगद्धातुः मायया दिव्यया स्वया ।  
अन्तर्हितं कृतञ्चासीत् तद्द्भुतमिवाभवत् ॥ २८  
ततस्तु मुनयः सर्वे परं विस्मयमागताः ।  
मुनयः — अहोऽतीव महाश्चर्यं कृतमेतन्महात्मना ॥ २९  
पुनश्च देवदेवेन हरिणाऽद्भुतकारिणा ।  
यदेतन्महदाश्चर्यं विमानं पुण्यसेवितम् ॥ ३०  
अन्तर्हितं कृतं पूर्वं दर्शितञ्च पुनस्तथा ।  
इदानीञ्च पुनस्तेन माययाऽन्तर्हितं कृतम् ॥ ३१

अहो बत ! महाश्रयं अहो बत ! महाद्भुतम् ।  
 दृष्टमेतत्तदध्यक्षे सेविते माधवे शुभे ॥ ३२  
 एवंविधानि वाक्यानि प्रोच्य प्रोच्य पुनःपुनः ।  
 विस्मयाग्निष्टहृदयाः तस्थुस्तत्रैव ते द्विजाः ॥ ३३  
 इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 भगवद्विमानान्तर्धानहेत्वादिनिरूपणं नाम  
 एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः

शेषाद्रिःायव्यभागस्थितमहाभूतस्य नारायणाद्रित्ववर्णनम्

जनकः —

वायव्यां दिशि यो देवो गिरेस्तस्य महीयसः ।  
 दृष्टो मुनिवरैः पूर्वं कोऽसौ ब्रह्मन् ! वदस्व मे ॥ १

वामदेवः —

स राजन् नगराजस्तु नारायणगिरिः स्वयम् ।  
 आसीनो वपुरास्थाय स्वकं दिव्यं महाद्भुतम् ॥ २

वसोर्भगवन्मन्त्रोपासनापूर्वकं स्वामितीर्थस्थितिवर्णनम्

जनकः —

अन्तर्हिते जगन्नाथे वसुः परमधार्मिकः ।  
 तपः परं स राजर्षिः अकरोत्किं महामुने ! ॥ ३

वामदेवः —

स राजाऽन्तर्हिते देवे देवदेवे सनातने ।  
 कृतवान् यन्महीपाल ! तदास्यास्ये निशामय ॥ ४



श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चत्वारिंशोऽध्यायः ५३७

तस्मिन्नेव विमानेऽसौ राजोपरिचरो वसुः ।  
भाराधयन् हृषीकेशं वासुदेवं सनातनम् ॥ ५  
द्वादशाक्षरमेवैकं परं मन्त्रं जजाप ह ।  
सेवमानश्च तां दिव्यां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ॥ ६  
उवास परया भक्त्या द्वादशाब्दं महामतिः ।  
नृपेन्द्र कथयिष्येऽन्यत् श्रूयतामित्यथाब्रवीत् ॥ ७

श्वेतद्वीपवासिसिद्धादीनां श्रीवेङ्कटाचलात् स्वावासगमनम्

ते सर्वे सङ्गतास्तत्र नारायणगिरौ नृप ।  
शङ्खचक्रधराः सर्वे श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥ ८  
“ नमो भगवते वासुदेवा ” येत्यजपस्तदा ।  
तस्मिन् विमाने न्यवसन् चिरकालमथो नृप ! ॥ ९  
अर्चयन्तश्च गोविन्दं भक्त्या परमया तदा ।  
अनुज्ञाताश्च देवेन श्वेतद्वीपमथागमन् ॥ १०  
एतच्चापि समाख्यातं यत्पृष्टोऽहं त्वया नृप ! ।  
यदन्यत्तव वक्तव्यं तत्पृच्छ कथयामि ते ॥ ११

जनकः --

सनकाद्या महात्मानो येऽन्ये तत्र समागताः ।  
अन्तर्हिते जगन्नाथे किमकुर्वस्ततः परम् ॥ १२

वामदेवः --

सप्तर्षयश्च देवाश्च शुक्रश्चापि महामतिः ।  
बृहस्पतिश्च भगवान् सनकाद्याश्च योगिनः ॥ १३  
सर्वे एते महाभागा नमस्कृत्य जनार्दनम् ।  
महीधरं प्रशंसन्तः स्वाख्यान् प्रतिपेदिरे ॥ १४

शङ्खश्चापि जगद्धातुः प्रसादादेव भूपते ! ।	
विमानमद्भुताकारं अप्सरोगणसेवितम् ॥	१५
आरुह्य गीयमानस्तु शक्रलोकमवाप्तवान् ।	
विष्वक्सेनश्च भगवान् सचिवैः बलिभिर्वृतः ॥	१६
सप्तभिः भूरितेजोभिः महेन्द्रसमविक्रमैः ।	
असुराणां वधं चक्रे यथोक्तं परमेष्ठिना ॥	१७

जनकः—

अन्तर्हिते ततस्तस्मिन् विमाने मुनिसेविते ।  
अगस्त्यो भगवान् ब्रह्मन् ! अकरोत् किं महामुनिः ? ॥ १८

## अगस्त्यकृतभाविविमानाविर्भावहेतुनिरूपणम्

शामदेवः—

अगस्त्यो भगवान् भूप ! मुनीन्द्रानिदमब्रवीत् ।	
यदेतद्दर्शितं दिव्यं विमानं लोकपावनम् ॥	१९
पूर्वं भगवता तेन विष्णुना प्रभविष्णुना ।	
तदत्रैव महाशैले सदा तिष्ठति पूजितम् ॥	२०
अन्तर्हितं न केनापि शक्यते द्रष्टुमञ्जसा ।	
युगे युगे तु यः कश्चित् तपसा भावयेद्धरिम् ॥	२१
स तस्य कृपया दिव्यं विमानं पश्यति ध्रुवम् ।	
आगामिनि कलौ चापि सम्प्राप्ते पुण्यमुत्तमम् ॥	२२
विमानं सर्वपापघ्नं विष्णुनाऽधिष्ठितं सदा ।	
पश्यतां सर्वभूतानां आह्लादजनकं शुभम् ॥	२३
देवर्षिदैत्यगन्धर्वदेवसिद्धनिषेवितम् ।	
मनुजैरेव तद्भक्तैः कारितं लक्षणान्वितम् ॥	२४

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चत्वारिंशोऽध्यायः ५३९

भविष्यति महाश्रयं मुनीन्द्रा नात्र संशयः ।  
तत्रैव भगवान् विष्णुः स्थास्यत्यक्षयशक्तिधृक् ॥ २५  
विमाने तु जगन्नाथः पूर्वं दृष्टो हरिः स्वयम् ।  
शङ्खचक्रधरः श्रीमान् चतुर्बाहुस्वरूपवान् ॥ २६  
अस्मिन् जगति विप्रेन्द्रा ! विश्रुतञ्च भविष्यति ।  
विमानं तदघौघघ्नं त्रैलोक्यतिलकोपमम् ॥ २७

वामदेवः—

एवमुक्त्वा मुनीन्द्रांस्तान् अगस्त्यो भगवांस्तदा ।  
गन्तुं चक्रे मनस्तस्मात् प्रणिपत्य जनार्दनम् ॥ २८  
अगस्त्योऽथ महातेजाः वरान् प्राप्य सुदुर्लभान् ।  
मुनिभिः संवृतो राजन् ! महेन्द्रमगमद्विरिम् ॥ २९  
एवमेषा पुरा वृत्ता कथा ते कथिता मया ।  
विश्रुता सर्वलोकेषु किमन्यत् ज्ञातुमिच्छसि ? ॥ ३०  
इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
भविष्यद्विमानप्रादुर्भाववर्णनं नाम  
चत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ एकचत्वारिंशोऽध्यायः

देवजिदाद्यसुरकृतलोकोपद्रववर्णनम्

जनकः—

ब्रह्मन् ! नित्युक्तो देवेन त्रिष्वक्सेनः स वीर्यवान् ।  
तेषां वधं कथं चक्रे दैत्येन्द्राणां तरस्विनाम् ॥ १  
एतन्मे महदाश्रयं चरितं तस्य धीमतः ।  
विष्वक्सेनस्य देवस्य तत्त्वेनाख्यातुमर्हसि ॥ २

वामदेवः—	एतत्ते कथयिष्यामि शृणुष्व श्रद्धयाऽन्वितः ।	
	पुराऽवधीत् यथा दैत्यान् विष्वक्सेनो महाबलः ॥	३
	पुराऽभवन्महावीर्याः हिरण्याक्षस्य वंशजाः ।	
	“देवजिन्मृत्युजिच्चापि शत्रुजि” चेति ते त्रयः ॥	४
	भ्रातरः सुमहासत्त्वाः महामाया महौजसः ।	
	ब्रह्माणं ते समाराध्य स्नष्टारं भुवनेश्वरम् ॥	५
	सर्वदेवैरवध्यत्वमवापुर्मनुजेश्वर ! ।	
	ततः सकलदैतेयैर्महामात्यैर्महाबलैः ॥	६
	अनेकशतसाहस्रैः संवृतास्ते महीमिमाम् ।	
	विचेरुरवनीपाल ! नाशयन्त इमाः प्रजाः ॥	७
	क्षोभितास्तेस्तु सहसा शोषिता वरुणालयाः ।	
	तेषां वीर्येण महता पर्वताश्च चकम्पिरे ॥	८
	ययुर्विनाशं सहसा प्रजाः सर्वाः प्रजेश्वर ।	
	यज्ञभागभुजो देवा यज्ञभागं न लेभिरे ॥	९
	त एव बुभुजुर्देवा यज्ञभागान् सुदुर्मदाः ।	
	न यज्ञाः समवर्तन्त तपश्चकुर्वन् तापसाः ॥	१०
	न तताप तदा सूर्यो न जज्वाल च पावकः ।	
	निर्जिताश्चाभवन्देवा युद्धे परमदारुणे ॥	११
	दैतेयैर्विजिता देवाः शरणं प्रतिपेदिरे ।	
	नारायणाचले दिव्ये वसन्तं पुरुषोत्तमम् ॥	१२

### देवजिदाद्यसुरवधार्थं सपरिकरस्य विष्वक्सेनस्य गमनम्

एवं प्रवृत्ते लोकेऽस्मिन् दैतेयैस्तैर्मदोत्कटैः ।	
विष्वक्सेनः समाज्ञतो विभुना हरिणा बली ॥	१३

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चत्वरिंशोऽध्यायः ५४१

तेषां वधार्थं सर्वेषां दैत्येन्द्राणां बलीयसाम् ।	
अभ्यगात्सचिवैः सार्धं सप्तभिर्बलशालिभिः ॥	१४
अनेकशतसाहसैर्भूतसङ्घैः समावृतः ।	
महाबलैर्महावीर्यैः भूभारहरणक्षमैः ॥	१५
संवृतस्तैर्महातेजाः सोऽगच्छद्विमलेऽम्बरे ।	
व्यराजत यथा शक्रः संवृतस्त्रिदशेश्वरैः ॥	१६
आकाशं तदनाकाशं कृतमासीदभास्करम् ।	
आयान्तमथ चाकर्ण्य विष्वक्सेनं च तद्वलम् ॥	१७
तेऽपि दैत्या महावीर्या बलवन्तो यशस्विनः ।	
आहूय सर्वानसुरान् पातालतलवासिनः ॥	१८
सागरेषु च शैलेषु नदीषु च वनेषु च ।	
ये वसन्ति महावीर्या दारुणा दानवेश्वराः ॥	१९
तान्सर्वास्ते समाहूय समरेष्वनिवर्तिनः ।	
युद्धाभिमानिनस्तेऽथ सह दैतेयदानवैः ॥	२०
देवजित्प्रमुखा जग्मुः योद्धुं तेन महात्मना ।	
विष्वक्सेनेन ते तेन गिरिशेनेन राक्षसाः ॥	२१

विष्वक्सेनासुरसैनिकयोर्युद्धक्रमः

देवस्य सैनिकाश्चापि दैत्येन्द्राणाञ्च सैनिकाः ।	
ततो युद्धं महारौद्रं समवर्तत दारुणम् ॥	२२
सेनयोरुभयोश्चापि दैवासुरमिवापरम् ।	
नानाप्रहरणैरुग्रैः निजघ्नस्ते परस्परम् ॥	२३
विष्वक्सेनानुगाश्चापि दैत्येन्द्राश्च बलीयसः ।	
तैर्मुक्तैरस्त्रजालैश्च शस्त्रौघैश्चापि संयुगे ॥	२४

दद्व्यमानमिवाकाशं आसीत्सर्वग्रहाकुलम् ।	
जाज्वल्यमानं तं दृष्ट्वा गगनं गगनेचराः ॥	२५
परित्यज्य नृपाकाशं भयाज्जम्मुर्दिशो दश ।	
ततो देवजिता मुक्ताः घोरा माया महौजसा ॥	२६
तान् सर्वान् मोहयामासुः विष्वक्सेनस्य सैनिकान् ।	
विष्वक्सेनस्य सचिवस्ततः क्रुद्धो महामतिः ॥	२७
“मेधावी ” नाम बलवान् सर्वमायाविशारदः ।	
मायाबलेन तां मायां अजयत्सर्वमोहिनीम् ॥	२८
ततो धनुर्महद्दिव्यं आदाय विमलप्रभम् ।	
अच्छेद्यं सर्वशत्रूणां दत्तमव्यक्तरूपिणा ॥	२९
अनेकरत्नसंछन्नं जाम्बूनदपरिष्कृतम् ।	
मुमोच निशितान् बाणान् दैत्येन्द्राणां महौजसाम् ॥	३०
निहतास्तेन दैतेयाः शतशोऽथ सहस्रशः ।	
मुक्ता प्रियतरान् प्राणान् निपेतुर्धरणीतले ॥	३१
नियतांस्तानथालोक्य मृत्युजित् क्रोधमूर्च्छितः ।	
मोहयामास सर्वास्तान् मायया देवसैनिकान् ॥	३२
“शत्रुघ्नो ” नाम शत्रुघ्नः क्रोधेन महतान्वितः ।	
असिरत्नं समादाय विमलार्कसमप्रभम् ॥	३३
चिच्छेद तस्य दैत्यस्य शिरोज्वलितकुण्डलम् ।	
तस्यासीद्भूय एवाशु शिरस्तुङ्गकिरीटवत् ॥	३४
शत्रुजित्तस्य तत्कर्म शत्रुघ्नस्य बलीयसः ।	
सम्पश्यन् घोरसङ्काशो मायामुग्रामथाददे ॥	३५
विजेतुं दुर्मदः सर्वान् विष्वक्सेनमुखान् मृधे ।	
तया ते निष्प्रभा आसन् विष्वक्सेनस्य सैनिकाः ॥	३६

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चत्वारिंशोऽध्यायः ५४३

तां दृष्ट्वा सहसा क्रुद्धः सचिवस्तस्य धीमतः । मायामुग्रां महातेजाः “कालाग्नि”र्नाम वीर्यवान् ॥	३७
आसुरीं नाशयामास तदद्भुतमिवाभवत् । आददे महतीं शक्तिं शत्रुजिद्वधकारणात् ॥	३८
मुमोचाथ सतां दीप्तां “कालाग्नि” स्तरसा बली । शक्त्या विदारितो दैत्यः पपाताथ महीतले ॥	३९
गतासुरिव निश्चेष्टः पुनश्चापि समुत्थितः । देवजिन्मृत्युजिचापि शत्रुजिचाप्यथात्मवान् ॥	४०
क्रोधेन महताविष्टः त्रयस्त्रय इवाग्नयः । धनूंष्याकृष्य दिव्यानि दत्तान्यव्यक्तजन्मना ॥	४१
ब्रह्मणा देवदेवेन कल्पादौ परमेष्ठिना । महास्त्रञ्च तथा दिव्यं भीमं पाशुपतं तथा ॥	४२
वायव्यं वारुणञ्चापि सौरमाग्नेयमेव च । ऐन्द्रञ्चापि तथा रौद्रं याम्यञ्चापि सुदुस्तरम् ॥	४३
विमोहनकरं घोरं गान्धर्वञ्च सुदुर्जयम् । जृम्भणास्त्रं तथा घोरं कौबेरं वारुणं तथा ॥	४४
एवमादीनि चान्यानि दिव्यान्यस्त्राणि संयुगे । मुमुचुः शतशो राजन् ! सेनायां तस्य धीमतः ॥	४५
ब्रह्मास्त्राद्यैस्तथा दीप्तैः अस्त्रैः शत्रुभयङ्करैः । ज्वालार्चिष्मत्तदाकाशं अपेतग्रहभास्करम् ॥	४६
अपेतचन्द्रतारौघं निपतच्छुक्सारिकम् । दृश्यते सङ्कुलं तत्र संहारसमये यथा ॥	४७

## विष्वक्सेनकृतनारायणास्त्रप्रयोगपूर्वकासुरवधप्रकारः

ततो देवः स भगवान् विष्वक्सेनः प्रतापवान् ।	
दृष्ट्वा विस्मयमापन्नो दैतेयांस्तानलोक्यत् ॥	४८
“साधु साध्वि”ति चाभाष्य जहर्ष च ननाद च ।	
स्वकं धनुर्महद्दिव्यं तप्तजाम्बूनदप्रभम् ॥	४९
विस्मयार्थं स महातेजाः शार्ङ्गञ्चापमिवापरम् ।	
नारायणीयं सहसा सन्दधेऽस्त्रं शरासने ॥	५०
तदस्त्रं मृत्युसङ्काशं अनिवार्यं सुरासुरैः ।	
कालामिरिव जज्वाल कल्पान्ते सर्वनाशनः ॥	५१
ततः सङ्क्षोभमायातं जगदेतच्चराचरम् ।	
चुक्षुभुः सागराः सर्वे पर्वताश्च चक्रम्पिरे ॥	५२
तदस्त्रं तेन निर्मुक्तं ज्वालामालि महात्मना ।	
समीक्ष्य सर्वभूतानि राजन्! नेदुः सुदारुणम् ॥	५३
आगतास्तेऽपि ये तत्र शुद्धदर्शनललासाः ।	
ते सर्वे गगनं त्यक्त्वा दुद्रुवुः सर्वतो दिशम् ॥	५४
देवाश्चापि तदा सर्वे मुनयश्च तपोधनाः ।	
दृष्ट्वा तदस्त्रमत्युग्रं प्रोचुरेवं परस्परम् ॥	५५
संहारसमयः प्राप्तो विस्मयः क्रियतेऽत्र किम् ? ।	
नारायणेन भूतानां आदिभूतेन शार्ङ्गिणा ॥	५६
संहारः क्रियते नूनं लोकानामद्य विष्णुना ।	
विष्वक्सेनेन सर्वात्मा जगत्संहारमीश्वरः ॥	५७
करोति नूनं भगवान् संहारकुतुकी हरिः ।	
किमयं क्रियते तेन व्यापारः परमेष्ठिना ॥	५८



श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकचत्वारिंशोऽध्यायः ५४५

अकाले जातमस्माकं निष्फलं दर्शनं विभोः ।  
एवंविधान्यनेकानि वाक्यानि त्रिदशालयाः ॥ ५९  
वदन्तो भृशमुद्विग्ना जम्मुस्ते सर्वतो दिशम् ।  
अथ देवः स भगवन् विष्वक्सेनस्तदा नृप ! ॥ ६०  
नारायणीयमस्त्रं तत् मुमोचादित्यसन्निभम् ।  
मुक्तं तदस्त्रमत्युग्रं सर्वसंहारकारणम् ॥ ६१  
अदहद्वाहिनीं तां तु दैत्येन्द्राणां दुरात्मनाम् ।  
देवजित्प्रमुखैः सार्धं वृत्रकल्पैर्महाबलैः ॥ ६२  
सा तु सेना प्रजज्वाल दह्यमानास्त्रपावकैः ।  
शम्भुना दह्यमानानि त्रिपुराणि यथा पुरा ॥ ६३  
अस्त्राग्निदग्धदेहास्ते साध्वाः सरथकुञ्जराः ।  
देवजित्प्रमुखाः सर्वे सानुगाःसहवान्धवाः ।  
निपेतुर्धरणीपृष्ठे दग्धपक्षा इव द्विजाः ॥ ६४  
गतासवस्ते न्यपतन् सहस्रशो  
नरेन्द्र भूमौ दितिजेश्वरात्मजाः ।  
प्रच्छादयन्तः सकलां महीमिमां  
प्रदग्धकेशाम्बरभूषणोत्तमाः ॥ ६५  
सा चोग्रवेगा दितिजेश्वराणां  
सेनाऽतिभीमा समरेष्वजेया ।  
अस्त्राग्निदग्धा न च भूतसङ्घैः  
अदृश्यताऽकाशगतैर्न देवैः ॥ ६६  
देवादिऋतविजयोपचारस्तुत्यादिः  
ततस्तु देवाश्च निशाचराश्च गन्धर्वयक्षोरगपन्नगाश्च ।  
महर्षयश्चाप्रतिमप्रभावा निपातितांस्तानवलोक्य दैत्यान् ॥ ६७

अपूजयंस्ते समुपेत्य सर्वे  
 देवं महावीर्यमुपस्थितं तम् ।  
 प्रणम्य देवाधिपतेरमात्यं  
 शिरोभिस्तुल्यविलोललोचनैः ॥ ६८  
 तमूचुरेनं वचनैर्नरेन्द्र !  
 सर्वे सुराद्याः परमं प्रहृष्टाः ।

समं ततस्तं परिवार्य देवं  
 गृहीतचापं निहतन्द्रशत्रुम् ॥ ६९

इन्द्रादयः— कृतं त्वयैतद्भगवन् ! सुराणां  
 सुदुष्करं कर्म तवानुरूपम् ।  
 अन्येन नैते समरे निहन्तुं शक्या  
 विना त्वां समुदप्रवीर्यम् ॥ ७०

तैरेवमुक्तः सहसा महात्मा  
 सम्पूजितस्तान् प्रतिपूज्य सर्वान् ।  
 अन्तर्दधे सानुचरः सबाहनः  
 तत्रैव तेषामथ पश्यतां तथा ॥ ७१

मया नृपेन्द्राखिलमेतदुक्तं  
 तवाद्भुतं देवजिदादिनाशनम् ।  
 एवंविधं नैव पुरा प्रवृत्तं  
 ऋते दशग्रीववधात् सुधोरात् ॥ ७२

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 विष्वक्सेनकृतदेवजिदादिवधवर्णनं नाम  
 एकचत्वारिंशोऽध्यायः ।



अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः

भविष्यच्छ्रीभगवद्विष्णुविमानवर्णनम्

श्रीभगवतः—

‘एवं दैत्यवधं देवो विष्वक्सेनस्तु वीर्यवान् ।	
चक्रे पुरा महीपाल ! देवदेवाज्ञया बली ।	१
एतन्मया समाख्यातं पुरावृत्तमनुत्तमम् ।	
इतिहासं महापुण्यं सर्वलोकेषु विश्रुतम् ॥	२
वेङ्कटाख्ये गिरौ तस्मिन् अत्यर्थं तेन धीमता ।	
अगस्त्येन मुनीन्द्राणां भविष्यत्कथितं नृप ! ॥	३
आगामिनि युगे चापि सम्प्राप्ते तु कलौ युगे ।	
अदृश्यत्वाद्विमानस्य नित्यस्यामिततेजसः ॥	४
तस्या एव शुभे तीरे पुष्करिण्या महाद्भुतम् ।	
अतुलं कारितं भक्तैः विमानं सूर्यसन्निभम् ॥	५
भविष्यतीति तस्यापि माहात्म्यं कथये तव ।	
तच्चापि महदाश्चर्यं विमानं सुरपूजितम् ॥	६
शोभितं देवदेवेन भविष्यति न संशयः ।	
बहुवर्षशतैः राजन् ! न च शक्यं सुरैरपि ॥	७
वक्तुं तस्य विमानस्य माहात्म्यं विस्तरेण तु ।	
यत्र देवाधिदेवोऽसौ सान्निध्यं कुरुते हरिः ॥	८
स्वभक्तानां हितार्थाय त्रैलोक्यानुग्रहाय च ।	
शोभितं देवदेवेन श्रीभूमिसहितेन तत् ॥	९
विमानं मनुजैः राजन् ! यैर्दृष्टं पापनाशनम् ।	
विष्णोस्तस्य प्रसादेन ते नरा ध्वस्तबन्धनाः ॥	१०

प्राप्नुवन्ति परं धाम ब्रह्म यत्तत्सनातनम् ।	
तत्रापि तु युगे राजन्! तद्विमानदिदक्षवः ॥	११
देवाः सर्वेऽपि गच्छन्ति सिद्धाश्च सहचारणैः ।	
ऋषयश्च सगन्धर्वा यक्षाश्च सहपन्नगैः ॥	१२
आदित्या वसवो रुद्रा दिक्पाला मरुतस्तथा ।	
ब्रह्मा चतुर्मुखो देवो भगवाञ्छम्भुरेव च ॥	१३
एवमाद्यास्तथाऽन्ये च भक्त्या परमया युताः ।	
उपतिष्ठन्ति तं देवं देवदेवेशमीश्वरम् ॥	१४
स्नात्वा च मनुजास्तस्मिन् स्वामिपुष्करिणीजले ।	
प्रणम्य देवदेवेशं नारायणमनामयम् ॥	१५
तस्मिन् विमाने गोविन्दं वसन्तं पुरुषोत्तमम् ।	
स्तुवन्ति दिव्यैः स्तोत्रैश्च नमन्तश्चाप्यहर्निशम् ॥	१६
सर्वे पातकिनश्चापि तद्दृष्ट्वा पुण्यमुत्तमम् ।	
विमानं सर्वशोकघ्नं सर्वरोगप्रणाशनम् ॥	१७
विमुक्ताः सर्वपापेभ्यो भविष्यन्ति न संशयः ।	
यत्र कापि वसन् देशे विमानाभिमुखं नरः ॥	१८
वेङ्कटाद्रिं नमस्कृत्य सद्यः पापैर्विमुच्यते ।	
मङ्ग्लेण मयाऽप्येतन्माहात्म्यं कथितं तव ॥	१९
तस्य पुण्यस्य भूपाल! विमानस्य महीयसः ।	
अतः परं तु खेहेन स्वयमेव वदाम्यहम् ॥	२०
त्वया न पृष्टं राजेन्द्र! गुह्याद् गुह्यतरं महत् ।	
अत्यद्भुतमिदं भूप! शृणुष्व गदतो मम ॥	२१
नारायणगिरौ तस्मिन् आस्ते नारायणः स्वयम् ।	
गुहासु चापि सर्वासु सर्वेषु शिखरेषु च ॥	२२

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ५४९

कन्दरेषु च सर्वेषु निर्झरेषु शुभेषु च । भगवान् देवदेवेशः सर्वस्मिन् गिरिमूर्धनि ॥	२३
नानाविधानि रूपाणि विभ्रद्विहरति स्वयम् । कचिच्च देवरूपेण कचिन्मानुषरूपतः ॥	२४
कचिच्च मृगरूपेण कचिद्वृक्षादिरूपतः । यत्र कुलचिदासीनः तस्मिन् दिव्ये महागिरौ ॥	२५
देवदेवं समाराध्य य उपास्ते जनार्दनम् । करोति तस्य सान्निध्यं भगवानादिकृद्धरिः ॥	२६
वृषभाचलभूभागे घटिकामपि यो वसेत् । सप्तजन्मकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥	२७
ये तत्र कुर्वते पापं अज्ञानाद्वेङ्कटाचले । हन्युस्तान् सर्व एवैते गन्धर्वाः शस्त्रपाणयः ॥	२८
आज्ञया तस्य देवस्य विष्वक्सेनस्य धीमतः । तस्माच्च कुर्यात्पापन्तु नरस्तस्मिन् महीधरे ॥	२९
न हि तत्र गिरौ कश्चिद् वृक्षः पक्षी मृगोऽथ वा । प्राकृतो जायते देवाः सर्वे तद्रूपिणस्तथा ॥	३०
तस्य देवस्य सेवार्थं सान्निध्यं कुर्वते सदा । एवं प्राह पुराऽगस्त्यो भगवान् मुनिसत्तमाः ॥	३१
मया पृष्ठः समाचख्यौ गन्धमादनपर्वते । नारायणगिरेस्तस्य माहात्म्यं परमाद्भुतम् ॥	३२
विस्तरेण समाख्यातं मयाऽपि तव भूपते ! । अन्यच्चापि समाख्यास्ये त्वयाऽपृष्टं नराधिप ! ॥	३३

तस्मिन्नद्रौ तु यत्पुण्यं दानानि ददतां नृप ! ।  
 इत्युक्तो जनकस्तेन पप्रच्छाऽथ मुनिं पुनः ॥ ३४  
 इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 भविष्यद्विमानवर्णनं नाम  
 द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः

स्वामिपुष्करिणीतीरकृतान्नदानादिप्रशंसा

जनकः —

‘श्रुतमेतन्मयाऽऽख्यानं वामदेव ! त्वयोदितम् ।  
 सर्वज्ञं परमं ब्रह्म जानीमो मुनिसत्तम ! ॥ १  
 क्षेत्रखण्डे त्वया सर्वाण्युक्तानि तपतां वर ! ।  
 क्षेत्राणि यानि पुण्यानि तीर्थानि विमलानि च ॥ २  
 तेषु तेषु च दानानि प्रशस्तानि त्वया मुने ! ।  
 नारायणगिरावस्मिन् कृत्वा दानमनुत्तमम् ॥ ३  
 यत्फलं प्राप्नुयाद्देही पापराशिं विधूय वै ।  
 तद्वदस्व मुनिश्रेष्ठ ! श्रोतुं कौतूहलं हि मे ’ ॥ ४

शतानन्दः —

इति पृष्टस्तदा तेन जनकेन महात्मना ।  
 यत्पुण्यं ददतां तत्र दानानाञ्च यथाफलम् ॥ ५  
 तत्सर्वं मुनिशार्दूलो वक्तुं समुपचक्रमे ।

वामदेवः —

‘शृणुष्ववहितो राजन् ! यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ॥ ६  
 नारायणगिरावस्मिन् स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
 अन्नदानं प्रशस्तं हि दानानां दानमुत्तमम् ॥ ७

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ५५१

नित्यमस्मिन्निवृत्तां अन्नपानादिकन्तु यः ।	
प्रयच्छेत् स इहैवाशु सर्वरोगैर्विमुच्यते ॥	८
भूमेर्गोश्च हिरण्यस्य वस्त्रगन्धादिकस्य च ।	
कन्यायाश्च चरेद्दानं तिलानामपि यो नरः ॥	९
प्रेत्य सोऽनुत्तमैल्लोकान् प्राप्नुयात् पुण्यकर्मणाम् ।	
तेषां वसति लोकेषु यावत्कल्पमरिन्दम ! ॥	१०
ततो भक्तिं परां प्राप्य विष्णुलोके महीयते ।	
निष्कामो यो ददात्यन्नं स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	११
स पुष्करः प्रशस्तात्मा विष्णुभक्तिं प्रयास्यति ।	
तद्भक्तभावमापन्नः कालेनाल्पेन भूपते ! ॥	१२
प्राप्य योगं मुनिप्रोक्तं परमां गतिमाप्नुयात् ।	
स्वामिपुष्करिणीं प्राप्य स्नात्वा पीत्वा च तज्जलम् ॥	१३
विधूय सर्वपापेभ्यो विष्णुलोके महीयते ।	
यावच्छक्त्यनुसारं वै सुवर्णं गामथापि वा ॥	१४
वस्त्राणि वसुधां वापि तिलान् गन्धाननुत्तमान् ।	
यो ददाति स दीर्घायुः आरोग्यञ्चापि विन्दति ॥	१५
प्राप्नुयात्सर्वकामांश्च मोगान् भुङ्क्ते च पुष्कलान् ।	
मुक्तश्च सर्वपापेभ्यः प्राप्नुयात् परमां गतिम् ॥	१६

वामदेवं प्रति ब्रह्मोपदिष्टस्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम्

शृणु चास्मिन् पुरावृत्तं आख्यानं पर्वतोत्तमे ।	
यथा मे कथितं पूर्वं ब्रह्मणा परमेष्ठिना ॥	१७
पूर्वं भूमिधरेन्द्रेऽस्मिन् ब्रह्माणं कमलासनम् ।	
उपासीनः समस्तसीनो पर्वणामधिकं शतम् ॥	१८

अहं तीव्रं तपोऽकार्षं ब्रह्माणं प्रति भूमिप ! ।	
कालेन महता तात ! भगवान् कमलासनः ॥	१९
आविर्बभूव पुरतः तपसा तोषितो मया ।	
स्वयमेव चतुर्वक्त्रो मां प्रबोध्य जनाधिप ! ॥	२०
मेघगम्भीरया वाचा प्रसन्नो वाक्यमब्रवीत् ।	
“परितुष्टोऽस्मि ते ब्रह्मन् ! वामदेव द्विजोत्तम ! ॥	२१
यदिच्छसीह तद्दातुं वरदोऽहमिहागतः ।	
वरं वरय मद्रं ते यदिच्छसि महामुने ! ” ॥	२२
इत्युक्तो ब्रह्मणा तेन प्रसन्नेन महात्मना ।	
अहमेवं नृपश्रेष्ठ ! वृणे वरमनुत्तमम् ॥	२३
स्वामिपुष्करिणी येयं अत्रास्ते पर्वतोत्तमे ।	
तस्या एव तु महात्म्यं ज्ञातुमिच्छामि तत्त्वतः ॥	२४
महात्म्यञ्च फलञ्चापि दर्शने स्नानपानयोः ।	
अस्यास्तीरे च दानानां यत्फलं तद्वदस्व मे ॥	२५
ब्रह्मोवाच— ‘अस्यास्तीरे पुरा ब्रह्मन् ! चन्द्रः क्षीरोदसंभवः ।	
सौवर्णं भूषणं दत्त्वा लावण्यं परमं ययौ ॥	२६
कन्यां दत्त्वा पुरा ब्रह्मन् ! कामः कामत्वमाप्तवान् ।	
धनदोऽपि धनेशत्वं स्वर्णदानादवाप्तवान् ॥	२७
इन्द्रः षोडशदानानि स्वामिपुष्करिणीतटे ।	
कृत्वा बल्यदीनसुरान् दुर्जयानजयत् पुरा ॥	२८
अस्मिन् गिरौ पुरा कश्चित् आगत्य ब्राह्मणोत्तमः ।	
जिज्ञासुः काव्यविज्ञाम् ब्रह्मज्ञानस्य मानद ! ॥	२९
स्वयमाहूय दिप्रेन्द्रं ब्रह्मज्ञानमनुत्तमम् ।	
ददत् परमधर्मात्मा वाचस्पतिरभून्मुने ॥	३०



श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ५५३

धरण्यां नित्यसन्निध्यं वेङ्कटाद्रौ विशेषतः ।  
तस्मात्तत्रैव कार्याणि महादानानि पार्थिवैः ॥ ३१  
यत्किञ्चिच्च मुने ! तस्मिन् स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
दद्यादनुत्तमालोकान् आमुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥ ३२

**ब्रह्मकारितश्रीवेङ्कटाचलाधीशमहोत्सवप्रशंसा**

मासि भाद्रपदे पुण्ये शुक्लपक्षे तु चैत्रमे ।  
स्वामिपुष्करिणीतीरे देवस्य परमात्मनः ॥ ३३  
उत्सवः कारितः पूर्वं मयैव प्रीतये हरेः ।  
तत्र तत्र युगे चास्य विष्णोः स्वामिसरस्तटे ॥ ३४  
उत्सवान् कारयिष्यन्ति नराः पुण्यकृतोऽमलाः ।  
किञ्चिदाराधनेनैव विष्णुर्भाद्रपदोत्सवे ॥ ३५  
ददाति सर्वलोकानां वरानत्यन्तदुर्लभान् ।  
उत्सवेषु च देवस्य नारायणगिरिं प्रति ।  
गच्छन्ति ये नराः पुण्यास्तेषामपि फलं शृणु ॥ ३६  
यानि त्वादधते पदानि च मुने ! नारायणाद्रिं प्रति  
स्तोकं स्तोकमपि द्विजा अपि जनास्तेषां फलं यच्छृणु ।  
यावद्वेङ्कटशैलमात्मगृहतस्तावत्पदानां क्रमात्  
प्रायश्चैव पदेपदे क्रतुफलं भूयाद्भुवि प्राणिनाम् ॥ ३७

**महोत्सवसेवार्थमागतजनाराधकपुण्यफलवर्णनम्**

ये सेवार्थमुपागतान् वृषगिरौ देवस्य दिव्योत्सवे  
यावच्छतशुपलालयन्ति भगवांस्तेषामभीष्टप्रदः ।  
यस्तेषामुपकारमीषदपि वा कुर्यान्न लोभादिना  
तस्याकल्पमवस्थितिः शृणु मुने ! घोरे महारौरवे ॥ ३८

यः स्वामिसरसस्तीरे पुष्पोद्यानानि करयेत् ।  
 नन्दनोपवने तस्य यावत्कल्पमवस्थितिः ॥ ३९  
 विमनेन बहूक्तेन यः स्वामिसरसस्तटे ।  
 यत्किञ्चित्कुरुते पुण्यं तस्यान्तो नैव विद्यते ' ॥ ४०

वामदेवः —

इत्युक्त्वा भगवान् ब्रह्मा लोककलोकपूजितः ।  
 अन्तर्दधे तदा तस्मात् श्रुतमेतन्मया पुरा ' ॥ ४१

शतानन्दः —

इतीरितं तन्मुनिना समस्तं  
 श्रुत्वा महौजा जनको महात्मा ।  
 प्रफुल्लनेत्रः पुलकाञ्चिताङ्गो  
 नारायणाद्रिं प्रययौ प्रहृष्टः ॥ ४२  
 समाप्य यज्ञं जनको महात्मा  
 धुरं धरिः सचिवे नियोज्य ।  
 द्रष्टुं परं ब्रह्म वृषाद्रिमूर्ध्नि  
 स्वयं ययौ मैथिलराजराजः ॥ ४३

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 श्रीस्वामिपुष्करणीतीरकृतदानफलवर्णनं नाम  
 त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ।



श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ५५५

अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

—: ❁ :—

स्वामिपुष्करिणीं प्रति सार्धत्तिकोटितीर्थागमनकालनिर्णयः

व्यासः—

श्रुत्वैतदथ माहात्म्यं स्वामिपुष्करिणीं प्रति ।  
जनकस्तु शतानन्दं पप्रच्छेदं मुदाऽन्वितः ॥ १

जनकः—

‘लोकेषु सर्वतीर्थानि कथमायान्ति तज्जले ।  
किमर्थं वा तदेतन्मे कथयस्व महामुने !’ ॥ २

शतानन्दः—

पुरा भागीरथीतीरे मार्कण्डेयो महामुनिः ।  
तपः परममास्थाय स तेपे परमं तपः ॥ ३  
ध्यायन् विश्वस्य जगतः स्रष्टारं भुवनेश्वरम् ।  
ततः कालेन महता ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ ४  
सान्निध्यमकरोत्प्रीत्या मार्कण्डेयस्य धीमतः ।  
वचनं व्याजहारेदं मार्कण्डेयं पितामहः ॥ ५  
‘वरं वरय दास्यामि यमिच्छसि महामुने !’ ।

मार्कण्डेयः—

‘वरं देहि मम ब्रह्मन् ! याचे श्रद्धासमन्वितः ॥ ६  
त्रैलोक्ये यानि पुण्यानि सन्ति तीर्थानि वै प्रभो ! ।  
तेषु सर्वेषु तीर्थेषु यात्रायां शक्तिरस्त्विति ’ ॥ ७  
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा भगवांश्चतुराननः ।  
प्रहसन् व्याजहारेदं मार्कण्डेयं तपस्विनम् ॥ ८

ब्रह्मोदाच—	‘लोके सर्वेषु तीर्थेषु स्नानं वर्षशतैरपि ।	
	कर्तुं न शक्यते ब्रह्मन् ! न मया न च शम्भुना ॥	९
	अन्यं वक्ष्यामि ते ब्रह्मन् ! उपायं मुनिसत्तम ! ।	
	इतो दक्षिणदिग्भागे मुने ! द्विशतयोजने ॥	१०
	अस्ति श्रीवेङ्कटो नाम प्रथितः पर्वतोत्तमः ।	
	द्रविडेषु महापुण्यः सेवितस्त्रिदशैर्गिरिः ॥	११
	तस्य शृङ्गे सुमहति पुण्या पापविनाशिनी ।	
	“स्वामिपुष्करिणी ” नाम सरसी सर्वकामदा ॥	१२
	त्रैलोक्यवर्तिनां ब्रह्मन् ! तीर्थानां स्वामिनी हि सा ।	
	मासे तु मार्गशीर्षस्ये द्वादश्यां पूर्वपक्षके ॥	१३
	अरुणोदयवेलायां त्रिषु लोकेषु विश्रुताः ।	
	तिस्रः कोट्योऽर्धकोटीश्च तीर्थानां सुमहामते ! ॥	१४
	सान्निध्यं तत्र कुर्वन्ति स्वामिपुष्करिणीजले ।	
	पापं स्वेषु विनिर्मुक्तं लोकैरघसमन्वितैः ॥	१५
	निर्हरन्तीह तीर्थानि तस्यास्तीर्थसमन्वयात् ।	
	मार्कण्डेय ! महाभाग ! भुवनत्रयवासिनाम् ॥	१६
	तीर्थानां तत्र गत्वा त्वं सेवाफलमवाप्नुहि ।	
	स्वामिपुष्करिणीत्येतत् नामधेयञ्च तत्कृतम् ॥	१७
	मार्कण्डेय ! समस्तानां तीर्थानां स्वामिनी यतः ।	
	अन्यच्च तव वक्ष्यामि रहस्यं धर्मगोचरम् ॥	१८
	यज्ज्ञात्वा मुनिशार्दूल ! ज्ञातव्यं नावशिष्यते	
	गङ्गादिपुण्यतीर्थानि यावन्तीह महीतले ॥	१९
	यानि वा मेरुशृङ्गाग्रे कैलासे मन्दरोपरि ।	
	पाताले सिन्धुतीरेषु तथा द्वीपान्तरेष्वपि ॥	२०

तेषु तेषु च दानानां व्रतानां जपहोमयोः ।	
श्रुतिस्मृतिपुराणेषु विविधं श्रूयते फलम् ॥	२१
तत्सर्वं युगपत्प्राप्तं य इच्छेन्मुनिसत्तम ! ।	
समार्गशीर्षद्वादश्यां शुक्लायां नियतात्मकः ॥	२२
वेङ्कटाद्रौ महापुण्ये स्वामिपुष्करिणीतटे ।	
कुर्यादेकतमं दानं विप्राय श्रुतशालिने ॥	२३
विष्णुभक्ताय शान्ताय दरिद्रायाऽनसूयवे ।	
तेन सर्वेषु तीर्थेषु तद्वत् नात्र संशयः ॥	२४
यानि षोडश दानानि महान्त्याहुर्मुनीश्वराः ।	
तेषामेकं तु यः कुर्यात् स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	२५
मार्गशीर्षे सिते पक्षे द्वादश्यां विजितेन्द्रियः ।	
तेन षोडश दानानि तीर्थेषु सकलेष्वपि ।	
मार्कण्डेय ! कृतानि स्युः युगपत्तत् महाद्भुतम् ॥	२६
“ धनुर्मासे सिते पक्षे द्वादश्यामरुणोदये ।	
आयान्ति सर्वतीर्थानि स्वामिपुष्करिणीजले ” ॥	२७
इमं मंत्रं समुच्चार्य स्नातस्तत्फलमाप्नुयात् ।	
एतद् गुह्यं पुरा विष्णुः प्रोवाच भगवान् मम ’ ॥	२८

शतानन्दः—

इत्युक्तुऽन्तर्दधे ब्रह्मा मार्कण्डेयस्य पश्यतः ।	
मार्कण्डेयस्तु नृपते ! विस्मयाविष्टमानसः ॥	२९
नारायणगिरिं प्रायात् तथैव प्रीतमानसः ।	
गत्वा तस्मिन्गिरौ पुण्ये स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ॥	३०
दृष्ट्वा स्नात्वाऽथ तस्या वै विपुले विमले जले ।	
तस्यास्तीरे महीपाल ! भगवन्तं जनार्दनम् ॥	३१

समभ्यर्च्य हृषीकेशं प्रसन्नेनान्तरात्मना ।  
 वत्सराणां त्वयं राजन्! उवास स महीधरे ॥ ३२  
 प्रतिवर्षञ्च तीर्थानामागमं प्रेक्ष्य तत्तिथौ ।  
 मार्कण्डेयो महीपाल! प्रसादात् शार्ङ्गधन्वनः ।  
 अवाप परमानन्दं अनन्तं शाश्वतं मुनिः ॥ ३३

वामदेवः—

‘य इदं श्रावयेन्नित्यं स्वामितीर्थस्य वैभवम् ।  
 शृणोति परया भक्त्या द्वादश्यां मार्गशीर्षके ॥ ३४  
 तस्य प्रसन्नो भगवान् सर्वमिष्टं प्रयच्छति ।  
 एकादश्यामुपोष्यास्मिन् पर्वते वेङ्कटाह्वये ॥ ३५  
 द्वादश्यां मार्गशीर्षे तु पूर्वपक्षे च ये नराः ।  
 स्नानं कृत्वा यथान्यायं स्वामितीर्थे समागताः ॥ ३६  
 प्रणमन्ति जगन्नाथं तत्तीरतलवासिनम् ।  
 ते नरास्तत्प्रसादेन पापराशिं विधूय वै ।  
 तत्प्रयान्ति परं धाम शाश्वतं ब्रह्मसंज्ञितम् ॥ ३७

स्वामिपुष्करिणीतीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलं प्रति जनकनृपागमनम्

शास्त्राणां परमो वेदो देवानां परमो हरिः ।  
 तीर्थानां परमं तीर्थं स्वामिपुष्करिणी नृप! ॥ ३८  
 तस्मात्त्वमपि राजेन्द्र! गत्वा नारायणचलम् ।  
 स्वामिपुष्करिणीतोये स्नात्वा नियतमानसः ॥ ३९  
 तत्तीरवासिनं देवं शरण्यं सर्वदेहिनाम् ।  
 नारायणं समाराध्य सर्वान् कामानवाप्स्यसि’ ॥ ४०

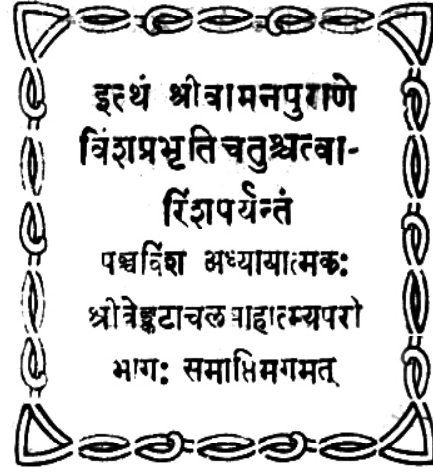
श्रीवेदव्यासः —

एतच्छ्रुत्वा तु जनकः शतानन्दोदितं तदा ।  
 प्रहर्षमतुलं लब्ध्वा मन्त्रिभिः सहितो नृपः ॥ ४१  
 गत्वा वृषाचलं तीव्रं स्वामिपुष्करिणीजले ।  
 स्नात्वा दृष्ट्वाऽथ देवेशं श्रीभूमिसहितं ततः ॥ ४२  
 तत्र स्थित्वा चिरं कालं सर्वान् कामानवाप्य च ।  
 आगत्य मिथिलां राजा शशास पृथिवीमिमाम् ॥ ४३

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये स्वामिपुष्करिणीं  
 प्रति सार्धत्रिकोटितीर्थागमन - तत्कालकृतदानफलादिवर्णनं नाम  
 चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

इत्थं श्रीवामनपुराणे विंशप्रभृतिचतुश्चत्वारिंशपर्यन्तं पञ्चविंश-  
 अध्यायात्मकः श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्य परोभागः  
 समाप्तिमगमत् ।

श्रीवेङ्कटाद्रिनिलयः कमलकामुकः पुमान् ।  
 अभङ्गुरविभूतिर्नः तरङ्गयतु मङ्गलम् ॥



इत्थं श्रीवामनपुराणे  
विंशप्रभृतिचतुश्चत्वा-  
रिंशपर्यन्तं  
पञ्चविंश अध्यायात्मकः  
श्रीवेङ्कटाचलवाहात्म्यपरो  
भागः समाप्तिमगमत्



ॐ श्री वेङ्कटेशतापिन्युपनिषत् प्रारभ्यते ॥

तत्र पूर्वतापिनी

शान्तिमन्त्रः

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिः व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

हरिः ॐ ॥

१. प्रथमः प्रपाठकः

जनको ह वै नाम राजा वैदेहो राज्ये अमात्यादीन् भ्रातृंश्च निधापयित्वेदं  
मशाश्वतं मन्यमानः शरीरं वैराग्यं मुपेतोऽरण्यं निर्जगाम। स तत्र परमं  
तप आस्थायादित्य मुदीक्षमाण ऊर्ध्वबाहु स्तिष्ठत्यंते सहस्रस्य मुनिरन्तिक  
माजगामाग्निं रिवाऽधूमकं स्तेजसा निर्दहन्निवा। सदा तेषां सम्मत आत्मवि  
च्छाकायन्योऽब्रवी दुत्तिष्ठोत्तिष्ठ वरं वृणीष्वेति राजानम्। स तस्मै  
नमस्कृत्योवाच भगवन्नहं मात्मवित्तं तत्त्वविच्छृणुमो वयं त्वत्तः  
स्वात्मवेदनसाधनं प्रत्यक्षं प्रत्यक्षसिद्धिदमित्युदाहृतद्वत्तं पुरस्तादशक्यं कथं  
पृच्छस्येतत्प्रश्नं वैदेहान्या न्कामा न्वृणीष्वेति॥ शाकायन्यस्य तदनु शिरसाऽस्य  
चरणा वभिमृश्यमानो राजेमां गाथां जगाद॥

इत्याथर्वणे मन्त्ररहस्ये श्रीवेङ्कटेश पूर्वतापिन्युपनिषदि प्रथमः प्रपाठकः॥१॥

## २. द्वितीयः प्रपाठकः

भगवन्नस्थि चर्म स्नायु रोम नाडी मांस मेदो मज्जा शुक्र शोणित श्लेष्माऽसृक् पूरिते विष्णून् वात पित्त संघाते दुर्गन्धे निस्सारेऽस्मि ज्वरीरे किं कामोपभोगैः? ॥१॥ काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्य विषदष्ट वियोगानिष्ट सम्प्रयोग क्षुत्पिपासा जरा मृत्यु रोग शोकाद्यै रभिभूतेऽस्मि ज्वरीरे किं कामोपभोगैः? ॥२॥ सर्वं चेदं क्षयिष्णु पश्यामो यथेमे दंश मशकादय स्तृणवनस्था उभये प्रध्वंसिनः॥३॥ अथ किमेतैर्वा परे महाधनुर्धरा श्वक्रवर्तिनःकेचित् प्रद्युम्न द्युतिद्युम्न (भूतिद्युम्न) इन्द्र द्युम्नाः कुवल यौवनाश्च व्याघ्राश्चाश्वपति शशिविन्दु हरिश्चन्द्राम्बरीषाः अथोऽनुन्मत्ताः स्वर्याति यया त्यनर ण्योग्रसेनादयो मरु द्धरत प्रभृतयो राजानो मिषन्तो बन्धुवर्ग महतीं श्रियं त्यक्त्वा अस्मा ल्लोका दमुं प्रयाता इति ॥४॥

अथ किमेतैर्वा परैः अन्यै र्गन्धर्वाऽप्सरो यक्ष राक्षस भूतगण पिशाचोरग ग्रहादीनां निरोधनं पश्यामः ॥५॥ अथ किमेतैर्वा शोषणं महार्णवानां, शिखरिणां प्रपतनं, ध्रुवस्य चलितं, पातः कल्पकपादपानां, निमज्जनं पृथिव्याः, स्थाना दपसरणं सुराणा मित्येतद्विधेऽस्मि न्संसारे किं कामोपभोगैः? ॥६॥ अर्थे ष्वेवासक्त स्यासकृ दुपावर्तनं दृश्यत इत्युद्धर्तुं मर्हसि अन्धोदपानस्थ भेक इवाह मस्मि न्संसारे भगवं स्त्वं नो गति स्त्वं नो गतिः (७)

अथ जन्म जरा मरण दुःख प्रधानेऽस्मिन्त्संसारे भगव द्भक्तियोगं विना नान्य त्परायण मित्यतो वेंकटेशस्य सर्वसुलभस्य सर्व प्रत्यक्षानितर लभ्यस्यास्य संकल्पवशा ज्ञातप्रपञ्चे यत्सारभूतं तदेव ते प्रदर्शयिष्ये वैदेह! शृणुष्वैत द्भागवतेनैव चेत्यस्येति ॥८॥

इत्याथर्वणे मन्त्ररहस्ये श्री वेङ्कटेश पूर्वतापिन्युपनिषदि द्वितीयः प्रपाठकः ॥२॥

### ३. तृतीयः प्रपाठकः

अथ भगवा उष्ठाकायन्य स्त्वब्रवी द्राजन्! जनक! वैदेह!  
मैथिलवंशध्वजशीर्ष! आत्मज्ञः कृतकृत्यस्त्वं राजर्षे! ब्रह्मविच्छ्रेष्ठ इति विश्रुतो  
भवसीत्ययं वा खलु पंथानो भगवान् पुरा समुपदिदेश। अथ वै तेऽहं  
तद्वक्ष्या म्येतत्सर्वं विदितं भवति ॥१॥

अथ य एषोऽत्यवष्टंभेने त्यूर्ध्वं मुक्क्रांतो व्यधमानो व्यधनप्रीत स्तस्य  
तमः प्रणुद त्येष आत्मे त्याह भगवान् ॥२॥ अथ य एष संप्रेत्यास्मा  
च्छरीरा त्समुत्थाय परं ज्योति रुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यत एष  
आत्मेति हो वा चैत दमृत मभय मेत त्परायण मेत द्रह्मेति ॥३॥

अथ खल्वियं ब्रह्मविद्या सर्वा सर्वोपनिषद्विद्या राजन्नस्माकं भगवता  
मैत्रेयेण व्याख्याताऽहं ते कथयिष्यामि। तद्यथाऽपहतपाप्मान स्तिग्मतेजस  
ऊर्ध्वरितसो वालखिल्या वैखानसाश्चेति श्रूयंते। अथ ते प्रजापति मब्रुव  
उच्छकट मिवाचेतन मिदं शरीरं तस्यैष खल्वीदृशो महिमाऽतीन्द्रियेण येन  
तद्विधमेत द्येतनव त्प्रतिष्ठापितम्। प्रचोदयिता वैषोऽस्य को भगव न्निद  
मस्माक मादौ ब्रूहीति। स तानुवाच ॥४॥

एतत्खलु वा व सर्ववरिष्ठः श्रूयते उत्तमपुरुषः॥ स एष शुद्धः पूतः  
शान्तोऽप्राणोऽनिशमात्मा नो ज्ञेयः शाश्वतश्च स्थिर ईशः स्वतंत्रः स्वमहिम्नि  
तिष्ठति। अनेनेदं शरीरं चेतनव त्प्रतिष्ठापितं प्रचोदयिता वैषोऽस्येति  
तदधीनोऽयमात्मा पराधीन चेतनोऽनादि कर्मबद्धः पुरुषसंज्ञो बुद्धिपूर्व  
मिहैवावर्ततेऽंशेन सुप्तस्येव बुद्धिपूर्वं विबोधयत्यग्रे। यो ह खलु वा  
वांशांशितामात्रः प्रतिपुरुषं क्षेत्रज्ञः संकल्पाध्यवसायाभिमानलिंगः प्रजापति

५६४

र्विश्वोऽक्षर स्तेन चेतनेनेदं शरीरं चेतनव त्रतिष्ठापितं प्रचोदयिता  
वैषोऽस्येति॥५॥

ते होचु भर्गव त्रीदशस्य कथ मंशीभूत स्यान्तरूप स्यात्मनः पराधीन  
चैतन्यत्वेन, तस्य तु स्वाधीन चैतन्यत्वेन च वर्तनमिति ॥६॥ प्रजापतिर्वा  
एकोऽग्रे तिष्ठन्त्स नारभतैकः स आत्मान मभिध्यायन् बह्वीः प्रजा असृजत।  
अस्मै वा प्रबुद्ध अप्राणः स्थाणुरिव तिष्ठमाना अपश्यन्त्स आरभता न्यथैतासां  
प्रतिबोधनायाऽभ्यन्तरं विशामीति। स चतुर्भुजः करवरदरारिपो वेङ्कटेश  
चित्प्रभारूपो दहर वैकुण्ठ रथ भूतसंघः स्वस्थः स्वतन्त्रः पुनः स वायु  
मिवात्मानं कृत्वाभ्यन्तरं प्राविशत्स एको नाशकत्स पञ्चधाऽऽत्मानं  
प्रविभज्योद्यतो यः प्राणोऽपान स्समानो व्यान उदान एवैताः शिरा अनुव्याप्ता  
एष वा व स व्यानः ॥७॥

अथोपांशु रन्तर्या म्यभिभव त्यन्तर्यामी उपांशु मनयो रन्तराले चौष्ण्यं  
प्राप्ताव द्यथौष्ण्यं पुरुषोदयः पुरुषस्सोऽग्नि र्वैश्वानरोऽसौ।  
अन्यत्राप्युक्तमयमग्नि र्वैश्वानरो योऽयमंतः पुरुषो येनेद मन्नं पच्यते  
यदिद मद्यते तस्यैष घोषो भवति। यदेत त्कर्णौ च पिधाय शृणोति च  
यदाक्रमिष्यन् भवति नैनं घोषं तं शृणोति। स एष पञ्चधाऽऽत्मानं विभज्य  
निहितो गुहायां मनोमयोऽशरीरो भारूपः सत्यसंकल्प आत्मा दिव्यशरीरः  
श्रीवेङ्कटेश इति ॥८॥

स वा एषोऽस्य हृदन्तरे तिष्ठन्नकृतार्थो मन्यते यत्त्वोदन मश्नाती  
त्यथेमानि भित्त्वौदिनः पञ्चभी रश्मिभिर्विषया नत्तीति। बुद्धीन्द्रियाणि यानीमा  
न्येतान्यस्य रश्मयः कर्माद्रिया ण्यस्य हया रथः शरीरं मनोऽभियंता

प्रकृतिमयोऽस्य प्रचोदनेन खल्वीरितं परिभ्रमतीदं शरीरं चेतनव त्रतिष्ठितं प्रचोदयिता वैषोऽस्येति॥९॥

स वा योऽयं हृद्यंतः पुरुषो भगवान् वेकटेश स्तुरीयो वासुदेवात्मा स एष दहराकाश मादित्यरूपः शरीर मिथं रथीकृत्य स्वयं रथिको भूत्वैवमेव पिण्ड ब्रह्मांड रथ रथिको बभूव ॥१०॥ स वा एष आत्मेहात्मनि वसितानि तैः कर्मफलैः परिभूयमान इव शरीरे वा विचर त्यव्यापकत्वा त्सूक्ष्मत्वा ददृश्यत्वा दग्राह्यत्वा त्निर्ममत्वाच्च नावस्थाकर्ता कर्तेह न पश्यः ॥११॥ स वा एष शुद्धः स्थिरोऽचल सालेपो व्यग्रोऽप्रेक्षकव दस्थितः स्वस्थ श्वचरितभू गुणमयेन पटेन नात्मान मंतर्धायावस्थित इत्यवस्थितः ॥१२॥

इत्याथर्वणे मन्त्ररहस्ये श्रीवेङ्कटेश पूर्वतापिन्युपनिषदि तृतीयः प्रपाठकः ॥३॥

#### ४. चतुर्थः प्रपाठकः

ते होचु भगवन् यद्येव मात्मनो महिमानं सूचयसि तर्ह्ययं वाव जीवात्मा कथं सितासितैः कर्मफलै रभिभूयमानः सदसद्योनिमापद्यते अवाचीं वोर्ध्वां वा गतिं द्वंद्वै रभिभूयमानः परिभ्रमती त्यस्योपव्याख्यानम्। पंच तन्मात्राणि भूतशब्देनोच्यंते। पंच महाभूतानि भूतशब्देनोच्यंते। अथ तेषां यः समुदाय स्तच्छरीर मित्युक्तम्। अथ यो ह खलु वा व अशरीर इत्युक्तः स भूतात्मेत्युक्तोऽथास्ति तस्यात्मबिंदु रिव पुष्कर इति ॥१॥

स वा एषोऽभिभूतः परकृतै गुणै रित्यंशाभिभूतत्वा त्संमूढः प्रयातः। संमूढत्वा दात्मानं प्रभुं भगवंतं कारयितारं नापश्यत्। गुणौघै स्तप्यमानः कलुषीकृत हृद्यित्त श्वंचलो लुप्यमानः सस्पृहो व्यग्र श्चाभिमानित्वं प्रयात इत्याह सोऽहं ममेद मिति। एवं मन्यमानो निबद्धो ह्यात्मनात्मानं जानन्नेव खचरः कृतस्वानुचरैः पत्रै रभिभूयमानः परिभ्रमतीति ॥२॥

अथान्यत्राप्युक्तं - यथा लोहपिण्ड स्त्वग्निसंपर्का लोहमयो लोहगत प्रहारादी ननुभवतीति, तद्वद्देहेन्द्रिय भूतगुणै रयं पुरुषोऽभिभूयत इव ॥३॥ अथान्यत्राप्युक्तं-शरीरमिदं मैथुना देवोद्भूतं संविध्यपेतं निरय एव मूत्रद्वारेण निष्क्रान्त मस्थिभि श्रितं मांसेनावलिप्तं चर्मणाऽवबद्धं विष्मूत्र पित्त कफ मज्जा मेदो वसाभि रन्यैश्च मलैर्बहुभिः परिपूर्ण कोशै रिव निर्मितम् ॥४॥

अथान्यत्राप्युक्तं-संमोहो भयं विषादो निद्रा तंद्रा व्रणो जरा शोकः क्षुत्पिपासा कार्पण्यं क्रोधो नास्तिक्य मज्ञानं मात्सर्यं वै कारुण्यं मूढत्वं निर्व्रीडत्वं निकृत्तत्वं मुद्धतत्वं मसमत्वं मिति तामसान्वित, स्तृष्णा स्नेहो रागो लोभो हिंसाऽरति र्दृष्टिव्यापृतत्वं मित्यस्थिरत्वं चलत्वं व्यग्रत्वं जिहीर्षाऽर्थोपार्जनं मित्रानुग्रहणं परिग्रहावलंबोऽनिष्टे ष्विन्द्रियार्थेषु द्विष्टि रिष्टे ष्विन्द्रियार्थे ष्वभिषंग इति राजसान्वितैः परिपूर्ण एतै रभिभूत इत्ययं भूतजीवात्मा तस्मा न्नानारूपा ण्याप्रो त्याप्रोतीति ॥५॥

अथान्यत्राप्युक्तं-महानदीषूर्मय इवानिवर्तक मन्य तपुरा कृतं समुद्रवेलेव दुर्निवार्य मस्य मृत्यो रागमनं, सदसत्फलमयैः पाशैः पंगुरिव बंधनं, बंधनस्थस्यै वास्वातंत्र्यं, यमविषयस्थस्यैव बहुतरावस्थं, मदिरोन्मत्त इव मोदमदिरोन्मत्तं, पाप्मना गृहीत इव भ्राम्यमाणं, महोरगदष्ट इव विपददष्टं, महांधकार इव रागांधं इंद्रजालमिव मायामयं, स्वप्न इव मिथ्यादर्शनं, कदलीगर्भ इवासारं, नट इव क्षणवेषं, चित्रभित्तिरिव मिथ्यामनोमय मित्यथोक्तम् -

“शब्दस्पर्शादयोह्यर्था अनर्था इव ते स्थिताः ।

एषां सक्तस्तु भूतात्मा न स्मरेच्च परं पदम्” इति ॥६॥

ते ह खलु वा उध्वरितसोऽति विस्मित मभिसमे त्योचु भगव ब्रमस्ते।  
 त्वं नः शाधि, त्वमस्माकं गति रन्या न विद्यतेऽस्य को विदु भूतजीवात्मनो  
 येनेदं हित्वा सायुज्य मुपैति तं होवाचेति ॥७॥ अयं वा व खल्वस्य  
 प्रतिनिधि भूतात्मनो यद विद्याधिगमः स्वधर्मस्यानुचरणं, स्वाश्रमेष्वेवानुक्रमणं  
 स्वधर्म एव सर्व धत्ते विशावेव नराणां तेनोर्ध्वभाग वत्यन्यथाधः पतत्येष  
 स्वधर्मोपदेशेषु स्वधर्मातिक्रमेण नासमभव दाश्रमे ष्वेवावस्थित स्तपस्वी  
 मुच्यते। एतदप्युक्तं नः-

**“तस्यात्मज्ञानेऽधिगमः कर्मबुद्धिर्वै हर्यहम् ।**

**तपसा प्राप्यते सत्त्वं सत्त्वात्संप्राप्यते मनः ॥**

**मनसा प्राप्यते ह्यात्मा आत्मना न निवर्तत” इति ॥८॥**

अथाह भृशविस्मितास्ते ह्युध्वरितसः समुत्थाय पादयोः पितामहस्य  
 दंडवत्पुनः पतन्ति। पुन रुत्पतन्त स्तिष्ठन्तो भगव नृपालु स्वमसि सर्वज्ञो  
 हि जगतां धाताऽसि पिताऽसि। वयं किञ्चिज्ज्ञाः प्रमाथिनो बहु भव्य  
 पराङ्मुखाः संसारभीता हि। अस्माकं सर्वेषां च यत्सारतरं तत्त्वज्ञानं  
 सूक्ष्मोपदेशेनै वानायासेन मननाय दृढं भवति, यदनुष्ठान मात्रेण वैकस्मिन्नेव  
 जन्मनि परा गति र्भवति तद्ब्रूहीति। अथवा शिष्यानुजिघृक्षुः परमसाधनं  
 परमसुलभं परमश्रेष्ठं परमरहस्यं प्रतिज्ञां चकार। तेन ते कृतकृत्या अभूवन्।  
 तज्ज्ञानादेव पूर्वं वर्तमाना भविष्यन्तश्च मुक्ता मुच्यमाना मोक्षयन्ते च।  
 तदेवारोपया म्यनेनैव विमोक्षाय भवत्यस्मिन्निष्ठा परा देहे गेहे राज्ये वा  
 सुखासीनो विमना न क्लिश्यतीति तद्वक्तु मुपक्रमते ॥९॥

इत्यार्थवर्णे मन्त्ररहस्ये श्रीवेङ्कटेश पूर्वतापिन्युपनिषदि चतुर्थः प्रपाठकः ॥४॥

### ५. पञ्चमः प्रपाठकः

तमो वा इदमेक आसी तस्मा त्परेण नोदितः विषमत्वं यात्येतद्वै  
रजसो रूपं तेजः खल्वीरितं विषमत्वं प्रया त्येतद्वै सत्त्वस्य रूपं तत्सत्त्व  
मेवेरितं रजसोऽपाद्रव त्सोऽंशोऽयं यश्चैतन्यमात्रः प्रतिपुरुषं क्षेत्रज्ञः  
संकल्पाध्यवसायाभिमानलिंगः प्रजापतिस्तस्य प्रोक्तोऽस्या स्तनवो बह्वरुद्रौ  
विष्णुरिति। अथ यो ह खलु वा वास्य राजसांशोल्लासेन योऽयं विष्णुः स  
वा एक स्त्रिधा भूत्वा दशधा अपरिमित भूतोद्भूतत्वा द्यूतेषु चरति प्रतिष्ठितः  
स देवाना मधिपति बभूवे त्यसा वात्मांत बर्हि श्रान्त बर्हिश्च ॥१॥

यो ह वै भगवानात्मा यथांत बर्हि व्याप्तः प्रसिद्ध स्तथा स्वं रूपं परमं  
द्वेधा चकार विष्णु वेङ्कटेशाख्यं नारायणाख्यमिति। अथैत न्नारायणाख्यस्य  
वैकुण्ठं नित्यनिवासं चकार। वेङ्कटेशाख्यस्य तु वेङ्कटाचलं नित्यनिवासम्।  
यथा बिंबादिवोद्भूतं बिंबं तद्वन्नारायणा द्वेङ्कटेशो वैकुण्ठयो वेङ्कटाचल स्तदनु  
वेङ्कटाचलनामकं संस्थानं वेङ्कटेशोऽय मधिष्ठाय सकल दृग्गोचरत्वेन सकल  
तारणाय स्वयं व्यक्तरूपी वक्षःस्थित रमाख्यं मंगलं रूप मादाय  
स्वामिपुष्करिणीतीरे सन्निहितः समास्ते॥ अत्रायं श्लोको भवति -

**“मायावी परमानंदस्त्यक्त्वा वैकुण्ठमुत्तमम् ।**

**स्वामिपुष्करिणीतीरे रमया सह मोदते” इति ॥**

स्वयं भगवा नद्यापि परिदृश्यतेऽद्यापि परिदृश्यते॥ तत स्सर्वं सुलभं  
तदुपासनं यत्र कुत्र वा स्थितस्य सकृदर्शन मात्रेण सर्वज्ञो भक्त स्तदुपासनयैव



मुच्यत एवेति तत्सर्वं यथाविभव विस्तरं समासेनैव वक्ष्यामीति भगवान् प्रजापतिः ॥२॥

श्रुत्वेह ऊर्ध्वरितसो भगवान् भक्तानुजिघृक्षया यथायोग्य मंतर्या म्यरूपा ण्यदध तदनु तत्सर्वं विशिष्टाधिकरण मेवोपासना विषय मेवेति मन्वानः पुन दिव्या स्तेऽर्ध मानुषमयं व्यक्तिभेदभिन्नानि वा अवतार सहस्रा ण्यदध तेभ्योऽभिमुख्यं वेंकटेशाख्यं भगवद्वपुरित्यत एवागम्योऽप्रतर्क्यश्च तन्महिमेत्यत्र संप्रदायविदो मुनय एवमामनंत्येवं खलु व्यवसायिनी रागिणां सांख्यो योगो रागिणां कर्मयोगो रागिणि रागिणां भक्तियोग एवं परम तरणोपायः। भक्तियोगिनां भगव दवतार रूप गुण कर्म नामजालं विना नोपासनैव संगच्छत इति। तत्राद्यवतार रूपा अप्रत्यक्षा तदुपासनातीव गहनेत्यथ दयालुः भगवान् अर्चावतार कोटि कोटि श्रेष्ठं सर्वसिद्धिद मित्युक्तोपरराम।

तदद्योर्ध्वरितसोऽभितः किमियं तूष्णीमुपासेति तस्य पद मभिमृश्यमाना श्रीवेङ्कटेश्वरस्य रहस्य मुपासनायाः प्रकारं सर्वमान्य मुपदिशन्तं प्रार्थयमाना अभवन्। तदनु पूर्वकृतां श्रीवेङ्कटेश्वरस्याज्ञां स्मरन् भक्तेभ्योऽवश्य मनुग्रह योग्य मेवेति वालखिल्या न्प्रतिभूय एव तपसा ब्रह्मचर्येण श्रुत्वा यावत्संवत्सरं वत्सरानंतरं रहस्यत्रयं सर्वं ह वो वक्ष्यामीति प्रजापतिः प्रतिज्ञां चकार ॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिः व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

५७०

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।  
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥  
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

हरिः ॐ ॥

इत्याथर्वणे मन्त्ररहस्ये श्रीवेङ्कटेश पूर्वतापिन्युपनिषदि पञ्चमः प्रपाठकः ॥५॥

इति श्रीवेङ्कटेश पूर्वतापिन्युपनिषत्समाप्ता ॥

